Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

DINMAN 1968

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

077206

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

COMPILED

077706

Stock Verification-2024

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

साप्ताहिक

दिनमान

टाइम्स ऑफ इण्डिया प्रकाशन

077706

पैसे

अक्तूबर, १९६८
आश्विन, १८९०

COMPILED

बाबुओं का घेराव • अस्थिर यूरोप • प्रधानमंत्री की खोज-यात्रा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संगमरमर से निर्मित विश्व प्रसिद्ध **'ताज'** के नाम पर
भारत की सबसे अधिक आरामदेह
और तेज़ रेलगाड़ी

ताज एक्सप्रेस

दिल्ली को केन्द्र बना कर आप एक ही दिन में आगरा के ऐतिहासिक नगर और निकटवर्ती स्मारकों को देख सकते हैं। प्रातःकाल नई दिल्ली से चलिए और दस बजे रात को लौट आइये। आगरा स्टेशन से दर्शनीय स्थलों तक साधारण और वातानुकूलित बस

तथा

गाइड सेवा की व्यवस्था है।

आगरा की
एक दिन की यात्रा

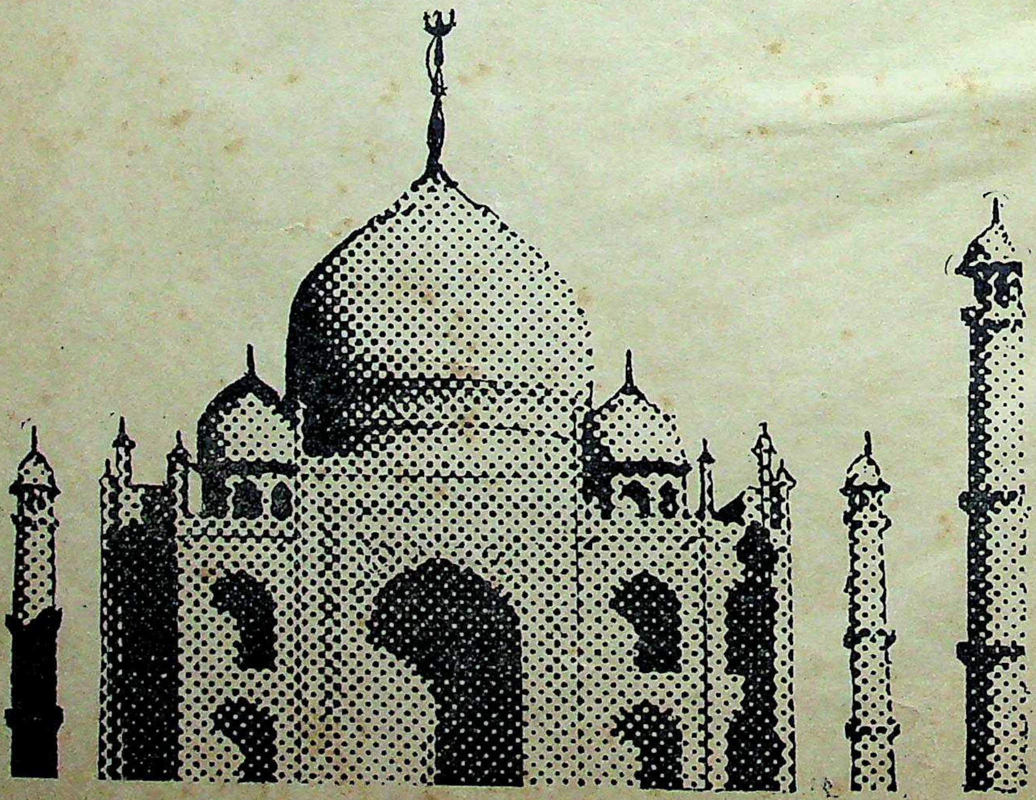

उत्तर रेलवे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकालय
६ अक्तूबर १९६८

आइये, आपका स्वागत है!

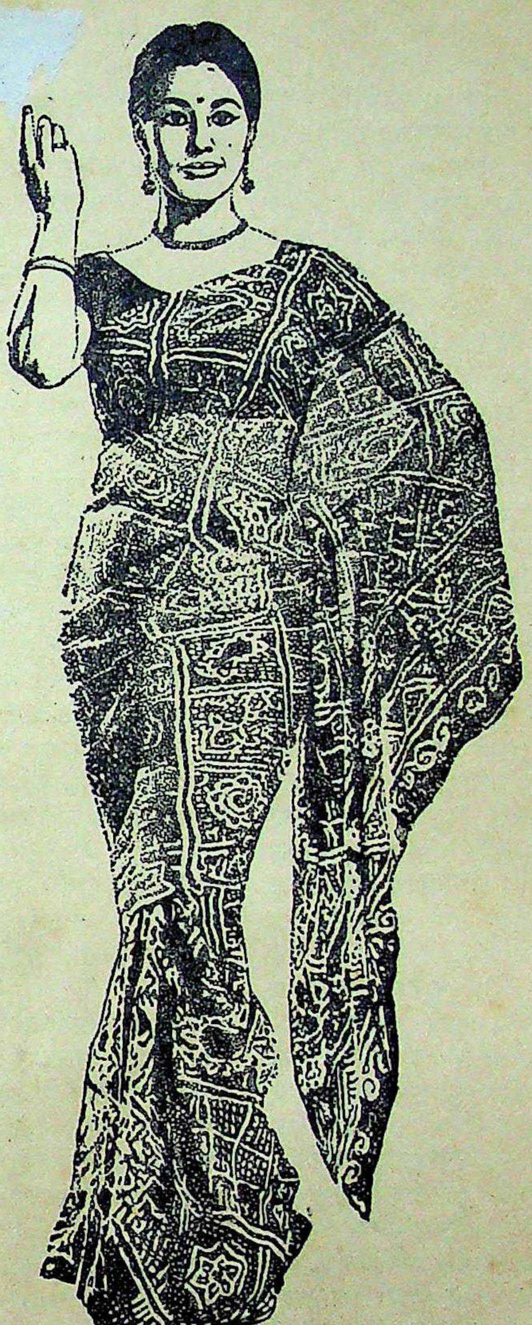

...मैं कोई बैंकर नहीं, इलाहाबाद बैंक के हजारों—लाखों संतुष्ट ग्राहकों में से एक हूँ। क्यों नहीं आपभी अपना समस्त बैंकिङ्ग कारबार इसी प्राचीनतम् श्रेष्ठ बैंक से करें।...

...कार्यकुशलता, सद्व्यवहार एवं व्यक्तिगत सेवा! ये इलाहाबाद बैंक की अपनी विशेषतायें हैं। स्वाभाविक भी है, इन्हें इस क्षेत्र में १०३ वर्षों से अधिक का अनुभव है।

- बचत खाता
- आवर्तक जमा खाता
- चालूखाता
- मियादी जमा खाता
- सेफ डिपाजिट लाकर्स
- विदेशी विनिमय
- कृषि सम्बन्धी सहायता
- लघु-उद्योगों सम्बन्धी ऋण

सर्व प्राचीन भारतीय ज्वाइण्ट स्टाक बैंक
स्थापित १८६५

इलाहाबाद बैंक लिमिटेड

(चार्टर्ड बैंक से संबद्ध)
रजिस्टर्ड ऑफिस : १४. इंडिया एक्सचेंज प्लेस. कलकत्ता-१
के० एम्० नन्जप्पा, चेयरमैन डब्लू० स्मिथ, जनरल मैनेजर

Presyn

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मत और सम्मत

केंद्रीय कर्मचारियों की हड़ताल : केंद्रीय कर्मचारी ग़लत रास्ते पर थे (उन की मुख्य माँग 'आवश्यकतानुसार वेतन' निर्धारित करने की थी) या सरकार (जो भावों पर लगाम नहीं लगा सकती), यह सवाल अलग है, लेकिन इस से भी बड़ा सवाल सरकार की दमन-नीति से जुड़ा हुआ है. सरकार वेतन नहीं बढ़ा सकती तो न बढ़ाये, हड़ताल नहीं बर्दाश्त कर सकती न करे, लेकिन इंद्रप्रस्थ भवन के भीतर घुस कर जब वह कर्मचारियों को लाठियों से पिटवाने लगती है तो शंका होती है कि सरकार का दिमाग़ कहीं फिर तो नहीं गया है.

लाठी चार्ज का उद्देश्य भीड़ को तितर-बितर करना ही होता है, कमरों के भीतर घुस कर पिटाई करना या बदला लेना नहीं. हड़ताल के पीछे या न्यायिक जाँच की माँग के पीछे राजनैतिक उद्देश्य छिपा हो सकता है, लेकिन पुलिस दंड के तांडव के पीछे कौन-सी राजनीति छिपी हो सकती थी? क्या गृहमंत्री महोदय यह बताने की कृपा करेंगे? शायद वह अपनी कुर्सी की ढाल का उपयोग करें और इस नृशंस घटनाक्रम की असलियत पर परदा पड़ जाने दें. जब स्वयं प्रधानमंत्री हड़ताल के पहले चुप्पी साध कर कर्त्तव्य निभाती हैं और सब कुछ हो चुकने पर रेडियो से अपना भाषण बाँच कर विदेश-यात्रा की तैयारी कर देती हैं तो छुटमैयों से भला क्या आशा की जा सकती है.

——सुरेश, इलाहाबाद

समाचारपत्रों की हड़ताल : अच्छे समाचार-पत्रों के प्रतिष्ठानों में लंबी हड़ताल कई अर्थों में बहुत तकलीफ़देह रही. हड़ताली तो नुकसान में रहे ही—यह उस के नतीजों से साफ़ ज़ाहिर है—लेकिन पाठकों ने, भारतीय लोकतंत्र ने भी बहुत कुछ खोया. भारत जैसे मुल्क में, जहाँ साक्षरता का प्रतिशत काफ़ी कम है और अख़बारों का परिचलन और भी कम है, दो माह तक जनता के सहज-सुलभ समाचार-स्रोतों की चुप्पी अहितकर साबित हो सकती है, ख़ासकर ऐसे अवसरों पर जनमत को प्रभावित करने वाली महत्त्वपूर्ण अंतरराष्ट्रीय और राष्ट्रीय घटनाएँ घट रही हों. मसलन, पाकिस्तान को रूसी सैनिक सहायता और उस से जुड़े सवालों पर, केंद्रीय सरकार के कर्मचारियों की हड़ताल पर, चेकोस्लोवाकिया में रूसी अतिक्रमण पर, इस के बारे में सरकारी रवैये पर हर दृष्टि से विचार-विमर्श होता, और पूरे तथ्य सामने आते तो जनता के सामने ये मुद्दे अधिक स्पष्ट होते. यद्यपि सारे अख़बार मिल कर भी हर-स्थिति को प्रायः पूर्णतः स्पष्ट रूप से व्याख्यायित नहीं कर पाते, लेकिन उन के माध्यम से बहुत-कुछ भ्रम और शब्द-जाल कट कर साफ़ हो जाता है.

समाचारपत्रों की हड़ताल के बारे में भी मैं कुछ कहना चाहूँगा, क्यों कि हड़ताल ख़त्म होने के बाद समाचारपत्र और पत्रिकाएँ मुद्दों की खुल कर चर्चा नहीं कर पाते हैं. वेज बोर्ड और ग़ैर-पत्रकार कर्मचारियों के मौजूदा वेतन के अंतर का ख़ासा बड़ा हिस्सा बिना हड़ताल के ही मिल रहा था, फिर हड़ताल के बाद मालिकान ८० प्रतिशत देने के लिए तैयार थे, लेकिन समझौता नहीं हो सका. क्यों? क्या इसलिए नहीं कि कर्मचारियों के अखिल भारतीय फ़ेडरेशन का अध्यक्ष एक ऐसा व्यक्ति है जो कर्मचारियों के हित से अधिक दूसरी बातों को महत्त्व देता है? क्या ऐसा इसलिए नहीं है कि वह 'बाहरी' आदमी है——किसी समाचार-पत्र-प्रतिष्ठान का कर्मचारी नहीं है? क्या उस की राजनैतिक निष्ठा हड़तालियों के हितों से अधिक प्रतिष्ठा नहीं पा गयी?

भारत सरकार भी एक अलबेली सरकार है! उस ने ५५–५६ दिन बाद जो कुछ किया वही वह कुछ पहले भी कर सकती थी. पर शायद वह इंतज़ार कर रही थी कि दोनों पक्ष पस्त हो जायें तो कुछ किया जाये! हो सकता है कि वह प्रसन्न हो कि संसद् अधिवेशन के दौरान उस की कम आलोचना हो रही है. संभव है वह केंद्रीय कर्मचारियों की प्रस्तावित हड़ताल के बारे में अपना मत स्थिर कर के कुछ करना चाहती थी! शायद सभी बातें रही हों.

——कुमार गुप्त, आगरा

हड़तालें : समाचारपत्रों की लंबी हड़ताल और केंद्रीय सरकारी कर्मचारियों की एक दिन की हड़ताल से इस बार कुछ ऐसे प्रश्न उभर कर सामने आये हैं जिन का संबंध न केवल संबद्ध व्यक्तियों से है बल्कि देश की संपूर्ण अर्थव्यवस्था और समग्र मजदूर आंदोलन से भी है.

हड़तालों के संबंध में यह एक विचारणीय प्रश्न है कि क्या मज़दूर नेता कभी हड़ताल से सर्वसाधारण को होने वाली असुविधा के बारे में भी सोचते हैं? या हड़ताल की आड़ में राजनैतिक पूँजी कमाने के फेर में ही पड़े रहते हैं. मज़दूर संघों का यह दुर्भाग्य ही है कि उन का नेतृत्व उन व्यक्तियों के हाथ में है जो स्वयं मज़दूर नहीं हैं. किसी न किसी राजनैतिक दल से संबद्ध इन मजदूर नेताओं का प्रमुख उद्देश्य अपने दल के सिद्धांतों का प्रचार और प्रसार करना होता है. उन के लिए मजदूरों का हित-साधन गौण होता है.

हाल की हड़तालों से मज़दूर नेताओं का यह उद्देश्य स्पष्ट हो गया है. श्रमिक-वर्ग को अपने नेताओं के इस रवैये से सबक़ सीखना चाहिए. मजदूर-आंदोलन अपने में बुरा नहीं है किंतु भारत में उसे जो राजनैतिक रंग दिया जा रहा है, उस से न तो मजदूरों का हित होगा और न ही मज़दूर-आंदोलन का. अतः यह आवश्यक है कि श्रमिक-वर्ग चेते और समय रहते कुछ ऐसे क़दम उठाये जिस से कोई भी राजनैतिक दल उन की रोज़ी-रोटी के नाम पर अपना उल्लू सीधा न कर सके.

——राजेश्वर शरण, बरेली

रूस और चेकोस्लोवाकिया : रूस ने चेकोस्लोवाकिया पर चढ़ाई कर के क्या पाया, संसार में उस की प्रतिष्ठा गिरी. कम्युनिस्ट पार्टियों के बीच फूट पड़ गई तथा विश्व कम्युनिस्ट आंदोलन को भारी धक्का लगा. किस उद्देश्य की पूर्ति के लिए रूस ने यह मूल्य चुकाया? कम्युनिस्ट कहते हैं कि पश्चिम जर्मनी से आक्रमण का ख़तरा था. तो रूसी सेना ने जर्मनी का मोर्चा क्यों नहीं सँभाला? कुछ कहते हैं कि चेकोस्लोवाकिया की उदारता की छूत रूस के दूसरे मित्रों को भी लग सकती थी और कालांतर में वॉरसा संधि-रूपी रूसी कवच ही टूट जाता. यह भी भ्रांत धारणा है. उदारवादी छूत पहले ही लगी हुई है और उसे कौन रोक सकता है? और रूस को अपनी सुरक्षा के लिए 'बफ़र' राज्यों की आवश्यकता नहीं है.

अतः रूसियों ने तथाकथित कम्युनिज़्म को बचाने के लिए ही कम्युनिज़्म को धक्का पहुँचाया. वह कम्युनिज़्म, पचास वर्ष की वह आत्म-छलना, जिस का नाम मार्क्सवाद-लेनिनवाद है और जिस के साथ कोटि-कोटि रूसियों के लिए राष्ट्रीय गौरव का प्रतीक भी है. कुछ रूसी नेता वैचारिक स्तर पर मुक्त भी हो गये हों पर वे संसार की चौधराहट नहीं छोड़ना चाहते और मार्क्सवाद–लेनिनवाद, उन का सब से बड़ा हथियार है. और दोनों ही प्रकार के रूसी नेता, आस्थावान तथा अवसरवादी, अपनी कुर्सियाँ नहीं छोड़ना चाहते. यदि रूसी जनता को पता लग गया कि कम्युनिज़्म छलावा है तो बड़े नेताओं की तो कौन कहे, सारी कम्युनिस्ट पार्टी ही कहाँ रहेगी?

रूसी नेताओं की सब से बड़ी शिकायत शायद यह है कि तुम हमें पीछे छोड़ कर आगे नहीं जा सकते. इसी लिए उन्होंने दुबचेक को समझाया, नहीं माना तो उन्हें बदलने की चेष्टा की. वह चेष्टा भी विफल गई तो दुबचेक को फिर बैठा दिया, पर संगीन उस की छाती के सामने तान दी. बेचारे रूसी!

क्या दुबचेक रूसियों के साथ क़दम से क़दम मिलाकर चलने की बात मान लेगा! एक दुबचेक मान जायेगा तो जो और लाखों दुबचेक पैदा हो चुके हैं वे चुप बैठे रह जायेंगे? जैसी परिस्थिति इस समय है उस से तो लगता है कि चेकों से उनका अधिकार कोई नहीं छीन सकेगा.

——किशोर गर्ग, दिल्ली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रश्न-चर्चा-४७

निर्णायक का प्रतिवेदन

हमारा प्रश्न था : 'असम के पुनर्गठन की वही योजना टिकाऊ होगी जो अनेक जातीय आदिवासी समाज और हिंदू समाज में सामंजस्य पर आधारित हो. इस सामंजस्य का क्या रूप हो ?' निश्चय ही प्रश्न गंभीर है और **दिनमान** अपने संवादियों से यह तो आशा नहीं ही करता कि वे आज के ज़माने में गंभीर समस्याओं से मुँह चुराएँगे. लेकिन जितने कम उत्तर इस प्रश्न-चर्चा पर हमें प्राप्त हुए हैं उन से और एक-दो संवादियों की इस प्रतिक्रिया से कि इतना गंभीर प्रश्न हमें नहीं चाहिए, हम थोड़े निराश हो सकते थे. लेकिन जो पत्र आये हैं उन से स्पष्ट प्रकट होता है कि हमारे संवादी बहुत ही गहराई से देश के सम्मुख प्रस्तुत जटिल समस्याओं की विवेचना करने में समर्थ हैं.

अधिकतर संवादियों ने हिंदू धर्म की जिस रूप में चर्चा की है और जिस रूप में वहाँ प्रचारित करना चाहते हैं उस से लगता है कि हिंदू धर्म का कोई स्वरूप उन के सामने नहीं है. यह एक बहुत बड़ी समस्या है. आज देश के सामने भी, विशेषकर जो अपने को हिंदू कहते हैं उन के सामने भी हिंदू धर्म का रूप स्पष्ट नहीं है. कुछ संवादियों ने केवल राजनैतिक इतिहास ही दिया है. प्रश्न का पूरा जवाब उन की इस विवेचना से स्पष्ट नहीं होता. आदिवासी समाज और हिंदू समाज में सामंजस्य का क्या रूप हो, इस का स्पष्ट उत्तर अधिकतर संवादियों से हमें नहीं मिला. फिर भी दरभंगा के **रामदेव वर्मा**; शाहाबाद (आरा) के **शिवनाथ पांडे**, दरंग (असम) के **विश्वनाथ भूत** के उत्तर प्रशंसनीय हैं.

प्रथम पुरस्कार ५० रुपये

इस के पहले कि हम असम के अनेक जातीय आदिवासी समाज और हिंदू समाज में सामंजस्य के रूप पर कुछ विचार करें हमें इस समस्या-प्रदेश के प्रांतीय ढाँचे पर विचार करना पड़ेगा. असम मुख्य रूप से मैदानी और पर्वतीय भागों में बँटा हुआ है और यह भौगोलिक विभाजन काफ़ी हद तक उस के राजनैतिक विभाजन को भी सामने लाता है. मैदानी भागों का समाज हिंदू समाज है, जब कि पर्वतीय भागों का समाज अनेक जातीय आदिवासी समाज है. वैसे मैदानी भागों में भी आदिवासी समाज का एक महत्त्वपूर्ण भाग बसता है और वह भी बहुसंख्यक हिंदू समाज को शंका की नज़र से देखता है. यह बात मैदानी भागों की जनजाति परिषद् के हाल के आंदोलनों से स्पष्ट हो चुकी है—पर्वतीय भागों में, जिन में आदिवासियों का बहुसंख्यक वर्ग बसता है, लंबे अर्से से मैदानी भागों के नेतृत्व और प्रभुत्व के खिलाफ़ असंतोष रहा है. मैं मानता हूँ कि असम के पुनर्गठन की वही योजना टिकाऊ होगी जो अनेक जातीय आदिवासी समाज और हिंदू समाज में सामंजस्य पर आधारित होगी, लेकिन इस सामंजस्य के रूप पर विचार करते समय हमें उन कारणों पर भी विचार करना होगा जो यह सामंजस्य बनने नहीं देते. शुरू से ही असम के पर्वतीय भागों के नेताओं की शिकायत रही है कि मैदानी भागों के लोग न केवल उन के आर्थिक विकास के रास्ते में बाधा देते रहे हैं बल्कि उन्हें दूसरे दर्जे का नागरिक बनाये रहे हैं. मेरा निश्चित मत है कि जब तक यह विषमता, जो आर्थिक और राजनैतिक दोनों ही है, नहीं मिटती तब तक सामंजस्य का कोई ठोस आधार नहीं तैयार होता. केवल सामंजस्य की बात कर देने से सामंजस्य नहीं क़ायम होगा.

मैं अपने इस कथन के समर्थन में असम के पुनर्गठन के इतिहास से कुछ उदाहरण पेश करना चाहूँगा. श्री नेहरू के समय में जब पर्वतीय भागों की जनता का आंदोलन तेज़ हो उठा था तब उन्होंने असम के पर्वतीय भागों को स्कॉटलैंड जैसी स्वशासित इकाई का दर्जा देने की बात कही थी. बात केवल बात बन कर बिखर गयी और असम के पुनर्गठन का सवाल क्रमशः उलझता गया था. जब चौथे आम चुनाव के कुछ पहले (१३ जनवरी, १९६७) केंद्रीय गृहमंत्री श्री यशवंतराव चव्हाण ने पर्वतीय क्षेत्रों के नेताओं को यह आश्वासन दिया कि असम के पहाड़ी क्षेत्रों को पृथक्, स्वशासित और मैदानी भागों के समकक्ष इकाइयों का दर्जा दिया जायेगा तो यथास्थिति कुछ टूटती-सी लगी थी और इस बात की उम्मीद बँधी थी कि सामंजस्य पर आधारित कोई समाधान निकल सकेगा. लेकिन बाद में केंद्रीय सरकार अपने वायदे से मुकर गयी और सामंजस्य की संभावना धूमिल पड़ती गयी. जब अशोक मेहता समिति के सुझावों को पर्वतीय क्षेत्रों के नेताओं ने बिलकुल ही ठुकरा दिया तो फिर नये सिरे से प्रयास शुरू हुआ. कांग्रेस महासमिति के विशेष अधिवेशन के दौरान यह स्पष्ट हो गया कि केंद्रीय सरकार असम के पुनर्गठन के प्रश्न पर कोई निर्णय करने से कतराती है और इस तरह असम के पुनर्गठन की समस्या को प्रधानमंत्री ने एक महीने के लिए फिर टाल दिया. एक महीने की अवधि बीतने के बाद भी समस्या का कोई समाधान नहीं निकलने जा रहा है.

मैं मानता हूँ कि असम के पुनर्गठन को टिकाऊ बनाने के लिए मैदानी भागों के हिंदू समाज और पहाड़ी भागों के आदिवासी समाज में सामंजस्य बहुत ज़रूरी है. नगालैंड और मिज़ोलैंड की अप्रिय घटनाओं को ध्यान में रखते हुए हमें पर्वतीय भागों की जनता की उचित शिकायतों को सुनना पड़ेगा. उन्हें आर्थिक शोषण और दूसरे दर्जे की नागरिकता के अभिशाप से मुक्त करना होगा. इस तरह सामंजस्य का स्वरूप मेरी नज़र में यह होना चाहिए कि **असम संघ के अधीन पर्वतीय क्षेत्रों को समकक्ष स्वशासित इकाइयों का दर्जा दिया जाये, ताकि इन इलाक़ों की जनता को यह शिकायत न रहे कि वह मैदानी भागों की जनता की ग़ुलामी के लिए पैदा हुई है.** जहाँ तक क़ानून और व्यवस्था का प्रश्न है उसे ले कर भी ज़्यादा खींच-तान नहीं की जानी चाहिए. अगर क़ानून और व्यवस्था पर्वतीय क्षेत्रों के हाथ में चले जाते हैं तो इस से कोई हानि नहीं होगी, क्यों कि सीमाओं की रक्षा करना प्रदेश सरकार का नहीं केंद्रीय सरकार और राष्ट्रीय सुरक्षा-सेनाओं का काम है. मेरी समझ में यह एक आदर्श स्थिति होगी, जो सही माने में असम के अनेक जातीय आदिवासी समाज और हिंदू समाज में सच्चा सामंजस्य ला सकेगी.

राजनीति प्रसाद,
द्वारा—श्री लखन प्रसाद, आटा मिल,
महेन्द्रू, पटना-६

अतिरिक्त पुरस्कार
(२५-२५ रुपये)
(१)

बहुजातीय आदिवासी समाज और हिंदू समाज में सामंजस्य की समस्या केवल असम के लिए ही नहीं बल्कि मध्यप्रदेश, उड़ीसा व विहार के लिए भी है. असम के लिए सुझाये गये सुझाव इन सभी प्रदेशों के लिए भी मौज़ूं होंगे, तभी बस्तर-झारखंड जैसी पेचीदा समस्याएँ हल की जा सकेंगी. मेरे ख़्याल में दोनों समाजों में सामंजस्य के निम्नलिखित पहलू हैं : राजनीतिक, सांस्कृतिक, सामाजिक और आर्थिक. यह सुविदित है कि हमारे देश के आदिवासी, देश की मुख्य सांस्कृतिक धारा से अछूते ही रह गये. शेष भारतीय समाज में ये घुल-मिल नहीं पाये, अथवा विशाल हिंदू समाज इन्हें जज़्ब नहीं कर पाया—इसी से संवेदनशील आदिवासी अब अपने अस्तित्व के लिए शेष सभी ग़ैर-आदिवासियों को शंकालु नज़र से देख रहा है. राजनीति के पहलू की जड़ यही है. इस जड़ को गहरा किया है विदेशी धर्म-प्रचारक ईसाई पादरियों ने. आदिवासियों में से एक अच्छे-ख़ासे वर्ग को धर्मांतरित कर उन के मन में राजनीतिक आकांक्षा जगायी है. नगा, मिज़ो, झारखंड और अब मेघालय इसी के नमूने हैं. फिर भी संपूर्ण दोष हम इन पादरियों को नहीं दे सकते, क्यों कि ईसाई पादरी-विहीन क्षेत्र बस्तर भी समस्या बन सकता है. मार्च ६६ की घटनाएँ इस का प्रमाण हैं. यह सब हुआ हमारी उपेक्षा और अवहेलना के कारण. यदि सेवा-कार्य के लिए ये विदेशी पादरी लोग आदिवासियों के बीच जा सकते हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो हम क्यों नहीं गये ? हमें किस ने रोका था और ऊपर से तुर्रा यह कि जब हमारे (हिंदू समाज) लोगों—व्यापारी, व्यवसायी, सरकारी कर्मचारीगण—का आदिवासी समाज से साबका होता है तो क्या देते हैं इन्हें हम ? सिर्फ़ तिरस्कार, अपमान और हिक़ारत ही देते हैं. यह बात प्रमाण स्वरूप मैं कह सकता हूँ, क्यों कि मैं आदिवासियों के बीच में रहता हूँ और यह कार्य-कलाप देखता हूँ. दूसरे स्वयं २३ जून का **दिनमान** अपने पृष्ठ सं. ४३ पर ऐसी बात प्रतिध्वनित करता है. अब भी विलंब नहीं हुआ है. हमें जाना चाहिए. मिशनरी की भावना से अपनी सेवा द्वारा विदेशियों को मात कर देना चाहिए. क्यों न अपने सेवा-कार्य से सरल, सहयोगी एवं भोलेभाले आदिवासियों का विश्वास तथा प्रेम जीतें?

जब हमारे संपर्क में कोई आदिवासी आता है तो वह हमारे व अपने जीवन की परंपराओं में अंतर पाता है, तो वह हमारे दृष्टिकोण देखता है. नतीजा यही होता है कि हम उस के सामाजिक जीवन व परंपराओं को सम्मान नहीं देते, ऐसी परिस्थिति में यह होता है कि आदिवासी अपने को हमारी समाज-व्यवस्था में ढालने का यत्न करता है, किंतु बहुसंख्या (आदिवासियों) के मन में असामंजस्य के कारण विद्रोह घर कर जाता है, जो फिर दंगे, फ़साद, लूटखसोट के रूप में उभरता है. खैर इसी में आर्थिक पहलू भी सन्निहित है. परंपरागत रूप से जीवन व्यतीत करते आ रहे आदिवासी लोग जब यह पाते हैं कि उन की ज़मीन व जंगलों पर कोई सरकारी अभिकरण या धनवान ग़ैर-आदिवासी कब्ज़ा कर लेता है तो वह विचलित हो जाते हैं. अथवा किसी कारणवश कोई आदिवासी व्यक्ति ऋण लेता है तो वह ब्याज की ऊँची दर के कारण कभी उबर नहीं पाता, यद्यपि कतिपय सरकारी क़ायदों से लेखा में साधारण सूद-दर ही रहती है. आर्थिक तौर पर आदिवासियों के परंपरागत स्वत्त्वों की सुरक्षा होनी चाहिए और उस की गारंटी सरकार द्वारा दी जानी चाहिए. साथ ही यह भी यत्न होना चाहिए कि आदिवासी अपने पैरों पर खड़े हो सकें. ऐसा ही एक प्रयोग मध्यप्रदेश शासन के आदिवासी कल्याणविभाग ने 'ट्राइबल कोऑपरेटिव डेवलपमेंट कॉरपोरेशन' की स्थापना कर के किया है.

मन की बात जानने के लिए भाषा एक सबलतम साधन होती है. दुःख एवं आश्चर्य की बात तो यह है कि हमारे आदिवासियों की भाषा व बोलियों का अध्ययन, वैज्ञानिक विश्लेषण विदेशी पादरियों ने किया है—हम लोग सोते ही रहे. आदिवासी लोगों की बोलियों को हम सीखते नहीं हैं और हम ऐसी विवशता उत्पन्न कर देते हैं कि आदिवासी अपनी भाषा व बोली भूल कर हमारी भाषा सीख जायें. क्यों नहीं आदिवासी-क्षेत्रों में कार्य कर रहे सरकारी कर्मचारीगण को आदिवासियों की बोलियाँ सिखा कर भेजा जाता ? वैसे आज-कल होता यह है कि आदिवासी-क्षेत्रों में जो सरकारी कर्मचारी भेजे जाते हैं सामान्यतया ऐसा समझा जाता है कि उन्हें किसी दंड हेतु भेजा जाता है. ऐसी मनोवृत्ति प्रशासकों व कर्मचारियों दोनों में पायी जाती है, जब कि होना यह चाहिए कि आदिवासी-क्षेत्रों में विशेषज्ञ कर्मचारी भेजे जायें, जो उक्त क्षेत्रों में अपने प्रवास को सज़ा न मानते हुए सेवा, समर्पण व सहानुभूतिपूर्वक कार्य करें. जब काफ़ी संख्या में जागृत व विवेकशील व्यक्ति आदिवासी-समाजों में तैयार हो जायें तब रक्त-संबंधों की कल्पना भी की जा सकती है, किंतु ऐसी वर्त्तमान कच्ची अवस्था में आदिवासियों से रक्त-संबंध करना विस्फोटक सिद्ध होगा.

राजनीतिक रूप से एक बात और—**अपनी क़बीले ढंग की शासन-व्यवस्था चलाने का अधिकार भी उन्हें दिया जाये. यदि कोई सुधार लाना भी हो तो स्वयं वे ही लायें, ऐसी व्यवस्था हो. बाहरी दबाव से आदिवासी-क्षेत्रों को मुक्त रखा जाये.** किंतु मैं उर्वसियम् जैसी भी व्यवस्था नहीं चाहूँगा, जहाँ की ऐसी ही भावना से उस क्षेत्र को एक चिड़ियाघर बना दिया गया है.

साधारण भारतीय दार्जिलिंग और तिरप के बीच के क्षेत्र को असम समझता है, किंतु वहाँ का राजनीतिक नक़्शा अलग ही है. नगालैंड जैसा सर्वथा पृथक् राज्य है, त्रिपुरा-मणिपुर जैसे संघ सरकार द्वारा शासित प्रदेश हैं. नेफ़ा असम के राज्यपाल के विशष सचिव द्वारा प्रशासित होता है और अब गारो, खासी, जयंतिया पहाड़ियों—आदिवासियों का राज्य मेघालय—असम से संघबद्ध-ऐसा विचित्र नक़्शा देश के किसी और क्षेत्र में देखने को नहीं मिलेगा.

खैर जो भी हो शेष आदिवासियों को हम नगा और मिज़ो के रास्ते जाने से बचा सकें तो अत्युत्तम होगा. देश की संघटनता व एकता इसी में है. क्या देश की दूर-दृष्टि को यह चुनौती नहीं है ?

—श्रीधर बर्वे, व्याख्याता (अंग्रेज़ी) उच्चतर माध्यमिक शाला, भैरवगढ़, वाया : दंतेवाड़ा, बस्तर ज़िला (म. प्र.)

(२)

नगा क़बीलों के अधिकारी-अन्वेषक **प्रोफ़ेसर हैमेनडार्फ़** के मत में यह बात बहुत पुरानी नहीं जब कि क़बायली लोगों और हिंदू जाति-समाज के बीच संघर्ष रहित सहअस्तित्व विद्यमान था. स्वातंत्र्योत्तर दो दशकों में उन के बीच मतभेद और तनाव बढ़ा ही नहीं, प्रत्युत अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच गया है.

सात्मीकरण (आत्मसात करने) के सब से प्रबल पैरोकार कौन हैं, क्या उन की वक़ालत एक सद्भावनापूर्ण समाधान है, या उस की ओट में निहित स्वार्थ एवं संकीर्ण मदांधता छिपी है ? आत्मसात से, अर्थात् हिंदू समाज में पचा लेने से किसे लाभ होगा ? आदिवासियों को हिंदुत्व के साथ होम हो कर मिलेगा क्या ? जायेगा क्या ? इन सवालों का साफ़ जवाब मिलना चाहिए.

हैमेनडार्फ जैसे सहृदय विद्वानों के मत में भारत के नीति-निर्धारकों की अंतिम समस्या मूल्यों या मान्यताओं की है. यह बात अंशतः सत्य है. समस्या वास्तव में सुरक्षा की भी है, राजनैतिक भी है, दलगत भी है और अंततः संपत्ति-संबंधों की दृष्टि से आर्थिक ही है.

निस्संदेह आदिवासी और परंपरागत हिंदू मूल्यों की टक्कर सच्ची ही नहीं बल्कि बौद्धिक एवं क्रांतिकारी है.

हमें साफ़ बताना होगा, क्या हम आदिवासी संस्कृति के जातिभेद रहित एवं स्त्री-पुरुष की समता के सांस्कृतिक मूल्यों को तिलांजलि दे, उन के स्थान पर जातिभेद, स्त्री पुरुष के पृथक्करण की पैरवी कर रहे हैं ? क्या यह बेहतर न होगा कि हम उन्हें आर्य, हिंदू एवं ईसाई मिशनरियों, यहाँ तक कि श्वेत गांधी टोपीधारी समाज सेवकों, सामुदायिक विकास के बड़े साहबों के सभ्य और कुलीन प्रभाव से दूर ही रखें ?

हिंदू धर्म ने प्रायः आदिवासियों को जाति-प्रणाली में निम्नतम—अंत्यज का स्थान दिया है. इस के विपरीत ईसाई धर्म परिवर्त्तनों को वह सम्मान प्राप्त हुआ जो उन्हें कभी भी हिंदू धर्म ने नहीं दिया. इस के अलावा ईसाई मिशनरियों द्वारा दी गयी शिक्षा की सुविधाओं और ब्रिटिश और अंग्रेज़ी राज में शासकों की कृपा से उन्हें ऊँचा दर्जा दिया.

पर मज़े की बात तो यह है कि **जात्यहंकार से जकड़ा हिंदू आदिवासी पार्थक्य-प्रवृत्ति पर भले ही प्रबल प्रहार करे पर वह मिशनरी स्कूलों और मिशनरी अस्पतालों में अपने बच्चे और बीमार भेजना परम सौभाग्य समझता है.** इस प्रवंचना का पर्दाफ़ाश करना निहायत ज़रूरी है. उस के बाद आप ज़रूर आदिवासी समाज और हिंदू समाज में सामंजस्य की समस्या पर रोशनी डालिये.

असम का मैदानी और पहाड़ी आदिवासी का पृथक् राज्यों में पुनर्गठन मेरे मत में तत्काल हो जाना चाहिए. इस में क्यों देरी की जा रही है ? सिर्फ़ इस लिए कि वहाँ के लोग संवैधानिक साधनों का प्रयोग कर रहे हैं और केंद्रीय सरकार केवल हिंसा के आगे ही आत्मसमर्पण करती है ? यदि नगालैंड एक पृथक् राज्य बन सकता है तो असम के आदिवासियों को क्यों इस से वंचित रखना चाहिए ?

डॉक्टर रघुराव गुप्त, मानवशास्त्री, विकास अन्वेषणालय, कालाकाँकर भवन, लखनऊ.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पिछले (कई) सप्ताह

देश

संसद के मानसून अधिवेशन का अंत ३१ अगस्त को, बड़े ही जोशीले और गरमागरम बहस-मुबाहसे के बीच हुआ. संसद् के इस अधिवेशन में गर्मी लाने वाले विषयों में रूस द्वारा पाकिस्तान को अस्त्र सहायता देने का फ़ैसला, चेकोस्लोवाकिया पर रूस समेत वॉरसा संधि के देशों का आक्रमण, संयुक्तराष्ट्र सुरक्षा परिषद् में चेकोस्लोवाकिया के प्रश्न पर भारत का मतदान में भाग न लेना, उप-प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई के पुत्र कांतिलाल देसाई द्वारा ग़ैर-क़ानूनी ढंग से धन इकट्ठा करना और कई प्राइवेट फ़र्मों से उन के संबंध, बैंकों के समाजीकरण आदि थे जिन्होंने संसद् के बेजान वाद-विवाद को जानदार बना दिया. प्रतिपक्षी सदस्यों और कांग्रेसी सदस्यों में बड़ी नोक-झोंक हुई. चेकोस्लोवाकिया के मसले पर तेलमंत्री अशोक मेहता और संसद्-सदस्या सुचेता कृपालानी ने सरकारी क़दम के प्रति असहमति व्यक्त की. इसी मसले को अपने त्यागपत्र का मुद्दा बना अशोक मेहता ने केंद्रीय मंत्रिमंडल से इस्तीफ़ा दे दिया. इसी अवधि में सर्वोच्च न्यायालय (३० जुलाई) ने पंजाब विधानसभा द्वारा पास किये गये बजट को क़ानूनी करार दे दिया. सर्वोच्च न्यायालय के इस निर्णय के बावजूद कांग्रेस का रवैया गिल मंत्रिमंडल के प्रति उग्र बना रहा और इस उग्र रवैये की परिणति अंततः गिल-मंत्रिमंडल के पतन में हुई, जिसके फलस्वरूप पंजाब में भी विधानसभा भंग कर दी गयी और राष्ट्रपति शासन (२३ अगस्त) लागू किया. केंद्र शासित प्रदेश पांडीचेरी में भी कांग्रेस के कुछ सदस्यों द्वारा प्रतिपक्ष में जा मिलने से वहाँ की डाँवाडोल स्थिति का अंत राष्ट्रपति शासन (१९ सितंबर) से हुआ.

असम के पुनर्गठन का प्रश्न एक बार फिर उठा. आल पार्टी हिल लीडर्स के नेता कैप्टन सगंमा, निकोलसन राय और जी० जी० स्वेल कई बार प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी और गृहमंत्री चव्हाण से मिले. असम के मुख्यमंत्री बिमलप्रसाद चालिहा भी इस मसले पर अपने विचार व्यक्त करने के लिए दिल्ली आये. भारत सरकार ने असम के पहाड़ी इलाक़े को एक स्वायत्त राज्य (१२ सितंबर) का दर्जा देने की बात सिद्धांततः स्वीकार कर ली. प्रस्ताव के अनुसार क़ानून और व्यवस्था असम के अंतर्गत रहेगा और अन्य विषय इस नव-गठित स्वायत्त राज्य के अधीन रहेंगे. सरकार के इस प्रस्ताव का आमतौर से स्वागत किया गया. मध्यप्रदेश में विधानसभा में कांग्रेस पार्टी के नेता के प्रश्न को ले कर काफ़ी तनाव-पूर्ण स्थिति रही. इस तनातनी का अंत भूतपूर्व मुख्यमंत्री द्वारिकाप्रसाद मिश्र के पुनः नेता चुने जाने से हुआ. श्यामाचरण शुक्ल उप-नेता चुने गये. लेकिन इस नयी स्थिति पर अभी पूरी तौर से कांग्रेस पार्टी के बड़मैये अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त भी नहीं कर पाये थे कि समाचार मिला कि राजा नरेशचंद्र सिंह अपने तीन साथियों सहित लोकसेवक दल (१५ सितंबर) में जा मिले हैं. कांग्रेस के नये नेता का स्वागत दल-बदल से हुआ. हरयाणा की स्थायी समझी जानी वाली कांग्रेस सरकार के पाये तब हिले जब चौधरी रणसिंह, महावीर सिंह और रामधारी गौड़ ने सरकार से इस्तीफ़ा दे दिया. भूतपूर्व मुख्यमंत्री भगवद्दयाल शर्मा और वर्तमान मुख्यमंत्री बंशीलाल में तनाव बढ़ गया है. कांग्रेस-अध्यक्ष निजलिंगप्पा भगवद्दयाल को सर्वसम्मति से प्रदेश कांग्रेस-अध्यक्ष निर्वाचित कराने के पक्ष में हैं ताकि यह तनावपूर्ण स्थिति ख़त्म हो. श्री निजलिंगप्पा को डर है कि हरयाणा में कांग्रेस के परस्पर मनमुटाव का प्रभाव पंजाब, उत्तरप्रदेश, बिहार और पश्चिम बंगाल के मध्यावधि चुनावों पर पड़ सकता है. राजस्थान विधान-सभा में एक ठेकेदार द्वारा १२ वर्षीय बच्चे की बलि को ले कर सरकार और प्रतिपक्ष के नेताओं में बड़ी तू-तू, मैं-मैं हुई जिसके कारण विधानसभा का अधिवेशन निश्चित् समय से पहले ही उठा दिया गया. अध्यक्ष के इस निर्णय के विरुद्ध प्रतिपक्ष के सदस्यों ने राज्य-पाल सरदार हुकुमसिंह को एक ज्ञापन दिया.

संयुक्तराष्ट्र के तत्वावधान में एशिया के विकास के लिए विज्ञान और टेक्नॉलाजी सम्मेलन (कॉस्टेसिया) (९ अगस्त से २० अगस्त) हुआ जिस में विज्ञान के व्यावहारिक प्रयोगों पर बातचीत हुई और यह भी तय हुआ कि प्रत्येक देश विज्ञान के विकास के लिए बजट में कम-से-कम डेढ़ प्रतिशत धन की व्यवस्था करे. दिल्ली के राष्ट्रीय संग्रहालय से १० लाख रुपये मूल्य के दुर्लभ और क़ीमती ज़ेवरात चोरी (२५ अगस्त) चले गये जिन का अभी भी कोई सूराग नहीं मिल पाया.

१९ सितंबर को केंद्रीय सरकार के कर्मचारियों की हड़ताल हुई. एक दिन पहले १८ सितंबर को डाक-तार विभाग के बहुत से लोगों को जुलूस निकालने और नारे लगाने के अपराध में गिरफ़्तार कर लिया गया. १९ तारीख़ को केंद्रीय कर्मचारियों की हड़ताल का फैलाव देश के उत्तर-पूर्व और उत्तर-पश्चिम में ही मुख्यतया रहा. दिल्ली में इंद्रप्रस्थ भवन के लोक-निर्माण विभाग के कर्मचारियों पर पुलिस के लाठी चार्ज से एक व्यक्ति की मृत्यु हुई और लगभग १०० आदमी घायल हुए. इस हड़ताल के दौरान केंद्र ने सभी राज्यों को आदेश जारी किये थे. इन आदेशों का केरल राज्य ने पालन नहीं किया.

इनके अलावा पंडित श्रीपद दामोदर सातवलेकर का देहांत (३१ जुलाई) हुआ; मद्रास विधानसभा के अध्यक्ष आदित्यन ने अपने पद से त्यागपत्र दे दिया छुपे नगा नेता जनरल कैत सुघई की हत्या (२ अगस्त) की गयी. बंबई के डॉक्टर सेन ने दूसरा हृदय प्रतिरोपण किया, भारत-अमेरिका और भारत-रूस के संबंधों पर बातचीत हुई. समाचारपत्रों के इस हड़ताल के दौरान देश ने आज़ादी की २१वीं वर्षगाँठ मनायी.

विदेश

राष्ट्रीय गतिविधियों के अलावा विश्व के रंगमंच पर भी कई तरह के उतार-चढ़ाव देखने को मिले. २१ अगस्त को सोवियत रूस और वॉरसा संधि के देशों की फ़ौजों ने चेकोस्लोवाकिया पर हमला कर के चेकोस्लोवाकिया के नगरों पर क़ब्ज़ा कर लिया. रूस और उस के साथी देशों के इस क़दम का पश्चिमी यूरोप, ब्रिटेन और अमेरिका ने विरोध किया और यह प्रश्न संयुक्तराष्ट्र सुरक्षा परिषद् में भी उठाया गया. जब रूस और उस के साथी देशों के इस क़दम की निंदा संबंधी प्रस्ताव पास किया गया तो भारत और पाकिस्तान समेत ६ देशों ने इस मतदान में भाग नहीं लिया. उसके बाद चेकोस्लोवाकिया की कम्युनिस्ट पार्टी के प्रथम सचिव अलेक्ज़ेंडर दुबचेक, राष्ट्रपति स्वोदा, प्रधानमंत्री चार्निक चेकोस्लोवाकिया की वर्तमान स्थिति पर विचार-विमर्श करने के लिए मॉस्को गये (या उन्हें ले जाया गया!)

अमेरिका में रिपब्लिकन और डेमोक्रेट पार्टियों ने नवंबर में होने वाले राष्ट्रपति पद के चुनाव के लिए अपने-अपने उम्मीदवार चुन लिये हैं. रिपब्लिकन पार्टी ने रिचर्ड निक्सन (८ अगस्त को और डेमोक्रेट पार्टी ने ह्यूबर्ट हंफ्री (२९ अगस्त) को अपना उम्मीदवार चुना. दोनों की सफलताओं और असफलताओं के बारे में तरह-तरह की हवा बाँधी जा रही है.

उत्तरी ईरान में भूकंप (१ और २ सितंबर के भयंकर झटकों ने ईरानियों को बुरी तरह झटका दिया. इन झटकों में बीस हज़ार आदमियों के प्राण गये. डेढ़ लाख आदमी बेघर-बार हो गये और ६० हज़ार आदमी जख़्मी हुए. शाह ईरान और मलिका फ़र्राह तथा प्रधानमंत्री अमीर अब्बास हुवैदा ने दुर्घटनाग्रस्त इलाक़ों का दौरा कर लोगों को धीरज बँधाया और इस विपत्ति का बहादुरी से सामना करने को कहा. अन्य देशों से भी सहायता की अपील की गयी. भारत सरकार ने एक लाख रुपये का सामान ईरान के भूकंप ग्रस्त लोगों के लिए भेजा. सबाह के मामले को ले कर फ़िलिप्पीन और मलयेशिया में एक बार फिर ठन गयी और मलयेसिया ने फिलिप्पीन से अपने राजनयिक संबंध मुअत्तिल (२० सितंबर) कर दिये. स्थिति ज़्यादा बिगड़ने न पाये, इस ख़्याल से मलयेसिया के प्रधानमंत्री तुंकू अब्दुल रहमान और फ़िलिप्पीन के राष्ट्रपति मार्कोस के बीच शीघ्र सम्मेलन की बात चल पड़ी है.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पत्रकार संसद

मॉस्को समझौते के बाद; भारत नये संबंधों की खोज में

चेकोस्लोवाकिया से सोवियत संघ और वारसा संधि के देशों की सेनाओं की वापसी का ऐलान स्वयं चेक सरकार की ओर से किया जा चुका है. मॉस्को में सोवियत और चेक नेताओं के एक समझौते के बाद अनेक घोषणाएँ चेक सरकार और चेक कम्युनिस्ट पार्टी की ओर से की गयीं, पर जिस समझौते के अधीन चेकोस्लोवाकिया में सोवियत और वारसा संधि के देशों की सेनाओं के हस्तक्षेप का यह नंगा नाच समाप्त हुआ उस का विवरण अभी तक प्रकाश में नहीं आया. ब्रितानी पत्र **गार्डियन** ने समझौते पर अपनी संपादकीय टिप्पणी में लिखा है कि चेक नेताओं के सामने विकल्प भी कोई और नहीं था. पत्र का कहना है—

मॉस्को समझौते में निहित पराधीनता की चेक जनता निंदा ही कर सकती है, लेकिन चेक जनता न तो यह जानती है और न उस के नेता ही यह बता सकते हैं कि उस के सामने विकल्प क्या था? समूचे देश पर आक्रमणकारी सेनाओं का अधिकार हो चुका था. पार्टी और सरकार के वरिष्ठ नेताओं को सोवियत बख्तरबंद गाड़ियों में बिठा कर ग़ायब कर दिया गया था और सोवियत राजदूत अपने देश की कठपुतली सरकार स्थापित करने की बातचीत चला रहे थे. पूर्व और पश्चिम के मित्र देश सोवियत और वारसा संधि के देशों के सैनिक हस्तक्षेप की निंदा तो कर रहे थे पर कर कुछ नहीं सकते थे. चेकोस्लोवाकिया उसी निराशाजनक स्थिति में पहुँच गया था जिस में वह नात्सी सेनाओं के आक्रमण के पहले दिन था

जिन चेक नेताओं को सोवियत संघ ने बंदी बना लिया था उन पर सोवियत मानसिक और भौतिक दबाव का विवरण अब कुछ प्राप्त हो रहा है. यह बात भी अब सामने आ रही है कि चेक राष्ट्रपति स्वोबोदा इन सभी दबावों में लौह पुरुष की तरह रहे. समाजवादी लोकतंत्र में पूर्ण आस्था रखने वाले श्री स्वोबोदा हाल ही के कुछ महीनों में चेक जनता की आशाओं और आकांक्षाओं के प्रतीक बन गये. चेकोस्लोवाकिया की जनता को संभवतः मालूम होगा कि राष्ट्रपति स्वोबोदा न केवल बेहतर शर्तों पर ही समझौता कर के लौटे वरन् ऐसी शर्तों पर जिन पर उन का कोई और सहयोगी समझौता कर ही नहीं सकता था. कम्युनिस्ट पार्टी के प्रधान मंडल का लौटना ही अपने-आप में एक बड़ी उपलब्धि थी.

प्रावदा ने इस से एक सप्ताह पहले चेक कम्युनिस्ट पार्टी के प्रधान मंडल की निंदा में जो लंबा लेख प्रकाशित किया था उस से यही लगता था कि प्रधान मंडल के सदस्यों में से कुछ संभवतः अपने-अपने पदों पर नहीं लौट सकेंगे. राष्ट्रपति स्वोबोदा और पार्टी सचिव श्री दुबचेक ने पार्टी में जोड़-तोड़ करने की कुछ स्वतंत्रता प्राप्त कर ली, जब कि मॉस्को ज़रा-सी भी आज़ादी देने को तैयार नहीं था.

चेकोस्लोवाकिया के ऐसे कोई मित्र नहीं हैं जो ऐसे संकट के समय उस की मदद कर सकें. चेकोस्लोवाकिया ज़्यादा से ज़्यादा यही कर सकता है कि ऐसे संकट के समय अपनी राष्ट्रीय एकता को बनाये रखे.

अभी तक हमें चेकोस्लोवाकिया के लोकतंत्र की दिशा में प्रगति का विवरण वहाँ के समाचारपत्रों, रेडियो और टेलीविज़न से मिलता रहता था, लेकिन अब वह कठिन होगा. विदेशी पत्रकारों और पर्यटकों के देश में आने पर प्रतिबंध लगाया जा रहा है और जो वहाँ पहले से हैं उन से शायद चले जाने को कहा जाए. लौह आवरण फिर गिर रहा है. पश्चिम के लिए चेकोस्लोवाकिया और भी ओझल हो जायेगा. ओझल हो जाने पर हम केवल यही आशा कर सकते हैं कि चेक जनता की एकता बनी रहेगी और चेक नेताओं को अपनी जनता का विश्वास भी आज ही की तरह प्राप्त रहेगा.

नये मित्रों और सद्भाव की खोज

प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी इस समय दक्षिण अमेरिका के उन देशों की यात्रा पर हैं जिन से भारत के मित्रता और सद्भाव के नये संबंध कायम करने का यह प्रथम अवसर है. भारतीय प्रधानमंत्री की यात्रा के समाचार से ही वहाँ के लोगों में काफ़ी उत्साह फैल गया था और समाचारपत्रों में भारत चर्चा का प्रमुख विषय बन गया था. **ट्रिनीडाड एक्सप्रेस** ने अपने संपादकीय लेख में भारतीय प्रधानमंत्री के ट्रिनीडाड प्रवास को बहुत ही संक्षिप्त बताते हुए लिखा था इस से न तो सरकार को और न हमारे देश की जनता को ही संतोष होगा. पत्र का कहना था—

भारत की प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी का हमारे देश में आगमन एक स्वतंत्र देश में दूसरे स्वतंत्र देश के प्रधानमंत्री की प्रथम यात्रा होगी. यहाँ आ कर भारतीय प्रधानमंत्री उस दायित्व को पूरा करेंगी जो उन के पिता श्री जवाहरलाल नेहरू पूरा करने में असमर्थ रहे. यहाँ यह बात याद रखने की है कि १९६१ में हमारे प्रधानमंत्री ने अपनी भारत यात्रा के समय श्री जवाहरलाल नेहरू को यहाँ आने का निमंत्रण दिया था. हमारे दोनों देशों के निकट और मित्रतापूर्ण संपर्क के संदर्भ में श्रीमती इंदिरा गांधी की यात्रा हमारे लिए बहुत महत्त्वपूर्ण है. इस देश की जनसंख्या का बहुत बड़ा भाग भारत वंश के लोग हैं, जो यहाँ आ कर बस गये और यहाँ की संस्कृति और आबोहवा में घुल-मिल गये. हमें बस एक ही बात का दुःख है और वह यह कि श्रीमती इंदिरा गांधी की यात्रा केवल एक ही दिन की है. ये

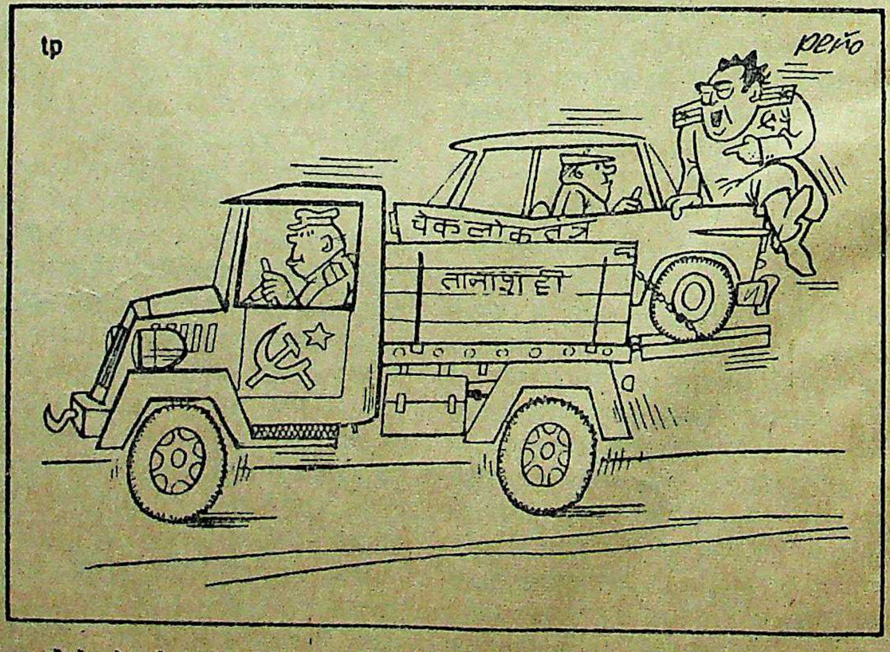

चेकोस्लोवाकिया में सोवियत संघ के सैनिक हस्तक्षेप पर तारांतेल व्यंग्य चित्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारे देश के उन हजारों नागरिकों के लिए थोड़ा निराशाजनक होगा जो भारतीय प्रधानमंत्री का हार्दिक स्वागत करने को उत्सुक हैं. फिर भी प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी के उन के अपने देश की व्यस्तता का विचार करते हुए हम इस संक्षिप्त यात्रा से ही संतुष्ट होंगे और अपने देश की सद्भाव और मित्र भावना उन के माध्यम से भारत पर प्रकट करने को उत्सुक हैं.

भारत-पाक संबंध

भारत-पाकिस्तान संबंधों के संदर्भ में पाकिस्तान के साथ संबंध सुधारने की भारत की वास्तविक इच्छा की विश्व में सभी जगह सराहना की जाती है. इस सिलसिले में पाकिस्तान के साथ युद्ध-वर्जन के भारत के प्रस्ताव को हमेशा ही पाकिस्तान के साथ शांति से रहने की उस की हार्दिक अभिलाषा का प्रमाण माना गया. हाङकाङ के प्रमुख अंग्रेज़ी दैनिक **साउथ चायना मॉर्निंग पोस्ट** ने इस वर्ष भारतीय स्वाधीनता दिवस समारोह के अवसर पर प्रधानमंत्री द्वारा पाकिस्तान के लिए इसी प्रस्ताव को दोहराये जाने का स्मरण करते हुए अपने संपादकीय में लिखा है—

जब तक भारत और पाकिस्तान परस्पर सहमति से अपने बहुत समय से चले आ रहे विवादों को संतोषजनक ढंग से तय नहीं करते तब तक रक्षा बजट पर उन का भारी खर्च उन की आर्थिक प्रगति और दोनों देशों के लोगों की उन्नति के रास्ते में बाधक रहेगा. भारतीय प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी इस खतरे को अच्छी तरह समझती हैं और उन्होंने युद्ध-वर्जन का प्रस्ताव फिर पाकिस्तान के सामने रखा. पाकिस्तान के राष्ट्रपति अय्यूब ने इस प्रस्ताव को अस्वीकार तो कर ही दिया साथ ही इसे दुनिया को धोखे में डालने वाला प्रस्ताव बताया. वह अपनी ही शर्तों पर संभवतः समझौता चाहते हैं, पर साथ ही यह आशा व्यक्त करते हैं कि पाकिस्तान के साथ शांति भारत के अपने हित में है. इस बात को श्रीमती गांधी स्वीकार करती हैं यह इसी बात से स्पष्ट है कि उन्होंने पाकिस्तान के सामने एक सार्थक प्रस्ताव रखा है. दोनों देशों के बीच कभी युद्ध न होने देने के लिए यही बेहतर रास्ता है और इसी से दोनों देश अपने-अपने रक्षा बजट के भार से मुक्त हो सकते हैं. शांति के हित में इन दोनों देशों के विवाद बातचीत द्वारा ही तय होने चाहिएँ. दोनों देशों ने यह पहले ही दिखा दिया है कि वे अपने झगड़े बातचीत से निपटा सकते हैं. कश्मीर के प्रश्न पर १९६५ का भारत-पाक संघर्ष ताशकंद समझौते के रूप में समाप्त हुआ और कच्छ के रण का विवाद अंतरराष्ट्रीय न्यायालय में तय हुआ. श्रीमती गांधी का हाल ही का युद्ध-वर्जन प्रस्ताव भारत-पाकिस्तान के विवादों को तय करने का अच्छा आधार बन सकता है.

बढ़िया फसल भी चिंता का कारण

भारत में अच्छी फ़सल न होने और अन्न के अभाव से अमेरिका को भारत अनाज भेजने की चिंता रहती थी पर अमेरिकी पत्र **सान फ्रांसिस्को क्रानिकल** के हाल ही के एक संपादकीय के अनुसार अमेरिका का खाद्य विभाग अब भारत में अच्छी फ़सल की संभावना से चिंतित है. अपने इस संपादकीय में, पत्र ने अनाज के मामले में भारत के शीघ्र ही आत्म-निर्भर हो जाने में विश्वास प्रकट किया है. पत्र की राय में—

'अमेरिकी कृषि विभाग अकाल और अभाव के खतरे से बचाने के लिए भारत को अधिकाधिक अनाज जहाज़ों द्वारा भेजने की चिंता में रहता था पर अब भारत में अच्छी फ़सल होने से उस के अमेरिका से अनाज आयात न करने की संभावना उसे परेशान किये हुए है. अमेरिकी कृषि विभाग के विशेषज्ञों के अनुसार अब ऐसी स्थिति आने में अधिक देर नहीं है जब भारत को बाहर से अनाज मगाने की ज़रूरत नहीं पड़ेगी. पर कुछ लोगों का विचार है कि ऐसी स्थिति आने में अभी एक पीढ़ी लग जायेगी. पर इस बात से सभी सहमत हैं कि खेती के नये तरीक़े अपना कर गेहूँ और धान की उपज बढ़ाने की दिशा में भारत ने आश्चर्यजनक प्रगति की है. अब यहाँ सवाल यही उठता है कि तेज़ी से बढ़ती हुई जनसंख्या को देखते हुए अन्न की उपज में यह वृद्धि क्या उसे अपनी ज़रूरत का अनाज आप पैदा करने योग्य इतनी जल्दी बना सकेगी ? क्यों कि १९७५ तक भारत की जनसंख्या ९० करोड़ तक हो जाने की संभावना है.'

वैसे संभावना तो नहीं है, लेकिन भारत के परिवार नियोजन विशेषज्ञ अपने कार्यक्रमों द्वारा उस समय तक भारत की जनसंख्या को ७० करोड़ से आगे नहीं बढ़ने देंगे. यदि ऐसा हुआ तो अमेरिका को चिंता है कि इधर तो अन्न की उपज में तेज़ी से वृद्धि और जनसंख्या के सीमित हो जाने से अनाज की क़ीमतों में मंदी आजायेगी जो दोनों देशों के लिए एक और समस्या पैदा कर देगी.

चीन एटमी शक्ति बनाने की धुन में

चीन अपने आप को परमाणु शक्ति से पूरी तरह लैस करने के प्रयत्नों में लगा है. अमेरिकी पत्र **शिकागो डेली न्यूज़** ने एक अमेरिकी विशेषज्ञ का लेख प्रकाशित किया है जिस के अनुसार चीन के राष्ट्रीय बजट का एक तिहाई से अधिक भाग यानी ३६.५ प्रतिशत सैनिक तैयारी विशेष कर परमाणु शक्तिसंपन्न बनने पर खर्च किया जा रहा है. चीन के पास इस समय ३० परमाणु बमों पर कुछ विदेशी विशेषज्ञों के अनुसार ५० का भंडार है.

प्रेस जगत

समाचारों का समाचार

देश के प्रमुख अंग्रेज़ी और भाषाई समाचार-पत्रों में लगभग ५६ दिन की लंबी हड़ताल और तालाबंदी के बाद पिछले सप्ताह फिर काम आरंभ हुआ. टाइम्स ऑफ़ इंडिया समूह के समाचारपत्रों की तालाबंदी सब से बाद में समाप्त हुई. ग़ैर-पत्रकारों के वेतनमंडल की सिफ़ारिशों को लागू करने के प्रश्न पर देश के इन प्रमुख समाचारपत्रों के प्रबंधकों और कर्मचारियों का यह झगड़ा दोनों पक्षों की ओर से अनेक सुझावों और प्रति सुझावों के बाद आखिर सरकार के इस सुझाव पर समाप्त हुआ कि ग़ैर-पत्रकारों के वेतन मंडल की सिफ़ारिशों का ७५ प्रतिशत इस समय लागू कर के बाकी न्यायिक निर्णय के सिपुर्द कर दिया जाय.

टाइम्स ऑफ़ इंडिया समूह के पत्रों में जॉब और प्रोसेज़ विभाग को ग़ैर-पत्रकारों में मानकर वेतन मंडल की सिफ़ारिशें उन पर लागू करने का विवाद भी इस विभाग के कर्मचारियों को अंतरिम सहायता के रूप में कुछ देने पर सहमति के बाद न्यायिक निर्णय के लिए सौंप दिया गया.

पाठक वर्ग : प्रबंधकों और कर्मचारियों के इस लंबे संघर्ष में अनेक कष्ट उठाने के बाद कर्मचारियों को लाभ कितना हुआ यह तो न्यायिक निर्णय के बाद ही पता चलेगा. पर इस में ज़रा भी संदेह नहीं कि देश के समाचारपत्र पाठक वर्ग को देश के प्रमुख समाचारपत्रों के इतने लंबे वियोग से काफ़ी कष्ट हुआ. इन प्रमुख समाचारपत्रों की हड़ताल और तालाबंदी की अवधि में वैसे तो विश्व का घटनाचक्र चलता ही रहा पर पाकिस्तान को सोवियत हथियारों की सप्लाई और चेकोस्लोवाकिया में सोवियत संघ तथा वारसा संधि के देशों के सैनिक हस्तक्षेप की घटनाएँ बहुत महत्त्वपूर्ण थी. (मुख्य घटनाओं की सूची के लिए देखिए पृ० ७). प्रमुख समाचारपत्रों के प्रकाशन के अभाव में इन दोनों ही महत्त्वपूर्ण घटनाओं पर भारतीय लोकमत पूर्ण रूप से अभिव्यक्त नहीं हो सका.

इस अवधि में प्रकाशित राजधानी के पत्रों में या तो धुर उस पक्ष को या इस पक्ष को ही प्रस्तुत किया और इस प्रस्तुतीकरण में संबद्ध तथ्यों और पृष्ठभूमि का भी अभाव रहा. **दिनमान** जैसे देश के मात्र समाचार साप्ताहिक के अभाव में, जो समाचारों की समीक्षा के साथ-साथ उन्हें समझने में पाठकों की सहायता के लिए पृष्ठभूमि भी प्रस्तुत करता है हिंदी पाठकों को विशेष रूप से कष्ट हुआ इस का हमें हार्दिक खेद है.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओ३म् क्रांति : क्रांति :

दो-टूक बात

इंद्रलाल

इस वर्ष गेहूँ के उत्पादन में जो क्रांति हुई, अभी हम उस का उत्सव भी मनाने नहीं पाये थे कि सूखे के समाचार फिर देश के विभिन्न हिस्सों से आने लगे.

लेकिन इस का मतलब यह नहीं कि गेहूँ के उत्पादन में क्रांति का जो दावा सरकार ने किया वह उस के अन्य दावों की तरह ही खोखला है. पिछले सूखे और अकाल के बाद एक अच्छी बात यह हुई कि हमने कृषि के महत्त्व को गंभीरता से पहचानना शुरू किया. कृषि के क्षेत्र में रूढ़ियों की बेड़ियों को तोड़ कर नये वैज्ञानिक प्रयोग किसी हद तक होने लगे. गाँव के पढ़े-लिखे बहुत से नौजवानों ने किसान के नाम से शरमाना छोड़ दिया. यदि नौजवान कृषकों द्वारा आधुनिक तरीक़ों से खेती करने का यह प्रयास आंदोलन का रूप ले ले और सरकार सिंचाई का समुचित प्रबंध कर दे तो भारत की खाद्य समस्या सचमुच हल हो सकती है.

इतने सालों तक अनाज के अभाव ने भारत की जो दुर्दशा की है उस को देखते हुए गेहूँ के उत्पादन में बढ़ौती से शुभ खबर और क्या हो सकती थी. लेकिन याद रखना चाहिए कि हर क्रांति के दो पहलू हुआ करते हैं. एक क्रांति पैदा करने के लिए आवश्यक तत्त्वों की उपस्थिति और दूसरे क्रांति के नतीजों को संभालने के लिए उपयुक्त दिमाग़ और संगठन.

आज जहाँ एक ओर ज़रूरत है कृषि-उत्पादन के आंदोलन को बनाये रखने की वहाँ दूसरी ओर जो अनाज देश के किसान ने पैदा किया उसे संभालना भी तो है.

शिकायत सुनने में आयी है कि जो गेहूँ पंजाब की मंडियों में आया उसे उठाने और गोदाम में रखने की उचित व्यवस्था नहीं थी. यदि यह सही है तो इस के लिए प्रशासन को ही उत्तरदायी ठहराना पड़ेगा.

विदेशी विशेषज्ञों ने कई बार कहा है कि भारत में बहुत-सा अनाज उपयुक्त गोदामों के अभाव में नष्ट हो जाता है. कहीं गोदाम की छत टपकने से अनाज सड़ रहा है तो कहीं चूहे मौज मना रहे हैं. अब पैदावार बढ़ने लगी तो उसे संभालने का भी उचित इंतज़ाम होना चाहिए न.

अनाज की पैदावार इस बार अचानक बढ़ गयी हो ऐसी बात तो है नहीं. जब प्रयास हो रहे थे और बारिश भी अच्छी हुई थी तो कृषि विशेषज्ञों को इतना तो अनुमान होगा ही कि इस साल अन्न अधिक उपजेगा. फिर सरकार ने समय रहते उस अनाज को सँभालने की व्यवस्था क्यों नहीं की?

साधारण-सी कहावत है कि यदि किसी आदमी को कहीं से कुछ पैसा मिलने की उम्मीद हो तो वह उसे रखने के लिए पहले ही से गुत्थी सिलवा लेता है. परंतु अपेक्षित अनाज बटोर कर जमा करने के लिए हमने पूरा इंतज़ाम नहीं किया.

रेलगाड़ी में अनाज लाद दिया जाता है लेकिन ऐसे डिब्बों में जिन पर छत नहीं होती. अब रास्ते में यदि बारिश हुई तो किसान और क़ौम की सारी मेहनत एक पल में नष्ट हो जाती है. रेल विभाग का कहना है कि जो डिब्बे उपलब्ध हैं वही तो भेजेंगे वे. अब यदि यही हाल रहा तो हाथ लगा सोना भी हमारे पास रहने वाला नहीं.

मुसीबत यह है कि हमारी सरकार के विभिन्न विभागों में वैसा तालमेल नहीं है जो एक कुशल प्रशासन को चलाने के लिए जरूरी है. ऐसा लगता है जैसे हर विभाग अपने में एक स्वतंत्र सरकार है. उस का दूसरे विभागों से कोई मतलब नहीं. नतीजा यह है कि जो उपलब्धि एक विभाग की मेहनत से हाथ लगती है वह दूसरे की लापरवाही अथवा अज्ञान से फ़िसल जाती है. हर कोई अपनी-अपनी डफली और अपना-अपना राग बजा रहा है. इस तरह आखिर काम कैसे चलेगा?

होना यह चाहिए था कि गेहूँ की फ़सल कटने से पहले खाद्य विभाग रेल मंत्रालय से संपर्क कर के बंद छत वाले डिब्बों की उन मंडियों पर व्यवस्था करता जहाँ अनाज आने की उम्मीद थी. आज अनाज से अधिक महत्त्वपूर्ण चीज़ और देश के लिए क्या है?

इस लिए रेल विभाग का यह कहना कि बंद डिब्बे उपलब्ध नहीं, कोई मायने नहीं रखता.

इसी तरह गोदामों की व्यवस्था भी समय रहते होनी चाहिए थी. और गोदाम भी ऐसे जहाँ अनाज पूरी तरह सुरक्षित रह सके. यह नहीं कि कहीं पर भी, जैसे तैसे भर दिया. उस के बाद सड़े या उसे चूहे खायें हम से मतलब. यह तो देश के साथ विश्वासघात होगा.

सोचने की बात है, एक तरफ़ तो हम उत्पादन में क्रांति लाने के लिए प्रयत्न करते हैं और जब वह क्रांति आती है और अनाज बरसने लगता है तो उसे सँभालने में हम अपने को असमर्थ पाते हैं. इस से बड़े दुःख की बात और क्या हो सकती है?

यह हालत केवल कृषि के क्षेत्र में ही नहीं. दूसरे कई मामलों में भी यही सब हो रहा है. औद्योगिक उत्पादन की बात हम कहते हैं. लेकिन आज देश में कितने ऐसे कारखाने हैं जो उत्पादन करने की स्थिति में हैं, परंतु उस उत्पादन की खपत न होने के कारण आंशिक रूप से बेकार पड़े हैं.

रांची में बने हेवी इंजीनियरिंग कारखाने की भी यही हालत है. भिलाई से उत्पादित रेल की पटरियाँ आज सोवियत रूस केवल इस लिए ख़रीद रहा है कि ऐसा न करने पर उस कारखाने को अपनी पूरी क्षमता पर चलाना असंभव हो जायेगा.

एक तरफ़ देश के निर्माण के लिए इस्पात की ज़रूरत है. अन्य देशों के मुक़ाबले हमारे यहाँ इस्पात की खपत इतनी कम है कि इस्पात का उत्पादन वर्तमान उत्पादन से बीस गुना भी बढ़ जाये तो कम ही पड़ेगा. दूसरी तरफ़ हम इस्पात बनाते डरते हैं क्यों कि उसे उठाने वाला कोई नहीं. इस का मतलब सीधे यह होता है कि उत्पादन और खपत में सामंजस्य नहीं है. यदि यही हाल रहा तो विकास के लिए हमारी दौड़, लँगड़ी दौड़ हो कर रह जायेगी.

क्रांति लाना बड़ा मुश्किल होता है, लेकिन उस के फल बटोरना भी कोई आसान काम नहीं. किसी भी क्षेत्र में हो, जहाँ हम देश को क्रांति के लिए तैयार करते हैं वहाँ उस के बाद की स्थिति को सँभालने के लिए भी उसे तैयार करना चाहिए. नहीं तो होगा यह कि क्रांति आ कर चली जायेगी और हम आँख मूँदे जपते रहेंगे—

'ओ३म् क्रांति : क्रांति : क्रांति' :

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गृह मंत्रालय का गृह-युद्ध

गृहमंत्रालय में अक्सर शांति रहती है. व्यवस्था और क़ानून दोनों ही मंत्रालय में बरक़रार रहते हैं. लेकिन पिछले दिनों राजधानी के इंद्रप्रस्थ भवन में वफ़ादार कर्मचारियों पर पुलिस के ज़ुल्म के राजनैतिक नतीज़ों के फलस्वरूप गृहमंत्रालय की शांति भंग हो गयी और उस व्यवस्था में परिवर्त्तन के भी आसार हैं जिस पर अब तक मंत्रियों और आई.सी.एस. अफ़सरों को नाज़ रहा है.

इस व्यवस्था को किसी विरोधी नेता से अधिक स्वयं सरकार के एक विश्वासपात्र अधिकारी ने चुनौती दी. यह अधिकारी हैं दिल्ली के डिप्टी कमिश्नर श्री बिशन नारायण टंडन जिन्हें उनकी कार्यक्षमता और ईमानदारी के लिए पहले से ख्याति प्राप्त है. इंद्रप्रस्थ भवन की घटनाओं पर अपनी रिपोर्ट में उन्होंने सारे दुष्कांड के लिए पुलिस सुपरिंटेंडेंट मोहिंदर सिंह और ज़िला मजिस्ट्रेट काव को उत्तरदायी ठहराया और उन की रिपोर्ट के आधार पर दोनों के विरुद्ध अनुशासन की कार्रवाई की गयी है. पहले को नौकरी से मुअत्तल किया गया है और दूसरे का तबादला कर दूसरे विभाग में भेज दिया गया है. अपनी रिपोर्ट पेश करने के दो दिन पहले श्री बिशन नारायण टंडन ने गृहमंत्रालय को लिखा कि मेरा तबादला कर मुझे अपने गृह प्रदेश उत्तरप्रदेश में भेज दिया जाये. उन्होंने इस के लिए कोई स्पष्ट कारण नहीं दिया है, लेकिन जानकार सूत्रों का कहना है कि दिल्ली पुलिस और नागरिक अधिकारियों के बीच एक अर्से से तनातनी है—अक्सर पुलिस ने डिप्टी कमिश्नर तथा अन्य नागरिक अधिकारियों की आज्ञा और निर्देश का उल्लंघन किया जिस की अंतिम परिणति इंद्रप्रस्थ भवन की इन घटनाओं के रूप में हुई. १९६७ के शुरू के महीनों में दिल्ली में पुलिस अधिकारियों की ग़ैर-ज़िम्मेदारी के कारण राजनैतिक क़ैदियों पर सामान्य क़ैदियों ने जो ज़ुल्म किया था उस के विषय में भी श्री बिशन नारायण टंडन ने गृहमंत्रालय को सख़्त रिपोर्ट दी थी.

फ़िलहाल जो परिस्थितियाँ हैं उन में श्री टंडन की अपने तबादले की माँग स्वीकार नहीं की जा रही है बल्कि उन को किसी केंद्रीय मंत्रालय में संयुक्त सचिव का पद देने की बात है. गृहमंत्रालय ने डिप्टी कमिश्नर का पद समाप्त कर दिल्ली के लिए पुलिस कमिश्नर नियुक्त करने का निर्णय ज़रूर कर लिया है. यह निर्णय एक बार पहले भी श्री लाल बहादुर शास्त्री के दिनों में किया गया था. लेकिन श्री शास्त्री इस बात के पक्ष में नहीं थे कि दिल्ली में अमन-चैन की व्यवस्था का भार किसी पुलिस कमिश्नर को सौंपा जाये. उन का कहना था कि यह एक तरह से 'पुलिस राज' होगा. अब जब यह प्रस्ताव दोबारा आया है तब भी नागरिक अधिकारियों की ओर से इस का विरोध हो रहा है. दिल्ली प्रशासन और महानगर परिषद् के अधिकतर सदस्य भी इस के पक्ष में नहीं हैं. थोड़े दिनों में जब यह प्रस्ताव ठोस रूप में आयेगा तब सभी तरफ़ से इसका तीव्र विरोध होगा.

कर्मचारियों के साथ सीधे-सीधे सख़्ती बरत कर गृहमंत्रालय ने अपने लिए एक और पेचीदगी पैदा कर ली है. इस पेचीदगी का संबंध गृहमंत्रालय के उन सचिवों से है जिन्होंने सरकार को यह सलाह दी थी कि इस हड़ताल के दमन के लिए हड़ताली कर्मचारियों को 'सख़्ती के साथ' कुचला जाये. 'सख़्ती' एक अस्पष्ट शब्द है जिस की हर आदमी किसी भी सीमा तक व्याख्या कर सकता है और हड़ताल के दिनों में यही हुआ. दिल्ली से निर्वाचित जनसंघ के संसद् सदस्यों में इस सारी घटना को ले कर सब से अधिक उत्तेजना है. श्री मनोहर लाल सोंधी और कँवरलाल गुप्त दोनों ही संसद्-सदस्य श्री मोहिंदर सिंह और काव के विरुद्ध की गयी कार्रवाई को जनता को धोखा देने का प्रयत्न मानते हैं. अन्य विरोधी पार्टियों के साथ इन दोनों सदस्यों ने 'अदालती जाँच' की माँग कुछ ख़ास कारणों से की थी. जिन में से एक यह था कि इस से यह भेद खुल सकेगा कि इंद्रप्रस्थ भवन में हुए लाठी चार्ज के लिए केवल छोटे अधिकारी ज़िम्मेदार हैं या कि प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष इस में गृहमंत्रालय के बड़े अफ़सरों का भी हाथ है.

जनसंघ और अन्य विरोधी पार्टियों के नेता इंद्रप्रस्थ भवन की घटनाओं को गृहमंत्रालय की विफलता के रूप में लेते हैं. उन का कहना है कि १९६६ के अंत में पार्लियामेंट स्ट्रीट पर साधुओं के प्रदर्शन के दौरान जो उपद्रव हुए और उन का जिस तरह दमन हुआ उस के पीछे गृहमंत्रालय के जिन अधिकारियों का हाथ था इस दूसरी घटना के लिए भी वे ही वास्तविक रूप से दोषी हैं. पुलिस के ज़ुल्म से दिल्ली में कर्मचारियों को न्याय दिलाने की सब से बड़ी ज़िम्मेदारी जनसंघ पर आ पड़ी है क्योंकि संसद् में वही दिल्ली का प्रतिनिधित्व करता है. यही कारण है कि जनसंघ ने इस सारी घटना को एक राजनैतिक सवाल के रूप में देखा है और उस ने क़ांग्रेस पार्टी के इस दावे को भी राजनैतिक क़रार दिया है कि हड़ताली कर्मचारियों पर सख़्त कार्रवाई ज़रूरी थी. संसद् के अगले अधिवेशन में जनसंघ, संयुक्त सोशलिस्ट पार्टी, कम्युनिस्ट पार्टी तथा कुछ निर्दलीय सदस्य गृहमंत्रालय से संबंधित इन तमाम सवालों को उठाने का निर्णय कर चुके हैं. ज़ाहिर है कि संसद् में जो गर्मागर्मी होगी उस से गृहमंत्रालय में सचिव स्तर पर परिवर्त्तन की काफ़ी बड़ी संभावना है.

दिनमान
समाचार - साप्ताहिक

"राष्ट्र की भाषा में राष्ट्र का आह्वान"

भाग ४ — ६ अक्तूबर, १९६८
अंक ३० — १४ आश्विन, १८९०

*

इस अंक में

विशेष रिपोर्ट ११

*

मत और सम्मत ४
प्रश्न-चर्चा ५
पिछले (कई) सप्ताह ७
पत्रकार-संसद् ८
दो-टूक बात : ओ३म् क्रांति : क्रांति : १०
अंतर्धारा १६
परचून ४६

*

राष्ट्रीय समाचार १३
प्रदेशों के समाचार १८
विश्व के समाचार ३४
समाचार-भूमि : सबाह ३३
खेल और खिलाड़ी : भारतीय दल की घोषणा, हॉकी, क्रिकेट ३०

*

प्रेस-जगत् : समाचारों का समाचार ९
साम्यवादी-जगत् : क्रांति की स्वर्ण-जयंती २३
मुख्यमंत्री सम्मेलन : कृषि क्रांति २८
संदर्भ : केंद्र और राज्य ३९
विश्व-युवक समारोह ४०
साहित्य : गाल्सवर्दी की पुस्तकें ४२
विज्ञान : ज़ोंद-५ ४३
फ़िल्म : नव-सिनेमा आंदोलन ४४

*

आवरण-चित्र : चेकोस्लोवाक कम्युनिस्ट पार्टी के प्रथम सचिव डुबचेक

*

संपादक
सच्चिदानंद वात्स्यायन

*

दिनमान
टाइम्स ऑफ़ इंडिया प्रकाशन
७, बहादुरशाह ज़फ़र मार्ग, नयी दिल्ली

चन्दे की दर	एजेंट से	डाक से
वार्षिक	२६.००	३१.५०
अर्द्धवार्षिक	१३.००	१५.७५
त्रैमासिक	६.५०	८.००
एक प्रति	००.५०	००.६०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रधानमंत्री की ग़ैर-हाज़िरी

प्रधानमंत्री की लातीनी अमेरिकी देशों की 'दिग्विजय यात्रा' शुरू होने के बाद नयी दिल्ली में सरकारी तौर पर यह घोषणा की गयी कि उन्होंने अपनी कैनाडा और जापान की आगामी यात्रा कुछ समय के लिए स्थगित कर दी है. प्रधानमंत्री की ओर से इस के लिए जापान और कैनाडा के राजप्रमुखों से क्षमा याचना की गयी. इस स्थगन का कारण यह बताया गया कि नवंबर में पश्चिमी बंगाल में मध्यावधि चुनाव होंगे और प्रधानमंत्री को अक्तूबर के मध्य से इन में व्यस्त हो जाना पड़ेगा.

प्रधानमंत्री की लातीनी अमेरिकी यात्रा का कार्यक्रम अचानक नहीं बना था. उस की तैयारियाँ एक अर्से से चल रहीं थीं. लेकिन संसद के पिछले अधिवेशन के पहले प्रधानमंत्री के सलाहकारों ने उन को सलाह दी थी कि वह अगले कुछ महीनों तक विदेश-यात्रा का कोई कार्यक्रम न बनायें. सलाहकारों का तर्क था कि न केवल देश की स्थिति अस्थिर है बल्कि कांग्रेस पार्टी के भीतर की गुटबंदियाँ नया मोड़ ले रही हैं. उन दिनों यह अफ़वाह थी कि प्रधानमंत्री और गृहमंत्री में अनबन है और श्रीमती गांधी अनुकूल अवसर पर चव्हाण को मंत्रिपरिषद् से हटाना चाहती हैं. इस की तीव्र प्रतिक्रिया चव्हाण के समर्थकों और अनुयायियों पर हुई थी. यह भी अफ़वाह थी कि मंत्रिपरिषद् के भीतर एक शक्तिशाली गुट श्रीमती गांधी के विरुद्ध है और वह उपयुक्त अवसर की प्रतीक्षा कर रहा है. इन हालात में, प्रधानमंत्री के समर्थकों का कहना था, कि उन को देश से ग़ैर-हाज़िर नहीं रहना चाहिए.

उन्हीं दिनों कांग्रेस महासमिति का एक सक्रिय गुट उपप्रधानमंत्री मोरारजी देसाई को भी मिलाने के प्रयत्न कर रहा था. यह गुट यह सोचता था कि चव्हाण और मोरारजी देसाई के साथ हो जाने से श्रीमती गांधी के विरुद्ध मोर्चा बन सकता है. लेकिन इस बीच संसद् के पिछले अधिवेशन में मोरारजी देसाई को अपने पुत्र के औद्योगिक मामलों को ले कर ज़बर्दस्त विरोध का सामना करना पड़ा और इस संकट में श्रीमती गांधी ने, अपने कुछ सलाहकारों की सलाह के विरुद्ध, देसाई का साथ दिया. इस से उन के और देसाई के संबंध और मज़बूत हुए और मंत्रिपरिषद् में श्रीमती गांधी का दबदबा बहुत बढ़ गया. अपने सहयोगियों का, जिन में कि यशवंतराव चव्हाण भी शामिल हैं, विश्वास प्राप्त कर लेने के बाद प्रधानमंत्री ने विदेश-यात्रा का अंतिम फ़ैसला लिया और उन के लातीनी अमेरिकी यात्रा के कार्यक्रमों को अंतिम रूप दिया गया.

> **अगला 'दिनमान'**
>
> मैक्सिको में १९वें ओलिंपिक दंगल के उपलक्ष्य में **दिनमान** का अगला अंक (१३ अक्तूबर, १९६८)
>
> **ओलिंपिक खेल अंक**
>
> होगा. मैक्सिको शहर और देश, ओलिंपिक खेलों का इतिहास, प्रमुख ओलिंपिक खिलाड़ी, भारतीय हाकी और कुश्ती, पारंपरिक भारतीय खेल, मुख्य खेलों के रेकार्ड—इन सब विषयों की प्रचुर सामग्री और अनेक दुर्लभ चित्र इस अंक को भारत के लाखों खेल-प्रेमियों और जवानों के लिए अत्यंत मूल्यवान और संग्रहणीय बना देंगे.
>
> **एजेंट से अपनी प्रति अभी से सुरक्षित करा लें.**

संयुक्तराष्ट्र में भारत

संयुक्तराष्ट्र महासभा के अधिवेशन के लिए प्रस्थान के पहले, नयी दिल्ली में, एक प्रेस सम्मेलन में, विदेश राज्य मंत्री बलिराम भगत ने कहा कि 'भारत महासभा में चेकोस्लोवाकिया का प्रश्न उठाये जाने के विरुद्ध है, क्योंकि स्वयं चेकोस्लोवाकिया सरकार का आग्रह इस पर नहीं है.' सिद्धांत रूप में श्री बलिराम भगत की बात सही है क्योंकि भारत की घोषित नीति यही रही है कि वह दूसरों के आंतरिक मामलों में किसी तरह हस्तक्षेप नहीं करेगा. लेकिन भारत की नीति यह भी रही है कि जब भी किसी देश ने दूसरे देश के भीतरी मामलों में दखल दिया है या उस की प्रभुसत्ता को भंग किया है भारत इसे निंदनीय कृत्य मानता रहा है. अगस्त के अंतिम सप्ताह में जब सोवियत रूस द्वारा चेकोस्लोवाकिया की प्रभुसत्ता भंग किये जाने का मामला सुरक्षा परिषद् में आया तब उसी विदेशमंत्रालय ने उसे 'निंदनीय' कृत्य मानने से इनकार कर दिया तो आज इसी आधार पर चेकोस्लोवाकिया के प्रश्न को संयुक्तराष्ट्र महासभा में उठाये जाने के विरुद्ध हैं कि हम दूसरों के भीतरी मामलों में हस्तक्षेप नहीं करते. आखिर विदेशमंत्री कहना क्या चाहते हैं ? क्या उनकी मान्यता यह है कि हम दूसरों के भीतरी मामलों में हस्तक्षेप नहीं करेंगे और जब कोई दूसरा किसी और दूसरे के भीतरी मामलों में दखल देगा, तब हम इस स्थिति का सामना मौन रह कर करेंगे. आखिर सुरक्षा परिषद् में भारत ने किस के लिए मौन रखा ? चेकोस्लोवाकिया की मृत्यु के लिए ? किसी देश की मृत्यु के प्रति श्रद्धांजलि का क्या यही भारतीय तरीक़ा है ?

श्री भगत ने चेकोस्लोवाकिया पर अपने वक्तव्य में यह भी कहा कि 'हम किसी भी देश पर उस की इच्छा के विरुद्ध विदेशी फ़ौजों की उपस्थिति के विरोधी हैं. हम ने चेकोस्लोवाकिया के संबंध में भी बराबर यही कहा है.' इस पर जब उन से एक संवाददाता ने पूछा कि तब फिर यही बात संयुक्तराष्ट्र में कहने में क्या संकोच है तब श्री भगत ने कोई उत्तर नहीं दिया. उन्होंने मौन साध लिया. चेकोस्लोवाकिया पर मौन और चेकोस्लोवाकिया से पैदा हुए सवालों पर मौन !

संयुक्तराष्ट्र महासभा का यह अधिवेशन कई दृष्टियों से बहुत महत्त्वपूर्ण होगा. वीएतनाम और चेकोस्लोवाकिया से उत्पन्न हुए प्रश्नों से कोई भी देश, चाहे वह हमलावर हो या कि हमले का शिकार, बच नहीं सकता. यूरोप में पश्चिमी जर्मनी और चेकोस्लोवाकिया को ले कर शीतयुद्ध का जो वातावरण बनता जा रहा है उस की स्पष्ट छाया महासभा के अधिवेशन पर रहेगी. संयुक्तराष्ट्र के महासचिव ऊ थाँ ने इस सारी स्थिति को यह कह कर बहुत अच्छी तरह पेश किया है कि एक शक्तिशाली देश प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष दूसरे शक्तिशाली देश को चुनौती देता है और सारी दुनिया का भविष्य अंधकार की ओर बढ़ता जाता है. संसार को इस अंधकार से बचाने का दावा अब तक निरपेक्ष राष्ट्र करते रहे हैं और यह सही है कि १९६२ तक वे इस में बहुत हद तक कामयाब भी हुए. विशेष रूप से भारत की भूमिका इस सारी स्थिति में बहुत महत्त्वपूर्ण रही. चेकोस्लोवाकिया-पश्चिमी जर्मनी की सीमा पर ये महाशक्तियाँ एक दूसरे से टकराने के लिए जिस तेज़ी के साथ उत्सुक होती जा रही हैं उस के संदर्भ में भारत फिर अपनी खोई हुई भूमिका प्राप्त कर सकता था और शायद कर सकता है. लेकिन भारत की विदेश-नीति गहरी आंतरिक पराजय की भावना से पीड़ित है और इस लिए साहसहीन है. इस साहसहीनता का सब से बड़ा प्रमाण सुरक्षा परिषद् में चेकोस्लोवाकिया पर हुए मतदान में भारत का हिस्सा न लेना है.

भारत ने अपने आप को पूरी तरह विदेशी सहायता पर सौंप कर खुद अपने लिए एक ऐसा जाल बुन लिया जिस से मुक्त होने की कोई आशा निकट भविष्य में नज़र नहीं आती. चेकोस्लोवाकिया पर भारत का मौन नैतिक दृष्टि से तो ग़लत है ही, राष्ट्रीय हितों की दृष्टि से से भी ग़लत है. अगर सोवियत रूस या अमेरिका भारत को उस के राष्ट्रीय हितों के संबंध में कोई आश्वासन देने को तैयार नहीं हैं तो फिर भारत आँख मूंद कर उन का समर्थन करने के लिए उतावला क्यों है ?

अगर भारत जैसे निरपेक्ष राष्ट्रों ने आक्रमण और अन्याय के विरुद्ध संयुक्तराष्ट्र जैसी अदालत में मौन साध लिया तो संयुक्त राष्ट्र की सारी उपयोगिता और अवधारणा नष्ट हो जायेगी. भारत के लगातार बदलते रहने वाले विदेशमंत्रियों को यह बात समझनी होगी कि विदेश नीति भी परिवर्तनशील होती है.

—विशेष संवाददाता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हड़ताल

यह तो ख़ून, यह बंदगी . . .

महानगर अभी भी गरम है—केंद्रीय सरकारी कर्मचारियों की सांकेतिक हड़ताल के बाद के एक सप्ताह तक उस की धमनियों में दमन की गर्मी दौड़ रही थी और अब उस की शिराओं में देर से पैदा हो रही सरकारी सदाशयता की. गत सप्ताह केंद्रीय सरकारी कर्मचारियों की संयुक्त संघर्ष समिति के प्रतिनिधियों से अपनी बातचीत के दौरान केंद्रीय गृहमंत्री यशवंतराव चव्हाण लौह पुरुष का अपना कवच थोड़ा ढीला करते पाये गये. १९ सितंबर की राष्ट्रव्यापी हड़ताल और अवांछित सरकारी दमन की घटनाएँ तेज़ी से सिमटने लगी थीं; गृहमंत्रालय से 'बदले की कार्रवाई नहीं की जायेगी' का मुखर या मौन सिगनल पा कर डाक-तार विभाग कर्मचारियों के राष्ट्रीय संघ ने 'नियमानुसार काम' और 'धीमे काम' के रूप में सरकारी दमन-व्यवस्था से जो असहयोग कर रखा था उसे वापस ले लिया था और डाक-तार व्यवस्था असामान्य से सामान्य की ओर लौटने लगी थी. संयुक्त समाजवादी पार्टी के अध्यक्ष श्रीधर महादेव जोशी ने अपनी ९ दिन की भूख हड़ताल ख़त्म कर दी थी और संयुक्त संघर्ष समिति के महामंत्री पीटर अलवारिस ने 'दो क़दम आगे, एक क़दम पीछे और फिर तीन क़दम आगे' की रण-नीति पर अमल करते हुए अध्यादेश राज चला रही केंद्रीय सरकार को यह संकेत दे दिया था कि अगर उस ने बदले की भावना से काम नहीं लिया तो दोनों पक्षों में कारगर वार्त्ता की संभावना सामने आ सकती है. संयुक्त संघर्ष समिति के प्रतिनिधियों से अपनी बातचीत के दौरान गृहमंत्री ने अपने रुख़ में कुछ नर्मी का संकेत ज़रूर दिया लेकिन कोई स्पष्ट आश्वासन सामने नहीं आया. उन्होंने प्रतिनिधियों को यह ज़रूर सूचित किया कि १९ सितंबर की हड़ताल में भाग लेने वाले सरकारी कर्मचारियों के प्रति कड़ी अनुशासनात्मक कार्रवाई की जाये या नहीं, इस सिलसिले में लंदन में वित्तमंत्रियों के सम्मेलन में भाग ले रहे उप-प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई की राय माँगी गयी है. केंद्रीय सरकारी कर्मचारियों के समर्थन में आयोजित विभिन्न आम सभाओं में बदले की कार्रवाई को एक लोकतांत्रिक सरकार के गौरव के सर्वथा विरुद्ध बताया गया था और संयुक्त संघर्ष समिति के प्रतिनिधियों का भी यही मुख्य आग्रह था. डिप्टी कमिश्नर बिशन टंडन की रिपोर्ट प्राप्त होने के बाद केंद्रीय सरकार ने पुलिस सुपरिंटेंडेंट मोहिंदर सिंह को मुअत्तल कर दिया था (ताज़ा समाचारों के अनुसार मोहिंदर सिंह को स्थायी रूप से सेवा-मुक्त किया जा रहा है) और इंद्रप्रस्थ भवन में पुलिस को लाठी-चार्ज और अश्रु-गैस छोड़ने का आदेश देने वाले अतिरिक्त ज़िला मजिस्ट्रेट काव का तबादला कर दूसरे विभाग में भेज दिया गया था. एक साथ ही सख़्त और नरम दोनों होने का दावा करने वाली केंद्रीय सरकार ने इंद्रप्रस्थ भवन में पुलिस की ज़्यादतियों के शिकार हुए व्यक्तियों के परिवारों को आँसूपोंछ आर्थिक सहायता देने की घोषणा कर दी थी लेकिन दूसरी ओर डाक-तार विभाग के जिन अस्थायी कर्मचारियों को उन की नौकरी से निकाला. जा रहा था उन की संख्या १७५०० तक पहुँच गयी थी.

सरकारी कर्मचारियों की राष्ट्रव्यापी सांकेतिक हड़ताल के छठे दिन बाद तक सरकार के रवैये में कोई परिवर्त्तन नहीं हुआ था और आज़ादी के बाद के सब से नृशंस दमन का दौर तब तक जारी था. बिशन टंडन ने अपनी रिपोर्ट में १९ सितंबर को इंद्रप्रस्थ भवन में पुलिस द्वारा केंद्रीय सार्वजनिक निर्माण विभाग के कर्मचारियों पर की गयी ज़्यादतियों को नितांत अनुचित बताया तथा संबंद्ध पुलिस अधिकारियों के ख़िलाफ़ कार्रवाई की माँग की. माँग वैसे विभिन्न राजनैतिक दलों के प्रतिनिधियों ने भी की थी लेकिन अपने को लौह पुरुष की भूमिका में उतारने की धुन में मस्त गृहमंत्री यशवंतराव बलवंतराव चव्हाण ने न्यायिक जाँच का सुझाव नामंजूर कर दिया. गृहमंत्री का कहना था कि क्यों कि न्यायिक जाँच की माँग राजनैतिक उद्देश्यों से प्रेरित है,

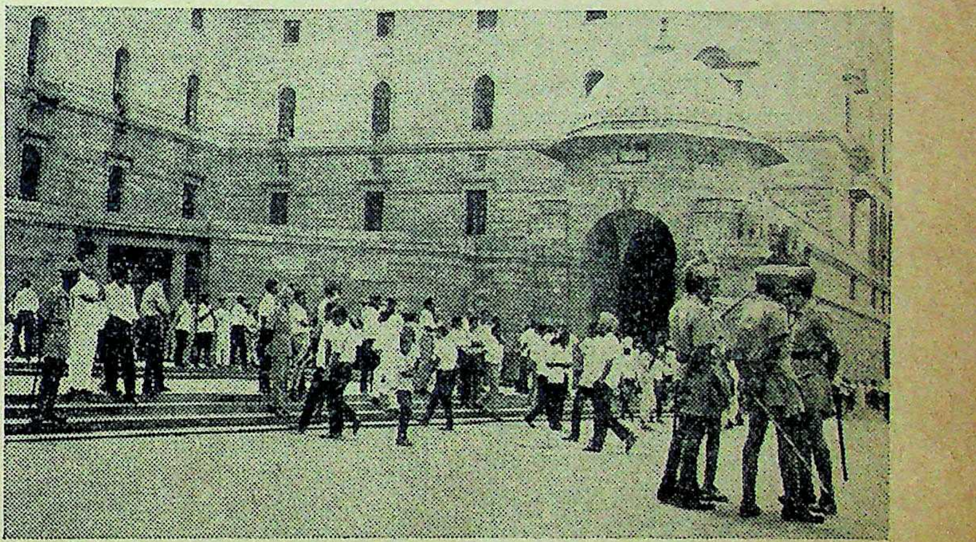

राजधानी में : अध्यादेश राज के ख़िलाफ़ बाबुओं का प्रदर्शन

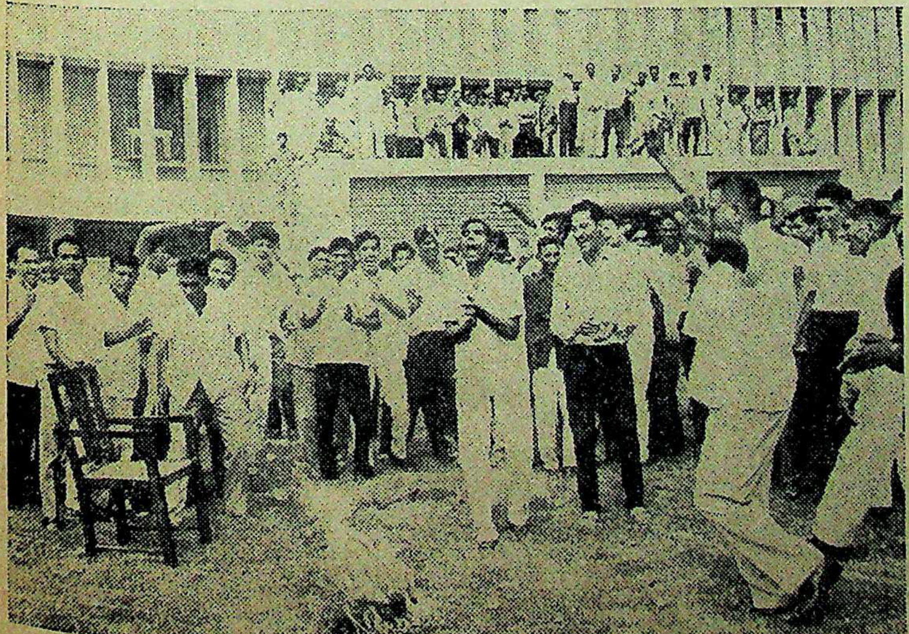

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

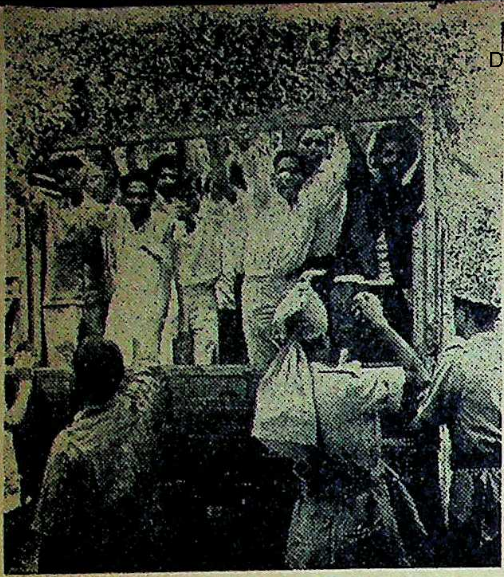

हड़तालियों की जेल-यात्रा : दमन-कथा

इस लिए सरकार पुलिस की ज़्यादतियों के खिलाफ़ सख्त कार्रवाई ज़रूर करेगी लेकिन उन्हें अदालत में या न्यायिक जाँच समिति के सामने ज़लील नहीं होने देगी ! गृहमंत्री ने लौहपुरुष की अपनी इस आरोपित भूमिका के अनुरूप तर्कों की तलाश करते हुए केंद्रीय मंत्रिमंडल में राज्य मंत्री जगन्नाथराव की इस दलील को भी नज़रअंदाज़ कर दिया कि केंद्रीय सार्वजनिक निर्माण विभाग के कर्मचारियों की भावनाओं को देखते हुए न्यायिक जाँच का कोई विकल्प सरकार के सामने नहीं रह गया है. १९ सितंबर की सांकेतिक हड़ताल को 'पूर्णतया विफल' मान कर चलने वाले गृहमंत्री के लिए एक नहीं अनेक विकल्प मौजूद थे—सब से बड़ा विकल्प क़ानून और व्यवस्था के नाम पर किस्तों में प्रकट हो रहे दमन का था जिस का अंत ही नज़र नहीं

रेलवे मेल सेवा : मलबे का मरघट

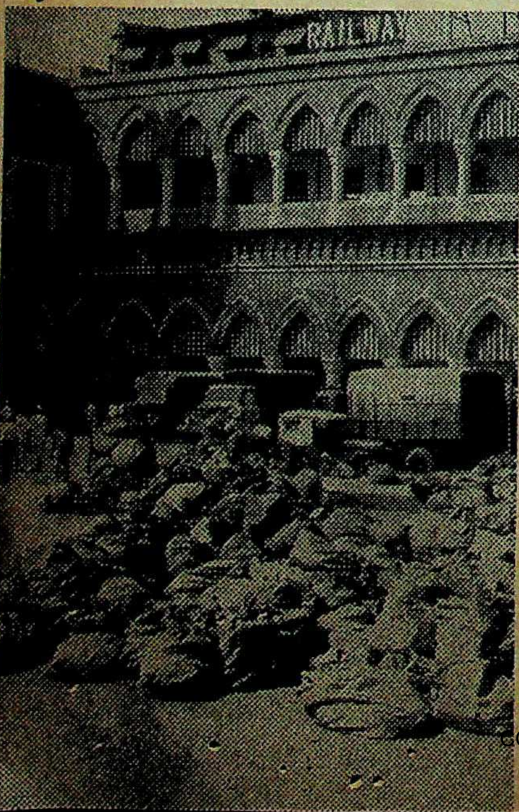

आ रहा था. सांकेतिक हड़ताल के उद्देश्यों पर पानी फेरने के उद्देश्य से अध्यादेश के रूप में दमन का जो सिलसिला चालू हुआ वह जारी था—विभिन्न मज़दूर संगठनों की मान्यता खारिज़ करने और सांकेतिक हड़ताल में भाग लेने वाले कर्मचारियों की सेवाएँ समाप्त करने या फिर स्थायी कर्मचारियों की सेवाओं में व्यवधान के रूप में.

१९ सितंबर, बृहस्पतिवार—सरकारी कर्मचारियों की राष्ट्रव्यापी सांकेतिक हड़ताल का दिन. हड़ताल के दिन के कुछ पहले ही केंद्रीय सरकार ने अध्यादेश के ज़रिये क़ानून और व्यवस्था के नाम पर असाधारण अधिकार हथिया लिये थे. देश के विभिन्न भागों में क़ानून और व्यवस्था के प्रहरियों की गतिविधियाँ बढ़ गयी थीं और केंद्रीय सरकार ने यह भविष्यवाणी कर रखी थी कि हड़ताल पूरी तरह विफल होगी. हड़ताल सफल साबित हुई या विफल, निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता लेकिन यह बात स्पष्ट है कि दमन की किलाबंदी तोड़ कर सरकारी कर्मचारियों ने राष्ट्रव्यापी पैमाने पर अपने असंतोष का इज़हार किया. १९ सितंबर को गिरफ़्तार किये गये सरकारी कर्मचारियों की संख्या सात हज़ार बतायी जाती है. राजधानी में लौहपुरुष की नाक के नीचे दो हज़ार से भी अधिक सरकारी कर्मचारियों को गिरफ़्तार किया गया. हड़ताल को नियंत्रित करने के लिए सरकार की क़ानून और व्यवस्था मशीनरी ने जो लाठीचार्ज और गोलीबारी की उस में नौ कर्मचारियों की मौतें हुईं तथा सैकड़ों की तादाद में लोग घायल हुए.

१८ सितंबर, बुधवार—अध्यादेश की साया में साँस ले रहा महानगर. सांकेतिक हड़ताल को टालने की सारी कोशिशें विफल हो चुकी थीं और सरकारी कर्मचारी ज़रूरतों पर आधारित न्यूनतम वेतन की अपनी माँग के लिए, शांतिपूर्ण हड़ताल और प्रदर्शन के लिए अपने को तैयार कर रहे थे. केंद्रीय सरकार ने, क़ानून और व्यवस्था की अपनी मशीनरी को अध्यादेश के अधीन असाधारण अधिकारों से लैस कर दिया था. राजधानी में दफ़ा १४४ लागू कर दी गयी थी. देखते-देखते कर्मचारियों की संयुक्त संघर्ष समिति के सभी नेताओं को हिरासत में ले लिया गया. बुधवार की सुबह से ही पुलिस अधिकारियों ने कर्मचारियों के दफ़्तरों को घेर रखा था ताकि उन्हें लाठी चार्ज या फिर व्यापक गिरफ़्तारी का कोई बहाना मिल जाये. कुछ स्थानों पर पुलिस ने लाठी चार्ज और अश्रुगैस का सहारा भी लिया. इस तरह सांकेतिक हड़ताल के एक दिन पूर्व अध्यादेश के अधीन असाधारण अधिकारों से लैस पुलिस अधिकारियों ने १४०० कर्मचारियों को हिरासत में ले लिया.

बृहस्पतिवार, १९ सितंबर—क्वार का बीमार सूरज आकाश में गर्म हो रहा था और अध्यादेश तथा दफ़ा १४४ से लैस सरकारी क़ानून और व्यवस्था मशीनरी भी दमन की अतिरिक्त गर्मी से उबल रही थी. सांकेतिक हड़ताल यद्यपि राष्ट्रव्यापी पैमाने पर हो रही थी लेकिन ध्यान का केंद्र राजधानी ही बनी जहाँ केंद्रीय सरकारी दफ़्तरों, डाक-तार और टेलीफ़ोन आफ़िसों और रेलवे स्टेशनों को पुलिस अधिकारियों ने यातना शिविरों में बदल दिया था. चौबीस घंटे की यह सांकेतिक हड़ताल काफ़ी हद तक सफल साबित हुई. अपनी भविष्यवाणी को झूठा होते देख कर पुलिस अधिकारियों ने सरकारी कर्मचारियों के

एस० एम० जोशी : अध्यादेश के विरुद्ध

शांतिपूर्ण प्रदर्शनों का जवाब लाठीचार्ज, आँसू गैस और छिटपुट गोलीबारी से दिया. इस सांकेतिक हड़ताल के दौरान डाक और तार सेवाएँ स्थगित हो गयीं, सरकारी दफ़्तरों में काम ठप्प पड़ गया और रेल सेवा शिथिल पड़ गयी. पठानकोट, बीकानेर, गौहाटी, शाहडौल और कुछ अन्य स्थानों पर पुलिस की गोलीबारी में नौ कर्मचारी मारे गये. कर्मचारी अपनी हड़ताल को कितनी गंभीरतापूर्वक ले रहे थे इस का एक संकेत तो इसी से मिल जाता है कि जगाधरी की रेल पटरी पर धरना दे रहा एक रेलवे कर्मचारी इंजन के पहियों के नीचे आ कर शहीद हो गया. बृहस्पतिवार की अपराह्न बेला में पुलिस ने कुछ सनसनीखेज कर गुज़रने के लोभ में केंद्रीय सार्वजनिक निर्माण विभाग के दफ़्तर में प्रवेश किया और भयानक लाठीचार्ज शुरू कर दिया जिसमें अर्जुन सिंह नामक एक कर्मचारी घटना स्थल पर ही मर गया और कोई तीन सौ कर्मचारी गंभीर रूप से घायल हुए. जब पुलिस के दमन के बावजूद कर्मचारियों ने अपनी हड़ताल बरक़रार रखी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो उस ने अपने दमन का दायरा बढ़ा दिया और उस के अधीन रेलवे कालोनी के आवास क्षेत्रों को भी घसीट लिया.

असंतोष का प्रदर्शन : केंद्रीय कर्मचारियों की सांकेतिक हड़ताल, जिस का आह्वान उस की संयुक्त संघर्ष समिति द्वारा किया गया था, अब खत्म हो चुकी है. डाक-तार विभाग के कर्मचारियों ने भी आत्मरक्षा में 'नियमानुसार काम' और 'धीमे काम' के अपने हथियार डाल दिये हैं. विश्वस्त सरकारी सूत्रों के अनुसार इस राष्ट्रव्यापी हड़ताल में सरकारी कर्मचारियों के लगभग साठ फ़ीसदी लोगों ने भाग लिया अर्थात् चौदह लाख लोगों ने सरकार की नीतियों के खिलाफ़ अपना सामूहिक आक्रोश और असंतोष व्यक्त किया. सरकारी कर्मचारियों की कुल संख्या २५ लाख है जिस में लगभग १० लाख दिल्ली में हैं. केंद्रीय सरकार को उस के नौकरशाहों ने सलाह दी थी कि अगर राजधानी में हड़ताल को विफल कर दिया गया तो भविष्य में राष्ट्रीय पैमाने पर सरकारी कर्मचारियों का हौसला पस्त हो जायेगा.

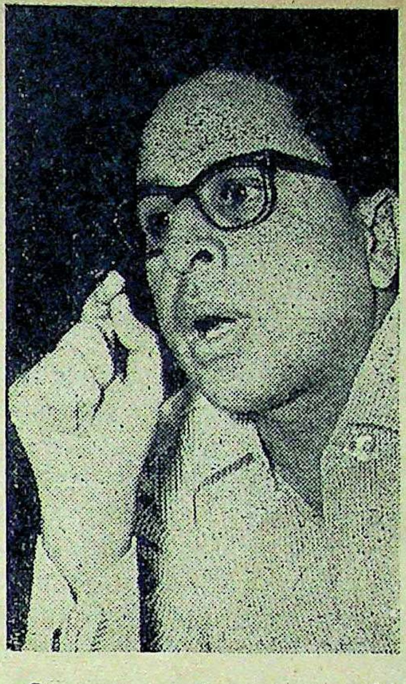

बिशन नारायण टंडन : तत्परता ?

अध्यादेश—पृष्ठभूमि : १२ सितंबर को जब कर्मचारियों की संयुक्त संघर्ष समिति के प्रतिनिधि गृहमंत्री से मिल रहे थे, गृहमंत्रालय के नौकरशाह उस अध्यादेश को आखिरी रूप देने में लगे हुए थे जिस के अधीन सरकार ने असाधारण अधिकार ले लिये हैं. १३ सितंबर को अध्यादेश, १९६८ विधिवत् जारी कर दिया गया. न केवल प्रतिपक्ष के नेताओं ने बल्कि जागरूक जनमत के एक बहुत बड़े भाग ने इस अध्यादेश को लोकतंत्र की मान्यताओं के खिलाफ़ बताया. वैसे १९५७ और १९६० में भी सरकार ने अध्यादेश जारी किये थे लेकिन उस समय अध्यादेश का उद्देश्य सरकारी कर्मचारियों की आम हड़ताल को रोकना था, सांकेतिक हड़ताल पर अंकुश रखना नहीं. इस अध्यादेश के अधीन सरकार ने आवश्यक सेवा के संदर्भ में ओवर टाइम न करने तथा ऐसी गतिविधियों को भी शामिल कर लिया है जिन से आवश्यक सेवाओं को जारी रखने में किसी क़िस्म की अड़चन पैदा होती हो. जैसे इतना ही पर्याप्त न हो, १८९८ की अपराध प्रक्रिया संहिता को भी अध्यादेश ने बेकाम साबित कर दिया है और पुलिस अधिकारियों को नये अध्यादेश के अधीन आने वाले किसी व्यक्ति को बिना वारंट के गिरफ़्तार करने का अधिकार दे दिया है. अध्यादेश के दायरे को अधिक भयानक बनाते हुए कार्यकारिणी को अनेक असाधारण अधिकार दे दिये गये हैं जिन के अधीन सांकेतिक हड़ताल में भाग लेने वाले व्यक्तियों की सेवाओं को समाप्त करने और उन में व्यवधान मानने जैसी बातें भी आ जाती हैं. औद्योगिक विवाद क़ानून के अधीन प्राप्त पंच निर्णय के अधिकार से भी हड़तालियों को वंचित कर दिया गया तथा हड़ताल के दिन उन्हें किसी भी प्रकार की छुट्टी लेने से रोक दिया गया. रेल कर्मचारियों की व्यापक एकता में दरारें पैदा करने के उद्देश्य से एक विशेष अध्यादेश जारी किया गया जिस के ज़रिये भारतीय रेल अधिनियम (१८९०) को संशोधित कर दिया गया. इस संशोधित अधिनियम के अधीन सरकार हड़ताल में भाग लेने वाले कर्मचारियों को बिना वारंट के गिरफ़्तार कर सकती है, उन्हें दो साल की सज़ा या पांच सौ रुपये जुर्माना या दोनों ही कर सकती है. १९६० की आम हड़ताल को केंद्रीय सरकार ने 'नागरिक बग़ावत' करार देने के बावजूद इतने असाधारण अधिकार अपने हाथ में नहीं लिये थे. १९४९ के आरंभ में जब रेलवे कर्मचारियों ने केंद्रीय सरकार को अपनी संभावित हड़ताल की सूचना दी थी तो तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने बीच-बचाव किया था और तत्कालीन परिवहन मंत्री गोपाल स्वामी अय्यंगार कर्मचारियों के प्रतिनिधियों से वार्त्ता करने पर मजबूर हो गये थे तथा हड़ताल की संभावना टल गयी थी. इसी तरह १९५७ में अगस्त के प्रारंभिक सप्ताहों में जब केंद्रीय सरकार के कर्मचारियों ने हड़ताल का फ़ैसला किया था, जवाहरलाल नेहरू ने आकाशवाणी से अपने एक प्रसारण में उनसे हड़ताल वापस लेने की अपील की थी तथा उनकी माँगों पर सहानुभूतिपूर्वक विचार करने का आश्वासन दिया था. कर्मचारियों के नेताओं ने हड़ताल वापस ले ली थी. इसी तरह ७ जुलाई, १९६० को भी नेहरू ने कर्मचारियों की एक प्रस्तावित हड़ताल को टालने का प्रयास किया था. नेहरू का यह प्रयास यद्यपि सफल नहीं हुआ लेकिन हड़ताल के कुछ समय बाद एक संयुक्त सलाहकार समिति गठित कर दी गयी थी. लेकिन १९ सितंबर की सांकेतिक हड़ताल को टालने के लिए इस तरह का कोई प्रयास प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी की ओर से नहीं किया गया. सांकेतिक हड़ताल के बाद अपने राष्ट्रीय प्रसारण में उन्होंने कर्मचारियों की माँगों को नितांत अव्यावहारिक बताया और इस तरह सिद्धांततः अपने उपप्रधानमंत्री मोरारजी देसाई का एक साल पूर्व का वह सुझाव स्वीकार-सा कर लिया जिसमें वेतन वृद्धि पर रोक लगाने की बात उठायी गयी थी. कर्मचारियों की हड़ताल के सिलसिले में पहले जारी किये गये अध्यादेशों और १३ सितंबर को जारी किये गये अध्यादेश में एक बुनियादी फ़र्क़ यह भी है कि हड़ताल के बाद इन अध्यादेशों का लागू किया जाना रोक दिया जाता था जब कि केंद्रीय सरकार की आंतरिक मामलों से संबद्ध समिति के फ़ैसले के अनुसार अध्यादेश, १९६८ हड़ताल के बाद भी लागू किया जाता रहेगा.

प्रधानमंत्री

विदेश भ्रमण

प्रधानमंत्री की लातीनी अमेरिका की यात्रा का उद्देश्य जितना आर्थिक सहयोग-साहचर्य की तलाश है उतना ही राजनैतिक परिचय-क्षेत्र बढ़ाने की कामना है. तीन सप्ताह में श्रीमती इंदिरा गांधी कितना सद्भाव अर्जित कर पाती हैं, कहना मुश्किल है, क्योंकि ब्राज़ील से सांस्कृतिक समझौते पर उन्होंने विदेशमंत्री की हैसियत से हस्ताक्षर करने पर बाध्य अनुभव किया. ब्राज़ील यात्रा की समाप्ति पर प्रकाशित संयुक्त वक्तव्य में सांस्कृतिक आदान-प्रदान के अलावा औद्योगिक तथा तकनीकी सहकार पर भी बल दिया गया है.

ब्राज़ील, आर्जेंतीना, चिली, पेरू, वेनेज़ुएला,

इंदिरा गांधी : लातीनी अमेरिका की खोज

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लातीनी अमेरिका के ये देश तथा अन्य देश भी कम आबादी और अधिक क्षेत्रफल वाले अविकसित देश हैं जो एशिया के अविकसित देशों की तरह दुनिया की राजनीति में अपना वजूद बनाने में जुटे हुए हैं. इस अर्थ में वे विभिन्नताओं के बावजूद हमारे समानधर्मा हैं. अणु-विस्तार निषेध-संधि पर ब्राज़ील को भी वही आपत्ति थी जो भारत को है, हालांकि कारण दूसरे हैं. संयुक्तराष्ट्र में भी इन देशों की आवाज़ बुलंद होती जा रही है. ये अल्पविकसित और विस्तृत राज्य अधिकतर सैनिक तानाशाही और अमेरिकी प्रभाव के साये में बढ़ रहे हैं जिन की ओर साम्यवादियों की भी निगाहें जमी हुई हैं. उन की और छापामारों की गतिविधियाँ चाहे जितनी सीमित हों आकस्मिक नहीं हैं. ऐसी सूरत में इन असंबद्ध देशों से रब्त-ज़ब्त अंतर्राष्ट्रीय राजनीति की बिसात पर सहायक ही हो सकती है.

पिछले दशक में लातीनी अमेरिका के देशों और भारत का व्यापार काफ़ी घट गया है जिसे कोशिश कर के बढ़ाया जा सकता है. रेल-डिब्बे, मशीन टूल आदि के कारखाने खोलने में भारत उन की सहायता कर सकता है. जिस तरह प्रधानमंत्री श्रीमती गांधी की मलयेसिया-सिंगापुर-यात्रा के बाद वहाँ पर संयुक्त उद्योग खोलने के प्रस्ताव पर विचार शुरू हो गया, उसी तरह हो सकता है कि भारतीय प्रधानमंत्री की पहली यात्रा इस क्षेत्र में भी औद्योगिक सहकार की नींव रखने में सहायक हो.

अंतर्धारा

जिस की लाठी उस की बेंत

सफ़ेदपोश बाबुओं पर पुलिस की मार के बाद राजनैतिक लाभ-हानि का जो लेखा-जोखा शुरू हो गया है उस ने लोगों का मन दो मौलिक प्रश्नों की ओर से मोड़ दिया है : एक यह है कि महँगाई की चट्टान पर रद्दे कब तक चढ़ते जायेंगे और दूसरा यह कि पुलिस निरपराध जन-साधारण के लिए हौवा कब तक बनी रहेगी. महँगाई की बात इस समय कोई नहीं कर रहा है—अर्थात् हर कोई जिस ने ज़िंदगी बसर करने लायक़ तनख्वाह की आवाज़ दी थी. हड़तालियों के ग़ैर-कर्मचारी नेता गृहमंत्री से अपनी नेतागिरी मनवाने के लिए समझौते में लगे हुए हैं और गृहमंत्री दिसंबर में होने वाले जिस विराट् हड़ताली भूकंप का खतरा बताते हैं उसे टलवाने की उम्मीद में नरम होने का-सा आभास दे रहे हैं—ऐसा लगता है कि यही दोनों इस हड़ताल से सब से अधिक फ़ायदे में रहे. प्रधानमंत्री ने जब हड़ताल के एक दिन बाद—पहले नहीं—रेडियो पर देशवासियों से विदा लेने के निमित्त से हड़तालियों से सहानुभूति दरशायी थी तो शायद यह सोच कर कि कम से कम कुछ दिन तक तो यह समस्या उन के सर पर खड़ी नहीं रहेगी यह भी कह डाला था कि सरकार महँगाई घटाने के उपाय कर रही है. पर ढूँढ़ने पर भी मालूम करना मुश्किल है कि दिल्ली में दो-एक खर्चीले बड़े बाज़ार और कुछ छोटे शहरों में ऐसे ही बाज़ारों की अधूरी इमारतें स्थापित करने के अलावा सरकार ने पिछले १८ महीने में मुनाफ़ाखोरी, ज़खीरेबाज़ी और मनमानी खरीद रोकने के क्या उपाय किये हैं. पिछली फ़सल अच्छी होने से दाम एकाएक उतरे थे. अब वे फिर बेतहाशा चढ़ने को छटपटा रहे हैं. बिना किसी कार्यक्रम के दाम घटाने की शेखी बघारने से स्पष्ट है कि प्रधानमंत्री और उन के सहयोगी अब भी इस ग़लतफ़हमी में हैं कि सामान्य जन हर बार हमारी सफ़ाई मान जाया करेंगे कि दैवी प्रकोप से दुर्भिक्ष हो तो हम क्या करें. वायदों और कोरी लफ़्फ़ाज़ी का वक़्त बहुत पहले गुज़र चुका था और लोग जाने कब निराश हो चुके थे कि न तो यह सरकार अपनी अक्ल से सोचती है न बार-बार कहने पर सुनती है, न खुद जो बार-बार कहती है उसे पूरा करती है; और इस नतीजे पर आ चुके थे कि अब बात की जगह कोई और तरीक़ा इस्तेमाल करना चाहिए. पर सन् '६७ के चुनाव ने एक बार फिर शब्द और विचार में आस्था जगायी और लोकतंत्र को औंधे मुँह गिरने से बचाया. इस समय प्रायः तीन-चौथाई देश में राष्ट्रपति अथवा कांग्रेस का शासन फिर जम जाने से यह आस्था डाँवाडोल हो चली है. सामान्य आदमी नहीं जानता कि वह जिन परिवर्त्तनों के लिए व्याकुल है उन्हें फलीभूत कराने के लिए किस के पास जा कर अपनी बात समझाये—क्या उसी के जो एक बार समझने-सोचने से इनकार कर चुका है और अब डंडे के ज़ोर पर पहले से ज्यादा यक़ीन करता है ?

यह तर्क कि इस महीने की सरकारी कर्मचारियों की सांकेतिक हड़ताल के बाद एक बड़ी भारी उलट-पुलट होने वाली थी इस लिए सरकार को सख्त रवैया अख्तियार करना पड़ा अत्यंत मुंशियाना, प्रशासनिक तर्क है और गृहमंत्री के मुँह से इसे सुन कर पूछना पड़ता है कि उन का राजनैतिक दल इस होने वाली उलट-पुलट के निवारण के लिए कौन-सी राजनैतिक कारंवाई कर रहा था. कहीं ऐसा तो नहीं कि वह भी इस बहती गंगा में कुछ वोट फँसाने का इंतज़ार कर रहा था ? जन-साधारण को कुछ राजनैतिक तत्त्वों के खतरनाक इरादों से डरवाना और उन इरादों की राजनैतिक काट में स्वयं असमर्थ हो कर रोज़ी-रोटी छीनने की धमकी से व्यक्ति का सम्मानजनक जीवन कुंठित कर देना किसी बड़े स्वाधीन राष्ट्र के नेता का नहीं, बल्कि वेतनभोगी दासवृत्ति सरकारी सचिव का काम है. उस की परिकल्पना में सरकारी कर्मचारियों का हौसला तोड़ने में और 'इंद्रप्रस्थ भवन' में उन का सर तोड़ने में कोई विरोध नहीं है. इस पर गृहमंत्री का यह अंदाज़ कि ग़लत निर्णय या ज्यादती हो गयी हो सकती है, हद दर्जे भोला मालूम होता है. एक ओर पुलिस में सामान्य आदमी के लिए तिरस्कार पैदा करना और दूसरी ओर उस से यह आशा रखना कि वह तिरस्कार सिखाने वाले राजनीतिक से भी अधिक संयम बरतेगी बुद्धि का भयंकर उलट-फेर है. पिछले २० वर्षों में पुलिस से कलफ़दार खादीधारी मोटर सरकार 'अति विशिष्ट व्यक्तियों' की चौकीदारी, सलामी, सजावट और सेवा का काम इतने बड़े पैमाने पर कराया गया है कि वह अंग्रेज़ों के वक़्त से भी ज्यादा दरबारी बड़प्पन हासिल कर चुकी है. वह एक ओर गुंडों और दूसरी ओर बड़े आदमियों तथा कुल मिला कर इन दोनों से संयुक्त संपर्क में इतना अधिक रही है कि शायद वह भूल चुकी है कि सामान्य व्यक्ति इन दोनों से पनाह माँगता है. सौभाग्य से पुलिस में सिपाहियों और अफ़सरों की भरती किसी दूसरे देश से नहीं भारतीय ज़िलों से ही होती है और वह लोग भी अपने घर पर उसी तरह की तंगी, घुटन और बेसब्री का अनुभव करते हैं, जैसे बाबू करते हैं. पिछले साल अप्रैल में गृहमंत्री के घर पर हज़ारों पुलिस कर्मचारियों के प्रदर्शन के समय शायद पुलिसवालों को अनुभव हुआ होगा कि वे भी सामान्य नागरिक हैं क्यों कि उन के प्रदर्शन से गृहमंत्री के घर की रक्षा के लिए सीमा सुरक्षा पुलिस और केंद्रीय आरक्षित पुलिस बुलायी गयी थी और उसी ने दिल्ली पुलिस के करीब ७०० आदमी गिरफ़्तार किये थे. परंतु शासनतंत्र पुलिस को सामान्य व्यक्ति से अलग वैसी ही दंडधारी सत्ता बनाये रखना चाहता है जैसी वह १९४७ में थी. बल्कि आज तो वह जानता है कि कोई राजनीतिक नेता बिना पुलिस की सहायता के सरकार चला नहीं सकता जब कि १९४७ में उसने पाया था कि उस की पुलिस के बावजूद सरकार बदल दी गयी है. इंद्रप्रस्थ भवन में पुलिस ने एकाएक जो किया उसे पुलिसतंत्र की संपूर्ण व्यवस्था से अलग कर के देखना ग़लत होगा. चाहे गृहमंत्री इस समय कितना ही मुआवज़ा दें और खेद प्रकाश करें, वह पुलिस की परिकल्पना में कोई मौलिक परिवर्त्तन नहीं करने जा रहे हैं. लाठी की जगह बेंत कोई मौलिक परिवर्त्तन नहीं है. साम लगी लाठी से शायद बंद कमरों में घुस कर मारना दिक़्क़ततलब भी है, बेंत वहाँ आसान साबित हो सकता है.

—रघुवीर सहाय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूर्वोत्तर भारत

समाधानों की शवयात्रा

पूरे चार साल के युद्ध-विराम के दायरे में विराम युद्ध की यंत्रणा से गुज़र रहे नगालैंड में शक्ति संतुलन के एक बार फिर खराब होने के समाचार मिले हैं. कुछ सूत्रों की खबर है कि विद्रोही नगाओं के सेनाध्यक्ष जनरल मोऊ अंगामी जो कुछ समय पहले छापामार युद्ध में प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए भारी संख्या में नगा विद्रोहियों के साथ पीकिङ पहुँचे थे अब नगालैंड में प्रवेश करने की कोशिश कर रहे हैं. उन के साथ छापामार युद्ध में प्रशिक्षित लगभग एक हज़ार विद्रोही नगाओं का दल है. इन्हें नगालैंड में घुसने न देने के रास्ते में कुछ राजनैतिक और कुछ व्यावहारिक कठिनाइयाँ हैं : व्यावहारिक कठिनाई यह कि नगा सीमा प्रदेश घने जंगलों से आच्छादित है; राजनैतिक कठिनाई यह कि युद्ध-विराम समझौते के अधीन भारतीय सुरक्षा सैनिक तीन मील के दायरे में ही अपनी गतिविधियाँ जारी रख सकते हैं. कुछ पहले केंद्रीय मंत्रिमंडल की आंतरिक मामलों से संबद्ध समिति ने इन कठिनाइयों पर विचार किया. सरदार स्वर्ण सिंह, जगजीवनराम और यशवंतराव चव्हाण इस बात पर एकमत नज़र आये कि क्यों कि नगा विद्रोही युद्ध-विराम समझौते की अवहेलना कर के विदेशों से शस्त्रों का आयात कर रहे हैं इस लिए सुरक्षा की दृष्टि से भारतीय सेना की गतिविधियों को भी तीन मील के दायरे में सीमित करने का सवाल बेमानी पड़ जाता है. आंतरिक मामलों से संबद्ध समिति की बैठक प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी और उप-प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई की अनुपस्थिति में हुई थी और इस बैठक में यह फ़ैसला भी किया गया कि युद्ध-विराम संधि की मियाद को, जो ३० सितंबर को समाप्त हो रही है, आगे बढ़ा दिया जाना चाहिए—मतलब यह कि केंद्रीय सरकार अभी भी नगा समस्या का राजनैतिक समाधान निकालना चाहती है.

न केवल नगालैंड बल्कि समूचे पूर्वोत्तर भारत की राजनीति सुलझने का भ्रम पैदा करके क़िस्तों में उलझती गयी है. नगालैंड में ३० जनवरी को आम चुनाव हैं. मुख्यमंत्री अंगामी इस बीच कुछ सनसनीखेज़ कर गुज़रना चाहते हैं. गत सप्ताह नयी दिल्ली में मुख्यमंत्रियों के सम्मेलन से छूटने के बाद अंगामी ने केंद्रीय नेताओं से बात-चीत की और असम से अपने प्रदेश के सीमा विवाद के समाधान के नाम पर एक सीमा आयोग के गठन की माँग की. नगालैंड के मुख्यमंत्री की शिकायत थी कि असम और उन के प्रदेश के लिए एक राज्यपाल और एक उच्च न्यायालय की व्यवस्था कर के नगालैंड के अधिकार क्षेत्र को सीमित कर दिया गया है.

पूर्वोत्तर भारत की राजनीति के अंतहीन से लगने वाले रेगिस्तान में भी अपने को खुश रखने के लिए केंद्रीय नेताओं ने कुछ नखलिस्तान तलाश लिये हैं. असम के पुनर्गठन का जो नया सूत्र उन्होंने पेश किया है, उसे ऐसे ही एक नखलिस्तान की संभावना को सफल बनाने के सूत्र के रूप में वे देख रहे हैं. पुनर्गठन के केंद्रसूत्र के अधीन, असम का जो संघ बनेगा उस में पहाड़ी इलाक़ों की स्थिति उपराज्यों की होगी जिन्हें क़ानून और व्यवस्था को छोड़ कर राज्य को प्राप्त होने वाले लगभग सभी अधिकार प्राप्त रहेंगे. केंद्रीय सरकार का दावा है कि असम के पुनर्गठन का इस से बेहतर सूत्र निकालना संभव नहीं है. और इस दावे के समर्थन में उसने असम कांग्रेस और ऑल पार्टी हिल लीडर्स कांफ्रेंस के नेताओं की प्रतिक्रियाओं को पेश किया है. असम के मुख्यमंत्री बिमलप्रसाद चालिहा ने जहाँ इस नये सूत्र को प्रयोग की प्रक्रिया से गुज़रने देने का आश्वासन दिया है वहाँ दूसरी ओर केंद्र सरकार को आशा है कि आल पार्टी हिल लीडर्स कांफ्रेंस के नेता भी इसे स्वीकार कर लेंगे. **दिनमान** के प्रतिनिधि से अपनी विशेष भेंट के दौरान केंद्रीय मंत्रिमंडल की आंतरिक मामलों से संबंधित समिति के एक विशिष्ट प्रतिनिधि ने यह स्वीकार किया कि गारो, जयंतिया और खासी के पहाड़ी क्षेत्रों के नेता प्रस्तावित उपराज्य के अधिकार क्षेत्र में क़ानून और व्यवस्था के अधिकार को न पा कर असंतुष्ट ज़रूर हैं लेकिन फ़िलहाल कोई दूसरा विकल्प न होने के कारण इस नये पुनर्गठन सूत्र को स्वीकार कर लेंगे. यह सच है कि आल पार्टी हिल लीडर्स कांफ्रेंस के नेता कैप्टेन संगमा, निकोलस राय और जी. जी. स्वैल उग्रवादी नहीं हैं, लेकिन अपने आत्मीय क्षणों में वे इस तरह की रियायतों को दूसरी बड़ी रियायतें हासिल करने के साधन के रूप में ही स्वीकार करते हैं. इस संभावना को निराधार नहीं कहा जा सकता कि नये सूत्र के अनुसार गठित असम को एक बार फिर राजनैतिक संकट का सामना करना पड़े क्यों कि देर-सबेर से पहाड़ी क्षेत्रों के प्रतिनिधि असम से अलग राज्य की माँग भी कर सकते हैं. फ़िलहाल उन्होंने प्रत्यक्ष कार्रवाई का रास्ता छोड़ दिया है लेकिन गत आठ महीनों में उन के स्वयंसेवकों की संख्या का बीस हज़ार से बढ़ कर पैंतीस हज़ार हो जाना इस बात का परिचायक है कि भविष्य में राजनैतिक महत्वाकांक्षा के नये आयाम भी सामने आ सकते हैं. केंद्रीय सरकार मिज़ोलैंड में हाल की अपनी सफलताओं को पूर्वोत्तर भारत की राजनीति के विस्तृत रेगिस्तान के दूसरे नखलिस्तान के रूप में देखती है. उस के विश्वस्त सूत्रों ने उसे सूचना दी थी कि मिज़ो विद्रोहियों का राष्ट्रीय मोर्चा बिखर रहा है और सितंबर की पहली तारीख तक ६०० से भी अधिक मिज़ो विद्रोहियों ने आत्मसमर्पण कर दिया है.

फिर निजलिंगप्पा

एक दूसरे की घी चुपड़ी देख कर निजलिंगप्पा और हनुमंतैया की झाँय-झाँय से दोनों का जो चित्र सामने आया है वह अभी तक के जाने चौखटे में फिट बैठ नहीं रहा है. हैदराबाद के कांग्रेस मंच पर बड़े नखरों के बाद बैठे ब्रह्मानंद रेड्डी के स्वागत सत्कार से संतुष्ट गोलमटोल धर्मात्मा नहीं तो परिपूर्ण महंत दीखनेवाले तत्कालीन मुख्यमंत्री और लोकसभागार में वरिष्ठता के बल पर कोलाहल शांत करने की व्यर्थ चेष्टा को अंग्रेज़ी की गरिमा प्रदान करते हुए हंसोड़ दीखने वाले भूतपूर्व मुख्यमंत्री—यह कल्पना करना भी कठिन था कि एक की गंजी चाँद और दूसरे की दीवानशाही पगड़ी का गौरव इतना क्षणभंगुर सिद्ध होगा.

वह गौरव कम से कम पिचक तो बुरी तरह गया है. आज की बेरोज़गारी और आर्थिक लाचारी के वातावरण में दो बड़े आदमियों का आपस में तू-तू, मैं-मैं इस बात पर हो कि किस ने कितना कमाया तो साधारण जनता मुंह बाये देखते रहने के अलावा क्या कर सकती है.

जब निजलिंगप्पा मैसूर के मुख्यमंत्री थे तब उन्होंने राज्य के प्रमुख कांग्रेसियों से उन की संपत्ति का ब्यौरा माँगा था. वह तो कांग्रेस अध्यक्ष हो कर चले आये. उत्तराधिकारी वीरेंद्र पाटिल ने विधानसभा को जब प्राप्त ब्यौरे की सूचना दी तो उस में हनुमंतैया का, जो उन्हीं दिनों प्रशासनिक सुधार आयोग के अध्यक्ष की हैसियत से केंद्रीय मंत्रिमंडल के कार्य पर केंद्र को बौद्धिक सलाह दे रहे थे, नाम नहीं था. तुरंत हनुमंतैया ने भाँपा कि इस में बदनामी है और उन्होंने पलट कर निजलिंगप्पा का ब्यौरा माँगना ही अपने को बचाने की चाल बताया. निजलिंगप्पा ने यह कचरा उठा कर फिर पड़ोस के पिछवाड़े फेंक दिया "मैं हर जांच के लिए तैयार हूँ."

निजलिंगप्पा के दामाद को लंदन में एक बहुत विशिष्ट प्रकार की राजकीय नौकरी देने पर लोकसभा में जो हल्ला प्रतिपक्ष से मचा था उस पर कुछ खैरख्वाहों ने खेद प्रकट किया था कि कांग्रेस अध्यक्ष को भी इस में घसीटा गया. अब वह खुद घिसट कर ऐसे आरोपों के चक्कर में आ गये हैं.

पर बड़े और खास कर कांग्रेसी नेताओं के अतीत पर रोशनी डालने से एक बड़ी समस्या सामने आयी है. ये लोग अपने लड़कों, भतीजों, दामादों, सालों का क्या करें ? यदि वे रुपया कमा कर या न भी कमा कर ऐश-आराम पर फूंकना चाहें तो इस में देशविरोधी क्या है और इस के लिए पिताओं को जवाबदेह क्यों होना पड़े ? ऐसे पिता भी हैं जो अपने नाम चा[illegible] भी जमा नहीं रखते और दुनिया के सुख [illegible] पास दौड़े चले आते हैं. इन्हें, ब्यौरा देने में कोई कठिनाई नहीं हैं इन के ब्यौरे तो केंद्रीय स्तर पर एकत्र एवं प्रकाशित कर ही देने चाहिए.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रदेश

मध्यप्रदेश

शतरंजी चालों के दो मास

दिनमान दो महीने बंद रहा. इस बीच मध्यप्रदेश में नर्मदा और चंबल में न जाने कितना पानी बह गया और वहाँ के राजनीतिज्ञों ने न जाने कितने गोते लगाये. संविद गिरते-गिरते फिर सँभल गयी किंतु उस के कार्यकलापों की क़लई इन दो महीनों में इतनी खुल गयी कि जब संविद गिरेगी, तो उस के लिए सर्वसाधारण में से कोई दो बूँद आँसू बहाने वाला भी न मिलेगा.

संविद के श्री गोविंद नारायण सिंह को राजा नरेशचंद्र के रूप में, उन्हीं के शब्दों में 'हीरा' मिल गया—हालाँकि यह वास्तव में हीरा है या काँच, यह भविष्य ही बतायेगा. बात-चीत के दौरान एक बात यह स्पष्ट हो गयी थी कि द्वारका प्रसाद मिश्र और गोविंद नारायण सिंह दोनों ने सारंगगढ़ के राजा नरेशचंद्र का उपयोग अपने स्वार्थ के लिए करने की कोशिश की. द्वारका प्रसाद मिश्र ने श्यामाचरण शुक्ल को कांग्रेस विधायक दल के नेतृत्व से हटाने के लिए उन को मोहरा बनाया—यह कह कर कि वह उन्हें ही शुक्ल के स्थान पर नेता मानने को तैयार हैं. दूसरी तरफ़ उन्होंने यह सुरसुरी भी छोड़ दी कि मिश्र गुट के लोग उन को नहीं चाहते. राजा साहब ने सर्वसम्मत चुनाव की शर्त रखी थी. उसे मिश्र जी ने ही तिकड़म लगा कर स्वीकार न होने दिया और अंत में स्वयं ही श्यामाचरण शुक्ल को खिसका कर नेता बन बैठे.

श्री मिश्र द्वारा अंगूठा दिखाये जाने की प्रतिक्रिया में राजा नरेशचंद्र सिंह ने जहाँ कांग्रेस त्याग कर संविद, (लोक सेवक दल) का पल्ला पकड़ा, वहीं विधानसभा की सदस्यता भी दल बदलने के साथ त्याग कर एक आदर्श प्रस्तुत किया. यह बात दूसरी थी कि दलबदल के लिए उन्हें गोविंद नारायण सिंह ने मुख्यमंत्री की कुर्सी देने का वचन दिया.

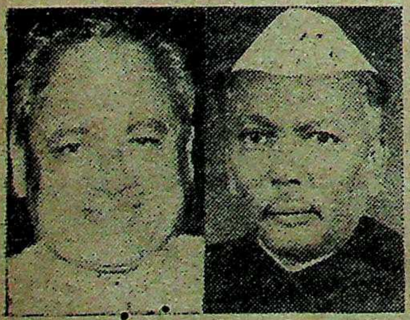

गोविंद नारायणसिंह और राजा नरेशचंद्र : इधर से उधर, मगर किधर?

शायद इस आशा से ही राजा साहब ने कांग्रेस त्यागा भी. उन का नाम दो सप्ताह तक खूब चला. उन की बड़ी क़दर हुई. प्रधानमंत्री तथा अनेक केंद्रीय मंत्री, द्वारका प्रसाद मिश्र, राजमाता विजयराजे सिंधिया और गोविंद नारायण-सिंह सब ने उन की खुशामद की और अपने स्वार्थ के लिए उपयोग किया. परंतु इधर लग रहा है कि संविद और गोविंद नारायणसिंह ने भी उन्हें अंगूठा ही दिखा दिया है. राजमाता ने स्पष्ट कह दिया कि गोविंद नारायणसिंह ने मुख्यमंत्रित्व छोड़ने की कोई इच्छा प्रकट नहीं की है और जब तक वह स्वयं नहीं हटते, उन्हें हटाने का कोई प्रश्न ही नहीं पैदा होता. इस प्रकार राजा साहब दीन-दुनिया दोनों से गये दिखायी देते हैं. पिछले कुछ दिनों में राजा साहब को ले कर कई तरह की अफ़वाहें गर्म रहीं. कुछ लोगों के अनुसार गोविंद नारायण सिंह ने स्वेच्छा से उन के लिए मुख्यमंत्री का पद छोड़ने की इच्छा व्यक्त की. कुछ लोगों का ख़्याल था कि श्री सिंह ऐसा नहीं करेंगे. राजा ने प्रश्न के उत्तर में यही जवाब दिया कि उन की अपनी कोई इच्छा नहीं है. राजमाता ग्वालियर ही उन की उच्च कमान है. वह जैसा कहेंगी, वैसा करेंगे. एक ख़बर यह भी थी कि कि राजा साहेब जब दिल्ली आये थे तो उन की जेब में गोविंद नारायण सिंह का त्यागपत्र भी था. इसी ख़बर के आधार पर यह भी कहा गया कि मुख्यमंत्री पद से मुक्त होने के बाद श्री सिंह को राज्य योजना आयोग के अध्यक्ष पद पर बिठाया जायेगा.

किंतु राजा साहेब को ले कर संविद में दो गुट हो गये हैं, एक गुट का कहना है कि उन्हें दिया वायदा पूरा कर उन्हें मुख्यमंत्री बनाया जाना चाहिए, दूसरा इस का विरोध कर रहा है. मंत्रिमंडल के ३२ सदस्यों में से १६ ने गोविंद नारायण सिंह पर यह स्पष्ट कर दिया है कि यदि राजा साहब को मुख्यमंत्री बनाया गया तो वे त्यागपत्र दे देंगे. १६ मंत्रियों का यह दल मुख्यमंत्री के निवास पर अपनी जेबों में त्याग पत्र ले कर गया था. प्रस्तावित परिवर्तन के विरोध को ध्यान में रखते हुए फिलहाल मुख्य मंत्री ने पुनर्विचार के लिए और समय की माँग की है.

नाटक और अधिवेशन : इन शतरंजी चालों के बीच विधानसभा का अधिवेशन प्रारंभ हुआ और बारह दिन चल कर २० सितंबर को समाप्त हो गया. इस अधिवेशन में शिक्षा विभाग के **टाटपट्टी घोटाले** पर चर्चा मुख्य विषय रही. कांग्रेस विधायक दल के नेता द्वारका प्रसाद मिश्र ने अविश्वास का प्रस्ताव रखा—५० से अधिक आरोप संविद शासन पर लगाये किंतु अंत में चर्चा हेतु अधिक समय न दिये जाने के विरोध में उन्होंने समस्त दल के साथ बहिर्गमन कर दिया. अन्य विरोधी सदस्यों ने भी ऐसा ही किया. परिणामतः यह प्रस्ताव ध्वनि मतदान से जब अस्वीकृत घोषित किया गया तब एक भी विरोधी सदस्य सदन में नहीं था.

विधानसभा में सरकारी कर्मचारियों की हड़ताल पर चर्चा के दौरान **दिनमान** भी पेश किया गया. इसी दौरान एक नाटक भूतपूर्व जनसंघी आदिम जाति कल्याण मंत्री भानुप्रतापसिंह ने भी खेला—जो श्यामाचरण शुक्ल के प्रयासों के परिणामस्वरूप अपने तीन साथियों सहित कांग्रेस में शामिल हो गये. जब से उन्हें जनसंघ ने दुबारा मंत्री नहीं बनाया था तब से और शायद उस के पहले से ही जनसंघ में उन की आस्था नहीं रह गयी थी. यद्यपि उन का जनसंघ छोड़ना आश्चर्य की बात नहीं थी परंतु उस ने संविद में नये संकट की कुछ संभावना अवश्य उत्पन्न की. किंतु ज्यों ही द्वारका प्रसाद मिश्र कांग्रेस विधायक दल के नेता चुने गये, वह अपने साथियों सहित जनसंघ में तो नहीं (क्यों कि वह उन्हें वापस लेने को तैयार नहीं था) बल्कि संविद की दूसरी इकाई **लोकसेवक दल** में लौट गये.

आरोपों का पुलिंदा : कांग्रेस ने साढ़े चार लाख हस्ताक्षर युक्त एक याचिका राज्यपाल को दी है जिस में संविद शासन पर विभिन्न आरोप लगाये गये हैं. राष्ट्रपति को भी याचिका देने की घोषणा द्वारका प्रसाद मिश्र ने की है. यों उन के पैंतरे श्यामाचरण शुक्ल के पैंतरों से भिन्न हैं. वह दलबदल द्वारा सरकार गिराने के पक्ष में कम से कम ऊपरी तौर पर, प्रतीत नहीं होते. उन का ख़्याल है संविद अपने-आप टूटेगी और यह अगले ५-६ महीनों में हो जायेगा. उन का दूसरा प्रयास राज्य में संविद के विरुद्ध व्यापक आंदोलन चला कर ऐसी परिस्थिति पैदा करना भी हो सकता है, जिस में केंद्र उस प्रकार का हस्तक्षेप करे, जैसा उस ने कुछ वर्ष पहले केरल में किया था और मंत्रिमंडल बरख़ास्त हो गया था. किंतु क्या कांग्रेस ऐसा आंदोलन कर सकेगी ? बहुतों को संदेह है.

प्रदेश जनसंघ में भी इस बीच 'क्रांति' हो गयी. जनसंघ पुनः मंत्रिमंडल में आया, किंतु उस के सात मंत्रियों में से केवल दो—वीरेंद्र कुमार सकलेचा और गोवर्धनदास खंडेलवाल पुराने चेहरे थे—शेष सब नये हैं. उधर प्रदेश जनसंघ में समय से पूर्व ही नये चुनाव हुए, जिन में सन् १९५२ से लगातार महामंत्री पद पर रह रहे, लौह-पुरुष कुशाभाऊ ठाकरे के स्थान पर नरेश जौहरी महामंत्री बन गये और अध्यक्ष श्री शेजवलकर के स्थान पर भूतपूर्व वित्तमंत्री श्री रामहित गुप्त प्रतिष्ठित हुए. जनसंघ की प्रतिनिधि सभा का अधिवेशन इंदौर में हुआ. शायद पहली बार उस के अनुशासन की उपेक्षा कर, विरोध का दबा स्वर दिखायी दिया. मध्यप्रदेश जनसंघ भी अब पहले की तरह अनुशासित दल नहीं रह गया है. यहाँ भी कुर्सियों का मोह उत्पन्न हो चुका है और गुटबंदी के आसार दिखाई देने लगे हैं.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हरयाणा

कुर्सी की फ़िक्र

सब से छोटे राज्य के छोटे मुख्यमंत्री बंसीलाल के सामने आज कुछ बड़ी-बड़ी समस्याएँ खड़ी हैं. भूतपूर्व मुख्यमंत्री पंडित भगवद्दयाल शर्मा और वर्तमान मुख्यमंत्री के बीच तनाव की दरारें तो काफ़ी पहले से पड़ चुकी थीं लेकिन तीन मंत्रियों के मुख्यमंत्री को त्यागपत्र दे देने से यह तनातनी और गहरी हो गयी. चौधरी रणसिंह, राव महावीर सिंह और रामधारी गौड़ के, जो कि भगवद्दयाल के समर्थक हैं, त्यागपत्रों ने न सिर्फ़ मुख्यमंत्री के वरन् कांग्रेस-अध्यक्ष निजलिंगप्पा के लिए भी ख़ासा सिरदर्द पैदा कर दिया है. उन के त्यागपत्र बेशक स्वीकार किये जा चुके हैं लेकिन कांग्रेस-अध्यक्ष निजलिंगप्पा ने यह बात साफ़ तौर से मुख्यमंत्री के कानों में डाल दी है कि वह फ़िलहाल अपने मंत्रिमंडल का विस्तार न करें. निजलिंगप्पा को इस बात का काफ़ी भरोसा है कि बंसीलाल और भगवद्दयाल के संबंध अभी भी सुधर सकते हैं.

नया धरातल : इस मतभेद का मुख्य कारण प्रदेश कांग्रेस अध्यक्ष की कुर्सी है. श्री भगवद्दयाल शर्मा इस कुर्सी पर ख़ुद आसीन होना चाहते हैं लेकिन उन के विरोधियों का कहना है, और इसी तरह का निश्चय कांग्रेस हाई कमान भी कर चुकी है, कि संसद्-सदस्य प्रदेश कांग्रेस अध्यक्ष नहीं बन सकता. इस बीच मुख्यमंत्री बनने के बाद बंसीलाल ने भी अपनी स्थिति काफ़ी मज़बूत कर ली है और वर्तमान कांग्रेस-अध्यक्ष रामकिशन तो काफ़ी पहले से भगवद्दयाल विरोधी हैं. इतने सारे विरोधों के बावजूद भगवद्दयाल कांग्रेस-अध्यक्ष का आसन ग्रहण करने को उत्सुक हैं. राजनैतिक हलक़ों का ख़याल है कि शुरू-शुरू में बंसीलाल को भगवद्दयाल के कांग्रेसा अध्यक्ष बनने में कोई आपत्ति नहीं थी लेकिन भगवद्दयाल और उन के समर्थकों द्वारा दबाव डाल कर कुछ ग़ैर-वाजिब काम कराने के ढंग से उन्हें काफ़ी तकलीफ़ हुई है. इस के विरोध में भगवद्दयाल का कहना है कि बंसीलाल की सरकार डाकुओं की सरकार है और उस ने राज्य के उत्थान के लिए कुछ भी नहीं किया है. मज़े की बात यह है कि इस बार की लड़ाई का धरातल पहले की लड़ाई से भिन्न है अर्थात् जातिवाद से हर मामला परे है.

बातचीत, लेकिन : पिछले दिनों कांग्रेस-अध्यक्ष निजलिंगप्पा जब हिसार के दौरे पर गये थे तो उन्होंने मुख्यमंत्री बंसीलाल से इस मतभेद पर बात-चीत की थी. बात-चीत में उन्होंने मुख्यमंत्री को यह सलाह दी कि भगवद्दयाल को वह खपाने की कोशिश करें. और कुछ ऐसा भी आभास मिला था कि बंसीलाल भगवद्दयाल के रास्ते में नहीं आयेंगे. लेकिन निजलिंगप्पा के पीठ मोड़ते ही बंसीलाल यह कहते पाये गये कि अगर भगवद्दयाल को चुनाव लड़ना पड़ा तो उन का जीतना मुश्किल है. हाँ, यह बात जुदा है कि सदस्यों पर दबाव डाल कर उन का चुनाव सर्वसम्मति से करा लिया जाये, लेकिन सर्वसम्मति के नाम पर लादा गया यह चुनाव अधिक दिन टिकने का नहीं. मुख्यमंत्री ने यह भी कहा कि वह अब जल्दी अपने मंत्रिमंडल का विस्तार करेंगे. जब उन का ध्यान श्री गुलज़ारीलाल नंदा, जिन्हें मुख्यमंत्री अपना राजनैतिक गुरु मानते हैं, के पत्रों की तरफ़ दिलाया गया जिस में मुख्यमंत्री ने श्री नंदा को यह आश्वासन दिया था कि वह भगवद्दयाल के चुनाव के आड़े नहीं आयेंगे तो बंसीलाल ने छूटते ही कहा कि वे पत्र निजी तौर पर लिखे गये थे, इस राजनीति से उन्हें कुछ लेना-देना नहीं.

छीना-झपटी : हरयाणा के ८० सदस्यीय विधानसभा में कांग्रेस की सदस्य-संख्या ४८ है. अध्यक्ष को छोड़ कर यह संख्या ४७ रह जाती है. राजनैतिक हलक़ों का ख़्याल है कि भगवद्दयाल के समर्थकों की संख्या २० और २४ के बीच है. और अगर श्री शर्मा २५

भगवद्दयाल और बंसीलाल : आमने-सामने

सदस्यों को कांग्रेस हाई कमान के सामने पेश करने में समर्थ हो जाते हैं तो उन की स्थिति कुछ पुख़्ता हो सकती है. लेकिन इस के साथ ही कई हलक़ों में यह भी चर्चा है कि भगवद्दयाल की स्थिति अब वह नहीं रही जो मध्यावधि चुनाव के तुरंत बाद थी. यह अफ़वाह भी ज़ोरों पर है कि भगवद्दयाल भूतपूर्व मुख्यमंत्री राव वीरेंद्रसिंह से साँठ-गाँठ कर बंसीलाल की सरकार को गिराना चाहते हैं. लेकिन भगवद्दयाल ने इन अफ़वाहों को बेबुनियाद बताया है. वित्तमंत्री श्रीमती ओमप्रभा जैन के त्यागपत्र की भी ख़बर उड़ायी गयी थी लेकिन वह ख़बर भी ग़लत साबित हुई.

उत्तर प्रदेश

पिछड़ापन : क़सूर किसका ?

स्वाधीनता प्राप्ति के बाद उत्तर प्रदेश विभिन्न क्षेत्रों में अन्य प्रदेशों की तुलना में पिछड़ा और निरंतर पिछड़ता जा रहा है—इस कटु सत्य का जवाब पिछले दिनों राजधानी लखनऊ में 'प्रदेश के विकास की समस्याओं' के अध्ययन के लिए आयोजित उद्योगपतियों और विधान परिषद् के सदस्यों तथा प्रदेश के तथाकथित हितैषियों के एक सम्मेलन में आरोप-प्रत्यारोप के रूप में दिया गया. इस सम्मेलन में योजना-आयोग के उपाध्यक्ष श्री वी० आर० गाडगील भी मौजूद थे.

जैसी कि उम्मीद थी 'पिछड़ेपन' के लिए श्री गाडगील ने उत्तरप्रदेश वालों को क़सूरवार ठहराया और प्रदेश के लोगों ने केंद्र पर प्रदेश की उपेक्षा करने का आरोप लगाया. प्रदेश के लिए केंद्र से अधिक वित्तीय सहायता की माँग दोहरायी गयी और श्री गाडगील ने उसी पिटे-पिटाये तरीक़े से प्रदेश वालों को जता दिया कि जब तक वे ख़ुद अपने पैरों आप खड़े होने की कोशिश नहीं करते, केंद्र उन्हें कुछ भी नहीं देने वाला है.

श्री गाडगील की स्पष्टोक्ति को अलग रखने के बाद भी यह मानने के स्पष्ट कारण मौजूद हैं कि विगत् तीन आयोजनों में केंद्रीय सरकार और योजना-आयोग ने प्रदेश के प्रति उपेक्षा बरती. इस बात को नियोजकों ने कभी ध्यान में नहीं रखा कि इस प्रदेश की जनसंख्या देश के हर राज्य की जनसंख्या के मुक़ाबले कहीं ज़्यादा है. यही बात उक्त सम्मेलन में अध्यक्ष-पद से भाषण करते हुए राज्यपाल श्री बी० गोपाल रेड्डी ने इन शब्दों में कही, 'केंद्रीय अनुदान देते समय नियोजकों ने इस बात पर ध्यान नहीं दिया कि इस प्रदेश में ९ करोड़ अर्थात् भारत की जनसंख्या का पाँचवा और विश्व की जनसंख्या का २५वाँ भाग बसता है. और सच्चाई यह है कि केंद्रीय विकास व्यय का पंचमांश कभी उत्तर प्रदेश पर व्यय नहीं हुआ.

इस के अलावा एक कटु सत्य और भी है; और वह है—प्रथम तीन आयोजनों में उत्तर प्रदेश को केंद्रीय सहायता क्रमशः प्रति व्यक्ति औसत १४, १८ और ४६ रुपये के हिसाब से मिली, जब कि इन्हीं आयोजनों में केंद्रीय सहायता का अखिल भारतीय प्रति व्यक्ति औसत क्रमशः २५, २७ और ५८ रुपये था. इन आँकड़ों को ग़लत सिद्ध न कर के श्री गाडगील ने बार-बार यही सिद्ध करने का प्रयास किया कि आयोजनकाल में केंद्रीय सहायता के मामले में उत्तर प्रदेश की कभी उपेक्षा नहीं की गयी.

विपन्नता की जिम्मेदारी? : राष्ट्रीय उत्पादन में उत्तरप्रदेश का जो अंश होना चाहिए था, वह आज भी उस से ६ अरब रुपये कम है—इस सत्य को स्वीकार करने के बावजूद प्रश्न उठता है कि क्या यह सत्य नहीं है कि पहले दो आयोजनों में केंद्रीय पूंजी ६९४ करोड़ रुपये लगाकर देश भर में जो उद्योग खोले गये थे उन में से एक भी इस प्रदेश में नहीं है ? तब फिर प्रदेश की विपन्नता के लिए कौन अधिक जिम्मेदार है ?

लेकिन श्री गाडगील ने केंद्रीय जिम्मेदारी से कतरा कर प्रदेश की विपन्नता का दोष

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसी पर मढ़ने के लिए एक मज़ेदार तर्क पेश किया. उन्होंने कहा कि यदि कुल केंद्रीय पूंजी-न्यास में से इस्पात के कारखानों पर लगी राशि अलग कर दें तो शेष में उत्तर प्रदेश का अंश अनुपातिक हो जाता है. प्रश्न उठता है कि क्या इस्पात उद्योग का क्षेत्रीय विकास या बेरोज़गारी के निवारण में कोई योगदान नहीं है ?

इस के बावजूद गाडगील ने स्पष्ट शब्दों में कह दिया है—'केंद्रीय सहायता उन्हीं उद्योगों को मिलेगी जो उसे लौटाने की स्थिति में हों.' ज़ाहिर है कि प्रदेश के कुछ उद्योगों का, जो पहले से ही अंतिम साँसें गिन रहे हैं, बंटाढार अवश्यंभावी है. प्रदेश कभी चीनी उद्योग के लिए विख्यात था, लेकिन वह भी अब जर्जरावस्था में है. कानपुर को कभी उत्तरी भारत की औद्योगिक राजधानी कहलाने का हक़ प्राप्त था, लेकिन आज वहाँ का कोई भी उद्योग ऐसा नहीं है जो 'संकटग्रस्त' न हो.

जो भी हो, राज्य का चौथा आयोजन प्रदेश की असाधारण आर्थिक विपन्नता की पृष्ठभूमि में शुरू होने जा रहा है. आयोजन के तख़मीने प्रकाशित हो गये हैं. पूरा आयोजन ३० अरब ५० करोड़ रुपये का है. इस में से १३ अरब ५० करोड़ राज्य सरकार के क्षेत्र में, ८ अरब रुपये केंद्रीय सरकार द्वारा संचालित सार्वजनिक क्षेत्र में और ९ अरब रुपये निजी क्षेत्र में व्यय किये जायेंगे.

कृषि, उद्योग और अन्य क्षेत्रों के विकास के लिए आयोजन-काल में राज्य की बिजली उत्पादन क्षमता १४२७ मेगावाट से बढ़ा कर ३२४६ मेगावाट करने की परियोजनाएँ तैयार की गयी हैं. कृषि के क्षेत्र में खाद्यान्न उत्पादन का लक्ष्य २ करोड़ ४६ लाख ८२ हज़ार टन निर्धारित किया गया है. इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए २ करोड़ ५० लाख हेक्टाकड़ भूमि में उन्नत बीजों से फ़सल पैदा करने की योजना है. क्षेत्रीय असंतुलन समाप्त करने के लिए पूर्वी क्षेत्रों के लिए कुछ विशेष व्यवस्था की गयी है.

अपने साधन : आयोजन के अनुसार राज्य को अपने बूते १३ अरब ५० लाख रुपये के साधन जुटाने होंगे. इसका ब्यौरा इस प्रकार है—वित्त आयोग द्वारा की गयी सिफ़ारिश के परिणामस्वरूप अतिरिक्त आय १ अरब, केंद्रीय सहायता ६ अरब, कर वृद्धि ५६ करोड़, अल्प बचत १ अरब, बाज़ार से ऋण ३६ करोड़, राज्य सरकार द्वारा संचालित लाटरी से ५ करोड़, किफ़ायत १० करोड़, सुरक्षित कोष से निकाल कर ५ करोड़, राज्य विद्युत परिषद् से ६० करोड़ और संस्थागत वित्त ३ अरब ८ करोड़ रुपये.

विकास की समस्याओं पर हुए सम्मेलन में औद्योगिक समस्याओं पर विचार करते हुए उद्योगपतियों की ओर से बिजली की दर में कमी करने, बिक्री कर घटाने, उत्पादन शुल्क कम करने के सुझाव देने के साथ-साथ नये उद्योगों के अभिनवीकरण के लिए सरकार से पूंजी की व्यवस्था करने की भी माँग की गयी.

हालाँकि राज्यपाल श्री गोपाल रेड्डी ने यह आश्वासन दिया है कि उन की सरकार ६ करोड़ रुपये की केंद्रीय सहायता प्राप्त करने का भरसक प्रयास करेगी, फिर भी उन्होंने यह स्पष्ट रूप से बता दिया है कि केंद्रीय सहायता का १० प्रतिशत अंश प्रति व्यक्ति आय पर प्रति व्यक्ति के हिसाब से लगे हुए कर के अनुसार मिलेगी. इस का सीधा अर्थ यह हुआ कि प्रदेश के हिस्से में ४.९ प्रतिशत सहायता का अंश आयेगा.

कश्मीर

फूट की आग

पिछले कुछ दिनों में राज्य विधानसभा में कांग्रेस के दो गुटों के बीच कई मौक़ों पर जिस तरह की तू-तू, मैं-मैं हुई उस से यह साफ़ ज़ाहिर हो गया है कि अखिल भारतीय कांग्रेस की फूट की छूत इस राज्य में भी पहुँच गयी है और उस से कई लोग बुरी तरह परेशान हैं. वनमंत्री गुलाम रसूल कर ने अपने पद से त्यागपत्र दे दिया है. प्रदेश कांग्रेस के महासचिव त्रिलोचन दत्त ने भी त्यागपत्र का ही रास्ता अपनाया. ३-४ दिनों तक यह अफ़वाह भी गरम थी कि प्रदेश कांग्रेस के अध्यक्ष सैयद मीर क़ासिम ने भी त्यागपत्र दे दिया है. श्री क़ासिम ने त्यागपत्र के समाचार को ग़लत ज़रूर बताया है लेकिन श्री कर और श्री दत्त ने त्यागपत्र के कारणों पर प्रकाश डालते हुए जो कुछ कहा उस का सार सिर्फ़ यह है कि कांग्रेस संगठन पक्ष और शासन पक्ष के बीच गहरे मतभेद पैदा हो गये हैं. कुछ लोगों के ख़्याल से इस मतभेद का कारण केवल वैयक्तिक है लेकिन कुछ ऐसे भी लोग हैं जो इसे सैद्धांतिक मानते हैं. मुख्यमंत्री गुलाम मोहम्मद सादिक़ ने निस्संदेह ही इधर कुछ दिनों में इस बात की पूरी कोशिश की है कि मतभेद समाप्त हो जायें. कई-कई घंटे बंद कमरे में दोनों गुटों के प्रतिनिधियों की बात-चीत भी हुई है लेकिन ऐसा नहीं लगता कि मतभेद पूरी तौर पर समाप्त हो गये हैं. पिछले कुछ दिनों में यह बात भी ग़ौर की गयी है कि विधानसभा में बहस के दौरान न केवल विरोधी दल के लोग बल्कि कांग्रेस के लोग भी सादिक़ सरकार की नीतियों की आलोचनाओं में आगे रहे हैं.

नीति संबंधी आलोचना करते हुए कांग्रेसी सदस्य श्री शाह ने सूचनामंत्री श्री डोगरा से चुनौती की भाषा में यह प्रश्न पूछा कि क्या इस बात में सच्चाई नहीं है कि **रहनुमा** नामक पत्र को सरकारी विज्ञापन न देने के लिए मुख्यमंत्री ने उन को निर्देश दिया था? श्री [illegible] के पास कांग्रेसी सदस्य श्री शाह के प्रश्न का कोई तात्कालिक उत्तर तैयार नहीं था. उन की परेशानी सादिक़ साहब की समझ में बहुत जल्द ही आ गयी थी, इसी लिए उन्होंने जवाब में यह कहा कि राज्य सरकार जितना सहयोग उन पत्रों के साथ करती है उतने के भी वे हक़दार नहीं हैं.

जनतंत्र मोर्चा : शेख़ अब्दुल्ला के मोर्चे के समारोह की तैयारियाँ अपने ढंग से चल रही हैं, और उसे ले कर कई तरह की आशा और निराशा की तस्वीरें खींची जा रही हैं. लेकिन इस बीच उन के और अफ़ज़ल बेग के मतभेद, समारोह के संदर्भ में फिर सामने आये हैं. यह बात लगभग स्पष्ट हो चुकी है कि शेख़ और बेग में उस तरह के आत्मीय या विश्वासजनक संबंध अब नहीं हैं जो पहले थे. अब तो लोग यह भी कहने लगे हैं कि शेख़ साहब बेग में विश्वास नहीं करते. दूसरी तरफ़ शेख़ अब्दुल्ला ने मौलाना मसूदी, मौलवी फारूख, और जी० एम० कर जैसे अपने विरोधियों को कुछ दूर तक मना लिया है. नतीजा यह है कि अब शेख़ के प्रति उन का रवैया तीखे विरोध का नहीं है. जिन लोगों को कुछ दिनों पहले जनमत मोर्चे से निष्कासित किया गया था उन्हें भी शेख़ ने मनाने की कोशिश की है. ऐसे निष्कासित सदस्यों को आगामी समारोह में भाग लेने के लिए उन्होंने आमंत्रित भी किया है. उन्होंने पाक अधिकृत कश्मीर के कुछ नेताओं को मोर्चे के जन समारोह में शामिल होने के लिए निमन्त्रण दिया था और भारत सरकार से उन को बुलाने की अनुमति माँगी थी ! भारत सरकार ने उन का अनुरोध स्वीकार नहीं किया. यदि सरकार का यह अस्वीकार उन्हें काफ़ी भारी लग रहा है तो इस में आश्चर्य की कोई बात नहीं है ।

पश्चिम बंगाल

अपने-अपने पैंतरे

मध्यावधि चुनाव के समय के निर्धारण को ले कर लंबे अरसे तक चलने वाले विवाद का सिलसिला मुख्य चुनाव अधिकारी के निर्णय के साथ समाप्त हो गया और उस के लिए १७ नवंबर की तिथि निश्चित कर दी गयी. राज्य की जनता ने १९ महीने पहले मतदान द्वारा अपनी इच्छा व्यक्त की थी लेकिन उस की इच्छा के परिणाम में जो सरकार बनी वह क़ामयाब नहीं हो सकी और राज्य को राष्ट्रपति शासन के चंगुलों में जकड़ जाना पड़ा. अब फिर जनता की सरकार बनाने की उसी तरह की तैयारियाँ हो रही हैं और कांग्रेस तथा विरोधी दल अपनी-अपनी जीत की उम्मीद में अपने-अपने पैंतरों का इस्तेमाल शुरू कर रहे हैं. राज्यपाल का कहना है कि पिछले कुछ दिनों में, यानी जब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से राज्य में राष्ट्रपति का शासन लागू हुआ है, सामान्य स्थिति में सुधार हुआ है. लेकिन शायद राज्यपाल का यह कहना जनता के संतोष के लिए बहुत काफ़ी नहीं है. वास्तविकता यह है कि जनता अब भी अनिश्चय का शिकार है. उसे अपना पूरा भविष्य, चाहे उस का संबंध निजी सुरक्षा से हो चाहे आर्थिक संपन्नता से, अनिश्चय का ही शिकार दिखायी देती है. विश्वास उसे न कांग्रेस में ही रह गया है और न ही विरोधी दलों में. यही वजह है कि आगामी चुनाव को ले कर उस के मन में गहरी उदासीनता है. इस तथ्य से सरकारी लोग भी परिचित हैं. चुनाव अधिकारियों की एक बैठक में जनता की उदासीनता पर चिंता व्यक्त करते हुए एक प्रस्ताव यह रखा गया था कि मतदान को प्रत्येक व्यक्ति के लिए अनिवार्य बना दिया जाए. कुल मिला कर वास्तविकता यह है कि कांग्रेस जल्द से जल्द शासन पर अधिकार करना चाह रही है, जब कि विरोधी दलों की कोशिश यह है कि वे उसे हर क़ीमत पर पराजित कर दें.

पिछले दो महीनों में चुनाव-प्रचार के सिलसिले में कांग्रेस और कम्युनिस्ट दोनों दलों के नेताओं में जगह-जगह जनसभाएँ आयोजित कीं और उन में बहुत प्रभावशाली ढंग से अपने दल और उस के सिद्धांतों का औचित्य सिद्ध करने की कोशिश की. उन्होंने जनता को यह भी समझा देना चाहा कि उस के सामने सिवाय उन के दल के ऐसा कोई दल नहीं है जो राज्य की डगमगाती हुई नाव को किनारे लगा सके. कलकत्ते में संयुक्त मोर्चे ने एक बहुत बड़ी जनसभा का आयोजन किया और उस में बड़ी तादाद में लोग शामिल हुए. उस के बाद वामपंथी कम्युनिस्ट पार्टी ने एक रैली का आयोजन किया और वहाँ से उन के चुनाव प्रचार की शुरूआत हुई. राजनैतिक दृष्टि से कम्युनिस्ट पार्टी की यह रैली संयुक्त मोर्चे की जनसभा से अधिक महत्त्वपूर्ण थी. ज्योति बसु ने बहुत ही साफ़ शब्दों में यह कहा कि वामपंथी कम्युनिस्ट दल के सामने वर्त्तमान परिस्थितियों के कारण एक बड़ी ज़िम्मेदारी आ गयी है. उस की पराजय का मतलब संयुक्त मोर्चे का विनाश है. वह विनाश कांग्रेस के सत्ता में लौटने में सहायक होगा. वामपंथी कम्युनिस्ट पार्टी के ही एक दूसरे सदस्य प्रमोद दासगुप्ता ने बड़े उत्साह के साथ अपने दल के चुनाव-प्रचार के तरीक़ों पर प्रकाश डाला. उन्होंने कहा कि उन का ध्येय न सिर्फ़ कांग्रेस को पराजित करना है बल्कि ऐसी स्थितियाँ भी उत्पन्न करना है जो आर्थिक संकट को और भयंकर बनायें. इस से एक व्यापक असंतोष का जन्म होगा. यह असंतोष वर्ग-संघर्ष को जन्म देगा और उन का दल उस का राजनैतिक लाभ उठायेगा. उन के अनुसार उन के दल की मूल पूंजी मध्य वर्ग का असंतोष है, जो कांग्रेस को पराजित करने में मदद देगी. पिछले चुनाव में राज्य सरकार के कर्मचारियों के असंतोष ने कांग्रेस का जनाज़ा निकालने में मदद दी थी. इस बार असंतोष की उस कड़ी में केंद्रीय सरकार के भी कर्मचारी बँध गये हैं. यह बात ग़ौर करने की है कि ज्योति बसु या प्रमोद दासगुप्ता दोनों में से किसी ने भी जनता को यह आश्वासन नहीं दिया कि शासन में आने के बाद वे जनहित का कोई बड़ा काम कर सकेंगे.

कांग्रेसी प्रचार : कांग्रेसी चुनाव-प्रचार में भी आश्वासनों पर कम संयुक्त मोर्चे की ९ महीने की सरकार की खामियों और कमज़ोरियों पर ही ज्यादा प्रकाश डाला जा रहा है. कांग्रेस की एक जनसभा में अतुल्य घोष ने अपने पूरे भाषण के दौरान सिर्फ़ यह कहा कि संयुक्त मोर्चे ने ९ महीने के शासनकाल में कितनी गड़बड़ियाँ कीं, कितना दुराचार किया और शांति और व्यवस्था को किन-किन खतरों का शिकार बनाया. शायद कांग्रेस के पास अब ऐसा कुछ शेष रह भी नहीं गया है जिस के नाम पर वह जनता का विश्वास प्राप्त कर सके. इसी लिए लोगों को सब्ज़ बाग़ दिखलाने की जगह वह जनता को कम्युनिस्ट पार्टी के ख़तरों से अगाह कर रही है. कांग्रेस और कम्युनिस्ट दोनों में से कोई भी जनसभाओं में चुनाव संबंधी राजनैतिक पैंतरेबाज़ी के अलावा और किसी बात की चर्चा नहीं कर रहा है.

077706

बिहार

नया संयुक्त मोर्चा

संयुक्त मोर्चे के चार दलों—संयुक्त समाजवादी, लोकतांत्रिक कांग्रेस, प्रजा समाजवादी और कम्युनिस्ट (दक्षिणपंथी) ने ३ दिनों की बातचीत के बाद यह फ़ैसला कर लिया कि मध्यावधि चुनाव के सिलसिले में वे एक साथ मिल कर काम करेंगे. दल के एक महत्त्वपूर्ण प्रवक्ता का कहना था कि विभिन्न दलों के प्रतिनिधियों के बीच जिस सौहार्द्र के साथ बातचीत हुई उस से यह आशा बँध गयी है कि उन का संयुक्त मोर्चा अपनी कोशिशों में सफल होगा. इस बैठक का संयोजन लोकतांत्रिक दल के भूतपूर्व मुख्यमंत्री भोला पासवान ने किया था. उन के अनुसार "चुनाव समझौते के अलावा और कोई दूसरा चारा है ही नहीं." इस चुनाव समझौते में वामपंथी कम्युनिस्ट दल को शामिल नहीं किया गया है, क्यों कि उस का विरोध प्रजा समाजवादी दल तथा लोकतांत्रिक कांग्रेस दल ने बहुत ज़ोरदार ढंग से किया था. समझौते का मूल आधार यह है कि ये चारों दल एकमत हो कर एक न्यूनतम कार्यक्रम का निर्धारण करेंगे और उसी के अनुसार काम करेंगे. सीटों के बँटवारे की बातचीत भी लगभग ख़त्म हो चुकी है. संयुक्त समाजवादी दल की राज्य शाखा के अध्यक्ष कर्पूरी ठाकुर का भी यही कहना था कि चारों दलों के लोग मिल कर एक मन से काम करने के लिए बहुत उत्सुक हैं और इस के अच्छे नतीजे सामने आ सकते हैं.

दूसरे पहलू : चुनाव के प्रश्न पर भारतीय क्रांतिदल और कांग्रेस ही ऐसी दो इकाइयाँ हैं जो चुनाव के युद्ध को अकेले-अकेले लड़ना चाहती हैं. राज्य कांग्रेस के एक सचिव कृष्ण कांत सिन्हा का कहना है कि कांग्रेस ऐसा कोई समझौता उन शक्तियों से नहीं करेगी जो विघटन के बीज बोने का काम करती रही हैं. कांग्रेस सीधे जनता के पास जायेगी और अपने सिद्धांत तथा कार्यक्रम के नाम पर मत प्राप्त करने का प्रयत्न करेगी. उन्होंने यह भी कहा कि कांग्रेस के विरोध में शासन करने वाले संयुक्त मोर्चे का गठन किया गया था. वह जनता का विश्वास पाने में इस लिए असफल रही कि शासन की बाग़-डोर उस से ठीक ढंग से नहीं सँभल सकी. दूसरी तरफ़ भारतीय क्रांतिदल के अध्यक्ष और राज्य के भूतपूर्व मंत्री महामायाप्रसाद सिंह अब भी यह कहने को तैयार हैं कि उन का दल लोकतांत्रिक कांग्रेस जैसे समान विचारधारा वाले दल से चुनाव-समझौता इस शर्त पर कर सकता है कि वह कम्युनिस्टों से कोई संबंध न रखे, हालाँकि उन्होंने इसी के साथ-साथ लोकतांत्रिक दल के नेताओं की आलोचना करते हुए यह भी कहा कि उन्होंने कांग्रेस का परित्याग महज़ निजी स्वार्थों के मोह में किया.

राजस्थान

ख़ून के बदले पानी

सभ्य कहलाने वाले जगत में मनुष्य की बर्बरता का परिचय देते हुए राजस्थान के गृहमंत्री ने १२ सितंबर को विधानसभा में घोषणा की कि २१ मई को उदयपुर ज़िले के कोटाडा तहसील के एक ठेकेदार ने बाँध-निर्माण के अवसर पर एक १२ वर्षीय बालक की बलि चढ़ायी. इस नृशंसता का समाचार पा कर विधायकों का कुछ समय के लिए हतवाक् हो जाना स्वाभाविक ही था. यदि गृहमंत्री को स्वतंत्र दल के सदस्य पृथ्वीसिंह के प्रश्न का उत्तर देने के लिए बाध्य न होना पड़ता तो शायद यह भयानक घटना सदा के लिए गुप्त ही रह जाती. लगभग साढ़े तीन महीने तक इस बारे में पूरी तरह चुप्पी साधे रहने पर विधायकों ने जो रोष प्रकट किया उसका शमन करने की कोशिश बेकार गयी और इसी मसले पर विधानसभा के प्रतिपक्षी सदस्यों ने राजस्थान के मुख्यमंत्री और गृह-मंत्री से त्यागपत्र की माँग की.

ग़रीब परिवार का सहारा : भूरे बालों वाला प्रियदर्शी बालक खुमान सिंह ग्रीष्मावकाश के दौरान अपने ग़रीब पिता की सहायता करने के लिए बाँध के निर्माण में मज़दूरी कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहा था. मड्ढा गाँव का निवासी खुमान का पिता, इस गाँव के अन्य निवासियों की तरह, अपनी छोटी-सी ज़मीन पर खेती कर के गुज़ारा कर रहा था. २० मई की शाम को खुमान ने अपनी माँ से कहा कि वह अगली शाम तक घर नहीं लौटेगा, क्योंकि बाँध पर काम करने वाले एक आदमी ने उस को विश्वास दिलवाया है कि वह उसे अन्यत्र ले जायेगा, जहाँ उसे १२ रुपये प्रति मास की तनख्वाह पर नौकरी मिलेगी. बेटे की बात सुनते ही माँ का दिल न जाने क्यों घबराया और उस ने व्यर्थ ही उसे रोकने की कोशिश की. २१ मई को बाँध पर काम करने वालों को वेतन मिलना था. खुमान और उस के सहकर्मी मोहनलाल मेघवाल को सब से अंत में ६२ पैसे प्रति दिन के हिसाब से केवल दो ही दिन का वेतन दिया गया और दो सप्ताह के उन के पैसे रोक लिये गये. दोनों मित्र लौटने ही वाले थे कि किसी ने खुमान को आवाज़ लगा कर कहा कि वह अपना बकाया पैसा भी ले जाये. मोहनलाल तो लौट आया और खुमान तभी से लापता हो गया.

कहानी या सत्य : इस के बाद की जिन घटनाओं के बारे में पता चला उन का आधार मात्र ग्रामवासियों की ज़बानी है. अप्रैल में और मई के मध्य तक जब बाँध पर काम तेज़ी से चल रहा था तो अचानक ही दक्षिण की ओर पानी भर आया और कार्य में बाधा पड़ी. पानी निकालने की दो मशीनें लगा कर भी ठेकेदार उस पानी को निकालने में सफल न हुआ और बाँध की कच्ची भीत को सख्त नुकसान हुआ. वर्षा शुरू होने में केवल छह सप्ताह की देर थी. अंधविश्वास के फेर में पड़े किसी ने यह शोर उठाया कि दैवी प्रकोप के कारण ऐसा हो रहा है और देवी के क्रोध को शांत करने के लिए बलिदान की आवश्यकता है. नौकरी दिलवाने के बहाने खुमान को ले जाने वाले व्यक्ति से जिरह कर के और ग्रामवासियों से पूछताछ करने के बाद जो सूचनाएँ मिलीं उन्हें एकत्र कर के कहानी कुछ इस प्रकार बनी. उस दिन रात को आठ बजे के बाद नाथद्वारा से आये हुए कुछ मज़दूर पहाड़ी की चोटी पर बैठ कर, गाँव के सरपंच और पंचायत के निरीक्षक की उपस्थिति में खान-पान के साथ और भजन गा कर उत्सव मना रहे थे, तो पाँच व्यक्ति खुमान को पानी से भरे हुए भीत के गड्ढे तक ले गये और उस के पास उसे लिटा दिया. चार व्यक्ति बालक को दबोच कर बैठ गये, जब कि पाँचवे व्यक्ति ने, बच्चे की छाती पर सवार हो कर, उस के गले को छुरी से बीचोंबीच चीर दिया. छठे व्यक्ति ने, जो शायद स्वयं ठेकेदार ही था, तेज़ी से निकलती हुई खून की धार में अपनी उँगली डुबोयी और पत्थर पर स्वस्तिक का चिन्ह बना दिया. फिर एक पत्ते को खून में डुबो कर पत्थर के ढाँचे के एक सिरे से दूसरे सिरे तक छिड़क दिया. खुमान के शव को उस पानी से भरे गड्ढे में दो दिन तक रखा गया और जब लाश सड़ने के कारण बदबू फैलने लगी तो उसे पास के जंगल की एक गुफ़ा में छुपा दिया गया. इस हत्याकांड के ४३ दिन बाद यहीं से खुमान की हड्डियाँ और उस के कपड़े प्राप्त हुए. कहते हैं १००० रुपये की लालच में पड़ कर जिस व्यक्ति ने बालक के गले पर छुरी फेरी उसे केवल १० रुपये ले कर ही संतोष करना पड़ा.

आदि प्रथा का पुनर्स्थापन : लगभग ५०० निवासियों का छोटा-सा गाँव मड्ढा अब तक खुश-मिजाज़ और ज़िंदादिल व्यक्तियों से आबाद था. चढ़ाई के बाद चढ़ाई से होती हुई, जंगलों में से गुज़रती हुई कच्ची सड़क, जो इस इलाक़े को अकालग्रस्त घोषित किये जाने के बाद खाद्य पहुँचाने के लिए बनायी गयी थी, यहाँ के रहने वालों को आधुनिकता की हवा और बाहर की दुनिया से बचाती रही. मड्ढा और उस के आसपास के इलाक़ों में रहने वालों का कहना है कि यहाँ नरबलि चढ़ाने की प्रथा कभी नहीं रही. "हम ग़रीब हैं, हमारा जीवन कठिन है, फिर भी हम अपने जंगलों के जंगली जानवरों तक को कभी नहीं मारते." उदयपुर के सूचना अधिकारियों का कहना है कि राजस्थान में बहुत पहले निर्माण-कार्यस्थलों पर नरबलि चढ़ाने की प्रथा थी ज़रूर. "१५वीं शताब्दी में जोधपुर का क़िला जब बनाया जा रहा था तो उस की दीवारों में एक ब्राह्मण और एक हरिजन को ज़िंदा चुन दिया गया था. इस घटना का ज़िक्र अब भी पत्थरों में खुदा हुआ मिलता है." पर ये सारी बातें और इतिहास मृत खुमान के ५५ वर्षीय पिता जवानसिंह और शोकाकुल माता धूल कुँवर को ढाढ़स नहीं बँधा सकते. वे अब भी सभ्य संसार से पूछते हैं और शायद सदा पूछते रहेंगे कि उन के बेटे की ही बलि क्यों चढ़ायी गयी ?

ज़िम्मेदार कौन ? : बालक की हत्या का शक जिस पर है उसे गिरफ़्तार तो कर लिया गया है, पर इस नृशंसता की ज़िम्मेदारी अकेले उस पर तो नहीं डाली जा सकती. राजस्थान विधानसभा के प्रतिपक्षी सदस्य अपने प्रश्न के उत्तर में यह जान न सके कि इस नरबलि के अवसर पर स्थानीय अधिकारी, जिन में खंड विकास अधिकारी और पंचायत के सदस्य भी शामिल हैं, वहाँ उपस्थित थे या नहीं. इस अपराध पर पुलिस ने क्या कार्रवाई की ? गृहमंत्री दामोदरलाल व्यास ने कहा कि घटना के २१ दिन बाद लड़के की हड्डियाँ और उस के कपड़े पुलिस ने ढूँढ़ निकाले हैं और इस बारे में चार व्यक्तियों को गिरफ़्तार किया जा चुका है. हड्डियों के ढाँचे की चीर-फाड़ भी हो चुकी है, जिस से खुमान को छुरी से क़त्ल किये जाने के सबूत मिले हैं. विधानसभाध्यक्ष ने प्रतिपक्षियों का रोष ठंडा करने के लिए वह फ़ाइल भी अपने ज़िम्मे ले ली है जिस में इस घटना की छान-बीन का पूरा ब्योरा दर्ज है. मुख्यमंत्री सुखाड़िया ने भी विधानसभा के सदस्यों के मार्फ़त जनता को आश्वासन दिया है कि इस घटना के लिए ज़िम्मेदार व्यक्तियों के विरुद्ध सख्त कार्रवाई की जायेगी. अन्य राजस्थानियों की तरह उन्होंने भी इस अमानवीय कांड को अपने प्रदेश पर कालिख का टीका माना है.

राम-झरोखा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्रांति की स्वर्ण जयंती : शिशु-बलि

क्रांति-द्रष्टा लेनिन ने यह कल्पना नहीं की थी कि केवल पचास वर्षों में अंतर्राष्ट्रीय साम्यवाद विच्छिन्न हो जायेगा और अन्याय और आक्रमण का सब से बड़ा विरोधी सोवियत रूस एक दिन एक समाजवादी देश पर—वह भी एक निहत्थे समाजवादी देश पर—हमला करेगा. १९२२ में जार्जिया के 'विद्रोह' का स्तालिन ने जिस बर्बरता के साथ दमन किया था उस की कड़े-से-कड़े शब्दों में भर्त्सना करते हुए और जार्जिया की ग़रीब जनता का समर्थन करते हुए लेनिन ने स्तालिन को 'हत्यारा' क़रार दिया था. छोटे-से देश चेकोस्लोवाकिया पर रूसी आक्रमण का विरोध करने और इस हमले के लिए उत्तरदायी नेताओं को समाजवाद का दुश्मन क़रार देने के लिए लेनिन आज जीवित नहीं रहे. लेकिन इस बर्बर और अनपेक्षित हमले ने सोवियत रूस को न केवल विश्व जनमत के कठघरे में खड़ा कर दिया बल्कि पूर्वी यूरोप और पश्चिमी यूरोप की सीमाओं पर शीत युद्ध की छायाएँ गहरी कर दी हैं.

प्रतिक्रियाएँ : हमले का तत्काल राजनैतिक नतीजा यह हुआ कि बिखरती हुई 'नैटो' शक्तियाँ एक हो गयीं और पश्चिमी जर्मनी में 'आत्मरक्षा की तैयारी' बड़े पैमाने पर शुरू हो गयी. शायद रूस चाहता भी यही था कि वह पूर्वी यूरोप के सेनापति के रूप में सामने आये और चीन और क्यूबा जैसे उग्रपंथियों की, जो कि उस पर यह आरोप लगा रहे थे कि वह पूरी तरह संशोधनवादी हो चुका है और यह कि रूसी क्रांति बूढ़ी हो चुकी है, ज़बान बंद हो सके. लेकिन चीन और क्यूबा की ज़बान बंद नहीं हुई बल्कि संसार की अनेक मूक कम्युनिस्ट पार्टियों की ज़बान खुल गयी—केवल एक भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी को छोड़ कर, जिस के नेता श्रीपात अमृत डांगे ने यह दावा किया कि 'लेनिन की पार्टी' कोई ग़लती नहीं कर सकती. जहाँ तक पश्चिमी यूरोप की कम्युनिस्ट पार्टी का प्रश्न है उन में अब यह बहस शुरू हो चुकी है कि क्या सचमुच ही सोवियत पार्टी 'लेनिन की पार्टी' रह गयी है. पश्चिमी यूरोप की सब से बड़ी, इटली की कम्युनिस्ट पार्टी ने, जिस की सदस्य संख्या १६ लाख है, अपने खुले अधिवेशन में सोवियत रूस पर यह आरोप लगाया है कि उस ने चेकोस्लोवाकिया जैसे समाजवादी देश पर हमला कर समाजवाद के साथ विश्वासघात किया है. इटली की पार्टी के नेता लुइगी लोंगो ने सोवियत नेताओं को संबोधित करते हुए कहा है कि 'चेकोस्लोवाकिया को आत्मनिर्णय का पूरा अधिकार है—किसी भी देश पर दूसरे देश की व्यवस्था या इच्छा लादी नहीं जा सकती.' फ्रांस की पार्टी ने भी लगभग इतने ही कड़े शब्दों में सोवियत हमले की निंदा की है. पूर्वी यूरोप की कम्युनिस्ट पार्टियों में केवल पोलैंड, हंगरी, पूर्वी जर्मनी और बल्गारिया की पार्टियाँ सोवियत रूस के साथ हैं. रोमानिया और युगोस्लाविया ने सोवियत हमले पर तीव्र प्रतिक्रिया व्यक्त की बल्कि रोमानिया ने तो अपनी आत्मरक्षा की तैयारी भी शुरू कर दी थी जो कि अब भी चल रही है. युगोस्लाविया में अधिकृत और अनधिकृत दोनों ही रूपों में सोवियत कृत्य की निंदा बराबर जारी है और इस का नतीजा यह हुआ है कि सोवियत रूस ने ऐलान कर दिया है कि वह अब युगोस्लाविया के पर्यटकों को 'वीसा' नहीं देगा. चेकोस्लोवाकिया की घटना को ले कर उत्तेजित होने वाला अल्बानिया, पूर्वी यूरोप का तीसरा देश है जिस ने बुल्गारिया में सोवियत सेनाओं की उपस्थिति को अपने लिए ख़तरा बताया. उस ने माँग की है कि सोवियत रूस को बुल्गारिया की सीमा से अपनी सेनाएँ हटा लेनी चाहिए क्यों कि यह उन तमाम देशों के लिए चुनौती है जिन की सीमाएँ बुल्गारिया से मिलती हैं.

शीतयुद्ध : चेकोस्लोवाकिया के विस्फोट के साथ ही यूरोप की शांति भंग हो गयी. पश्चिमी यूरोप और अमेरिका की जो शक्तियाँ हथियारों के कसाव को ढीला पा रही थीं वे फ़ौरन मुस्तैद हो गयीं. हथियारों के व्यापारियों के लिए अनंत संभावनाओं का संसार खुल गया. २७ अगस्त को चेकोस्लोवाकिया की घटना पर ब्रितानी संसद में प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए ब्रिटेन के प्रधानमंत्री हैरल्ड विल्सन ने कहा कि 'चेकोस्लोवाकिया की घटनाओं से ब्रिटेन और उस के दोस्तों को पहला सबक यह लेना है कि उत्तरी अतलांतिक संधि (नैटो) ने जिस रक्षा-पद्धति की व्यवस्था की है उसे बनाये रखना ज़रूरी हो गया है.' उन्होंने कहा 'संधि से मेरा अर्थ उस व्यवस्था से है जो कि पिछले कुछ वर्षों के दौरान विकसित हुई है. यानी कि न केवल अपनी रक्षा का हौसला बल्कि विरोधी शक्ति से टक्कर लेने के लिए कृतसंकल्प व्यवस्था.' सोवियत रूस ने इस का सीधा-सीधा जवाब न दे कर अप्रत्यक्ष उत्तर दिया है. उस ने कहा है कि संयुक्त राष्ट्र प्रतिज्ञापत्र के अनुसार उसे पश्चिमी जर्मनी में नाज़ी पुनरुत्थान पर कार्रवाई करने का अधिकार है. चेकोस्लोवाकिया को ले कर सोवियत रूस ने अपने शक्ति-प्रदर्शन की लड़ाई लड़नी चाही थी और वह इस में बहुत हद तक कामयाब भी हुआ. लेकिन किस क़ीमत पर ?

'चेतेका' : जिस समय, २१ अगस्त को एकदम सवेरे, चेकोस्लोवाकिया की 'चेतेका' समाचार एजेंसी सारे संसार को यह ख़बर भेज रही थी कि वारसाउ देशों की सेनाओं ने चेकोस्लोवाकिया पर हमला कर दिया है, उसी समय संसार की विभिन्न राजधानियों में रूसी राजदूत उन देशों के राजप्रमुखों को इस हमले का रूसी संस्करण दे रहे थे कि चेक जनता के आमंत्रण पर समाजवाद की रक्षा के लिए वारसाउ सेनाएँ चेकोस्लोवाकिया में प्रवेश कर गयी हैं. चेकोस्लोवाकिया जैसे छोटे-से और निहत्थे देश पर आधिपत्य करना वारसाउ देशों के ६ लाख सैनिकों और १८ हज़ार टैंकों के लिए बहुत मुश्किल काम नहीं था. २० अगस्त को रात के १० बजे वारसाउ सेनाओं ने चेकोस्लोवाकिया की सीमाएँ पार कीं और अंतरराष्ट्रीय नियमों का उल्लंघन करते हुए चेकोस्लोवाकिया के शासन-केंद्रों को घेरना आरंभ कर दिया. पश्चिमी देशों से चेकोस्लोवाकिया का सीधा संबंध केवल वीएना के ज़रिये हो सकता था. वीएना और चेकोस्लोवाकिया के बीच समस्त टेलीफ़ोन संबंध नष्ट कर दिये गये और चेकोस्लोवाकिया संसार से कट कर सहस्रबाहु सोवियत रूस से घिर गया. केवल निर्भीक 'चेतेका' समाचार एजेंसी और प्राग के अज्ञात रेडियो संसार को सोवियत हमले की ख़बर देने के लिए जीवित रहे; बाद में 'चेतेका' पर भी सोवियत आधिपत्य हो गया और उस के कर्मचारियों को गोली मार दी गयी.

'हत्यारो लौट जाओ' : २१ अगस्त को प्राग में घुस कर रूसी सेनाओं ने चेकोस्लोवाकिया की राष्ट्रीय असेंबली के १६६ सदस्यों को घेर लिया और चेक कम्युनिस्ट पार्टी के नेता अलेक्सांद्र डुबचेक को उन के कार्यालय में ज़बरदस्ती प्रवेश कर गिरफ़्तार कर लिया गया. जिस समय डुबचेक बेइज्ज़ती के साथ गिरफ़्तार किये गये वह पार्टी के अपने सहयोगियों के साथ संपर्क बनाने के लिए फ़ोन कर रहे थे. गिरफ़्तार करने के बाद डुबचेक के साथ बल-प्रयोग किया गया और उन को एक अज्ञात स्थान में ले जाया गया. जैसे ही 'स्वतंत्र वैधानिक रेडियो प्राग' ने चेक जनता को डुबचेक की गिरफ़्तारी की ख़बर दी वैसे ही प्राग के मुख्य चौराहे 'वेस्लेव्स्की नेमेस्ती' पर २० हज़ार लोग इकट्ठे हो गये और उन्होंने सोवियत सैनिकों को संबोधित करते हुए 'रूसी हत्यारो लौट जाओ' के नारे लगाने शुरू कर दिये. सोवियत आधिपत्य के विरोध में समूचे प्राग में हड़ताल की घोषणा कर दी गयी और सारी दुकानें, यहाँ तक कि होटल और रेस्तराँ भी, बंद हो गये. दो दिनों तक प्राग की सड़कों पर आत्मरक्षा और आक्रमण की घमासान लड़ाई हुई, जिस में २३ चेक नौजवान-नवयुवतियों को अपनी जान से हाथ धोना पड़ा. देशाभिमानी चेक जनता ने सोवियत रूस को आत्मसमर्पण नहीं किया, बल्कि बिना हथियार उस के टैंकों और फ़ौजियों का ठीक उसी तरह विरोध

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

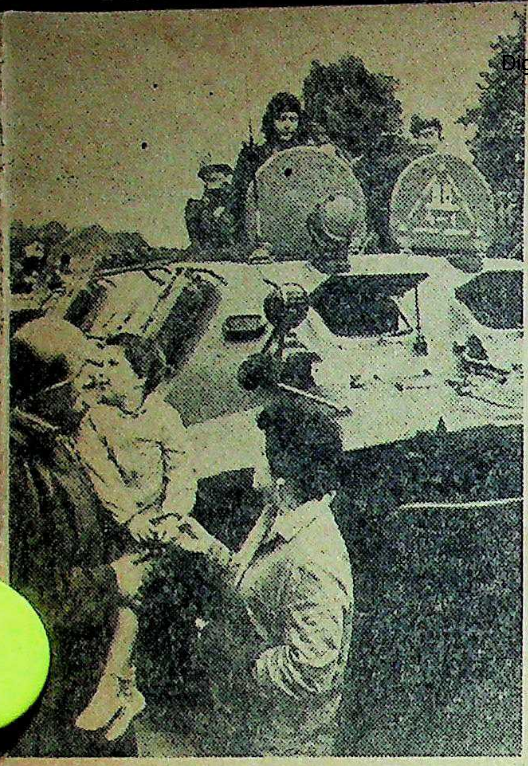

रूसी सेना की वापसी : आक्रमण से पूर्व

किया जिस तरह १९३८ में उन्होंने नात्सी फ़ौजों का सामना किया था.

प्रेजिडेंट स्वोबोदा : समूचे चेकोस्लोवाकिया में वारसाउ सेनाओं का जिस तरह विरोध हुआ उस से पराजित हो कर सोवियत रूस ने चेकोस्लोवाकिया के प्रेजिडेंट लुडविक स्वोबोदा को बातचीत के लिए आमंत्रित किया. प्रेजिडेंट स्वोबोदा अपने सहयोगियों रक्षामंत्री मार्टिन ज़ूर और उपप्रधानमंत्री गुस्ताव हुसाक तथा सोवियत रूस के दो एजेंटों-केंद्रीय पार्टी सचिव एलोइस इंद्रा और अध्यक्षमंडल के सदस्य वैसिल बिलाक के साथ मॉस्को पहुँचे. सोवियत नेताओं को यह वहम था कि मॉस्को की सड़कों पर अपने राजसी स्वागत से प्रेजिडेंट स्वोबोदा विचलित हो जायेंगे और वारसाउ शक्तियों के षड्यंत्र में शामिल हो जायेंगे, लेकिन ऐसा नहीं हुआ. मॉस्को प्रस्थान के पहले ही प्रेजिडेंट स्वोबोदा ने अपनी जनता के नाम रेडियो प्रसारण में कहा था कि 'मैं ऐसा कोई काम नहीं करूँगा जिसे विश्वासघात की संज्ञा दी जा सके.' मॉस्को में प्रेजिडेंट स्वोबोदा पर हर तरह का दबाव डाला गया कि वे तथाकथित प्रतिक्रियावादियों के दमन के लिए राज़ी हो जायें लेकिन प्रेजिडेंट स्वोबोदा चेक जनता के विरुद्ध कोई भी क़दम उठाने को तैयार नहीं थे. उन का कहना था कि चेकोस्लोवाकिया के वास्तविक नेता अलेक्सांद्र डुबचेक हैं और जब तक उन को रिहा नहीं किया जाता तब तक दोनों पक्षों के बीच कोई बातचीत नहीं हो सकती. जब सोवियत दबाव बहुत बढ़ गया तब प्रेजिडेंट स्वोबोदा ने दूसरे महायुद्ध के दौरान वीरता के लिए प्राप्त सोवियत तमगे फेंक अपनी जेब से पिस्तौल निकाल कर कोसीगिन और ब्रेज़नेव से कहा कि या तो डुबचेक को रिहा कर बातचीत के लिए यहाँ बुलाइये या फिर मुझे कोई एकांत स्थल दीजिये जहाँ मैं आत्महत्या कर सकूँ. इस धमकी का असर पड़ा और चेक पार्टी के नेता अलेक्सांद्र डुबचेक और प्रधानमंत्री चेर्निक को बातचीत में हिस्सा लेने के लिए मॉस्को बुलाया गया.

'मॉस्को समझौता' : लगातार ४८ घंटों तक बहस के बावजूद चेक नेता चेकोस्लोवाकिया में साम्यवाद के लोकतंत्रीकरण की प्रक्रिया समाप्त करने के लिए तैयार नहीं थे. यह अनुभव करने के बाद कि चेकोस्लोवाकिया में एक भी व्यक्ति, यहाँ तक कि नोवोत्नी के अनुयायी भी, अपनी जनता के विरुद्ध सोवियत रूस का साथ देने को तैयार नहीं, रूसी नेताओं ने चेक नेताओं से समझौता किया. २६ अगस्त को हुए इस समझौते के मुताबिक यह तय हुआ कि प्रेजिडेंट स्वोबोदा, अलेक्सांद्र डुबचेक और प्रधानमंत्री चेर्निक अपने पदों पर बने रहेंगे और सोवियत सेनाएँ चेकोस्लोवाकिया से क्रमशः बाहर आती जायेंगी—लेकिन इस की आंशिक क़ीमत चेक जनता को चुकानी पड़ेगी, अर्थात् रेडियो, प्रेस तथा प्रचार के अन्य साधनों पर पाबंदी लगानी पड़ेगी. क्योंकि वारसाउ सेनाओं को बाहर निकालने का और कोई रास्ता नहीं था और दूसरे चेक नेता यह नहीं चाहते थे कि संसार का तीसरा महायुद्ध चेकोस्लोवाकिया की ज़मीन पर लड़ा जाये उन्होंने मॉस्को की यह तजवीज़ मान ली. लेकिन उन्होंने यह स्पष्ट कर दिया कि जनवरी में चेकोस्लोवाकिया में जो परिवर्तन हुए और ५ अप्रैल १९६८ को चेकोस्लोवाकिया की कम्युनिस्ट पार्टी की केंद्रीय समिति ने जो कार्यक्रम अपनाया है उस में रद्दोबदल नहीं होगा. सोवियत रूस तथा वारसाउ देशों—पोलैंड, हंगरी, पूर्वी जर्मनी और बुल्गारिया के नेता यह शर्त मनवाने में कामयाब हो गये कि स्थिति के सामान्य होने तक 'सोवियत सेनाएँ चेकोस्लोवाकिया में बनी रहेंगी.'

'दस निर्देश' : सोवियत सेनाएँ चेकोस्लोवाकिया में अभी हैं. लेकिन चेक जनता ने उस का जिस तरह स्वागत किया है वह उन्हें हमेशा स्मरण रहेगा. २१ अगस्त को जब सोवियत सेनाएँ प्राग पहुँचीं तब उन्होंने दीवारों पर बड़े-बड़े पोस्टर चिपके पाये. इन पोस्टरों में से एक में लिखा था—'इवान घर लौट जाओ. तुम्हारी पत्नी नताशा कोलिया के साथ ऐश कर रही है—तुम्हारी माँ'. एक दूसरे पोस्टर में लिखा था 'तुम्हारे बिना लीना की रातें कैसे कटेंगी? ज़रा तो शर्म करो.'

प्राग के चार्ल्स विश्वविद्यालय की दीवार पर किसी ने चॉक से लिख कर चेक जनता को इस तरह आमंत्रित किया था : 'वेस्लेव्स्की चौमुहाने पर सोवियत हथियारों और टैंकों का विशाल प्रदर्शन. प्रवेश मुफ़्त. बाहर निकल पाने की कोई गारंटी नहीं.' ब्रूनो में एक चेक नौजवान ने एक रूसी टैंक पर लिख कर पोत दिया था 'अपनी घड़ियाँ उतार लो और अपनी पत्नियों से कहो छिप जायें.' एक दूसरे टैंक पर लिखा हुआ था, 'रूसी सरकस शहर में, अब अपने ढोरों को खिलाने की ज़रूरत नहीं.' एक दीवार पर एक पोस्टर चिपकाया गया था, जिस पर बड़े-बड़े हरफ़ों में लिखा गया था, 'जर्मन हम पर केवल हज़ार साल तक शासन करना चाहते थे, रूसी हमेशा शासन करना चाहते हैं.' प्राग से कुछ दूर एक खेत के पास पगडंडी पर, जिस से सोवियत टैंकों को गुज़रना होता था, एक किसान ने लिख कर लटका दिया था 'मॉस्को यहाँ से दो हज़ार किलोमीटर दूर है.'

चेक जनता ने बाहुबल के नमूने पर 'दस निर्देश' (टेन कमांडमेंट्स) तैयार किये थे. ये दस निर्देश थे : १. हम ने कोई सबक़ नहीं लिया है. २. हम कुछ नहीं जानते. ३. हमारे

रूसी टैंक और चेक जनता : आक्रमण के बाद

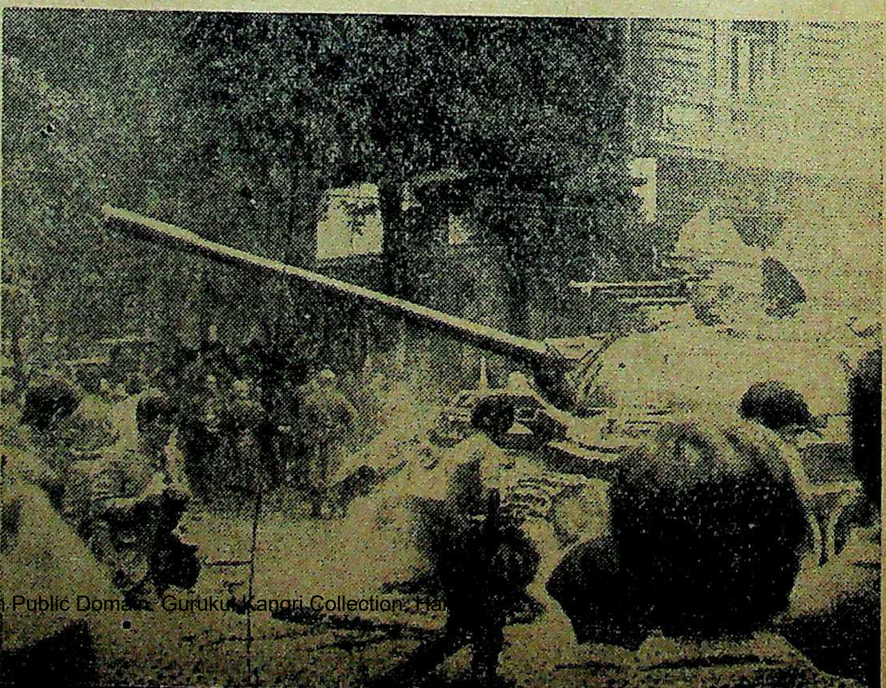

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पास कुछ नहीं है. ४. हम कुछ नहीं देंगे. ५. हम कुछ नहीं करेंगे. ६. हम कुछ नहीं बेचते. ७. हम मदद नहीं करते. ८. हम कुछ नहीं समझते. ९. हम विश्वासघात नहीं करेंगे और १०. हम कुछ भी नहीं भूलेंगे.' चेक युवक-युवतियों ने ६ लाख आक्रमणकारियों का किस तरह सामना किया इस की अनेक गौरव गाथाएँ हैं, जो बहुत दिनों तक याद की जायेंगी.

निरपेक्ष रुख : चेकोस्लोवाकिया की घटनाओं ने बहुत-सी चीज़ों पर से पर्दा उठा दिया है. उन्होंने न केवल रूसी साम्यवाद को नंगा किया बल्कि उन तथाकथित निरपेक्ष देशों की 'निरपेक्षता' का भी निरावरण किया जो कि अब तक अपनी गुटविहीनता और स्वाधीनता का दावा करते रहे हैं. प्रमुख निरपेक्ष देशों में युगोस्लाविया को छोड़ कर किसी ने भी कड़े शब्दों में सोवियत कार्रवाई की निंदा नहीं की. अरब देशों ने मौन साध लिया, क्यों कि उन्हें रूसी हथियारों से इस्राइल से लड़ाई लड़नी है और भारत ने सुरक्षा परिषद में प्रस्ताव पर मतदान नहीं किया, क्यों कि जिन हथियारों से सोवियत रूस ने चेकोस्लोवाकिया की हत्या की उन्हीं के सहोदर हथियारों से भारत को अपनी आत्मरक्षा करनी है. सुरक्षा परिषद में जब 'भर्त्सना' और 'निंदा' शब्दों के प्रयोग को ले कर भारतीय प्रतिनिधि ने मतदान करने से इनकार किया तब 'वॉशिंगटन पोस्ट' ने अपने संपादकीय में व्यंग्य किया कि भारत ने रूस की 'निंदा' न कर 'भर्त्सना' की. इस की हम 'भर्त्सना' नहीं 'निंदा' करते हैं.

रूस, जिस ने भारत पर चीनी हमले की यह कह कर निंदा की थी कि एक समाजवादी देश एक निरपेक्ष राष्ट्र पर हमला नहीं कर सकता, ६ साल बाद खुद इस से भी अधिक बर्बर हमला करने के लिए विवश हुआ. यह इतिहास का एक अनोखा व्यंग्य है.

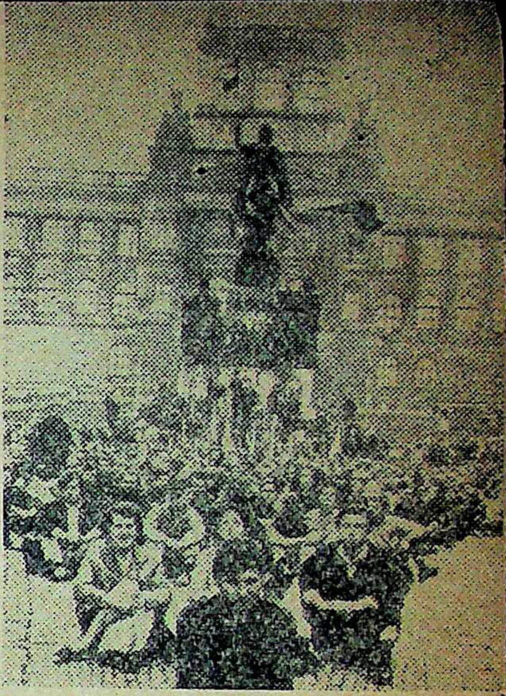

चेक जनता : मौन विरोध

चेक दृष्टिकोण

‘प्राव्दा वितेज़ी’

जिस समय वारसाउ संधि देशों के नेता चेकोस्लोवाकिया पर अंतिम निर्णय लेने की तैयारी कर रहे थे, चेकोस्लोवाकिया अपने पक्ष में विश्व-जनमत संगठित करने का प्रयत्न कर रहा था. चेकोस्लोवाकिया के नेता अलेक्सांद्र डुबचेक ने संसार के युवक-युवतियों को चेक-दृष्टिकोण समझाने के उद्देश्य से अपने युवक बुद्धिजीवियों का एक प्रतिनिधिमंडल सोफिया विश्व युवक समारोह (२८ जुलाई से ६ अगस्त) में भेजा था. **दिनमान** ने चेक साम्यवाद के विषय में इस प्रतिनिधिमंडल के राजनैतिक प्रवक्ता और नेता यान्योता से बातचीत की.

चेकोस्लोवाकिया के बुद्धिजीवी संसार में यान्योता की एक विशिष्ट हैसियत है. वह चेक कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य नहीं हैं; मगर डुबचेक के कितने अधिक विश्वासपात्र हैं यह बात इसी से साबित होती है कि कम्युनिस्ट न होने के बावजूद उन्हें चेकोस्लोवाकिया का दृष्टिकोण स्पष्ट करने के लिए सोफिया भेजा गया था. २१ से २६ अगस्त के बीच यान्योता और उन के साथियों ने चेकोस्लोवाकिया में सोवियत सेनाओं का बराबर विरोध किया और विरोध के मोर्चे पर वे अब भी सक्रिय हैं.

जब इस समाचारपत्र ने यान्योता से यह जानना चाहा कि चेक-जनता के सोवियत विरोध का मुख्य आधार क्या है, तब उन्होंने बताया कि **चेक जनता का आग्रह इस बात पर है कि जो सोवियत सेनाएँ अभ्यास और प्रशिक्षण के लिए चेकोस्लोवाकिया आयी थीं, वे वापस चली जायें क्यों कि अभ्यास पूरा हो चुका है और उन की उपयोगिता नहीं रह गयी है.** इस पर उन से सवाल किया गया कि क्या इस का अर्थ यह है कि चेकोस्लोवाकिया 'वारसाउ संधि' से अलग होना चाहता है ? उन्होंने उत्तर दिया कि **चेक जनता वारसाउ संधि से अलग नहीं होना चाहती लेकिन वह अपनी नियति वारसाउ देशों को सौंपना भी नहीं चाहती.**

चेक साम्यवाद के प्रति सोवियत आपत्तियों को निराधार ठहराते हुए उन्होंने कहा कि डुबचेक ने संसार को यह दिखाया कि 'साम्यवाद का लोकतंत्रीकरण' किया जा सकता है और साम्यवादी समाज में शंका और प्रश्न के लिए स्थान है—बल्कि इस का होना आवश्यक है. प्रश्न करने की जो प्रक्रिया चेकोस्लोवाकिया में शुरू है उसे अपनी तर्कसंगत परिणति तक पहुँचना है.

यह पूछ जाने पर कि 'व्यक्ति की स्वाधीनता' और 'मार्क्सवाद की अनिवार्यताओं' को चेक पार्टी किस तरह साथ-साथ बरक़रार रखना चाहती है, श्री यान्योता ने कहा कि चेक पार्टी व्यक्ति-स्वाधीनता और साम्यवाद दोनों में कोई अंतर्विरोध नहीं देखती. बल्कि अगर कहीं कोई अंतर्विरोध है तो वह कठमुल्लापन और साम्यवाद में है.

उन्होंने कहा कि चेकोस्लोवाकिया की सरकार सोवियत रूस से अपनी मैत्री बनाये रखना चाहती है. मगर दोस्ती एकतरफ़ा नहीं होती. **सोवियत रूस को यह समझना होगा कि हर देश में साम्यवाद का विकास अपनी परिस्थितियों के अनुकूल होगा. 'कोमिनफ़ार्म' की अब कोई आवश्यकता नहीं रह गयी है—बल्कि इस की कभी आवश्यकता भी नहीं रही.** साम्यवाद अब भी संगत है, 'रूसवाद' नहीं.

चेकोस्लोवाकिया में हुए परिवर्त्तन के कारणों और परिणतियों का विश्लेषण करते हुए उन्होंने कहा कि चेकोस्लोवाकिया में दो जातियाँ हैं—स्लोवाक और बोहीमियन. अभी कुछ समय पहले तक इन दोनों जातियों की आर्थिक और सामाजिक परिस्थितियों में ज़बर्दस्त विषमता थी, जिसे ख़त्म करने की कभी कोशिश नहीं की गयी. इस का नतीजा यह हुआ कि देश भीतर ही भीतर खंडित और खोखला हो रहा था और ये दोनों जातियाँ दो अलग-अलग राष्ट्रों की तरह ध्रुवीकृत होती जा रही थीं. डुबचेक ने पहला काम यही किया कि इस विषमता को समाप्त करने के लिए क़दम उठाये और अब जा कर राष्ट्र की भीतरी एकता की प्रक्रिया शुरू हुई है.

उन्होंने कहा कि यह प्रक्रिया दरअसल जनवादीकरण की प्रक्रिया है. चेकोस्लोवाकिया में, यह संभव है, ऐसे लोग हों जो कि परिवर्त्तन से सहमत न हों, बल्कि उस के विरोधी हों. मगर उन्हें असहमति और विरोध की आज़ादी है. जब **दिनमान** ने उन से प्रश्न किया कि जो असहमत हैं पार्टी उन के प्रति क्या दृष्टिकोण रखती है तो उन्होंने कहा कि जो दृष्टिकोण बच्चों के प्रति रखा जाता है. इस पर उन से पूछा गया कि आज तो 'परिवर्त्तन-विरोधियों' को नादान समझा जा रहा है, कल परिवर्त्तन की गति तेज़ हो जाने पर लगातार परिवर्त्तन चाहने वालों को भी नादान समझा जा सकता है. पार्टी असहमति को बराबरी का दर्जा क्यों नहीं देती ? यान्योता ने उत्तर दिया कि **अब चेकोस्लोवाकिया में परिवर्त्तन की जो प्रक्रिया शुरू हुई है वह जल्द समाप्त नहीं होगी, क्यों कि परिवर्त्तन का अर्थ है जनता.** इस लिए परिवर्त्तन चाहने वालों को किस बात का डर है ? जो परिवर्त्तन के विरोधी हैं उन्हें भी डरने की आवश्यकता नहीं. चेक समाज में डर के लिए जगह नहीं. 'प्राव्दा वितेजी' (सत्य की जीत होगी).

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रेस पर पाबंदी : गार्डियन में पापास का व्यंग्य

चेक समस्या और भारत

चेकोस्लोवाकिया पर रूसी आक्रमण की तीव्र प्रतिक्रिया भारत में हुई. उस से यह स्पष्ट हो जाता है कि भारत सरकार भले ही कुछ मर्यादाओं में बँध कर अपनी नीति निर्धारित करे किंतु यहाँ का जनसाधारण ग़लत बात को ग़लत करने में किसी भी प्रकार का संकोच नहीं करता है. रूस द्वारा पाकिस्तान को शस्त्रास्त्र दिये जाने के निर्णय से भारतीय जनता पहले से ही क्षुब्ध थी और सभाओं तथा प्रदर्शनों द्वारा रूस के प्रति अपना आक्रोश व्यक्त कर रही थी. चेकोस्लोवाकिया पर रूस के हमले ने उसे और भी क्षुब्ध कर दिया. दलीय स्तर पर भी रूस की इस कार्रवाई की आलोचना की गयी. लेखकों और बौद्धिकों ने वक्तव्य प्रसारित कर के तथा सभाओं में रूसी हमले की भर्त्सना की.

जनता की अदालत : रूस ने जिस समय वारसाउ संधि के चार अन्य देशों के साथ चेकोस्लोवाकिया पर आक्रमण किया उन दिनों यहाँ संसद् का वर्षाकालीन अधिवेशन चल रहा था. रूसी आक्रमण की ख़बर मिलते ही संसद् के सभी ग़ैर-कम्युनिस्ट दलों ने सरकार से माँग की कि वह इस मसले पर अपना रुख स्पष्ट करे. यह माँग इतनी प्रबल थी कि सरकार का दृष्टिकोण स्पष्ट करने के लिए प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी को उसी दिन संसद् में वक्तव्य देना पड़ा. उन्होंने रूसी कार्रवाई को दुर्भाग्यपूर्ण बताते हुए चेकोस्लोवाकी जनता के प्रति भारत सरकार की सहानुभूति व्यक्त की. किंतु उन के इस वक्तव्य से संसद्-सदस्यों को संतोष नहीं हुआ और उन्होंने चेकोस्लोवाकिया के मसले पर सदन में बहस की माँग की, जो स्वीकार कर ली गयी. बहस के दौरान कई कांग्रेसी और कम्युनिस्ट संसद्-सदस्यों ने भी ग़ैर-कम्युनिस्ट प्रतिपक्षी सदस्यों का साथ दिया और चेकोस्लोवाकिया पर रूसी हमले की निंदा की. भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के योगेंद्र शर्मा ने रूसी कार्रवाई पर गहरी चिंता व्यक्त की और कहा कि उन के दल ने चेक नेता दुबचेक द्वारा किये जा रहे सुधारों का स्वागत किया था. परंतु उन्होंने यह संकेत भी दिया कि सुधार की प्रक्रिया इस प्रकार की होनी चाहिए जिस से कि पूँजीवादी और प्रतिक्रियावादी तत्त्व लाभ न उठा पायें. एक अन्य कम्युनिस्ट (वामपंथी) संसद-सदस्य पी. राममूर्ति ने तो रूसी कार्रवाई को न अनुचित कहा और न ही उचित. उन का कहना था कि सैनिक हस्तक्षेप से किसी भी राजनैतिक समस्या का समाधान नहीं हो सकता है.

जनसंघ, स्वतंत्र पार्टी, संसोपा, प्रसोपा और निर्दल संसद्-सदस्यों ने रूसी कार्रवाई की कड़ी निंदा की और सरकार से माँग की कि वह स्पष्ट शब्दों में रूसी कार्रवाई की निंदा करे और संयुक्तराष्ट्र में इस मसले को उठाने में पहल करे. जनसंघ के भूतपूर्व अध्यक्ष बलराज मधोक ने सरकार से न केवल रूसी कार्रवाई की निंदा करने का आग्रह किया बल्कि यह माँग भी की कि यदि चेकोस्लोवाकिया नेता विस्थापित सरकार बनायें तो भारत सरकार को उसे मान्यता प्रदान करनी चाहिए. स्वतंत्र पार्टी के मीनू मसानी ने कहा कि सरकार को कड़े शब्दों में रूसी कार्रवाई की निंदा करनी चाहिए और संसद् में इस आशय का प्रस्ताव भी पारित किया जाना चाहिए. उन्होंने आशंका व्यक्त की कि रूस में सत्ता स्तालिनवादियों के हाथ में पहुँचती जा रही है और हो सकता है कि वे चीन के माओवादियों से कोई समझौता कर लें. कांग्रेस के हनुमंतैया ने प्रो० बलराज मधोक और संसोपा के रविराय की इस माँग का समर्थन किया कि भारत संयुक्तराष्ट्र में चेकोस्लोवाकिया

दो हज़ार शब्दों से

२७ जून, १९६८ को लितरार्नी लिस्ती, प्राचे आदि द्वारा ७० चेकोस्लोवाकी वैज्ञानिकों, श्रमिकों, कारीगरों, किसानों और कलाकारों के हस्ताक्षरों से युक्त एक वक्तव्य प्रसारित किया गया. चेकोस्लोवाकिया में और बाहर इस वक्तव्य की तीव्र प्रतिक्रिया हुई. वक्तव्य में कहा गया कि...

'...आने वाले दिनों में हमें अपने उद्यम और अपने निश्चय का प्रदर्शन करना होगा. हमें प्रमुखतया उन विचारों का विरोध करना होगा कि कम्युनिस्टों के बिना या संभवतः उन का विरोध कर के भी लोकतंत्री पुनर्जागरण लाना संभव है. यह असंगत और अनुचित है.

'कम्युनिस्टों के विकसित संगठन हैं और इन संगठनों में हमें प्रगतिशील गुट का समर्थन करना चाहिए... उन का संघर्ष-कार्यक्रम जनता के समक्ष है. यह कार्यक्रम महानतम विषमताओं में प्रारंभिक समंजन लाने के लिए है और किसी अन्य ने इस प्रकार का विशिष्ट कार्यक्रम प्रस्तुत नहीं किया है. हमारी माँग है कि प्रत्येक जिले और कम्यून में स्थानीय संघर्ष कार्यक्रम प्रस्तुत किया जाये..

'...कुछ समय से लोगों में यह आशंका पैदा हो गयी है कि देश में प्रजातंत्रीकरण की प्रक्रिया में गतिरोध आ गया है. मगर वास्तव में कुछ सीमा तक ही संघर्ष करने वाली शक्तियाँ अस्पष्ट हो गयी हैं. इस समय संघर्ष नियमों को कार्यान्वित कराने और ठोस बातों के लिए, जहाँ तक संभव हो, छेड़ा जाना चाहिए. हमें नये लोगों—मंत्रियों, अध्यक्षों और सचिवों आदि को काम करने का अवसर देना चाहिए. उन्हें यह अधिकार है कि वे अपने-आप को उपयोगी सिद्ध करें, या वे अयोग्य सिद्ध हो जायें.

'...हमें ऐसे व्यक्तियों से त्यागपत्र देने की माँग करनी चाहिए जिन्होंने जनसाधारण की संपत्ति को हानि पहुँचायी है, या जिन्होंने बेईमानी और क्रूरता का व्यवहार किया है... किंतु हमें ऐसे उपाय नहीं अपनाने चाहिए जो ग़ैर-क़ानूनी, अनुचित और गँवारू हों, क्यों कि वे अलेकसांद्र दुबचेक को प्रभावित करने के लिए इन का प्रयोग करेंगे... हमें राष्ट्रीय मोर्चे के नाम को पुनर्जीवित करना चाहिए और राष्ट्रीय समितियों की बैठकों की माँग करनी चाहिए.

'हाल ही में जो आशंका उत्पन्न हुई है वह यह है कि हमारी आंतरिक गतिविधियों में विदेशी शक्तियाँ हस्तक्षेप कर सकती हैं. इन बड़ी ताक़तों के मुक़ाबले में हम इतना ही कर सकते हैं कि हम ससम्मान अपने रास्ते पर चलते रहें. हम अपनी सरकार को यह आश्वासन देना चाहते हैं कि आवश्यकता पड़ने पर हम तब तक हर प्रकार से—शस्त्रों से भी उस का समर्थन करेंगे जब तक कि हमारी सरकार हमारे द्वारा समर्थित कार्यक्रम का अनुसरण करती रहेगी और हम अपने मित्रों को यह बता देना चाहते हैं कि हम अपने मित्रता, सहयोग और व्यापार संबंधी समझौतों का सम्मान करेंगे.

'इस बसंत में हमें फिर एक महान् अवसर मिला है, जैसा कि विश्वयुद्ध के बाद मिला था. एक बार फिर समान उद्देश्य, जिसे हम व्यावहारिक रूप से समाजवाद कहते हैं, प्राप्त करने का काम हमारे हाथों में आने की संभावना हुई है. इसे अपनी पूर्व ख्याति बनाये रखते हुए और उस के प्रति तुलनात्मक रूप से अच्छी धारणा बनाते हुए हमें पूरा करना है. यह बसंत बीत गया और फिर कभी लौट कर नहीं आयेगा. शरद् में हर बात स्पष्ट हो जायेगी....

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चेतावनी और उस का जवाब

वारसाउ संधि के सदस्य पाँच देशों—रूस, पोलैंड, हंगरी, पूर्व जर्मनी और बुल्गेरिया ने १४–१५ जुलाई के वारसाउ सम्मेलन के बाद एक संयुक्त पत्र चेकोस्लोवाकिया भेजा. पत्र में चेकोस्लोवाकिया की नयी सरकार पर 'प्रतिक्रांतिकारी' और 'समाजवादी व्यवस्था को खतरा पैदा करने वाली' होने का आरोप लगाते हुए चेक नेताओं को यह चेतावनी दी गयी कि यदि उन्होंने अपना रवैया नहीं बदला तो उन के विरुद्ध कठोर कार्रवाई की जायेगी. पत्र में कहा गया—

'हम यह कभी भी स्वीकार नहीं कर सकते हैं कि साम्राज्यवाद समाजवादी व्यवस्था में मतभेद पैदा करे और यूरोप में शक्ति-संतुलन अपने पक्ष में कर ले—चाहे यह काम शांतिपूर्ण अथवा अशांतिपूर्ण उपायों से किया जाये फिर चाहे यह भीतर से हो या बाहर से.

'आप के प्रेस, रेडियो और टेलीविज़न ने वारसाउ संधि की सेनाओं के अभ्यास के विरुद्ध अभियान छेड़ रखा है. संभवतः यह रूस और दूसरे समाजवादी देशों के प्रति अविश्वास पैदा करने तथा आक्रामक भावनाएँ भड़काने के उद्देश्य से किया जा रहा है.

'आप की पार्टी और आप के देश के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप करने की न तो इच्छा थी और न है . . . हम अतीत की भाँति आप के समक्ष आ कर आप को यह बताना नहीं चाहते हैं कि समाजवादी विधान के उल्लंघन सहित जो भूलें आप ने की हैं उन्हें सुधार लें.

'इस के साथ ही हम इस से भी सहमत नहीं हो सकते हैं कि शत्रु-शक्तियाँ आप के देश को समाजवाद के पथ से भ्रष्ट करें और चेकोस्लोवाकिया के समाजवादी समुदाय से अलग होने का खतरा पैदा करें.'

वारसाउ संधि के इस संयुक्त पत्र की चेकोस्लोवाकिया में तीव्र प्रतिक्रिया हुई. चेकोस्लोवाकिया कम्युनिस्ट पार्टी ने पत्र में लगाये गये आरोपों का खंडन किया और यह इच्छा व्यक्त की कि समस्या के समाधान के लिए रूस तथा अन्य कम्युनिस्ट पार्टियों से सीधी द्विपक्षीय वार्त्ता होनी चाहिए. चेकोस्लोवाकी कम्युनिस्ट पार्टी के अध्यक्ष-मंडल ने संयुक्त पत्र के उत्तर में इस बात पर आश्चर्य प्रकट किया कि चेकोस्लोवाकिया की स्थिति और पार्टी के उद्देश्यों को इतना ग़लत समझा गया. उत्तर में कहा गया—

'इस में कोई संदेह नहीं है कि हमारी भावी गतिविधियों के संबंध में [illegible] दिये गये इस परामर्श में [illegible] सामाजिक विकास की [illegible] परिस्थितियों को ध्यान में नहीं रखा गया.

'हम यह स्वीकार करते हैं कि चेकोस्लोवाकिया में विभिन्न शक्तियाँ उभर कर सामने आयी हैं, जिन में कुछ दक्षिणपंथी हैं और कुछ जनवरी से पूर्व की स्थिति में लौटने के हिमायती हैं. किंतु इन शक्तियों से कोई गंभीर खतरा नहीं है.

'पार्टी पड़ोसी देशों की आशंकाओं को समझती है किंतु यह भी अनुभव करती है कि ये आशंकाएँ निराधार हैं. अधिसंख्य वर्त्तमान समस्याएँ अनेक वर्षों के नौकरशाही केंद्रवाद का परिणाम हैं.

'इन पद्धतियों को पुनः अपनाने का कोई भी संकेत पार्टी सदस्यों के प्रबल बहुमत, श्रमजीवी वर्ग, मज़दूरों, सहकारी किसानों और बौद्धिकों की प्रतिरोध क्षमता को भड़का देगा. इस प्रकार का क़दम उठा कर पार्टी अपने राजनैतिक नेतृत्व को पंगु बना देगी और ऐसी स्थिति पैदा कर देगी जिस में वास्तविक सत्ता-संघर्ष छिड़ जायेगा.'

अपने उत्तर में चेकोस्लोवाकी कम्युनिस्ट पार्टी ने सुधार के अपने कार्यक्रम पर दृढ़ रहने का निश्चय व्यक्त किया और समाजवादी व्यवस्था के प्रति अपनी आस्था दोहरायी.

का प्रश्न उठाये और समस्या पर विचार-विमर्श करने के लिए स्वाधीनता-प्रिय देशों के एक सम्मेलन का आयोजन करे.

प्रसपा के नाथ पै ने कहा कि पराधीन भारत ने चार दशाब्दी पूर्व स्पेन और चेकोस्लोवाकिया में घटित इस प्रकार की घटनाओं पर जितना दृढ़ और स्पष्ट रुख अपनाया उतना स्वाधीन भारत न अपना सका. उन्होंने सरकार पर आरोप लगाया कि वह दृढ़ नीति नहीं अपना रही है.

निर्दल संसद्-सदस्य आचार्य कृपालानी और फ्रैंक एंटनी ने रूसी कार्रवाई की कड़ी निंदा की. आचार्य कृपालानी ने कहा कि रूस के इस तर्क से बढ़ कर कि उस ने समाजवाद की रक्षा के लिए चेकोस्लोवाकिया में अपनी सेनाएँ भेजीं हास्यास्पद और कोई बात नहीं हो सकती है. यह तर्क दे कर तो वह किसी दिन भारत पर भी आक्रमण कर सकता है. फ्रैंक एंटनी ने कहा कि चेकोस्लोवाकिया पर रूसी हमले से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि साम्यवादी व्यवस्था में मानव-स्वतंत्रता, मानवीय शिष्टाचार और मानव-मूल्यों का कोई स्थान नहीं है.

राजनैतिक दल : संसद में व्यक्तिगत हैसियत से भले ही सभी दलों के सदस्यों ने सीधे अथवा घुमा-फिरा कर रूसी कार्रवाई की निंदा की हो, किंतु दलीय स्तर पर कुछ दूसरी ही तस्वीर नज़र आयी. सत्तारूढ़ कांग्रेस पार्टी में रूसी कार्रवाई पर तीव्र मतभेद पाया गया. अशोक मेहता और श्री सुचेता कृपालानी के नेतृत्व में कांग्रेस का एक वर्ग तो रूस की खुली निंदा की माँग करता रहा, जब कि दूसरा पक्ष सरकार के रुख का समर्थक था. इसी मतभेद के कारण अशोक मेहता ने केंद्रीय मंत्रिमंडल से त्यागपत्र भी दे दिया. जहाँ तक जनसंघ, स्वतंत्र, प्रसोपा और संसोपा का प्रश्न है, इन दलों के प्रवक्ताओं ने सर्वत्र रूसी कार्रवाई की निंदा की.

सब से विवादास्पद स्थिति दक्षिणपंथी कम्युनिस्ट पार्टी की रही. उस की केंद्रीय समिति ने अपनी तीन दिन की बैठक में इस मसले पर विस्तृत विचार-विमर्श किया. विचार-विमर्श के दौरान सदस्यों का मतभेद खुल कर सामने आया. कार्यसमिति के २१ सदस्यों में १० का मत था कि रूसी कार्रवाई की निंदा की जानी चाहिए, जब कि १० सदस्यों का कहना था कि रूस ने जो कुछ किया उस के अलावा और कोई विकल्प नहीं था. अतः चेकोस्लोवाकिया में की गयी उस की कार्रवाई उचित थी. एक सदस्य तटस्थ रहा. कार्यसमिति की बैठक में भूपेश गुप्त ने दोनों पक्षों के बीच समझौता कराने का प्रयत्न किया, किंतु इस आशय का उन का प्रस्ताव रद्द कर दिया गया. बाद में पार्टी की राष्ट्रीय परिषद् ने भी चेक समस्या पर विचार किया. राष्ट्रीय परिषद् के समक्ष भूपेश गुप्त ने अपने डेढ़ घंटे के वक्तव्य में ज़ोरदार शब्दों

नेहरू, इंदिरा और चेक लेखक : तीस वर्ष पहले

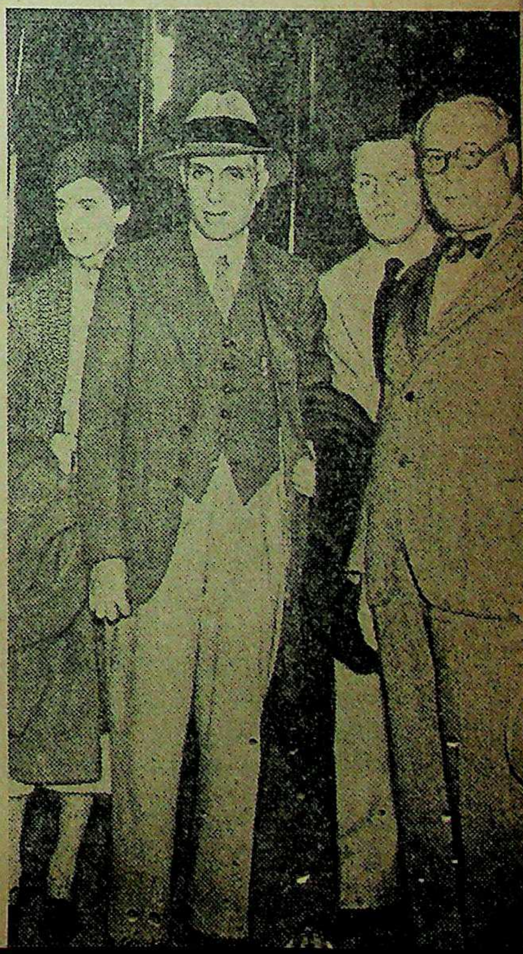

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय बुद्धिजीवियों की अपील

हमें इस समाचार से गहरा आघात पहुँचा है कि सोवियत रूस और वारसाउ संधि के उस के साथी देशों की सेनाओं ने चेकोस्लोवाकिया पर अधिकार कर लिया. इस कार्यवाही पर हम अपना हार्दिक क्षोभ और रोष प्रकट करते हैं. यह कार्यवाही न केवल संयुक्त राष्ट्र की बुनियादी प्रतिज्ञा के विरुद्ध जाती है बल्कि राष्ट्रों के बीच सभ्य व्यवहार के नियमों का उल्लंघन करती है. रूस और उस के साथी देशों ने यह सैनिक कार्यवाही इस वर्ष के मध्य में की है, जो सारे विश्व में मानव-अधिकारों की रक्षा को समर्पित किया गया. इस से हमें और भी क्लेश पहुँचा है.

चेकोस्लोवाकिया की वीर जनता एक प्राण हो कर आत्मनिर्णय और एक स्वाधीन नियति के लिए धैर्य और वीरता से संघर्ष कर रही है. हम उस के प्रति गहरी सहानुभूति और सम्मान प्रकट करते हैं. हम यह बात किसी तरह नहीं मान सकते कि चेकोस्लोवाकिया देश एक समाजवादी समाज के भीतर रहते हुए एक बड़ी और संपन्नतर स्वाधीनता के लिए पूरे मन से और उदार दृष्टि से जो सच्चा प्रयत्न कर रहा था उस से उस के समाजवादी देशों की सुरक्षा को अलग-अलग या सामूहिक रूप से कोई खतरा था या हो सकता था कि उस का ऐसा लक्ष्य था. बल्कि इस के विपरीत हमारा विश्वास है कि इस अनधिकार हस्तक्षेप से बंधु देशों के बीच परस्पर विश्वास नष्ट हो जायेगा, संदेह और अविश्वास का वातावरण बनेगा और इस से समाजवाद की प्रगति में और बाधा ही होगी.

भारत और सोवियत रूस की मित्रता हमारे लिए बहुत महत्त्व रखती है. उसे हम अपने दोनों देशों के लिए ही नहीं बल्कि समूचे यूरेशियाई महाद्वीप के लिए मूल्यवान समझते हैं. ऐसी मित्रता का अनिवार्य आधार यह है और यही हो सकता है कि दोनों देश एक-दूसरे पर विश्वास करें, प्रत्येक देश दूसरे की राष्ट्रीय प्रभुसत्ता के संपूर्ण सम्मान का और स्वेच्छानुसार विकास का आश्वासन दे. हमें इस में जरा भी संदेह नहीं है कि चेकोस्लोवाकिया भी सोवियत रूस से अपनी मित्रता को अधिक से अधिक महत्त्व देता था और उस के वर्त्तमान नेता अब भी रूस के प्रति वही भाव रखते हैं. जब सोवियत रूस जैसा बड़ा और समर्थ राष्ट्र एक छोटे देश के साथ, जो कि न केवल मित्र और पड़ोसी था बल्कि भ्रातृत्व के संबंध से बँधा हुआ था, ऐसा व्यवहार करता है जिस से इस विश्वास की हत्या हो तब स्वाभाविक है कि दूसरे मित्र देशों की जनता में भी संदेह और अविश्वास पैदा हो और उस के मन में यह सवाल उठे कि ऐसी दोस्ती का आधार क्या है? क्या भरोसा है कि वह टिकेगी?

सोवियत रूस और दूसरे संबद्ध देशों से हमारी माँग है कि चेक भूमि से फ़ौरन अपनी सेनाएँ हटायें, चेक नेताओं और निर्वाचित लोकप्रतिनिधियों को तुरंत रिहा करें, अपना मत प्रकट करने के लिए बंदी या नज़रबंद किये गये सब लेखकों, कलाकारों और बुद्धिजीवियों को तत्काल मुक्त करें और भविष्य में ऐसी कोई हरकत न करें जिस से चेकोस्लोवाकिया की राष्ट्रीय प्रभुसत्ता, स्वाधीनता और आत्मनिर्णय के अधिकार में कोई बाधा पड़ती हो या जो चेक जनता के अपनी प्रतिभा और आकांक्षा के अनुसार विकास में बाधक हो.

चेकोस्लोवाकिया की जनता और वहाँ के बुद्धिजीवियों को अपना भरपूर समर्थन देते हुए हम सोवियत रूस और दूसरे समाजवादी देशों के भी लेखकों, कलाकारों और बौद्धिकों से अनुरोध करते हैं कि वे भी ऐसा करें. वे भी अपने को चेकोस्लोवाकिया के आत्मनिर्णय के अधिकार का समर्थक घोषित करें और अपनी सरकारों से माँग करें कि जो अन्याय उन्होंने किया है उस का तुरंत निराकरण करें.

सच्चिदानंद वात्स्यायन, रामसिंह, अजित कुमार, इब्राहीम अल्काज़ी, ओमप्रकाश शर्मा, लोकनाथ भट्टाचार्य, श्रीकांत वर्मा, कृष्ण नारायण कक्कड़, जे० स्वामी नाथन्, प्रयाग शुक्ल, श्यामलाल शर्मा, केशव मलिक, मनोहर श्याम जोशी, रघुवीर सहाय, कँवल कृष्ण, देवयानी कृष्ण, एम० गोविंदन, सर्वेश्वरदयाल सक्सेना, प्रभाकर माचवे, भारतभूषण अग्रवाल.

में चेक कम्युनिस्ट पार्टी का हर संभव बचाव करते हुए रूसी कम्युनिस्ट पार्टी की आलोचना की. किंतु अंत में उन्होंने यह कह कर रूसी कार्रवाई को उचित बताया कि २० अगस्त को हालात ने जो मोड़ लिया उस के कारण सैनिक कार्रवाई करना आवश्यक हो गया. भूपेश गुप्त के इस तर्क का रूस विरोधी गुट पर कोई असर नहीं पड़ा, क्यों कि रूस काफ़ी अरसे से सैनिक कार्रवाई करने की धमकी देता रहा. यही नहीं, २० अगस्त से बहुत पहले रूस ने चेक सीमा की नाकाबंदी भी कर ली थी. अंत में प्रस्ताव तैयार करने का काम एस० जी० सरदेसाई, भूपेश गुप्त और इंद्रजित गुप्त को सौंपा गया. इन लोगों द्वारा तैयार किया गया प्रस्ताव सर्वसम्मति से पारित हो गया, क्योंकि उस में न तो रूसी कार्रवाई की निंदा की गयी और न ही समर्थन. पार्टी की राष्ट्रीय परिषद् में यह प्रस्ताव ४ के मुक़ाबले १४ मतों से पारित हो गया. पार्टी की इस खींचतान से रूस के कट्टर समर्थक डांगे को शायद सबसे अधिक सदमा पहुँचा और उन्होंने यह कह कर अपनी भड़ास निकाली कि 'भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी लेनिन की पार्टी में सुधार करना चाहती है.'

मुख्यमंत्री सम्मेलन

कृषि-क्रांति और हवा का रुख़

देश के विभिन्न भागों से प्राप्त सूखे के समाचारों के बीच नयी दिल्ली में मुख्यमंत्रियों की बैठक में देश की खाद्य-समस्याओं के संबंध में बातचीत चल रही है. केंद्रीय खाद्यमंत्री जगजीवनराम के भाषण ने सम्मेलन के आरंभ में ही इस बात का संकेत कर दिया था कि केंद्रीय सरकार की खाद्य-नीति जिस उत्साह और आशावाद के साथ शुरू हुई थी उस की जगह घबराहट और अनिश्चय ले रहा है. उन्होंने मुख्यमंत्रियों से अनुरोध किया कि वे राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था में जीवन लाने के लिए पूर्ण सहयोग दें, क्यों कि यदि देश में खाद्य पदार्थों के सामान्य भावों में स्थिरता नहीं आती तो राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था में पुनर्जीवन नहीं आ सकता. इस बात का भी ख़तरा है कि उस की वर्त्तमान स्थिति भी न रहे. जगजीवन राम ने वनस्पति-निर्माताओं को चेतावनी दी कि यदि वे अपनी नीति को नहीं बदलेंगे तो सरकार के लिए यह ज़रूरी होगा कि वह वनस्पति-उत्पादन के लिए लाइसेंस पद्धति को अपनाये और वनस्पति पर नियंत्रण रख कर उस के वितरण की व्यवस्था करे. पिछले मास वनस्पति-निर्माताओं ने सरकार से पूछे बिना ही वनस्पति के भावों में वृद्धि की घोषणा कर दी थी, जिस से देश के कई क्षेत्रों में वनस्पति की कृत्रिम कमी हो गयी थी. इस लिए सरकार को वनस्पति की बिक्री पर क़ानूनी नियंत्रण लागू करना पड़ा.

वसूली का लक्ष्य : खाद्यमंत्री ने मुख्यमंत्रियों से अनुरोध किया कि वे अपने प्रदेशों में अधिक से अधिक अनाज वसूल करने का प्रबंध करें, क्यों कि उन के अनुसार यह देश की खाद्य-नीति के लिए ज़रूरी है. मगर उगाही के लिए निश्चित लक्ष्यों के संबंध में अधिसंख्य मुख्यमंत्रियों की राय यह थी कि प्रदेशों की वास्तविक स्थिति का अनुमान नहीं लगाया गया है. केरल के मुख्यमंत्री के अनुसार केरल प्रदेश के लिए निश्चित लक्ष्य असंगत है, क्योंकि उन के अनुसार यह लक्ष्य पिछले कई वर्षों में सब से अधिक अनाज वसूली की मात्रा से भी दुगना है. अभी तक केरल में ६२ हज़ार टन से अधिक अनाज की उगाही नहीं हुई है. मुख्यमंत्री ने केंद्र से अधिक चावल भेजने का अनुरोध किया. मध्यप्रदेश के मुख्यमंत्री ने भी निर्धारित लक्ष्य को पूरा करने में असमर्थता प्रकट की. उन के अनुसार मध्यप्रदेश में केवल देर से पकने वाली फ़सलों की ही वसूली हो सकती है. मद्रास के मुख्यमंत्री ने केरल के मुख्यमंत्री की तरह अधिक चावल की माँग तो नहीं की किंतु उन्होंने अपनी सरकार द्वारा चालू की गयी सस्ते चावल की योजना के लिए केंद्रीय सहायता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का अनुरोध किया, जिस पर १९६८-६९ वर्ष के बीच साढ़े आठ करोड़ रुपये लगने का अनुमान है. मद्रास प्रदेश की ओर से उन्होंने इस बात का आश्वासन दिया कि वह केंद्र द्वारा निर्धारित मात्रा को उगाहने का प्रयत्न करेंगे, किंतु इस बात के संबंध में वह कोई वचन नहीं दे सकते. उन्हें इस बात से संतोष है कि केंद्र में मद्रास राज्य को अतिरिक्त अन्नवाला प्रदेश माना जाता है. वहाँ प्रादेशिक आवश्यकताओं को पूरा करने भर के लिए ही पैदा होता है. ख़रीफ़ फ़सल के लिए मद्रास के लिए ८.५६ लाख टन उगाही की मात्रा निर्धारित की गयी है.

क़ाग़ज़ी मूल्य : विभिन्न प्रदेशों में ख़रीफ़ की फ़सल की उगाही के संबंध में बात-चीत के अतिरिक्त किसानों से विभिन्न प्रकार के खाद्यान्नों के क्रयमूल्य के संबंध में भी कई प्रदेशों ने केंद्रीय सरकार की नीति की कटु आलोचना की. अपने उद्घाटन भाषण में खाद्यमंत्री ने कहा था कि कृषि मूल्य आयोग ने ख़रीद के मूल्य में जो कमी की है वह केवल इस लिए है कि विभिन्न प्रदेशों में समानता आ जाये. किंतु मुख्यमंत्री केंद्रीय खाद्यमंत्री से सहमत नहीं हुए. इस संबंध में महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री नाइक ने कृषि मूल्य आयोग की तीव्र आलोचना की. उन्होंने कहा कि आयोग ने एक ऐसे विद्वान् का सा व्यवहार किया है जो किसी व्यक्ति को इस आश्वासन पर नदी पार करने का परामर्श देता है कि नदी की गहराई का मध्यमान उस की लंबाई से कम है. श्री नाइक के अनुसार यह आयोग उन्हें डूबते हुए देख कर संतोष महसूस करता है. मुख्यमंत्रियों के सम्मेलन में अधिसंख्य वक्ताओं ने इस बात की माँग की कि नियमित वितरण के लिए सरकार अधिक चीनी प्राप्त करे. मोहनलाल सुखाड़िया के अनुरोध पर सभी मुख्यमंत्रियों ने इस बात पर सहमति प्रकट की कि राजस्थान से अनाज को बाहर ले जाने की आज्ञा रोक दी जाये, क्योंकि राजस्थान में इस समय व्यापक सूखा पड़ रहा है; यद्यपि पंजाब ने उत्तरी खाद्य क्षेत्र में परिवर्तन करने की माँग नहीं की फिर भी यह माँग हरयाना की ओर से आयी. हरयाना के अनुसार दिल्ली को इस क्षेत्र से अलग करना चाहिए.

कृषि क्रांति : मुख्यमंत्रियों की इस बैठक का कुल परिणाम यह निकला कि खाद्यमंत्री और उन के सलाहकारों द्वारा निर्धारित खाद्य-नीति में कोई भी व्यापक परिवर्तन का फ़ैसला नहीं किया गया. यद्यपि कुछ समय पहले तक खाद्य मंत्रालय की ओर से देश को यह आश्वासन मिलते रहे हैं कि देश की खाद्य-नीति शत प्रतिशत सफल हो रही है और शीघ्र ही देश खाद्यान्न के संबंध में आत्मनिर्भर हो जायेगा, फिर भी मुख्यमंत्रियों की इस बैठक तथा केंद्रीय खाद्यमंत्री के संकेतों से जो चित्र उभरा है वह यही है कि देश इस संबंध में जहाँ कुछ वर्ष पहले था उस से बहुत आगे नहीं बढ़ा है.

पानी की खोज : जहाँ तक उत्पादन के लक्ष्य का प्रश्न है यह क़रीब-क़रीब स्पष्ट हो गया है कि साढ़े छः करोड़ टन अनाज पैदा करना अब संभव नहीं. साथ ही ५७ लाख टन अनाज की वसूली भी असंगत लक्ष्य दिखायी दे रहा है. इस का कारण स्पष्ट है कि कई क्षेत्रों में कृषि की स्थिति अच्छी नहीं है और कई अन्य क्षेत्रों में वह निश्चित रूप से बहुत ख़राब है. राजस्थान इस दृष्टि से फिर एक बार सूखे का शिकार हो रहा है. बीकानेर, जैसलमेर और बाड़मेर क्षेत्रों में सूखे ने विकट परिस्थितियाँ पैदा कर दी हैं. इन ज़िलों में अभी तक अनेक बार सूखा पड़ा है. इन के अतिरिक्त जालौर और जोधपुर में भी पानी के अभाव के कारण फ़सलों को क्षति पहुँची है. सामान्यतः यह संपूर्ण क्षेत्र कम वर्षा वाला क्षेत्र है और इस लिए यहाँ केवल ख़रीफ़ फ़सल ही उगायी जा सकती है. कहीं-कहीं जहाँ छोटे-छोटे तालाब या ट्यूबवेल लगे हुए हैं वहाँ थोड़ी-बहुत मात्रा में अन्य फ़सलें भी उगती हैं. मगर इस बार वर्षाकाल की समाप्ति के साथ ही राजस्थान के इस विशाल क्षेत्र के लाखों लोगों के लिए बहुत कठिन दिन शुरू हो गये हैं. वर्षा के अभाव में सभी जलाशय सूख गये हैं. खेतों को पानी देने की बात तो दूर पीने के लिए भी पानी का सख़्त अभाव पड़ गया है. राजस्थान के कई क्षेत्रों में कई ऐसे भी स्थान हैं जहाँ सामान्य समय में भी पीने के पानी को बहुत समय के लिए इकट्ठा कर के रखना पड़ता है. ऐसे स्थानों के लोगों के लिए अब यह नितांत आवश्यक हो गया है कि वह अपने घर-बार छोड़ कर अपने बाल-बच्चों और पशुओं समेत कहीं दूर जा कर पानी की तलाश करें. इस प्रकार के परिवारों की लंबी क़तारें बाड़मेर और जैसलमेर क्षेत्रों से चित्तौड़गढ़ गंगानगर और उदयपुर के क्षेत्रों की ओर जा रही हैं. मगर कुछ लोग इस से भी लंबी यात्राएँ करते हैं ताकि उन्हें और उन के पशुओं को जीने के लिए थोड़ा-सा पानी मिल सके. ऐसे परिवार गुजरात, मध्यप्रदेश और पंजाब तक पहुँच जाते हैं.

मृतप्राय पशु : पशुओं की स्थिति सब से अधिक दयनीय है. प्रायः ३० लाख गाय-बैल और ६० लाख अन्य पशुओं के लिए प्यास के कारण विनाश का भय पैदा हो गया है. केवल पानी की ही कमी नहीं बल्कि पशुओं के लिए चारा मिलना भी बहुत कठिन हो गया है. रेतीली भूमि में कहीं कोई घास का तिनका भी नहीं दिखाई देता और भूखी गायें चारे के अभाव में कई प्रकार की जंगली झाड़ियाँ खाने लगी हैं. इन काँटेदार झाड़ियों को सामान्य समय में पशु सूँघते भी नहीं थे. प्रदेश सरकार इस विकट परिस्थिति का मुक़ाबला करने में समर्थ नहीं है. राजस्थान सरकार के पास साढ़े तीन लाख गाय-बैलों के लिए चारा देने की व्यवस्था है. इस के अतिरिक्त पशुओं को जंगलों में स्वयं चारा ढूँढ़ने के लिए छोड़ दिया गया है. प्रदेश सरकार ने केंद्र और अन्य राज्यों में पशुओं के लिए चारा देने का अनुरोध किया है और मुख्यमंत्री इस सिलसिले में सहमत थे कि पंजाब और हरयाणा से जितना भी चारा अधिक संभव हो सके राजस्थान भेजा जाए. अच्छी नस्ल के अधिक से अधिक पशुओं को बचाने के लिए कम से कम २५००० टन भूसे की आवश्यकता होगी और इस कार्य में देरी नहीं की जा सकती, क्योंकि भूसा अधिक जगह घेरता है और इस लिए इसके लिए अधिक गाड़ियों की आवश्यकता होती है. एक साधारण रेल-डिब्बे में २५ क्विंटल से अधिक भूसा नहीं भरा जा सकता. जिन क्षेत्रों में लोगों और पशुओं को दूसरे प्रदेशों या ज़िलों में ले जाया जा सकता है वहाँ सरकार ने १०० शिविर स्थापित करने की योजना बनायी है जो कि इन घूमते हुए परिवारों को मार्ग में आवश्यक सुविधाएँ प्रदान कर सकें.

सहयोग का अभाव : राजस्थान में सूखा पड़ना कोई नयी बात नहीं है. लोगों में खानाबदोशों की-सी आदतें पैदा हो गयी हैं. मगर इस स्थिति को बदलने के लिए कोई तुरंत फलदायक योजना नहीं अपनायी जा रही है. जिन साधनों को जनता की सेवा में लगाया जा सकता था उन पर भी विशेष ध्यान नहीं दिया जा रहा है. उदाहरण के लिए कई क्षेत्रों में बिजली से चलने वाले गहरे कुएँ खोदे गये हैं. मगर अभी तक उन में से बहुत से इस लिए चालू नहीं हो पाये हैं क्योंकि जन-स्वास्थ्य विभाग और भूमिगत जल परिषद् के बीच उन को नियंत्रित और प्रशासित करने के बारे में न कोई समझौता हुआ है और न उनमें कोई सहयोग है. राजस्थान नहर चालू होने तक प्रतीक्षा का तर्क अनुचित है क्योंकि सूखा और भुखमरी किसी की प्रतीक्षा नहीं करते. यदि समय पर राजस्थान नहर और अन्य नहरों के आस-पास उगने वाली झाड़ियों और घास की कृषि होती तो आज कम से कम चारे की समस्या इतनी विकट न हो जाती. सूरतगढ़ के केंद्रीय यंत्रीकृत फ़ार्म में इस प्रकार की पर्याप्त सामग्री और मशीनें मौजूद हैं जिन से इस कार्य को सफल किया जा सकता है. इस के लिए यह भी ज़रूरी है कि लोगों को भुखमरी से बचाने के हर साधन का इस्तेमाल किया जाए, क्यों कि ऐसे अवसरों पर अनाज का व्यापार करने वाले पूँजीपतियों द्वारा ग़रीब जनता का शोषण करने की प्रवृत्ति बढ़ जाती है. इस समय भी राजस्थान के अनेक क्षेत्रों में अनाजों के भाव बहुत तेज़ी से बढ़ रहे हैं. समय रहते प्रदेश सरकार और केंद्रीय खाद्य मंत्रालय को उचित दिशा में क़दम उठाना चाहिए.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खेल और खिलाड़ी

भारतीय दल की घोषणा—आज, कल, परसों

आज, कल, परसों करते-करते आखिर वह दिन भी आ ही गया जिस का कि काफ़ी बेसब्री से इंतज़ार किया जा रहा था. मैक्सिको ओलिंपिक खेलों के लिए भारतीय दल के सदस्यों की सूची के सिलसिले में इस बार भारतीय ओलिंपिक एसोसिएशन के प्रधान राजा भालिंदर सिंह ने भारतीय खेल-प्रतिनिधियों को बहुत तरसाया और तड़पाया. भारतीय खेल-समीक्षकों और प्रतिनिधियों ने राजा साहब की बहुत बार घेराबंदी की मगर उन्होंने भी बहुत संयम से काम लिया और अंत तक—'आज नहीं, शायद कल कुछ बता सकूँ' का वाक्य दोहराते रहे और आखिर में उन्होंने यह कह दिया कि भारतीय दल के सदस्यों की घोषणा शिक्षा मंत्रालय करेगा. उधर मैक्सिको से इस तरह के समाचार आने लगे कि लगभग १२ देशों की टीमें वहाँ पहुँच चुकी हैं और इधर अभी ३९ और ३६ का ही झगड़ा चल रहा था. ओलिंपिक के अवसर पर भारतीय ओलिंपिक एसोसिएशन और शिक्षा मंत्रालय के बीच कोई रस्साकशी न हो ऐसा बहुत कम होता है.

मैक्सिको ओलिंपिक में भारत का प्रतिनिधित्व करने वाला ३७ सदस्यीय भारतीय दल इस प्रकार है :

हॉकी : १८ खिलाड़ी, एक मैनेजर और एक प्रशिक्षक (२० सदस्यों की हॉकी टीम पहले ही यहाँ से रवाना हो चुकी है)

एथलेटिक : प्रवीण कुमार (तारगोल—पुलिस) और भीमसिंह (ऊँची कूद—सेना) मैनेजर-प्रशिक्षक जी० लक्ष्मणन्.

निशानेबाज़ी : महाराजा करणीसिंह (बीकानेर) और रणधीर सिंह (पंजाब), प्रशिक्षक-मैनेजर और मेकेनिक—ठाकुर कालू सिंह (राजस्थान).

कुश्ती : बिशंभर सिंह (रेलवे), उदय चंद (सेना), मुख्तियार सिंह (सेना) और सुदेश कुमार (दिल्ली)—साथ में प्रशिक्षक और मैनेजर ए० आर० भार्गव.

भारोत्तोलन : एम० एल० घोष (सेना) साथ में प्रशिक्षक और मैनेजर तेलंग.

मुक्केबाज़ी : भारत में जन्मा और लंदनवासी मॉरीस स्टीव्स. कहा जाता है इस के पास भारत का पारपत्र है.

दल के प्रधान राजा भालिंदर सिंह और जन संपर्क अधिकारी आर० एल० आनंद होंगे. एम० एस० गिल को दल का सचिव नियुक्त किया गया है.

भारत के कुछ विभिन्न खेल संघों के प्रतिनिधियों के नाम इस प्रकार हैं : अंतरराष्ट्रीय ओलिंपिक समिति के प्रतिनिधि—राजा भालिंदर सिंह, एशियाई खेल संघ के लिए मोइनुल हक़, उमराव सिंह (एथलेटिक), सुरजीत सिंह मजीठिया (कुश्ती), अश्विनी कुमार (हॉकी), पंकज गुप्त (राष्ट्रमंडल खेल), फ़िल्मी अभिनेता डेविड अब्राहम (भारोत्तोलन—प्रतिनिधि एवं रेफ़री).

हॉकी के रेफ़री—गुरसेवक सिंह, जमेसन, अग्रवाल और एस० जे० नागरवाला.

इन खिलाड़ियों में भारतीय खेल-प्रेमियों के लिए जो एक नाम काफ़ी नया और अजनबी है, वह है मॉरीस स्टीव्स. भारतीय दल के सदस्यों की अभी घोषणा भी नहीं हुई थी कि यह समाचार मिल गया कि इंग्लैंड से एक खिलाड़ी, जिसका जन्म बंबई में हुआ था और जो बाद में इंग्लैंड में जाकर बस गया था, भारत का प्रतिनिधित्व करने के लिए मैक्सिको रवाना हो गया है. भारतीय खेल प्रेमियों के मन में स्टीव्स के बारे में कुछ और जानने की जिज्ञासा स्वाभाविक ही थी. 'स्टीव्स आखिर कौन है,' 'मैक्सिको में वह भारत का प्रतिनिधित्व आखिर किस हैसियत से कर सकता है.' 'उस को वहाँ भेजने की व्यवस्था कौन कर रहा है' आदि प्रश्नों का उठाया जाना स्वाभाविक ही था.

स्टीव्स फ्लाईवेट वर्ग का मुक्केबाज है. उसे इस बात का पूरा विश्वास था कि उसे इंग्लैंड की टीम में शामिल कर लिया जायेगा. मगर जब उसे इंग्लैंड की टीम में शामिल नहीं किया गया तो उसने भारत का प्रतिनिधित्व करने की ठान ली. क्यों कि उस के पास भारत का पारपत्र है, इस लिए उसने वहीं अपने कुछ साथियों और मित्रों से कुछ धन राशि इकट्ठी की और मैक्सिको के लिए रवाना हो गया.

भारत में स्टीव्स के प्रश्न को ले कर काफ़ी हो-हल्ला मचाया गया. कुछ उदारमना व्यक्तियों के लिए यह मामूली सी बात थी पर कुछ सिद्धांतवादियों के लिए यह एक बहुत बड़ी और बहुत ग़लत बात थी. उदारमना व्यक्तियों का कहना था कि इस से क्या फ़र्क़ पड़ता है. हम से बिना कुछ लिए यदि कोई भारत का प्रतिनिधित्व करना चाहता है तो इस में हमें किसी प्रकार की कोई आपत्ति नहीं करनी चाहिए. ऐसे व्यक्तियों ने महाराजा रणजीत सिंह, दिलीप सिंह और स्वर्गीय महाराजा पटौदी का उदाहरण देते हुए कहा कि ये सभी भारतीय खिलाड़ी थे, इस पर भी वे हमेशा इंग्लैंड की ओर से ही खेलते रहे.

लेकिन सिद्धांतवादियों का कहना था कि मॉरिस स्टीव्स कौन है ? इस बारे में कोई कुछ नहीं जानता, किसी ने उसे देखा नहीं, जाँचा नहीं, परखा नहीं. यह ठीक है कि उस के पास भारतीय पारपत्र है. पर वह उस का उपयोग अपने स्वार्थ के लिए करना चाहता है. उसने इस बात के लिए भरसक कोशिश की कि उसे इंग्लैंड की मुक्केबाज़ी की ९ सदस्यों की टीम में शामिल कर लिया जाये. लेकिन जब उस की वहाँ दाल नहीं गली, तो उसने दूसरी चाल चली. स्टीव्स की इस चाल से भारतीय मुक्केबाज़ों का दिल टूट गया. मुक्केबाज़ी के एक अधिकारी का कहना है कि मैं यह गत मानने को बिल्कुल तैयार नहीं हूँ कि स्टीव्स भारतीय मुक्केबाज़ों की तुलना में इक्कीस है. एक तो वैसे ही इस देश में मुक्केबाज़ी के प्रति खिलाड़ियों में उत्साह कम है और उस पर यह ज़ोर ज़बर्दस्ती और अँधेरगर्दी.

महाराष्ट्र राज्य बॉक्सिंग एसोसिएशन ने भी अपनी पूरी जाँच पड़ताल करने के बाद यह घोषणा की कि बंबई में जन्मे इस खिलाड़ी का उन्हें कुछ अता-पता मालूम नहीं. उसने न तो कभी महाराष्ट्र में और न महाराष्ट्र के बाहर किसी प्रतियोगिता में भाग लिया है.

ख़ैर, अब जब उस का नाम भारतीय दल में शामिल ही कर लिया गया तब सब ने यही कह कर संतोष कर लिया कि 'चलो जो हुआ ठीक हुआ'.

हॉकी

भारतीय हॉकी की अग्निपरीक्षा

एक प्रश्न, केवल एक प्रश्न. 'भारतीय हॉकी के लिए यह चालीसवाँ वर्ष (१९६८) कैसा होगा?' १९२८ से ले कर अब तक (केवल एक बार को छोड़) भारत हॉकी के खेल में विश्व विजेता का गौरव प्राप्त करता रहा है. हाल ही में भारत-केन्या टेस्ट श्रृंखला समाप्त हुई है. यह भारतीय हॉकी की पहली अग्निपरीक्षा थी. भारत ने यह श्रृंखला २–१ से जीत तो ली है मगर भारतीय खेल प्रेमियों की कसौटी के अनुसार भारतीय खिलाड़ियों का खेल प्रदर्शन उतना उत्साहवर्द्धक नहीं रहा. पहले टेस्ट में जब केन्या की टीम ने भारत को ३–१ से हरा दिया तो भारतीय खेलप्रेमी एकदम मायूस हो उठे और कहने लगे कि अगर केन्या के मुक़ाबले में भारत का यह हाल है तो दुनिया की दूसरी चोटी की टीमों के सामने हमारी क्या हालत होगी. ? एक ज़माना वह था जब भारत पूर्वी-अफ़्रीकी देशों को दर्जनों गोलों से हराया करता था और एक ज़माना यह है कि ३–१ से हार रहा है. केन्या को तोक्यो ओलिंपिक खेलों में छठा स्थान प्राप्त हुआ था.

भारत केन्या से केवल पहला टेस्ट हारा, दूसरा १–१ से बराबर रहा, तीसरा और चौथा टेस्ट भारत ने जीता और पाँचवा और अंतिम टेस्ट गोलरहित बराबर रहा. और इस प्रकार भारत ने यह श्रृंखला २–१ से जीत ली.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'मेरा क़सूर क्या है ?'

– डी० ओलिविरा –

कहने को तो यह कहा जाता है कि खेल-कूद के क्षेत्र में धर्म, जाति, भाषा, देश या खिलाड़ी की काली-गोरी चमड़ी से कोई अंतर नहीं पड़ता. मगर आज भी कुछ देश ऐसे हैं जिन्होंने खेल-कूद के क्षेत्र में काफ़ी धाँधली मचा रखी है. दक्षिण अफ़्रीका का देश, जो शायद बदनाम हो कर ही नाम कमाना चाहता है, किसी सूरत में अपनी रंग-भेद की नीति छोड़ने को तैयार नहीं. अंतरराष्ट्रीय ओलिंपिक समिति ने दक्षिण अफ़्रीका को पहले तोक्यो और फिर मैक्सिको ओलिंपिक से बहिष्कृत कर दिया. मगर उसने इस की भी ज़रा परवाह नहीं की. डी० ओलिवेरा के प्रश्न पर दुनिया के सभी देशों ने दक्षिण अफ़्रीका की रंग-भेद की नीति की निंदा की है मगर वहाँ के गोरों के दादा (दक्षिण अफ़्रीका के प्रधानमंत्री जोन वर्स्टर) टस से मस तक होने को तैयार नहीं. वह अपनी ज़िद पर अड़े हुए हैं. दुनिया का कोई भी देश खेल-कूद के मामले में उन से नाता तोड़े या जोड़े. मगर वह काले इनसान के साथ नाता जोड़ने को तैयार नहीं हैं. दक्षिण अफ़्रीका में न तो काले खिलाड़ियों को गोरों के साथ खेलने की अनुमति दी जाती है और न ही बाहर के किसी काले खिलाड़ी को वहाँ गोरों के साथ खेलने की इजाज़त दी जाती है.

इंग्लैंड बनाम दक्षिण अफ़्रीका : हाल ही में इंग्लैंड की क्रिकेट टीम दक्षिण अफ़्रीका का दौरा करने वाली थी. पहले इंग्लैंड की टीम में जिन खिलाड़ियों को चुना गया उनमें डी० ओलिवेरा का नाम नहीं था. इस पर इंग्लैंड की चुनाव समिति का काफ़ी विरोध किया गया और यहाँ तक कहा गया कि डी० ओलिवेरा को जान-बूझ कर शामिल नहीं किया जा रहा है. जब कि खेल की श्रेष्ठता के आधार पर उसे शामिल किया जाना चाहिए. दूसरे शब्दों में यह कि इंग्लैंड वाले दक्षिण अफ़्रीका की उस चेतावनी से डर गये हैं जिसमें यह कहा गया था कि यदि इंग्लैंड की टीम ने डी० ओलिवेरा को शामिल किया तो उस टीम को दक्षिण अफ़्रीका में घुसने नहीं दिया जायेगा. ख़ैर, डी० ओलिवेरा उस समय भी चुप रहे. उन्होंने किसी से किसी प्रकार की कोई शिकायत नहीं की बस उन्होंने अपनी क़िस्मत को ही कोस कर सब्र कर लिया. अपने घनिष्ठ मित्रों से उन्होंने इतना अवश्य कहा कि—'मैं बहुत निराश हूँ. इस के अतिरिक्त मुझे कुछ नहीं कहना है.' मगर इंग्लैंड के हज़ारों क्रिकेट प्रेमी उन की वकालत करने को तैयार हो गये. यहाँ यह बता देना भी उचित होगा कि ऑस्ट्रेलिया के विरुद्ध खेले गये अंतिम टेस्ट में डी० ओलिवेरा ने शतक बनाया था. अब उन की गणना इंग्लैंड के चोटी के बल्लेबाज़ों में की जाती है. विरोध का स्वर तेज़ और तीखा होता देख इंग्लैंड के कप्तान ने एक दिन घोषणा की कि क्योंकि टीम के एक सदस्य टाम कार्टराइट अस्वस्थ और ज़ख्मी हैं इस लिए उन के विकल्प के रूप में डी० ओलिवेरा को इंग्लैंड की टीम में शामिल कर लिया गया है. बस फिर क्या था, इतनी-सी ख़बर से दक्षिण अफ़्रीका में एक तहलका-सा मच गया. प्रधानमंत्री वर्स्टर बौखला उठे उन्होंने यह फ़रमान जारी कर दिया कि यदि इंग्लैंड की टीम में डी० ओलिवेरा को शामिल किया गया तो उसे दक्षिण अफ़्रीका नहीं आने दिया जायेगा. वर्स्टर के इस तानाशाही फ़रमान से दक्षिण अफ़्रीका के गोरों ने 'वर्स्टर ज़िंदाबाद' के नारे लगाने शुरू कर दिये. लेकिन वहाँ के विरोधी नेताओं ने इस तानाशाही फ़रमान की काफ़ी निंदा की और कहा कि इस प्रकार दक्षिण अफ़्रीका, जो ओलिंपिक खेलों से पहले बहिष्कृत है, क्रिकेट संसार में भी अकेला पड़ जायेगा और क्रिकेट के क्षेत्र में उस ने अब तक जो धाक या साख बनायी है वह सब मिट्टी में मिल जायेगी.

इंग्लैंड की प्रतिक्रिया : आख़िर इंग्लैंड अफ़्रीका के इस तानाशाही फ़रमान के सामने कैसे झुक सकता था ? उस ने तुरंत दक्षिण अफ़्रीका का दौरा रद्द करने का ऐलान कर दिया और भारत और पाकिस्तान का दौरा करने का कार्यक्रम बनाना शुरू कर दिया. ऑस्ट्रेलिया वालों ने भी इंग्लैंड के इस फ़ैसले का स्वागत किया.

डी० ओलिवेरा ने इस सारे कांड के बाद कहा कि यह सब मेरे ही कारण हो रहा है. 'क्रिकेट जगत् का यह सब से दुःखद समाचार है. मुझ से ज़्यादा दुःखी व्यक्ति दुनिया में और कौन हो सकता है? मैंने यह कभी नहीं चाहा था कि मेरे कारण क्रिकेट के दो बड़े देशों में इस प्रकार का मनमुटाव हो जाये. व्यक्तिगत रूप से मैं बहुत ही दुःखी हूँ. . . . मैं तो हमेशा यही सोचता था कि क्रिकेट का खेल इन दोनों देशों को एक-दूसरे के निकट लाने में एक पुल का काम करेगा, पर इसने तो बीच में दीवार ही खड़ी कर दी है. दक्षिण अफ़्रीका का दौरा इस प्रकार रद्द हो जायेगा इस की मैंने कभी कल्पना भी नहीं की थी.'

३३ वर्षीय डी० ओलिवेरा का जन्म केपटाउन में हुआ था. वहाँ उसे काले खिलाड़ियों की कोटि में रखा गया, और अपने ही देश में उसे क्रिकेट के बड़े टेस्ट मैचों में शामिल नहीं किया गया. जब उसने देखा कि उस देश में काला होना उस के लिए अभिशाप सिद्ध हो रहा है तो उसने इंग्लैंड जाने की ठानी. आठ वर्ष पहले ओलिवेरा इंग्लैंड आ गये.

दक्षिण अफ़्रीका और रंग-भेद : सितंबर १९६५ को दक्षिण अफ़्रीका के तत्कालीन प्रधानमंत्री स्वर्गीय डॉ० हेंड्रिक वरवर्ड ने यह घोषणा की थी कि न्यूज़ीलैंड की रग्बी टीम को दक्षिण अफ़्रीका का दौरा करने की इजाज़त नहीं दी जायेगी क्योंकि उस में सभी काले खिलाड़ी हैं. बाद में न्यूज़ीलैंड ने यह दौरा रद्द कर दिया था. बाद में जनवरी १९६७ को आंतरिक मामलों के मंत्री पीटर रॉक्स ने यह घोषणा की थी—"हमारी नीति बिल्कुल स्पष्ट है. हम यह नहीं चाहते कि किसी देश की गोरे-कालों की मिली-जुली टीम हमारे देश का दौरा करे और हमारे यहाँ के ख़ालिस गोरे खिलाड़ियों के मुक़ाबले खेले. यदि इस खिलाड़ी (डी० ओलिवेरा) को इंग्लैंड ने दक्षिण अफ़्रीका का दौरा करने वाली टीम में शामिल किया तो उसे यहाँ आने की इजाज़त नहीं दी जायेगी. यही हमारी नीति है, जिसे देश और विदेश में हर कोई जानता है."

संक्षिप्त समाचार

डेविस कप : तोक्यो में हुए डेविस कप के पूर्वी क्षेत्रीय फ़ाइनल में भारत ने जापान को ४–१ से हरा दिया. अब अंतरक्षेत्रीय सेमी-फ़ाइनल में भारत का मुक़ाबला पश्चिमी जर्मनी की टीम के साथ होगा. यह प्रतियोगिताएँ ४, ५ और ६ अक्तूबर को म्यूनिख में होंगी. भारत ने इस बात की कोशिश की थी कि इन मैचों की तारीख़ों को थोड़ा बढ़ा दिया जाये. भारत ने ११ अक्तूबर और २७ अक्तूबर का प्रस्ताव रखा था मगर अंतरराष्ट्रीय टेनिस संघ ने भारत का यह प्रस्ताव स्वीकार नहीं किया. भारतीय टीम के खिलाड़ियों के नाम इस प्रकार है : रामनाथन कृष्णन, प्रेमजीत लाल, जयदीप मुखर्जी, और शमशेर सिंह (ग़ैर-खिलाड़ी कप्तान) पश्चिम जर्मनी के खिलाड़ियों के नाम हैं : विल्हेम बुंगर्ट, इनगो बडिंग, कार्ल मीलर और जुरगेन फासबेंडर.

कुश्ती : भारत केसरी चंदगीराम की मैक्सिको जाने की मुराद पूरी नहीं हो सकी. नयी दिल्ली में चंदगीराम और सज्जन सिंह का मुक़ाबला हुआ. पहले दिन का मुक़ाबला बराबर घोषित किया गया. मगर चंदगी राम ने रेफ़री ने निर्णय का विरोध किया और दूसरे दिन लड़ने से ही इनकार कर दिया. चंदगी राम जैसे सरल और सौम्य व्यक्ति द्वारा किये गये इस उग्र और अशोभन व्यवहार की सभी ने निंदा की. अंत में चंदगीराम ने कहा कि मैं राजा भालिंदर सिंह के प्रति अपना आभार स्वीकार करता हूँ जिन्होंने मुझे 'पेशेवर पहलवान' के बँधन से मुक्त कर दिया है.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुदर्शन्स चिट फंड्स

समृद्धि के लिए

पासपोर्ट

सुदर्शन ट्रेडिंग कंपनी लिमिटेड

पंजीकृत कार्यालय : कालीकट–२

केन्द्रीय कार्यालय : सुदर्शन बिल्डिंग, व्हाइट्स रोड, मद्रास-१४

नयी दिल्ली कार्यालय : पहली मंज़िल, लक्ष्मी बैंक बिल्डिंग, आर्य समाज रोड, करौल बाग, नयी दिल्ली-५

सैन्डल जो फ़ैशन बन जाते हैं

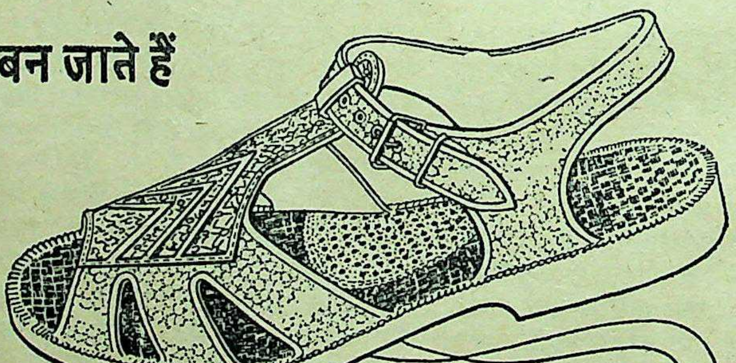

सोलारिया सैन्डल

पश्चिम जर्मनी की ऑटोमेटिक मशीन और कारीगरी सहयोग से विशेष रासायनिक पदार्थ "विटिल्नि" द्वारा निर्मित।

विभिन्न रंगों और साइज़ों में प्राप्य :

सीनियर (४ से ९ साइज)	रु० १२.४०
जूनियर (११ से २ साइज)	रु० १०.००
बच्चू (७ से १० साइज)	रु० ८.४०

सोलारिया
हर मौसम व हर
मौके के लिये

सोलारिया

सैन्डल

सबका प्रिय

स्टाइल * आराम * मजबूती के लिये

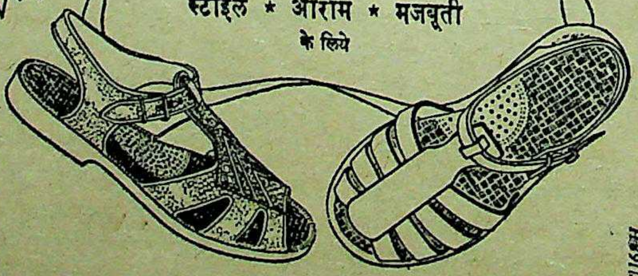

छोटे-बड़े सभी का मन मोह लेते हैं

निर्माता

बी० बी० तलापात्र एण्ड कम्पनी, पी-११, न्यू हवड़ा ब्रिज एप्रोच रोड, कलकत्ता-१

adarts/BT/168H

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सबाह : एक प्रश्न-चिन्ह

बैंकॉक में सबाह के विस्फोटक प्रश्न पर वार्त्ता असफल होने के बाद यह आशंका उत्पन्न हो गयी थी कि दक्षिण-पूर्व एशिया के दो पड़ोसी देशों के बीच संघर्ष होने वाला है, क्यों कि वार्त्ता के तुरंत बाद ही फ़िलीपीन द्वीप-समूह के राष्ट्रपति ने एक उत्तेजक भाषण में मलयेसिया को चेतावनी दी थी कि यदि वह शांतिपूर्ण ढँग से विवादग्रस्त क्षेत्र का फ़ैसला नहीं करते तो उन्हें अन्य मार्गों का अनुसरण करना पड़ेगा. राष्ट्रपति मार्कोस के अनुसार बैंकाक में मलयेसियाई प्रतिनिधियों ने फ़िलीपीन द्वीप-समूह के विरुद्ध बहुत अपमानजनक भाषा का प्रयोग किया है और सबाह के विवाद के संबंध में हठधर्मी का परिचय दिया है. इस के साथ ही मनीला ने क्वालालंपुर से अपने राजदूत को वापस बुला लिया है और मलयेसियाई राजधानी में केवल एक साधारण अधिकारी को रहने दिया है. मार्कोस के अनुसार मलयेसिया ने उस वचन का उल्लंघन किया है जिस में सबाह के मामले को शांतिपूर्ण ढँग से हल करने का आश्वासन दिया गया था. फ़िलीपीन द्वीप-समूह के इस कार्य के विरोध में मलयेसिया के प्रधानमंत्री तुंकू-अब्दुल रहमान ने भी अपने राजदूत को वापस बुलाने का आदेश दिया है. साथ ही सबाह स्थित तीन फ़िलीपीनी व्यापार अधिकारियों को वापस जाने का आदेश दिया गया है. यदि स्थिति इस से अधिक बिगड़ जाती तो दोनों देशों के बीच कटुता का दौर शुरू हो जाता. किंतु अंधकारमय परिस्थिति के बीच यह समाचार भी प्राप्त हुआ है कि राष्ट्रपति मार्कोस ने मलयेसिया के प्रधानमंत्री तुंकू-अब्दुल रहमान से व्यक्तिगत बातचीत करने की इच्छा व्यक्त की है. इस प्रकार की शिखर बैठक के लिए वह किसी भी तटस्थ देश में जाने के लिए तैयार हैं. यद्यपि मलयेसियाई सरकार ने इस प्रकार की बैठक के लिए कुछ शर्तें रखी हैं फिर भी ऐसा दिखाई देता है कि दोनों देशों की उत्तेजना केवल मात्र दिखावटी है और वे इस मामले को ले कर दक्षिण-पूर्व एशिया में युद्ध छेड़ना नहीं चाहते. मलयेसिया की सब से बड़ी शर्त यह है कि इस प्रकार के शिखर सम्मेलन में सबाह के विषय को लेकर बातचीत न हो.

मालिक कौन ? : सबाह, जिसे उत्तरी बोर्नियो भी कहते हैं, २९ हज़ार वर्गमील का क्षेत्र है. इस में रबड़ और अन्य प्रकार के वनों की संपत्ति इतनी अधिक है कि किसी भी देश के लिए आर्थिक रूप से यह एक बहुमूल्य क्षेत्र माना जायेगा. १८५० में ब्रूनी के सुल्तान ने इस क्षेत्र को सूलू के सुल्तान को बेच दिया था क्यों कि सूलू के सुल्तान ने एक स्थानीय युद्ध में उन की सहायता की थी. १८७५ में सूलू के सुल्तान ने इस क्षेत्र को दो अंग्रेज़ उपनिवेशवादियों को दे दिया था. ये दो व्यक्ति सुल्तान को प्रतिवर्ष पाँच हज़ार मलयेसियाई डालर किराये के रूप में देते थे. 'ब्रिटिश नॉर्थ बोर्नियो कंपनी' की स्थापना के पश्चात् १८८१ में यह क्षेत्र इस कंपनी के हाथ पड़ा. किंतु यह कंपनी भी सुल्तान को प्रतिवर्ष नियमित रूप से किराया देती रही. इस लिए १९४६ में जब फ़िलीपीन द्वीप-समूह स्वतंत्र हो गया तो अंग्रेज़ों ने उत्तरी बोर्नियो के इस क्षेत्र को ब्रितानी साम्राज्य का अंग मान कर अपने अधिकार में ले लिया. इसी समय लंदन में इस के स्वामित्व के बारे में विवाद खड़ा हो गया. मगर अंग्रेज़ वकीलों ने यह तर्क दिया कि सुल्तान ने इस क्षेत्र को किराये पर नहीं दिया था बल्कि एक निश्चित राशि के बदले बेच दिया था और पाँच हज़ार डालर इस

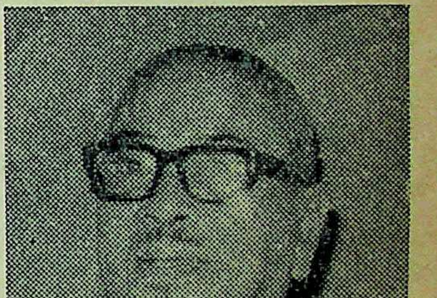

मार्कोस और तुंकू : हठधर्मी कौन ?

राशि की वार्षिक किस्तें थीं. १९५० में फ़िलीपीन के भूतपूर्व राष्ट्रपति मेकापगाल ने अंग्रेज़ों के साथ पुनः इस विवादग्रस्त क्षेत्र के संबंध में बातचीत करने की कोशिश की किंतु उन्हें सफलता नहीं मिली. जब मलयेसिया की स्थापना हुई तो यह मामला और भी जटिल हो गया क्यों कि अब विवाद अंग्रेज़ों और फ़िलीपीन द्वीप-समूह के बीच नहीं, बल्कि दो पड़ोसी देशों के बीच था. राष्ट्रपति मेकापगाल के बाद कुछ समय तक राष्ट्रपति मार्कोस ने इस विषय पर ख़ामोश रहना ही उचित समझा क्यों कि क़ानूनी रूप से उन के दावे में विशेष दम नहीं था. किंतु अधिक देर तक इस विवाद को नहीं टाल सके, क्यों कि फ़िलीपीन द्वीपसमूह में आम जनता की राष्ट्रीय भावनाएँ इस तरह उभारी गयी थीं कि वह इस प्रश्न को राष्ट्रीय प्रश्न मानने लगे.

तुंकू का तर्क : मलयेसिया सबाह पर अपना नैतिक और क़ानूनी अधिकार मानता है क्यों कि विवाद बढ़ने के बाद संयुक्तराष्ट्र के निर्देशानुसार संयुक्तराष्ट्र के ही एक प्रतिनिधि की देखरेख में सबाह की जनता की राय ली गयी जिस में उन्होंने मलयेसिया के साथ रहना पसंद किया. इस के अतिरिक्त सबाह के स्थानीय चुनावों में भी इस विषय को आधार बना कर मलयेसिया समर्थित प्रतिनिधियों को अधिक मत मिले. इस लिए तुंकू अब्दुल रहमान के अनुसार अब सबाह के विषय में व्यर्थ का विवाद खड़ा करना राष्ट्रपति मार्कोस की हठधर्मी है. इस सिलसिले में इंदोनेसियाई विदेशमंत्री डॉ० आदम मलिक का विचार भी यही है. मलिक के अनुसार सबाह पर फ़िलीपीन द्वीप-समूह का ऐतिहासिक अधिकार है, किंतु ऐतिहासिक सीमाएँ बदलती रहती हैं और इस के अतिरिक्त उत्तरी बोर्नियो की जनता ने स्पष्ट रूप से मलयेसिया का समर्थन किया है. इस लिए इस विवाद को खत्म करना चाहिए. राष्ट्रपति सुकर्ण के समय स्वयं इंदोनेसिया ने भी सबाह के कुछ क्षेत्र पर अपना अधिकार जता दिया था और इस सिलसिले में फ़िलीपीन द्वीप-समूह और इंदोनेसिया किसी सीमा तक एक-दूसरे के निकट आ गये थे. किंतु सुकर्ण के पतन के बाद इंदोनेसिया का रुख बदल गया. इन बातों के प्रकाश में मलयेसिया ने राष्ट्रपति मार्कोस की यह माँग अस्वीकार कर दी है कि इस विवाद को अंतरराष्ट्रीय न्यायालय में ले जाया जाये. अगर यह मामला शांतिमय ढंग से नहीं सुलझता तो इन दो देशों के अतिरिक्त अन्य देशों को भी परेशानी का सामना करना पड़ेगा और ऐसी स्थिति में अगर किसी को लाभ होगा तो इन सब के शत्रु साम्यवादी चीन को. क्वालालंपुर में ब्रिटेन, मलयेसिया और सिंगापुर के बीच जो प्रतिरक्षा वार्त्ता हुई है उस को इस विवाद से आघात लग सकता है, क्यों कि १९७१ तक ब्रिटेन हिंद महासागर से अपनी सेनाएँ हटाने की योजना बना चुका है.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्व

पश्चिम जर्मनी

प्राग से बर्लिन

'रूस को कोई ग़लतफ़हमी न हो, इस लिए यह बता देना आवश्यक है कि अतलांतिक संधि के किसी भी एक देश के विरुद्ध की गयी कार्रवाई का जवाब संयुक्त रूप से दिया जायेगा. अतलांतिक संधि के अनुच्छेद ५ और ६ में इस की स्पष्ट व्याख्या की गयी है.' संयुक्तराष्ट्र घोषणा-पत्र के अधीन कार्रवाई करने की रूसी धमकी का पश्चिम जर्मनी ने यह उत्तर दिया. रूस की धमकी को ब्रिटेन और अमेरिका ने तो गंभीरतापूर्वक लिया ही तथा आक्रमण होने पर पश्चिम जर्मनी को तत्काल हर प्रकार की सहायता देने का आश्वासन दिया; फ्रांस भी इस बार चुप नहीं बैठ सका. फ्रांस के प्रधानमंत्री ने रूसी धमकी पर चिंता व्यक्त करते हुए कहा कि यद्यपि उन की सरकार यह चाहती है कि पश्चिम और पूर्व यूरोप के देशों के संबंध घनिष्ट हों, किंतु रूस की धमकी ने यह स्पष्ट कर दिया है कि 'उत्तर अतलांतिक सैन्य संगठन' (नैटो) की अभी आवश्यकता है. फ्रांस सरकार ने यह संकेत भी दिया है कि १९६८ में संगठन की स्थापना के २० वर्ष बीत जाने के बाद भी फ्रांस 'नैटो' में बना रहेगा. (संधि के अनुसार यदि कोई सदस्य देश चाहे तो १९६९ में संगठन से अलग हो सकता है). बॉन-यात्रा के बाद राष्ट्रपति द गॉल ने स्पष्ट घोषणा की कि यदि पश्चिम जर्मनी पर कोई आक्रमण हुआ तो फ्रांस बॉन सरकार का साथ देगा.

रूस का आरोप : रूसी नेताओं ने पश्चिम जर्मनी पर यह आरोप लगाया है कि वह चेकोस्लोवाकिया में घुसपैठ की अपनी कार्रवाई में विफल हो जाने के बाद अब उत्तेजनात्मक कार्रवाइयां कर रहा है. रूस ने यह भी कहा है कि पश्चिमी बर्लिन पश्चिम जर्मनी का न कभी था, न है और न होगा. 'यह बात पश्चिम जर्मनी तथा अन्य पश्चिमी देशों को याद रखनी चाहिए.' रूस के सरकारी पत्र **इज्वेस्तिया** ने अपने एक लेख में बड़ी पश्चिमी ताक़तों की कटु आलोचना करते हुए कहा कि 'पश्चिम जर्मनी के नेता यूरोपीय मामलों में उत्तेजना और तनाव का वातावरण पैदा कर रहे हैं.' ऐसी हालत में रूस को अधिकार है कि वह संयुक्तराष्ट्र घोषणापत्र के अधीन पश्चिम जर्मनी के विरुद्ध कार्रवाई करे. घोषणापत्र के अनुच्छेद ५३ और १०७ में यह व्यवस्था है कि उन भूतपूर्व शत्रुओं के विरुद्ध सुरक्षा परिषद् की अनुमति के बिना कार्रवाई की जा सकती है जिन के साथ कोई शांति-संधि नहीं हुई है और जो अब आक्रामक नीतियां अपना रहे हों.

अमेरिका और ब्रिटेन ने रूस के इस अधिकार को चुनौती देते हुए कहा कि घोषणापत्र के अनुच्छेद १०७ और ५३ अब पश्चिम जर्मनी पर लागू नहीं होते हैं और इन अनुच्छेदों के अंतर्गत किन्हीं विशिष्ट परिस्थितियों में पश्चिम जर्मनी के विरुद्ध कार्रवाई करने का उसे कोई अधिकार नहीं है. फ्रांस ने रूस के तर्क पर अप्रसन्नता व्यक्त करते हुए कहा कि ये अनुच्छेद भ्रम उत्पन्न करने वाले हैं.

झगड़ा क्यों ? : रूस का कहना है कि चेकोस्लोवाकिया में प्रतिक्रांति के लिए पश्चिम जर्मनी उत्तरदायी है. पश्चिम जर्मनी में जो नवनात्सीवाद और सैनिकवाद का उदय हो रहा है उस से यूरोप की शांति खतरे में पड़ गयी है. चेकोस्लोवाकिया पर अधिकार करने

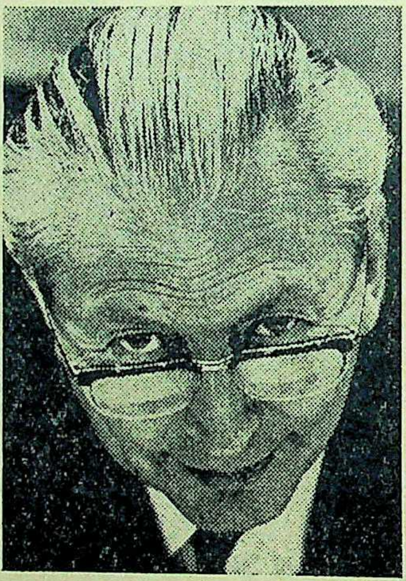

कोसिगर : संतुलन

की अपनी सैनिक कार्रवाई का औचित्य सिद्ध करने के लिए भी रूस ने यही तर्क दिया. किंतु राजनैतिक प्रक्षेकों का मत है, और जैसा कि चेकोस्लोवाकी नेताओं ने भी स्वीकार किया है, कि पश्चिम जर्मनी की ओर से पूर्वी यूरोप के कम्युनिस्ट देशों पर आक्रमण होने की न कभी संभावना थी और न है. फिर रूस इतना बेताब क्यों है कि चेकोस्लोवाकिया पर हमला करने के बाद अब पश्चिम जर्मनी को आँखें दिखा रहा है. रूस तथा अमेरिका के बीच की पटती हुई खाई को देखते हुए खतरे की कोई संभावना नहीं है. रूस भी यह बात जानता है. किंतु रूस को पश्चिमी बर्लिन का अस्तित्व खटकता है और वह कम्युनिस्ट सीमा में स्थित पश्चिमी देशों के इस अड्डे को समाप्त कर देना चाहता है. और शायद पश्चिमी बर्लिन की नाकेबंदी करने की पूर्व भूमिका में उस ने पश्चिम जर्मनी को धमकी दे डाली.

एक और भूल : प्रायः ऐसा होता है कि जब मनुष्य कोई भूल कर बैठता है तो उस पर पर्दा डालने के लिए भूल पर भूल करता जाता है. रूस की स्थिति भी ठीक ऐसी ही है. चेकोस्लोवाकिया पर आक्रमण कर के रूस ने एक भूल की. कोई भी बहाना चेकोस्लोवाकिया पर उस के आक्रमण का औचित्य सिद्ध न कर सका. विश्व के न केवल ग़ैर-कम्युनिस्ट देशों ने, बल्कि कम्युनिस्ट देशों ने भी रूस की कार्रवाई की निंदा की. अपनी बर्बर कार्रवाई की इस प्रतिक्रिया से रूसी नेता हड़बड़ा गये और इसी हड़बड़ाहट में विश्व का ध्यान चेकोस्लोवाकिया की ओर से पश्चिम जर्मनी की ओर आकृष्ट करने के लिए यह दूसरी भूल कर बैठे, क्योंकि रूस की धमकी का और कोई असर भले ही न हुआ हो, किंतु एक बात अवश्य हुई है कि उस ने 'नैटो' को विघटित होने से बचा लिया. इस से पूर्व यह प्रायः निश्चित था कि फ्रांस १९६९ में 'नैटो' से संबंध-विच्छेद कर लेगा. ब्रिटेन और अमेरिका की भी 'नैटो' को सबल शक्ति बनाये रखने में कोई विशेष रुचि नहीं रही थी. परंतु इस नयी स्थिति ने उन्हें 'नैटो' की शक्ति बढ़ाने की दिशा में सोचने के लिए विवश कर दिया है. ऐसा अनुमान है कि ३३,००० अमेरिकी सैनिक शीघ्र ही पश्चिम जर्मनी पहुँच जायेंगे. हाल ही में अमेरिका ने इन सैनिकों को 'नैटो' से वापस बुला लिया था. यह भी संभावना है कि ब्रिटेन की छठी ब्रिगेड भी दो महीने के सैनिक अभ्यास के बाद पश्चिम जर्मनी में ही रह जायेगी.

तीन : एक : अनुमान है कि इस समय 'नैटो' की तुलना में वारसाउ-संधि की सैनिक शक्ति तीन गुनी है. चेकोस्लोवाकिया पर आक्रमण से पूर्व रूस की २६ डिवीज़न सेना पूर्वी यूरोप में थी. पोलैंड की दो और हंगरी की चार डिवीज़न सेना इस के अतिरिक्त थी. अब कोई ३५ डिवीजन रूसी सेना पूर्वी यूरोप में है जिन में १५ डिवीजनें चेकोस्लोवाकिया में और शेष पूर्व जर्मनी में हैं. पहले चेकोस्लोवाकिया में रूस के लड़ाकू विमान नहीं थे, अब अनुमान है कि कई सौ रूसी लड़ाकू विमान वहाँ पहुँच गये हैं. पोलैंड, पश्चिम जर्मनी और हंगरी की सेना इस के अलावा है. 'नैटो' के पास कुल २६ डिवीजनें ही हैं. यही नहीं, 'वारसाउ-संधि' की सेना की युद्ध-क्षमता में भी काफ़ी वृद्धि हुई है. रूसी धमकी के बाद 'नैटो' देश सारी स्थिति पर पुनर्विचार कर रहे हैं. प्रायः यह निश्चित है कि वे 'नैटो' की शक्ति इस हद तक बढ़ायेंगे ताकि रूसी हमले का, यदि कभी हो, कारगर ढँग से जवाब दिया जा सके. इस से शीत-युद्ध में तो तेज़ी आयेगी ही, विश्व-युद्ध की संभावना भी बढ़ गयी है.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुर्तगाल

सालाज़ार के बाद ?

३६ वर्ष तक पुर्तगाल पर एकछत्र राज करने के बाद प्रधानमंत्री ओलिविएरा सालाज़ार का उत्तराधिकारी नामज़द हो गया है !

कुछ समय पहले, दिल का दौरा पड़ने से, ७९ वर्षीय सालाज़ार अस्वस्थ हुए थे और तब से लिस्बन के एक अस्पताल में वह बेहोश पड़े हैं. आधिकारिक सूत्रों के अनुसार यदि सालाज़ार के प्राण बच गये तो वह एक अनहोनी बात होगी, पर वह सदा के लिए अपंग रहेंगे.

शाश्वत शासन : इतने वर्षों तक एक ही व्यक्ति के इशारे पर नाचने वाले पुर्तगाली शायद भूले बैठे थे कि सालाज़ार अमर नहीं हैं. वैसे सालाज़ार के विरोधियों का कहना है कि तीन या चार वर्ष पहले राष्ट्रीय असेंबली में उन का उत्तराधिकारी चुनने के बारे में प्रश्न उठाया गया था, जिसे सालाज़ार ने यह कह कर खत्म कर दिया कि ऐसी अवश्यंभावी घटना के लिए संविधान में व्यवस्था है. वैसे उन्होंने भी अपने किसी सहयोगी को इस तरह तैयार नहीं किया कि वह उन के बाद पुर्तगाल के राष्ट्रपति का पद सँभाल सके.

पिछड़ा साम्राज्यवादी देश : पुर्तगाल पर १९३२ से लगातार शासन करने वाले सत्ताकामी सालाज़ार को इस बात का श्रेय दिया जाता है कि उन्होंने अपनी जनता को समय से पीढ़ियों पीछे रखा. वह इस दृढ़ विश्वास के साथ अपने पद पर बने रहे कि उन्हें कोई भी ताक़त वहाँ से डिगा नहीं सकती. पुर्तगाल में सैनिक शासन नहीं है, फिर भी वहाँ का कोई निवासी इस बारे में आश्वस्त नहीं रह सकता कि उस को देश-निकाला नहीं मिल जायेगा या उसे जेल की हवा नहीं खानी पड़ेगी. छात्रों ने कभी-कभी विरोध का स्वर उठाया, जिसे निर्दयता से कुचल दिया गया. सामूहिक आलोचना की तो पुर्तगाल में गुंजाइश नहीं है. ग़रीब देश पुर्तगाल के ५० प्रतिशत पढ़े-लिखे लोगों से बातचीत करने पर यही महसूस होगा कि वहाँ राजनैतिक जागरूकता जैसी कोई चीज़ ही नहीं. इस का कारण सालाज़ार जैसे तानाशाह का भय नहीं है, बल्कि पुर्तगालियों की विचारधारा को एक ऐसे साँचे में ढाल देने का परिणाम है जिस में वर्त्तमान हालत से परे कुछ सोचने की बात नहीं उठती.

राजनैतिक जीवन की शुरुआत : प्रथम विश्वयुद्ध के बाद जब पुर्तगाल की अर्थ-व्यवस्था पूरी तरह अव्यवस्थित हो गयी थी तो १९२८ में कोएम्ब्रा विश्वविद्यालय में अर्थशास्त्र के अध्यापक सालाज़ार को वहाँ की सेना ने निमंत्रण दिया कि वह आ कर देश की आर्थिक बागडोर सँभालें. शुरू से ही उन्होंने जो मन चाहा वही किया. उन्हें पेशेवर राजनैतिक नेताओं से जितनी चिढ़ थी उतनी ही उदारवादिता और लोकतंत्र से. वह पुराने ढर्रे पर चलने पर विश्वास रखते थे. अर्थशास्त्र के पुराने, सीधे-सादे सिद्धांतों को आधार मान कर वह अपने देश की अर्थ-व्यवस्था को सुधारने में सफल भी हुए. अपने पूर्व के अन्य तानाशाहों की तरह सालाज़ार का शासन भी अव्यवस्था दूर करने के दावों पर टिका हुआ था. उन की सब से बड़ी भूल यही थी कि वह शाश्वत राज क़ायम रखने के स्वप्न में डूबे हुए थे. सालाज़ार ने विदेशी आलोचना की कभी परवाह नहीं की. इंग्लैंड और फ्रांस के उपनिवेशवाद को खत्म करने की चेष्टा को वह पागलपन कहते थे.

सालाज़ार के उत्तराधिकारी : दस दिन की अनिश्चयता के बाद वकील मार्सेल्लो काएतानो को सालाज़ार का उत्तराधिकारी घोषित किया गया है. अस्थायी राष्ट्रपति अमेरिको टोमाज़ की इस घोषणा के साथ सालाज़ार के ३६ वर्ष का शासन समाप्त हुआ. काएतानो को इस हद तक प्रगतिवादी माना जा सकता है कि वह युवा पीढ़ी का अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करने में कोई दोष नहीं देखते. घरेलू मामलों में उन का रुख सालाज़ार की अपेक्षा उदारवादी होगा, ऐसी आशा की जा सकती है. पर अफ़्रीका में पुर्तगाली उपनिवेशों को बनाये रखने के बारे में वह सालाज़ार के ही अनुयायी हैं. वैसे इतने लंबे समय के बाद पुर्तगाल में जो यह परिवर्त्तन हुआ है उस का असर सुदूर भविष्य में ही उभर कर विश्व के सामने आयेगा, क्यों कि सालाज़ार की बरसों की मेहनत ने पुर्तगालियों की रग-रग में जिस प्रकार की भावनाएँ भर दी हैं उन्हें दूर होने में अभी समय लगेगा.

नाइजीरिया

मंज़िल कितनी दूर

नाइजीरिया संघ के सैनिक बिअफ़्रा के बहुत भीतर पहुँच गये हैं और उन्होंने मुख्य हवाई अड्डे ओबिलागू पर क़ब्ज़ा कर बिअफ़्रा के आखिरी बड़े शहर उमुहिया को चारों ओर से घेर लिया है. अब तो यह उम्मीद की जा रही है कि बिअफ़्रा के भूख से कुलबुलाते हुए सैनिक और अधिक समय तक भर पेट संघीय सैनिकों का मुक़ाबला नहीं कर पायेंगे. १६ महीने से चले आ रहे इस गृह-युद्ध का अंत अब हुआ ही चाहता है. राजनैतिक हलकों में ऐसी भी चर्चा है कि कर्नल ओजुक्वू अपने कुछ वरिष्ठ अधिकारियों समेत बिअफ़्रा त्यागने की योजना बना रहे हैं. इस बात की भी संभावना है कि वह किसी और देश में बिअफ़्रा की निष्कासित सरकार बना कर नाइजीरिया संघ से नये सिरे से लोहा लें. इस समय नाइजीरिया ने बिअफ़्रा के सभी तरफ़ से संपर्क तोड़ दिये हैं और उस के पास सैनिक सहायता तो आनी दूर रही, भूख से मरने वालों के लिए अन्न-सहायता भी आ पाना मुश्किल हो गया है. बिअफ़्रा के अधिकारियों ने उतुरू हवाई अड्डे पर कड़े प्रतिबंध लगा दिये हैं और यहाँ केवल सैनिक जहाज़ ही उतर सकते हैं. इस में संदेह नहीं कि बिअफ़्रा का भौगोलिक आकार अपने मूल आकार का अब केवल ९वाँ हिस्सा ही रह गया है. और अगर अब उसे स्वायत्तता मिल भी जाती है (जो कि अनहोनी बात है) तो भौगोलिक तौर से उसका कोई अस्तित्व नहीं रह जायेगा. यह बात भी सही है कि गाबोन, आइवरी कोस्ट, ज़ाम्बिया और तांज़ानिया ने बिअफ़्रा को राजनयिक मान्यता दे दी है और फ़्रांस ने राजनयिक मान्यता देने का यक़ीन दिलाया है. बतौर इन आश्वासनों के बिअफ़्रा की स्थिति में राजनैतिक तौर पर कोई अंतर नहीं आया. नाइजीरिया संघ के राष्ट्रपति गोवोन अभी भी यह रट लगाये हुए हैं कि नाइजीरिया बिअफ़्रा के अलगाव की स्थिति को मान्यता नहीं दे सकता. कैनाडा के विदेश-मंत्री माइकेल शार्प ने भी पिछले दिनों यह घोषणा की थी कि अगर अफ़्रीकी एकता संगठन के देश संयुक्तराष्ट्र संघ में बिअफ़्रा का प्रश्न नहीं उठायेंगे तो उन का देश इस प्रश्न को उठाने में नहीं हिचकेगा. कैनाडा के संयुक्त-राष्ट्र में इस प्रश्न के उठाने का मकसद केवल मानवीय कारण हैं, राजनीति से इस का कोई सरोकार नहीं. संयुक्तराष्ट्र संघ का अधिवेशन शुरू हो चुका है और इस बात का बहुत जल्दी ही पता चल जायेगा कि संयुक्तराष्ट्र संघ के सदस्य देशों की कैनाडा द्वारा उठाये जाने

इबो जाति : अनिश्चित भविष्य की रात

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वाले संभावित प्रश्न पर क्या प्रतिक्रिया होती है.

बैठक और बैठक : जुलाई के अंतिम दिनों में नाइजर की राजधानी नियामी में नाइजीरिया संघ और बिअफ़्रा के अधिकारियों में जो बातचीत हुई थी उस से आशा बँधती थी कि दोनों के बीच समझौता हुआ ही चाहता है. लेकिन अफ़्रीकी एकता संगठन के तत्वावधान में आदिस अबाबा में उन की बातचीत से यह साफ़ हो गया कि उन के बीच मनमुटाव की गहरी परत जमी हुई है और भेद की इस खाई को पाटना आसान काम नहीं. इथियोपिया के राष्ट्रपति हेले सिलासी ने भी अपने प्रभाव का उपयोग करना चाहा लेकिन दोनों पक्ष अपने इरादे से टस से मस नहीं हुए. झगड़े का मुख्य मुद्दा बिअफ़्रा द्वारा पूर्ण स्वाधीनता की माँग थी जो नाइजीरिया संघ मानने को तैयार नहीं था. बिअफ़्रा के अधिकारी भी पुनः नाइजीरिया संघ से मिलने को राज़ी नहीं थे. लिहाज़ा ४ बैठकों की यह बातचीत बिना किसी फ़ैसले के खत्म हो गयी और दोनों तरफ़ से बंदूकें फिर से तन गयीं जो कुछ समय पहले झुक-सी गयी लगती थीं. इन बैठकों के बाद भी यह उम्मीद की जा रही थी कि अल्जीयर्स में १३ सितंबर से अफ़्रीकी एकता संगठन की बैठक में इस प्रश्न को फिर से उठाया जायेगा, और बेशक यह प्रश्न उठा भी, लेकिन सिवाय अपील जारी करने के वे लोग और कुछ न कर सके.

भुखमरी की चपेट : बिअफ़्रा में भुखमरी के शिकार होने वाले लोगों की संख्या अब भी रोज़ाना १० हज़ार है. मरने वालों में बच्चों की संख्या अधिक है. दिन के बाद दिन, महीने के बाद महीने गुज़रते जा रहे हैं और विक्षिप्त, बेआसरा, बेठौर-ठिकाने के पिलयायी आँखों के ये पीले बच्चे धँसी हुई आँखों से हर आने वाले व्यक्ति से यह सवाल करते हैं 'तुम हमारी सहायता क्यों नहीं करते?' भीतर ही भीतर दुनिया का हर आदमी शायद अपने मन से यह सवाल पूछता होगा कि 'हम बे-मौत मरते इन बच्चों की सहायता क्यों नहीं करते ? हम चाहते हैं, हम तैयार हैं लेकिन फिर?' यह प्रश्नवाचक चिन्ह उन के दिमाग़ में हमेशा ही घूमता रहता है कि क्या इन लोगों को राजनीतिज्ञों की दया पर छोड़ दिया जाये ? और सोचते-सोचते ये प्रश्न निरुत्तर हो रह जाते हैं और लोग भुखमरी की भट्ठी में बेपनाह झोंके चले जाते हैं.

नाइजीरिया संघ की सेना के कमांडर शूवा का कहना है कि जितनी जल्दी लोग यह उम्मीद कर रहे हैं कि बिअफ़्रा हमारे हाथ में आ जायेगा, मंज़िल उतनी ही दूर होती जा रही है. दुश्मन को हमें कमज़ोर नहीं समझना चाहिए. उन में भूखे रह कर भी गॅरिला युद्ध की क्षमता है. झाड़ियों के बीच से और पहाड़ों की चोटी से गुज़रते हुए हमें हमेशा यह डर बना रहता है कि पता नहीं कब दुश्मन की गोली ख़र्राती हुई हमारा काम तमाम कर जाये. लेकिन यह बात भी संदेह से परे नहीं कि बिअफ़्रा अब कुछ ही दिनों का मेहमान रह गया है. इतने लोगों को बेमतलब युद्ध में उलझाना और उन्हें बेघर-बार करना राजनैतिक अहम के सिवा और क्या है ? बिअफ़्रा के नाइजीरिया के हाथ में पड़ जाने से इबो जाति के बचे-खुचे लोगों का हश्र क्या होगा, इस का अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है.

पश्चिम एशिया

फिर संघर्ष की ओर

इधर तो इस्राइल और उधर अरब दोनों ही देशों के नेता पिछले कुछ सप्ताहों से निरंतर यह कहते सुने जा रहे हैं कि उन्हें एक दूसरे की ओर से ज़बर्दस्त आक्रमण का खतरा है. संयुक्त अरब गणराज्य के राष्ट्रपति नासिर ने इस्राइल के विरुद्ध समूचे अरब-जगत् का आह्वान किया तो इस्राइली विदेशमंत्री ने कहा कि पश्चिम एशिया में नये युद्ध की संभावना आज जितनी बढ़ी है उतनी पहले कभी नहीं थी. जुर्दान और इस्राइली सेनाओं के बीच जहाँ तहाँ मुठभेड़ का क्रम दिनों दिन तेज़ होता जा रहा है और इधर तो सीमाओं पर और उधर दोनों देशों में उत्तेजना के वातावरण से बड़े देशों को भी चिंता होने लगी है.

धमकी से शांति प्रयत्न : दोनों पक्षों के बीच भयंकर तनातनी के इस वातावरण में इस्राइल को चेतावनी के रूप में सोवियत संघ ने अपनी शांति योजना रखी जिसने आग में घी का काम किया. धमकी भरे स्वर में इस शांति योजना को राष्ट्रपति नासिर का समर्थन मिलना जितना स्वाभाविक था, इस्राइली प्रधानमंत्री एवान का उसे अस्वीकार कर देना भी उतना ही स्वाभाविक था. सोवियत संघ ने कड़े शब्दों में चेतावनी दी कि इस्राइल जुर्दान, मिस्र और सीरिया के विरुद्ध भड़काने वाली कार्यवाइयाँ बंद करे नहीं तो उस के नतीजे भुगतने के लिए तैयार हो जाये. सोवियत विदेशमंत्रालय के एक वक्तव्य में कहा गया कि सोवियत संघ के लिए इस्राइल को यह चेतावनी देना ज़रूरी हो गया था कि यदि उसने संयुक्त अरब गणराज्य, जुर्दान और सीरिया के विरुद्ध भड़काने वाली हरकतें बंद न कीं तो नतीजों की सारी ज़िम्मेदारी उसी पर होगी. इधर जब सोवियत संघ की ओर से यह चेतावनी दी जा रही थी इस्राइली और युर्दानी सेनाओं के बीच गुर्दान घाटी क्षेत्र में रुक रुक कर गोलीबारी हो रही थी और जैसा कि आम तौर पर होता है दोनों ओर के सैनिक प्रवक्ता एक-दूसरे पर आक्रमण में पहल करने का आरोप लगा रहे थे.

चेतावनी के साथ-साथ उधर सोवियत संघ ने पश्चिम एशिया में शांति की अपनी नयी योजना के लिए अमेरिकी अधिकारियों से संपर्क स्थापित किया. अमेरिकी अधिकारियों ने स्वयं इस की पुष्टि की पर उनकी टिप्पणी इन पंक्तियों के लिखे जाने तक उपलब्ध नहीं थी.

चार सूत्री योजना : पश्चिम एशिया विषयक इस शांति योजना में चार बातें रखी हैं. १. इस्राइली सेनाओं की जून १९६७ से पहले की सीमाओं पर वापसी, २. शांति बनाये रखने के लिए सीमाओं पर सुदृढ़ संयुक्तराष्ट्र व्यवस्था, ३. दोनों पक्षों के चार बड़े देश अमेरिका, ब्रिटेन, फ़्रांस और सोवियत संघ दोनों पक्षों के बीच युद्ध फिर से नहीं छिड़ने दें ४. अरब राष्ट्रों द्वारा इस्राइल के विरुद्ध युद्ध की स्थिति की समाप्ति. वॉशिंग्टन के नाम मॉस्को के संदेश में राष्ट्रपति जॉनसन के १९६७ के इस सुझाव का भी उल्लेख है कि पश्चिम एशिया को हथियार देने वाले देशों को इन हथियारों की सप्लाई सीमित करनी चाहिए जिस से कि अस्त्रों की होड़ समाप्त की जा सके.

इस्राइली प्रतिक्रिया : चेतावनी के साथ रखी गयी इस शांति योजना पर इस्राइली प्रतिक्रिया तुरंत सामने आयी. इस्राइली विदेशमंत्री एवान ने सोवियत योजना को अस्वीकार करते हुए कहा है कि इस में कोई नयी बात नहीं है. यही योजना सोवियत संघ ने पिछले वर्ष २२ नवंबर को सुरक्षा परिषद् में रखी थी. इस्राइल ने ही नहीं, अधिकांश सदस्य देशों की सरकारों ने इसे अस्वीकार कर दिया था. एवान का तर्क है कि निश्चित और स्पष्ट सीमा-रेखा की मान्यता के बिना सोवियत संघ इस्राइली सेनाओं की वापसी चाहता है. उन के विचार में सोवियत योजना में अंतरराष्ट्रीय जल मार्ग में स्वतंत्र जहाज़रानी के क़ानूनी अधिकार को नहीं माना गया, इसलिए इस से स्थायी शांति नहीं हो सकती. इस्राइली प्रधानमंत्री एश्कोल ने सोवियत चेतावनी के उत्तर में कुछ इसी तरह के स्वर में कहा है कि सोवियत संघ इस्राइल पर युद्ध की तैयारी का आरोप लगा कर अरबों को युद्ध के लिए फिर भड़का रहा है.

आरोप-प्रत्यारोप से उत्पन्न स्थिति : जून १९६७ के अरब-इस्राइल युद्ध की समाप्ति के बाद से दोनों पक्षों के बीच आरोपों-प्रत्यारोपों का सिलसिला बराबर चला आ रहा है. पिछले कुछ सप्ताहों में इस्राइल के बारे में अटकलें लगायी गयीं कि आतंकवादी गतिविधियाँ बढ़ जाने के कारण वह जुर्दान पर भारी आक्रमण की तैयारी कर रहा है. इस के बाद तनातनी का रुख अचानक स्वेज़ क्षेत्र की तरफ़ हो गया. यहाँ भी आरोपों-प्रत्यारोपों का सिलसिला शुरू हुआ. पहले इस्राइल ने आरोप लगाया कि २० अगस्त को मिस्री सैनिकों ने नहर पार करके पूर्वी तट पर इस्राइली सैनिकों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर हमला किया. फिर सितंबर मास में नहर के आर-पार कोई चार घंटे तक दोनों पक्षों की सेनाओं के बीच युद्ध हुआ. इस क्षेत्र में नियुक्त आठ संयुक्तराष्ट्र प्रेक्षकों में से सात का यह मत था कि गोली चलाना पहले मिस्री सेनाओं ने शुरू किया. इस प्रकार की छोटी-मोटी मुठभेड़ों में शुरुआत किसी की भी तरफ़ से हो, उत्तेजना बढ़ने से युद्ध का वातावरण तैयार होता है और शांति प्रयत्नों में बाधा पहुँचती है.

मिस्र को भड़काने वाला कोई और : इस तनातनी के वातावरण में इस्राइल के राजनैतिक क्षेत्रों में यह धारणा ज़ोर पकड़ रही है कि मिस्र अपनी इच्छा से यह सब नहीं कर रहा है. राष्ट्रपति नासिर की सोवियत संघ की यात्रा और उस के बाद की घटनाओं से निष्कर्ष निकाला जा रहा है कि सोवियत संघ पूर्वी यूरोप तथा चेकोस्लोवाकिया की घटनाओं से विश्व का ध्यान हटाने के लिए राष्ट्रपति नासिर को पश्चिम एशिया में नया युद्ध छेड़ने के लिए भड़का रहा है.

नया संघर्ष छिड़ जाने की संभावना से बिल्कुल इंकार नहीं किया जा सकता, पर यह स्पष्ट है कि दोनों पक्ष आक्रमणकारी होने के बजाय अपने आप को आक्रांता साबित करने का ही प्रयत्न करेंगे.

संयुक्तराष्ट्र

महाशक्तियों का खेल

महासचिव की चिंता उन अधिकांश देशों की चिंता है जो अपनी असामर्थ्य के कारण राजनीति के मोहरे बनने या मात्र दर्शक बने रहने के लिए विवश हैं. सत्ताकामी महाशक्तियों की शक्तिपूजा की समिधा बनने वाले राष्ट्र—चाहे वह चेकोस्लोवाकिया हो अथवा अमेरिकी प्रभाव-क्षेत्र का डोमीनिकी गणराज्य—उस समय तक इसी नियति से बँधे रहेंगे जब तक महाशक्तियाँ अपनी संहारक शक्ति का प्रयोग अपना प्रभाव-क्षेत्र बढ़ाने या क़ायम रखने के लिए करती रहेंगी.

२६ सितंबर को संयुक्तराष्ट्र महासभा के १२५वें अधिवेशन के अवसर पर वार्षिक रिपोर्ट में ऊ थाँ ने इस स्थिति को अभिव्यक्ति देते हुए कहा कि जब तक छोटे देश अपने ताक़तवर पड़ोसियों की नाराज़गी की परवाह किये बग़ैर स्वतंत्र रूप से आचरण कर सकने की स्थिति में नहीं आयेंगे तब तक उन का भविष्य आशाप्रद नहीं है. ऊ थाँ को आश्चर्य है कि सन् ६० के दशक की समस्याओं का समाधान बल-प्रयोग द्वारा किया जा रहा है जैसा कि सन् ३० के दशक में किया जा रहा था. महासचिव ने अपने प्रतिवेदन में चेकोस्लोवाकिया और डोमीनिकी गणराज्य का ही उल्लेख किया. वे चाहते तो यह सूची और भी लंबी कर सकते थे.

जो देश छोटे देशों की श्रेणी में नहीं समाते—आकार में बड़े हैं और आर्थिक विकास की ऐसी संभावनाएँ हैं कि कल बड़े देश बन सकते हैं जैसे भारत और ब्राज़ील—उन की भी स्थिति बुनियादी तौर से बहुत भिन्न नहीं है. वे भी जो चाहें सो करने के लिए स्वतंत्र नहीं हैं.

ऊ थाँ चाहते तो स्पष्ट रूप से संयुक्तराष्ट्र की ख़ामियों का भी ज़िक्र कर सकते थे. वह कह सकते थे कि कश्मीर पर पाकिस्तानी आक्रमण से ले कर कोरिया, पश्चिम एशिया, कांगो आदि की जितनी भी समस्याएँ संयुक्तराष्ट्र को सौंपी गयीं, वे समाधान की ओर अग्रसर होने के बजाय अमेरिकी और रूसी प्रभाव-क्षेत्र बढ़ाने या जमाने का साधन बनी हैं. वीएतनाम का मसला संयुक्तराष्ट्र न पहुँच कर भी पश्चिम एशिया के मसले से बदतर सूरत में नहीं है. कहने को रूस और अमेरिका के बीच तनाव में कमी, शांति का पक्ष मज़बूत कर सकती है लेकिन असलियत कुछ और है. तनाव में कमी का कारण प्रभाव-क्षेत्र की रेखाओं का स्पष्टतर होना और उन की परस्पर स्वीकृति है, जो दूसरे देशों के हितों के प्रतिकूल पड़ता है. चेकोस्लोवाकिया के मामले में अमेरिका ने चूँ भी नहीं की—यह मामला 'घरेलू झगड़े' का नहीं है, लेकिन माना यही गया क्यों कि वह रूस के प्रभाव क्षेत्र का है. क्यूबा ! १९६२ में रूस ने मान लिया कि सामीप्य के कारण वह अमेरिका के क्षेत्र का है. इस तरह जब या जहाँ क्षेत्र का बँटवारा स्वीकार कर लिया जाता है तब या वहाँ तनाव की गुंजाइश नहीं रह जाती. इसी तरह जिस मामले में दोनों महाशक्तियों का स्वार्थ हो वहाँ भी मेल-मिलाप के गीत गाये जाने लगते हैं. अणु विस्तार-निषेध संधि इस का एक उदाहरण है. इस के प्रवर्त्तक दूसरों पर निषेध लगाना चाहते हैं, जब कि ख़ुद विस्तार किये जा रहे हैं. एक ताज़ा समाचार के अनुसार सोवियत संघ परमाण्विक पनडुब्बियों का शक्तिशाली बेड़ा बना रहा है.

लगता है कि महती शक्तियाँ प्रभाव-विस्तार में संयुक्तराष्ट्र की उपादेयता कम आँक रही हैं. प्रमाण ! बड़े देशों ने अपने चंदे की पूरी रक़में संयुक्तराष्ट्र को नहीं दी हैं और महासचिव को अपील जारी करनी पड़ी है कि महासभा "संस्था की वित्तीय स्थिति दुरुस्त करने के लिए तत्काल और कारगर उपाय करे."

ऊ थाँ को अफ़सोस है कि 'शांति की कुंजी' राष्ट्र के पास नहीं दो महती शक्तियों के पास है, दोनों पक्षों के असहयोग के कारण विशेष दूत गुन्नार यारिंग के यत्न अभी तक विफल रहे हैं.

ऊ थाँ ने महासभा के दौरान चार बड़े देशों के विदेशमंत्रियों की बैठक का प्रस्ताव रखा है और कहा है कि वे ख़ुद कार्यसूची न तैयार करें तो मैं ही तैयार कर दूँगा. इस बैठक की और इस के बाद यदि हो तो शिखर सम्मेलन की असली कार्यसूची ताक़तवरों के प्रभाव-क्षेत्र का बँटवारा करने के लिए तो नहीं ही होगी.

अमेरिका

अब भी उम्मीद है

५ नवंबर से राष्ट्रपति-पद के लिए जो चुनाव होने जा रहा है उस के पहले की गर्मी से डेमोक्रेटिक पार्टी के उम्मीदवार ह्यूबर्ट हंफ़्री ख़ासे परेशान नज़र आ रहे हैं. बतौर नमूने के रोज़ के चुनावों से, जो अमेरिका में हैरिस पोल और गैलप पोल के नाम से जाने जाते हैं, पता चलता है कि रिपब्लिकन उम्मीदवार रिचर्ड निक्सन की स्थिति हंफ़्री की अपेक्षा कहीं अधिक अच्छी है. पिछले दिनों १,३२२ मतदाताओं के एक सर्वेक्षण से पता चलता है कि निक्सन को २२ प्रतिशत, हंफ़्री को ८ प्रतिशत और तीसरे उम्मीदवार जॉर्ज वैलेस को १३ प्रतिशत मत मिले. एडवर्ड केनेडी के, जिस का नाम उम्मीदवारों की सूची में नहीं है, चाहने वालों की संख्या १८ प्रतिशत है. इस सर्वेक्षण से इस बात का पता चल गया कि वर्तमान राष्ट्रपति जॉनसन के समर्थक केवल ६ प्रतिशत मतदाता ही हैं. जब लोगों से यह सवाल किया गया कि क्या हर राष्ट्रीय पार्टी ने राष्ट्रपति-पद के लिए सर्वोत्तम उम्मीदवार खड़ा किया है, तो बहुमत ने इस का जवाब गर्दन टेढ़ी कर नाहीं के रूप में दिया. यह बात जुदा है कि बहुत-से लोग, बुद्धिजीवियों और निग्रो के एक बहुत बड़े वर्ग को छोड़ कर, यह महसूस करते हैं कि रिपब्लिकन पार्टी के पास निक्सन के सिवा और कोई बढ़िया उम्मीदवार नहीं था लेकिन दूसरी तरफ़ यह भी अनुभव किया जाता है कि डेमोक्रेटिक पार्टी के पास हंफ़्री से बढ़िया अवश्य कई उम्मीदवार थे. इस बात की भी संभावना व्यक्त की जा रही है कि अपनी नाराज़ी का इज़हार करने के

एगन्यू और निक्सन : क़िस्मत हमारे पक्ष है....

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिए अनेक मतदाता चुनावों में भाग ही न लें, और कई मतदाता अपना विरोध जतलाने के लिए तीसरे उम्मीदवार के पक्ष में मतदान करें. अगर ऐसा हुआ तो बहुमत के न चाहते हुए भी वैलेस के ह्वाइट हाउस में प्रविष्ट होने की संभावना है. डेमोक्रेटिक पार्टी अभी भी बुरी तरह से बँटी-कटी है और मैकार्थी गुट हंफ़्री का समर्थन करने के लिए अपने आप को मानसिक रूप से तैयार नहीं कर पाया है. लेकिन संयुक्तराष्ट्र में अमेरिका के प्रतिनिधि जॉर्ज बॉल ने हंफ़्री को समर्थन देने की गरज़ से अपने पद से इस्तीफ़ा ज़रूर दे दिया है. डेमोक्रेटिक पार्टी के समर्थकों का एक बहुत बड़ा गुट स्वर्गीय रॉबर्ट केनेडी की रिक्तता महसूस करता है और वह वर्ग मौजूदा उम्मीदवारों में किसी को भी अपने हितों का संरक्षक नहीं मानता. यह बात ज़रूर सही है कि हंफ़्री के शांति के वादे निक्सन से कहीं ज़्यादा अहमियत रखते हैं और लोगों को उस पर कुछ विश्वास भी है. दोनों ही उम्मीदवारों को इस बात का डर है कि धनाढ्य लोगों का वर्ग उन की हिमायत न कर नेलसन रॉकफ़ेलर का मार्ग-दर्शन चाहेगा.

आत्मविश्वास अपना-अपना : इस तरह हंफ़्री और निक्सन के जो मत कटेंगे, उस का फ़ायदा वैलेस उठा ले जायेंगे. पिछले चार महीनों के दौरान इस बात के काफ़ी प्रमाण मिल चुके हैं कि वैलेस की स्थिति पहले की अपेक्षा कहीं अधिक अच्छी है. अगले ६ हफ़्तों में अगर वैलेस ने कुछ ढंग की बातचीत की (जो अक्सर वह बहुत कम करते हैं) और रचनात्मक कार्यों का नज़रिया अपनाया तो उन की स्थिति और भी अच्छी हो सकती है. हंफ़्री के लिए पैसों की दिक़्क़त सिरदर्द बनती जा रही है. पैसों की कमी होने के कारण ही वह अपने प्रचार-कार्य में ज़ोर-शोर से आगे बढ़ने में असमर्थ हो रहे हैं. कुछ विशेषज्ञों का अनुमान है कि वैलेस के पक्ष में डेढ़ करोड़ मतदाता मतदान करेंगे. १९२८ में आल स्मिथ के पक्ष में भी लगभग इतने ही मत पड़े थे. यह बात अलग है कि वैलेस अमेरिका के राष्ट्रपति होने के योग्य नहीं क्योंकि उन में कोई भी ऐसी बात नहीं जो बहुमत को स्वीकार हो. बेशक वैलेस नीग्रो और हिप्पियों का नाम ले कर आलोचना नहीं करते लेकिन वह यह ज़रूर कहते हैं कि उन्हें प्रतिक्रियावादी तत्त्वों से सख़्त नफ़रत है. अमेरिका के दक्षिण भाग में वैलेस की स्थिति मज़बूत होने से उन में आत्म-विश्वास दिनों-दिन बढ़ता जा रहा है. अगर वैलेस जीत जाते हैं तो एक सदी पहले अब्राहम लिंकन की फ़ौजों ने दक्षिण की जो सहानुभूति खोयी थी वह उन्हें मिल जायेगी. इस के साथ यह बात भी तय है कि किसी न किसी हद तक गुलामी की भावना जिस का उन्मूलन अब्राहम लिंकन ने किया था, फिर से जड़ पकड़ सकती है. रिचर्ड निक्सन के समर्थकों का कहना है कि निक्सन अब वह निक्सन नहीं रहे जो १९६० में जॉन केनेडी से हारे थे. अब उन में ग़ज़ब का आत्मविश्वास है; टेलीविज़न पर बड़े सलीके से आते हैं और विजयी नेता के रूप में बात करते हैं. पत्रकारों के प्रति उन के व्यवहार में भी काफ़ी अंतर आया है और रूस के प्रति उन की कठोर नीतियाँ भी नरम पड़ी हैं. वह बड़े-बड़े भाषण नहीं देते और केवल पते की बात ही कहते हैं. वह शांति की बातें करते हैं लेकिन साथ ही यह भी कहते हैं कि शांति की बातचीत सड़क पर नहीं की जा सकती. जब वीएतनाम के बारे में उन से सवाल पूछा जाता है तो बड़ी ही एहतियात से वह यह कहते पाये जाते हैं कि उन के विचारों से पेरिस-वार्त्ता में विघ्न उत्पन्न हो सकता है जो वह नहीं चाहते. निक्सन आजकल अक्सर मज़ाक करते भी पाये जाते हैं और कहते हैं कि उत्तर कोरिया से प्यूब्लो जहाज़ ह्यूबर्ट को दे कर वापस मँगाया जा सकता है. लेकिन फिर हँस कर यह जोड़ देते हैं कि शायद उत्तर कोरिया को यह सौदा मंज़ूर न हो. निक्सन का महत्त्व इसलिए और बढ़ जाता है कि जब वह फ़िला-डेल्फ़िया पहुँचे तो लगभग २ लाख लोगों ने उन का स्वागत किया और जब हंफ़्री वहाँ पहुँचे तो मुश्किल से ७५ हज़ार लोग ही उन के स्वागत के लिए वहाँ मौजूद थे और उन में भी वह उत्साह नहीं था जो निक्सन के २ लाख समर्थकों ने दिखाया था. निक्सन के समर्थकों में मध्यम श्रेणी के लोगों के अलावा युवा तबके के लोग भी मिलते जा रहे हैं. निक्सन का कहना है कि वर्त्तमान प्रशासन ने अमेरिकियों को वीएतनाम के बारे में सही जानकारी नहीं दी और उसे भ्रम में रखा है. लेकिन जब उन का ध्यान उन के साथी उप-राष्ट्रपति पद के उम्मीद-वार स्पायरो एगन्यू के उस वक्तव्य की ओर दिलाया गया कि दक्षिण वीएतनाम में मिली-जुली सरकार होनी चाहिए तो निक्सन ने इस बात से असहमति प्रकट की. लेकिन साथ ही उन्होंने यह भी ज़रूर कह दिया कि अगर वीएत-नामी बल-प्रयोग का रास्ता त्याग दें तो वह लोगों के इस निर्णय की क़दर करेंगे.

आदर्श : डेमोक्रेटिक पार्टी के उम्मीदवार और वर्त्तमान उप-राष्ट्रपति ह्यूबर्ट हंफ़्री की स्थिति इस समय बेशक अधिक दढ़ नहीं है लेकिन उन्हें इस बात की ज़रूर उम्मीद है कि अगले ६ हफ़्तों में उन का पलड़ा भारी हो जायेगा और ह्वाइट हाउस के द्वार उन के लिए ही खुले रहेंगे. भूतपूर्व राष्ट्रपति ट्रूमैन को हंफ़्री आजकल अपना आदर्श मान रहे हैं जिन का चुनाव-प्रचार पहले तो कमज़ोर था लेकिन बाद में उस ने ऐसा ज़ोर पकड़ा कि ट्रूमैन राष्ट्रपति निर्वाचित हो गये. हंफ़्री का यह ख़याल है कि १९४८ और १९६८ की इस स्थिति में कोई अधिक फ़र्क़ नहीं आया है. वह यह भी कहते हैं कि निक्सन और वैलेस में गठजोड़ है और रिपब्लिकनों तथा अनुदारवादियों में इस तरह की मिली भगत तो चलती ही रही है. निक्सन में कोई भी किसी तरह का परिवर्त्तन नहीं आया और वह पहले की तरह ही पुराणपंथी और दकियानूसी विचारों के आदमी हैं.

जॉनसन का रवैया : हंफ़्री की इस चिंताजनक परिस्थिति के लिए अगर कोई ज़िम्मेदार है तो वह हैं. स्वयं राष्ट्रपति जॉनसन हंफ़्री को इस बात की पूरी उम्मीद थी कि जिस लगन और कर्त्तव्य-निष्ठा से वह जॉनसन की ग़लत-सही नीतियों का समर्थन करते रहे हैं वैसे ही जॉनसन भी उन्हें खुले दिल से अपना समर्थन देंगे. लेकिन जॉनसन ने ऐसा कुछ नहीं किया. वास्तव में बात यह है कि जॉनसन अपनी ही नीतियों के जाल में ख़ुद फँस चुके हैं. उन की नीतियों एवं उन के स्वभाव में टकराहट हो गयी है जिस से कोई भी नतीजा निकाल पाना मुश्किल हो गया है.

जॉनसन ने उदारवादी लीक ज़रूर चलायी लेकिन नीति और व्यक्तित्व की टकराहट से जॉनसन मार खा गये. अगर हंफ़्री ज़रा सँभल कर तथा विवेक से काम लें और जॉनसन की नीतियों और जॉनसन के व्यक्तित्व के अंतर को अलग से देखें और उन में से किसी एक को ग्रहण कर लें तो उन की स्थिति सँभल सकती है. राजनैतिक पर्यवेक्षकों का ख़याल है कि अगर जॉनसन की नीतियों का ही हंफ़्री पूरी वफ़ादारी से और बिना किसी लाग-लपेट के पालन करें तो उन के डगमगाते पाँव फिर स्थिर हो सकते हैं. अमेरिकी यह बख़ूबी जानते हैं कि हंफ़्री बेबाक और ईमानदार आदमी हैं और उन पर विश्वास किया जा सकता है. जातिवाद के सवाल पर हंफ़्री की स्थिति निक्सन से बेहतर है और वह नीग्रो, हिप्पियों, दलित वर्गों और यहाँ तक कि फ़िल्म-जगत् के लोगों का भी सहयोग प्राप्त कर सकते हैं. हंफ़्री के भाषण लारेंस ओब्रायन तैयार करते हैं जिन्होंने राष्ट्र-पति जॉन केनेडी की अमूल्य सेवाएँ की थीं और अब जॉर्ज बॉल भी उन के साथ आ मिले हैं. हंफ़्री वीएतनाम की नीति के बारे में कुछ अधिक स्पष्ट रवैया अख़्तियार करें जैसा कि रॉबर्ट ने किया था तो उन की स्थिति निश्चित रूप से सँभल सकती है और निक्सन को वह पराजित कर सकते हैं. हंफ़्री को गाहे-बगाहे शिकागो की याद हो आती है कि जब उन की उम्मीदवार होने की घोषणा हुई थी तो किस प्रकार दंगे-फ़साद हुए थे, चाकू-बंदूकें चली थीं, ख़ून बहा था. इन घटनाओं से उन्हें ख़ुशी नहीं हुई थी, सीने में एक हूक उठी थी, और यह उन के लिए निश्चित रूप से अपशकुन था. हंफ़्री ने उप-राष्ट्रपति पद के लिए एडमंड मस्की को चुना है जो हँसमुख और विवेकशील सहयोगी हैं. लेकिन हंफ़्री के सीने में जो कस-मसाहट बनी हुई है, उस का शायद वह अधिक शिकार हो रहे हैं और साथ ही जॉनसन का रवैया भी उन्हें कम परेशान नहीं कर रहा है.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

केंद्र और राज्य : बढ़ती हुई दरारें

सन् '६७ के आम चुनाव के बाद देश के राजनैतिक वातावरण में जो परिवर्त्तन आया उस ने कांग्रेस एकाधिपत्य को समाप्त कर दिया. देश के ९ राज्यों में ग़ैर कांग्रेसी सरकारों की स्थापना हुई और इस स्थापना के साथ ही साथ आए दिन छोटे बड़े मुद्दों को ले कर केंद्र और राज्य के बीच शब्द-युद्ध शुरू हुए. सन् ६७ के पहले केंद्र और राज्यों में हर जगह कांग्रेस का ही शासन था. दोनों के बीच किसी बड़े संघर्ष की नौबत इस लिए नहीं आयी क्यों कि मुद्दई और मुद्दालेह दोनों एक ही दल के थे. समस्याएँ कभी समझौतों से और कभी आयोग की नियुक्ति से सुलझ गयी. लेकिन सन् ६७ के बाद हवा को बदलने के साथ-साथ राज्यों को खास कर ग़ैर-कांग्रेसी राज्यों को अपने निजत्व का अहसास बहुत तेज़ी के साथ होने लगा. केंद्र के आशय में ही संदेह किया जाने लगा और कई मामलों में तो यहाँ तक कहा गया कि केंद्र ने ग़ैर-कांग्रेसी राज्य सरकारों को खत्म करने के एक बड़े षड्यंत्र का सूत्रपात किया है. आरोप शायद कुछ दूर तक सही था और क्यों कि वह सही था इसी लिए इन राज्यों में उत्तेजना का विकास तेज़ी के साथ हुआ.

केंद्र और राज्य का यह संघर्ष पिछले दिनों अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच गया जब केरल की संयुक्त मोर्चे की सरकार ने केंद्रीय अध्यादेश का पालन करने से इनकार कर दिया. केंद्र ने एक आदेश भेजा था कि राज्य सरकारें केंद्रीय सरकार के कर्मचारियों की हड़ताल के अवसर पर शांति और व्यवस्था बनाये रखने की कोशिश करें. केरल सरकार ने उस का विरोध करते हुए कहा कि क्यों कि शांति और व्यवस्था बनाये रखने की ज़िम्मेदारी राज्य सरकार की होती है, अतः कोई आदेश या केंद्रीय सुरक्षा पुलिस को भेजने से पहले राज्य सरकार से परामर्श कर लेना चाहिए. राज्य सरकार के रुख की निंदा करते हुए केंद्र ने उस पर यह आरोप लगाया कि उस ने केंद्र के संवैधानिक अधिकारों का पालन करने में उदासीनता दिखाई है तब नंबूदिरीपाद को उस की सफ़ाई देने की आवश्यकता का अनुभव हुआ. दिल्ली में एक पत्रकार वार्त्ता में उन्होंने कहा कि केंद्र को किसी भी राज्य में पुलिस भेजने का अधिकार है लेकिन उस के पहले उसे राज्य सरकार से परामर्श कर लेना चाहिए. नंबूदिरीपाद को इस बात से शिकायत है कि केंद्र ने क्यों आदेश में यह स्पष्ट किया कि अपराध के सिलसिले में राजनैतिक दलों के नेताओं को गिरफ़्तारी से मुक्त रखा जाये और केवल यूनियन के नेताओं को गिरफ़्तार किया जाये. उन्हें आदेश में राजनैतिक कुटिलता के दर्शन होते हैं. इसी लिए उन का तर्क है कि यदि अपनी अधिकार-सीमा में केंद्र भेदभाव का परिचय दे सकता है तो राज्य को भी यह अधिकार है कि वह अपनी सीमा में उसी तरह का रवैया अपनाये. अगर हम पर यह दोष है कि हम ने कुछ लोगों को जान-बूझ कर गिरफ़्तार नहीं किया तो केंद्र का दोष यह है कि उस ने आदेश दिया कि कुछ लोगों को गिरफ़्तार न किया जाये.

जहाँ तक केरल का सवाल है वहाँ की सरकार इस के पहले भी इस या उस मुद्दे को ले कर केंद्र के प्रति आक्रोश व्यक्त कर चुकी है. ज़ाहिर है कि वहाँ के लोग फ़ाक़ा नहीं कर रहे हैं—लेकिन इसे नंबूदिरीपाद की ही खूबी कहना चाहिए कि उन्होंने केरलवासियों के मन में यह बात जमा दी है कि चावल उन का राष्ट्रीय खाद्य है. इस एक मुद्दे को ले कर वह मौक़े-बेमौक़े तूफ़ान खड़ा करने की कोशिश करते रहे हैं.

कांग्रेस बनाम ग़ैर-कांग्रेसवाद : केंद्र और राज्य के संबंधों में जो तनाव पैदा हुए उन का मूल कारण केंद्र की नीति रही है. कांग्रेसी राज्य सरकारों के शासनकाल के दौरान यदि संघर्ष या तनाव बहुत तीखा नहीं हुआ तो उस का एकमात्र कारण यह था कि कांग्रेसी राज्य केंद्र की कांग्रेसी सरकार की नीयत पर अविश्वास नहीं करती. सन ६७ के बाद क्यों कि ग़ैर-कांग्रेसी सरकारें केंद्र की नीयत पर ही शुबहा करने लगीं इस लिए हर छोटा-बड़ा प्रश्न विवाद और संघर्ष का कारण बन गया. यह विवाद अभी राज्यपालों के अधिकारों के सीमा-निर्धारण को ले कर हुआ जिस में कई राज्यों में अचानक राष्ट्रपति शासन की घोषणा कर दी गयी और कभी केंद्र द्वारा राज्यों को दिये जाने वाले खाद्यान्नों की मात्रा को ले कर. इस विवाद को रूप देने में अन्य जो कारण रहे हैं उन में प्रमुख हैं : (१) पंचवर्षीय आयोजनों के लिए राज्यों को दिये जाने वाले फंड का निर्धारण. (२) भारी उद्योगों की स्थापना के लिए जगहों का चुनाव. (३) दो राज्यों के बीच की सीमा का निर्धारण. (४) नदियों के पानी में विभिन्न राज्यों का हिस्सा. पिछले कुछ महीनों में जब भी इस तरह की समस्याएँ सामने आयीं ग़ैर-कांग्रेस राज्यों के मुख्यमंत्रियों ने राज्य को अधिक स्वायत्तता देने की बात जोरों से हवा में उछाली. पिछली जुलाई में मद्रास के मुख्यमंत्री अन्नादोर ने कहा कि विशेषज्ञों के एक सरकारी आयोग की नियुक्ति की जानी चाहिए. वह आयोग केंद्र और राज्यों की अधिकार सीमा का निर्धारण करेगा. अन्नादोरै के अनुसार केंद्र के हाथों में अनावश्यक शक्ति है और यही वजह है कि वह केवल उस का दुरुपयोग ही नहीं करती वरन तमाम समस्याओं को नज़रअंदाज़ भी कर जाती है. केंद्र की ज़िम्मेदारी सिर्फ़ राष्ट्रीय एकता और संघीय एकरूपता को बनाये रखने की है. उसे अपने जिम्मेदारियों को वहीं तक सीमित कर देना चाहिए. जिन अधिकारों का संबंध जनता के कल्याण से है वे राज्य के विषय हैं और उन्हें राज्य तक ही सीमित रहना चाहिए. अन्नादोरै के अनुसार राज्यों की स्वायत्तता बहुत ज़रूरी हो गयी है. उन का कहना था कि विरोधी दल एक संयुक्त मोर्चा बना कर इस समस्या को सुलझाने में मदद दे सकते हैं. उन का कहना था कि अगर देश को चीन और पाकिस्तान से कोई ख़तरा है तो उस में वे अपनी जान की बाज़ी लगाने में किसी से पीछे नहीं रहेंगे. लेकिन वे यह कभी नहीं स्वीकार कर सकते कि केंद्र उन के साथ स्वामी जैसा बर्ताव करे. जवाहरलाल नेहरू और पार्टी देश के भीतर तथा बाहर समान रूप से प्रभावशाली थे. वह अगर जीवित होते तो इस समस्या का निर्णय उन पर छोड़ा जा सकता था लेकिन आज केंद्रीय नेतृत्व बहुत कमज़ोर हो गया है और यह काम सिर्फ़ विरोधी दल ही कर सकते हैं. केंद्र के हाथ में केवल अनिवार्य अधिकार ही होने चाहिएं.

पिछले वर्ष भर में जिन ग़ैर-कांग्रेसी राज्यों ने केंद्र के विरुद्ध अपना विक्षोभ व्यक्त किया उन में मध्यप्रदेश और बंगाल उल्लेखनीय हैं. नर्मदा के जल को ले कर मध्यप्रदेश के मुख्यमंत्री गोविंद नारायण सिंह और केंद्रीय सिचाई मंत्री राव में जिस तरह का शब्द-युद्ध हुआ वह शालीनता की सीमा पार कर गया था. गोविंद नारायण सिंह ने सीधे-सीधे कहा था कि केंद्र जानबूझ कर गुजरात का पक्ष ले रहा है और मध्यप्रदेश को नीचा दिखाना चाहता है. मध्यप्रदेश की ही सरकार ने चने को दूसरे सूबों में भेजने के प्रश्न पर भी केंद्रीय आदेश की अवहेलना की थी. केंद्र नहीं चाहता था कि राज्य का चना राज्य के बाहर जाये लेकिन राज्य सरकार ने उस की बात नहीं मानी. पश्चिमी बंगाल में राज्य के लिए निरंतर अधिक स्वायत्तता की माँग की जाती रही है. वहाँ के संयुक्त मोर्चे के नेता निरंतर यही कहते रहे हैं कि संविधान में संशोधन कर के राज्यों को अधिक अधिकार दिये जायें. उस ने यह भी माँग की थी कि आमदनी के केंद्र और राज्य के बीच बँटवारे के पुराने तरीके को खत्म कर के अनुपात का निर्धारण नये सिरे से करना चाहिए.

दिल्ली के नेताओं ने भी केंद्र के प्रति बार-बार विरोध प्रगट किया है. मुख्य कार्यकारी पार्षद विजय कुमार मलहोत्रा ने कुछ महीने पहले केंद्र पर आरोप लगाया कि वह अनावश्यक ढंग से दिल्ली प्रशासन के विभिन्न मामलों में दखलंदाज़ी करता है. केंद्र से इस तरह का विरोध केवल जनसंघ का ही नहीं बल्कि देश की सभी ग़ैर-कांग्रेसी सरकारों का है.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

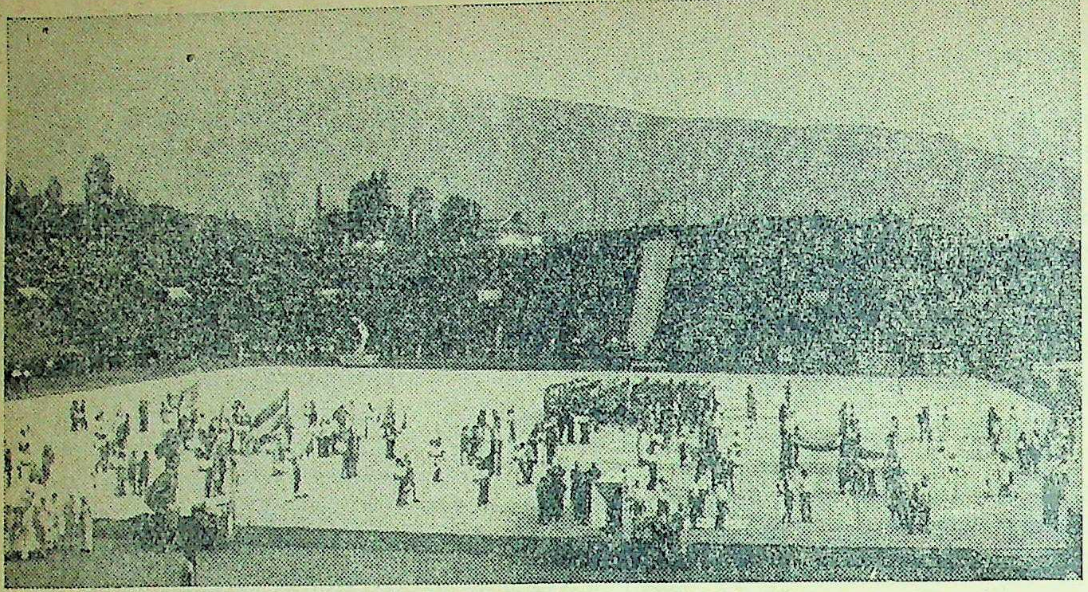

लेवस्की स्टेडियम : २८ जुलाई की शाम को ९वें विश्व युवक समारोह पर १४० देशों के युवक-युवतियों का प्रदर्शन

विश्व युवक समारोह

वीएतनाम का समर्थन और रूस का विरोध

२१ अगस्त को अंतरराष्ट्रीय साम्यवाद का जो 'गृहयुद्ध' प्राग की सड़कों पर लड़ा गया उस का पूर्वाभास सोफ़िया में २८ जुलाई से ६ अगस्त तक नौवें विश्व युवक समारोह में मिल चुका था. १४० देशों के बीस हज़ार युवक-युवतियों का यह विश्व समारोह अंतर-राष्ट्रीय साम्यवाद की एक ऐसी लड़ाई थी जिस का सिलसिला अब ख़त्म नहीं होगा. यह आकस्मिक नहीं है कि विश्व युवक समारोह का कोई एक प्रतीक न हो कर तीन प्रतीक हो गये थे : हो ची मिन्ह, चे ग्वेवारा और अलैक्ज़ेंडर दुबचेक—हालांकि अंतरराष्ट्रीय तैयारी समिति का, जिस पर कि रूस का प्रभुत्व है, समर्थन केवल हो ची मिन्ह अर्थात् वीएतनाम को प्राप्त था. नौवें विश्व युवक समारोह का उद्देश्य वीएतनाम को ले कर विश्व के युवा जनमत को संगठित करना और यह प्रदर्शित करना था कि वीएतनाम की नियति में वास्तविक दिलचस्पी रूस की है. लेकिन दस दिनों के समारोह में वीएतनाम का मसला प्रासंगिक हो गया और पश्चिमी देशों की विभिन्न कम्युनिस्ट पार्टियों के युवा प्रतिनिधियों की आपसी टक्करें मुख्य दृश्य हो गयीं. सम्मेलन के आखिरी दिन अंतरराष्ट्रीय तैयारी समिति के एक प्रवक्ता ने झल्ला कर कहा; 'अब अगले युवक समारोह की ज़रूरत नहीं रह गयी है.'

अमेरिका-विरोध : २८ जुलाई की शाम को संसार की सौ से अधिक भाषाओं में अमेरिका-विरोधी नारे लगते हुए बीस हज़ार युवक-युवतियों का जुलूस 'वितूशा' पर्वत की गोद में बसे हुए नगर सोफ़िया की ढालवाँ सड़कों से गुज़रा. 'मीर मीर द्रुज़वा' (शांति और मैत्री) 'हो हो हो ची मिन्ह', 'दा यिवे वीएतनाम' (वीएतनाम ज़िंदाबाद) जैसे नारों और अपने-अपने देश के संगीत से सोफ़िया को और भी संगीतमय बनाते हुए छह मील का रास्ता तय कर के अमेरिका-विरोधी युवा जनमत 'लेवस्की' स्टेडियम पहुँचा, जहाँ बल्गारिया के प्रधानमंत्री तोदोर ज़िवकोफ़ ने उन्हें संबोधित किया. श्री तोदोर ज़िवकोफ़ ने संसार में साम्राज्यवाद-विरोधी वातावरण निर्मित करने की आवश्यकता पर ज़ोर दिया. उन के अतिरिक्त इस अवसर पर अंतरराष्ट्रीय समिति के अध्यक्ष रोंडोल्प्पो मेशिनी व वीएतनाम के प्रतिनिधि ने भाषण दिया. सोफ़िया के रंगीन वातावरण में समारोह दूसरे दिन आरंभ हुआ जब कम्युनिस्ट देशों के आपसी मतभेद उभर कर सामने आये. वैसे अंतरराष्ट्रीय समिति की पहली बैठक में ही, जो कि लगभग साल भर पहले हुई थी, फूट पड़ चुकी थी. उस का कारण यह था कि क्यूबा यह चाहता था कि यह युवक समारोह रूसी प्रभाव-क्षेत्र से बाहर किसी जगह हो. उस ने यह समारोह हवाना में करने के लिए आमंत्रण भी दिया था, लेकिन रूस को यह बात मान्य नहीं हुई. तब क्यूबा के प्रतिनिधि ने कहा कि क्यूबा इस समारोह के उद्देश्यों और लक्ष्यों से सहमत नहीं है. जहाँ तक चीन का प्रश्न था वह इस समारोह को रूस का राज-नैतिक तमाशा मानता रहा है. चीन और अल्बानिया दोनों ही समारोहों में शामिल नहीं हुए और क्यूबा ने भी बहिष्कार किया. रही-सही कसर पश्चिमी जर्मनी के नवयुवकों और छात्रों ने, जिन के हाथ में माओ त्से तुंग की तस्वीरें थीं, पूरी कर दी. उन्होंने समारोह के दूसरे दिन अमेरिकी दूता-वास के सामने प्रदर्शन किया और अमेरिका-विरोधी नारे लगाये. पश्चिम जर्मनी के प्रतिनिधिमंडल में युवकों के २३ गुट थे, लेकिन इन में बोलवाला माओ-समर्थक कम्यु-निस्टों का ही था. बल्गारिया की सरकार ने अमेरिकी दूतावास की सुरक्षा के लिए चारों ओर ट्रकें खड़ी कर रखी थीं और गुप्त पुलिस

जुलूस के दौरान : असली समारोह

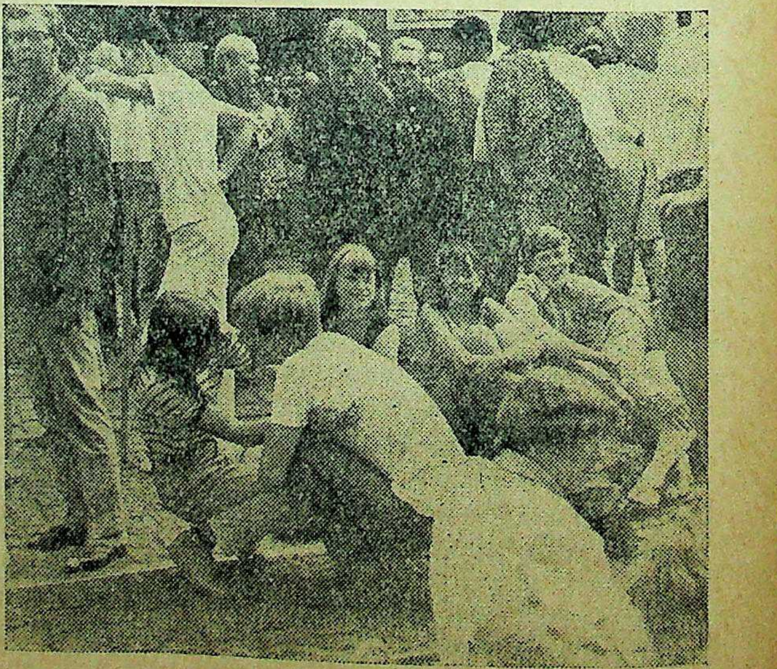

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी वहाँ तैनात थी. इस के अलावा अंतरराष्ट्रीय समिति ने दूतावास पर सैकड़ों बल्गारियाई नवयुवक-नवयुवतियों को भेजा था, ताकि दूतावास के नजदीक कोई अप्रिय घटना न होने पाये और दूसरे पश्चिम जर्मनी के छात्र और नौजवान यह न समझें कि बल्गारिया में अमेरिका-विरोधी जनमत नहीं है. अमेरिकी दूतावास ने एक हफ़्ता पहले ही बल्गारिया सरकार से यह कहा था कि वह दूतावास की रक्षा का पूरा-पूरा इंतज़ाम करे.

'क्रांति-विरोधी रूस' : उस शाम तो पश्चिम जर्मनी के युवक अमेरिका-विरोधी नारे लगा कर लौट गये, लेकिन दूसरे दिन उन्होंने सोवियत रूस और अंतरराष्ट्रीय समिति के बारे में दो टूक फ़ैसला लिया. उन्होंने सोवियत रूस को 'क्रांति-विरोधी' क़रार देते हुए चीनी दूतावास से संपर्क क़ायम किया. उन्होंने बल्गारिया सरकार पर भी यह आरोप लगाया कि उस ने पश्चिम जर्मनी के छह नौजवानों को आध घंटे तक हिरासत में रख अमेरिकी हितों का पोषण किया है. पूर्वी जर्मनी और पश्चिमी जर्मनी के कम्युनिस्ट युवकों में सोफ़िया आने से पहले ही फूट थी. दरअसल यह कम्युनिस्ट संसार की दो महाशक्तियों की टक्कर थी. पूर्वी जर्मनी के छात्र सोवियत आदेशों का पालन कर रहे थे, जब कि पश्चिमी जर्मनी के नौजवान माओ त्से दुंग की तसवीरें हाथ में ले कर अपनी लड़ाई लड़ रहे थे. चीन ग़ैरहाज़िर हो कर भी समारोह में हाज़िर था.

राष्ट्रोन्मुख साम्यवाद : संसार के कम्युनिस्ट आंदोलन से सोवियत रूस का प्रभुत्व कितनी शीघ्रता से नष्ट होता जा रहा है उस की उम्दा मिसाल विश्व युवक समारोह था. इस समारोह ने यह स्पष्ट कर दिया कि अब 'विश्व-साम्यवाद' जैसी कोई चीज़ नहीं रह गयी है. सारे संसार का साम्यवादी आंदोलन राष्ट्रोन्मुख होने के लिए लालायित है. यह आकस्मिक नहीं है कि 'शांति' और 'मैत्री' का साथ-साथ नारा लगाने के बावजूद चेकोस्लोवाकिया और रूस के प्रतिनिधि गले नहीं मिले. चेकोस्लोवाकिया ने विश्व युवक समारोह के लिए बहुत बड़ा प्रतिनिधिमंडल भेजा था, जिसे बल्गारिया की सीमा पर 'वारसा शक्तियों' ने यह कह कर रोक दिया कि 'उन के बाल बढ़े हुए हैं' और 'वे गंदे हैं.' तब भी ८०० चेक युवक-युवतियाँ सोफ़िया पहुँचने में कामयाब हो गयीं. इन प्रतिनिधियों ने अपना सीधा संपर्क ग़ैर-कम्युनिस्ट देशों के ग़ैर-कम्युनिस्ट प्रतिनिधियों से करना चाहा. इस का नतीजा यह हुआ कि 'दरवेनीत्सा' के जिस होटल में चेक प्रतिनिधिमंडल ठहरा था उसे चारों ओर से गुप्तचरों ने घेर लिया. गुप्त पुलिस की उपस्थिति से विचलित हुए बिना चेकोस्लोवाकिया के प्रतिनिधियों ने विभिन्न प्रतिनिधियों से भेंट की और उन्हें साम्यवाद के बारे में चेकोस्लोवाकिया का दृष्टिकोण समझाया. ज़ाहिर है कि इस से अंतरराष्ट्रीय समिति को प्रसन्नता नहीं हुई और चेक प्रतिनिधियों पर और भी पाबंदी लगा दी गयीं. चेकोस्लोवाकिया के नेता अलेक्ज़ेंडर दुबचेक ने अपने देश के युवक प्रतिनिधिमंडल में बुद्धिजीवी, लेखक और कलाकार भेजे थे जो संसार को लोकतंत्र और साम्यवाद के विषय में अपने देश का दृष्टिकोण समझाने के लिए प्रयत्नशील थे. इन प्रतिनिधियों का कहना था कि हम रूस से मैत्री चाहते हैं लेकिन अपने देश की गुलामी की क़ीमत पर नहीं. उन के राजनैतिक प्रवक्ता श्री यानोता ने दुबचेक की बात दोहरायी; 'जनता नेताओं के मुताबिक नहीं बदलती, नेताओं को जनता के मुताबिक बदलना होता है.' प्रतिनिधिमंडल का कहना था कि हर देश अपनी परिस्थितियों के मुताबिक साम्यवाद की परिभाषा करता है और अगर चेक कम्युनिस्ट पार्टी ने साम्यवाद को लोकतंत्र के पर्याय के रूप में परिभाषित किया है तो इस में कुछ भी असंगत नहीं है.

चे ग्वेवारा : लैटिन अमेरिका की कम्युनिस्ट पार्टियाँ भी रूसी प्रभाव क्षेत्र के बाहर जा चुकी हैं जिस की छाया समारोह में आये लैटिन अमेरिकी प्रतिनिधिमंडलों पर थी. इन देशों के प्रतिनिधियों में से किसी ने कोसीगिन ज़िंदाबाद के नारे नहीं लगाये. बोलीविया के प्रतिनिधिमंडल का नेतृत्व करने वाले नौजवान के हाथ में चे ग्वेवारा की एक आदमक़द तसवीर थी. बोलीविया की कम्युनिस्ट पार्टी ग्वेवारा के जीवन-काल में उन के विरुद्ध रही; लेकिन उन की मृत्यु के बाद से बोलीविया के कम्युनिस्ट युवक-युवतियों ने ग्वेवारा को अपने 'हीरो' के रूप में स्वीकार कर लिया है. इन के अलावा फिनलैंड, स्वीडन, डेनमार्क और फ़्रांस के सैकड़ों हिप्पी युवक-युवती भी समारोह में शामिल हुए. लेकिन उन्होंने किसी के पक्ष या विपक्ष में नारे नहीं लगाये. हिप्पी युवतियाँ अपने बालों में सोफ़िया के ख़ूबसूरत और मशहूर गुलाब लगाये हुए थीं और हिप्पी युवक रातों को उठ-उठ कर 'वोदका' की तलाश कर रहे थे. सोफ़िया में शराबखाने आधी रात को बंद हो जाते हैं और उस के बाद केवल दूसरे दिन की प्रतीक्षा ही शेष रह जाती है.

इक्वेडर : हो हो हो ची मिन्ह

ग़ैरहाज़िर पाकिस्तान : अंतरराष्ट्रीय समिति को सब से अधिक निराशा और अचरज पाकिस्तान के रवैये से हुआ जिस का एक भी प्रतिनिधि समारोह में शामिल नहीं हुआ. खाना-पूरी करने के लिए लंदन से एक पाकिस्तानी छात्र को बुलाया गया था जो कि इस सारी भीड़ में अपने को अकेला और खोया हुआ पा रहा था. अफ़वाह थी कि पाकिस्तान सरकार ने समारोह में अपना प्रतिनिधि इस लिए नहीं भेजा कि अगर पाकिस्तानी नवयुवकों को सोफ़िया जाने दिया गया तो वे विदेश-स्थित पाकिस्तानियों से मिलेंगे जिन में से अधिकतर प्रैज़िडेंट अय्यूब के विरोधी हैं.

देश-विरोध : पाकिस्तान का भय एकदम बेबुनियाद नहीं था. अनेक देशों के प्रतिनिधि सोफ़िया में अपनी सरकारों के विरुद्ध उग्र प्रचार कर रहे थे. ग्रीस के प्रतिनिधियों ने सोफ़िया में जगह-जगह पोस्टर चिपका रखे थे जिन में लिखा हुआ था 'पर्यटक भाइयो, ग्रीस मत आओ. ग्रीस पर अपनी विदेशी मुद्रा बर्बाद मत करो. जब तक ग्रीस की तानाशाही हुकूमत ख़त्म नहीं हो जाती, तब तक ग्रीस देखने लायक देश नहीं है.' ठीक इसी तरह इस्राइल के प्रतिनिधियों ने, जो कि इस्राइल से नहीं बल्कि अरब देशों से आये थे, सोफ़िया में इस्राइल की वर्त्तमान सरकार को 'अमेरिका का पिट्ठू' क़रार देते हुए उसके विरुद्ध जनमत संगठित करने के प्रयत्न किये. इस्राइल के तथाकथित प्रतिनिधियों का कहना था कि अरब देश नहीं बल्कि इस्राइल आक्रांता है. इस स्थिति से अरब प्रतिनिधियों को कितनी खुशी और सफलता का अहसास हुआ होगा इस की कल्पना की जा सकती है. जहाँ तक भारतीय प्रतिनिधिमंडल के आचरण का प्रश्न है, वह एक अलग कहानी है.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गाल्सवर्दी की पुस्तकें: टेलीविज़न की महिमा

जॉन गाल्सवर्दी के प्रसिद्ध उपन्यास 'द फ़ोरसाइट सागा' के टेलीविज़न-रूपांतर से उन की पुस्तकों की माँग पर जादू का-सा असर हुआ है, किंतु डच प्रकाशन-संस्था बूना ने यह कह कर अपनी ईमानदारी का शानदार उदाहरण प्रस्तुत किया है कि वह पुराने अनुबंध को रद्द कर के नये अनुबंध पर हस्ताक्षर करेगी क्यों कि प्रकाशन-अधिकार ख़रीदते वक्त वर्त्तमान असाधारण माँग का बिल्कुल ध्यान नहीं रखा गया था. गाल्सवर्दी की पुस्तकों के कापीराइट की अवधि सन् १९८६ में समाप्त हो रही है लेकिन यदि रूस ने भी तब तक उन की पुस्तकों की रायल्टी देना स्वीकार कर लिया तो गाल्सवर्दी के उत्त-राधिकारियों की भाग्यलक्ष्मी मुस्करा उठेगी.

सन् १९५७ में डोनाल्ड विल्सन ने जॉन गाल्सवर्दी के उपन्यास 'द फ़ोरसाइट सागा' पर टेलीविज़न फ़िल्म बनाने की योजना बनायी. यद्यपि बी. बी. सी. के विषयक्रम निर्धारक विभाग के सर्वोच्च अधिकारी होने के नाते वह सदैव नये विषयों और नयी संभावनाओं की तलाश में मशगूल रहते हैं, किंतु उन्हें उम्मीद नहीं थी कि उन का यह प्रयास इतना अधिक सफल रहेगा. अपनी योजना को क्रियान्वित करते वक्त उन के सम्मुख सब से पहली रुकावट यह थी कि उक्त पुस्तक को फ़िल्मांकित करने का अधिकार मेट्रो गोल्डन कंपनी के पास सुरक्षित था. चुनाचे काफ़ी पेचीदगियों के बाद संबंधित अमेरिकी कंपनी बी. बी. सी. को फ़िल्मांकन अधिकार देने के लिए राज़ी हुई. तय किया गया कि फ़िल्मांकन संयुक्त रूप से किया जायेगा और प्रदर्शन से प्राप्त आय पर भी दोनों का साझा रहेगा.

सफल युक्ति : महीनों तक गाल्सवर्दी की रचनाओं का गहन अध्ययन करने के बाद श्री विल्सन ने फ़िल्मांकन के लिए 'द फ़ोरसाइट सागा' की पटकथा, वित्तीय व्यवस्था अभिनेताओं के चयन आदि कार्य निपटाये और नवंबर १९६५ में इस फ़िल्म का निर्माण आरंभ हुआ. फ़िल्म तैयार होने पर यह निश्चित् किया गया कि पहले बी. बी. सी. ही प्रदर्शन आरंभ करे, जिस से कि अधिक से अधिक दर्शकों का ध्यान इस फ़िल्म की ओर आकर्षित हो और व्यापक प्रचार संभव हो सके. यह युक्ति बहुत अधिक सफल सिद्ध हुई. बी. बी. सी–२ की इस फ़िल्म को देखने वालों की संख्या २ लाख प्रति सप्ताह की दर से बढ़ने लगी. आलोचकों द्वारा फ़िल्म की प्रशंसा का दौर शुरू हो गया और गाल्सवर्दी की पुस्तकों की प्रकाशन-संस्था के दूरदर्शी विक्रय-अधिकारियों के सिवा और कोई यह अनुमान न लगा सका कि टेलीविज़न की महिमा का गाल्सवर्दी की पुस्तकों की लोकप्रियता पर क्या प्रभाव पड़ेगा. चुनाँचे फ़िल्म के प्रदर्शन की घोषणा से पूर्व ही ब्रिटेन की प्रकाशन-संस्था ने यह बंदोबस्त कर लिया कि उस के पास गाल्सवर्दी की पुस्तकें पर्याप्त मात्रा में हों. और अब तक उक्त प्रकाशन-संस्था गाल्सवर्दी की २० लाख पुस्तकें बेच चुकी है. टेलीविज़न फ़िल्म प्रदर्शित होने से पूर्व गाल्सवर्दी की २ से ३ हज़ार तक पुस्तकें प्रतिवर्ष बिकती थीं, किंतु फ़िल्म प्रदर्शित होने पर तो यह संख्या ९१ हज़ार प्रतियाँ तक पहुँच गईं. केवल 'द फोरसाइट सागा' उपन्यास ही की ५४ हज़ार प्रतियाँ बिकीं और 'ए मॉडर्न कौमेडी' की २२ हज़ार तथा 'द इंड ऑफ़ द चेपटर' की १५ हज़ार प्रतियाँ बिक गयीं.

व्यापक माँग : हाइनेमान प्रकाशन-संस्था अवसर का लाभ उठाने के लिए कटिबद्ध है—वह गाल्सवर्दी की पुस्तकों का पुर्नसंस्करण निकालने में जुट गयी है. माँग बढ़ती जा रही है—वह ब्रिटेन की सीमा लाँघ चुकी है. बी. बी. सी. और मेट्रो गोल्डन कंपनी के एजेंट सारे विश्व में बाज़ार की तलाश कर रहे हैं. अब तक ऑस्ट्रेलिया, न्यूज़ीलैंड, ऑयरलैंड गणराज्य, मैक्सिको, हाङकाङ, साइप्रस, रोडेसिया, जांबिया, युगोस्लाविया, जमेका, सिंगापुर, माल्टा, पाकिस्तान, हॉलैंड और बेल्जियम आदि देशों से ये एजेंट पर्याप्त धन वसूल कर चुके हैं. फ़िल्म के साथ-साथ गाल्सवर्दी की पुस्तकों की लोकप्रियता भी बढ़ती जा रही है. इन पुस्तकों के न केवल नये संस्करण निकाले जा रहे हैं, बल्कि पत्र-पत्रिकाओं में भी इनका धारावाहिक प्रकाशन जारी किया जा रहा है. स्पेन, पुर्त्तगाल और फ़्रांस की जनता भी यह फ़िल्म देखने के लिए तरस रही है. डेनमॉर्क स्वीडेन, नॉर्वे, फ़िनलैंड, स्पेन, पुर्त्तगाल, हॉलैंड, चेकोस्लोवाकिया, युगोस्लाविया और फ़्रांस में गाल्सवर्दी की पुस्तकों को फिर से प्रकाशित करने का दौर शुरू हो गया है.

भाग्य-लक्ष्मी : प्रश्न उठता है कि आखिर यह बेहिसाब पैसा जा कहाँ रहा है ? लेखक के पाँच भतीजे और भतीजियों के लिए जिन्हें गाल्सवर्दी के वसीयतनामे के अनुसार रायल्टी वसूल करने का अधिकार प्राप्त है यह अनुमान लगाना संभव नहीं कि उन्हें अब तक कितना पैसा मिल चुका है क्योंकि वे इस विषय पर कोई विज्ञापन करवाना उचित नहीं समझते. गाल्सवर्दी के सभी उत्तराधिकारियों की अवस्था ६० वर्ष के आस-पास है और अब वे अपनी शेष ज़िंदगी शांतिपूर्वक व्यतीत करना चाहते हैं. कहना मुश्किल है कि यह दौर कब ख़त्म होगा—कापीराइट की निर्धारित अवधि १९८३ है, जब गाल्सवर्दी के उत्तराधिकारियों के विचार से यह दौर ख़त्म हो जायेगा. लेकिन तब तक वे एक बार और अपनी भाग्य-लक्ष्मी के मुस्कराने की आशा कर सकते हैं. यह तभी मुमकिन होगा, जब कि रूस भी गाल्सवर्दी की पुस्तकों के कापीराइट की रकम चुकाने के लिए राज़ी हो जाये. अब तक रूस में गाल्सवर्दी की पुस्तकों की २ करोड़ प्रतियाँ बिक चुकी हैं और अब टेलीविज़न फ़िल्म ख़रीदने के लिए भी रूस बोली बोल रहा है.

प्रस्तुति, प्रास्थिति, परिप्रेक्ष

स्कूल-कॉलेजों की अपनी पत्रिकाएँ शिक्षकों-विद्यार्थियों की रचनाओं को प्रकाश में लाने का माध्यम रही हैं, और हैं लेकिन ये पत्रिकाएँ, अच्छी-ख़राब जैसी भी हों, बहुधा स्कूल-कॉलेजों के घेरे से नहीं निकल पातीं और एक सीमित उद्देश्य को ही पूरा करती हैं. उन की उपयोगिता निर्विवाद होने के बावजूद ऐसी रचनाओं को एक व्यापक-मंच देने का सवाल बना रहता है. इसी लिए, राजस्थान के शिक्षाविभाग द्वारा प्रकाशित राजस्थान के प्राथमिक एवं माध्यमिक विद्यालयों के 'सृजनशील शिक्षकों' की रचनाओं के तीन संग्रह देख कर ख़ुशी होती है, कि इस दिशा में अब अपने यहाँ सोचा जाने लगा है. लेकिन राजस्थान के शिक्षकों की कविताओं, कहानियों और विविध रचनाओं के ये संग्रह पढ़ कर थोड़ी निराशा होती है. एक तो इस लिए कि विद्यालयों की अपनी पत्रिकाओं में आम तौर पर प्रकाशित होने वाली रचनाओं से इन का स्तर कुछ बहुत अच्छा नहीं है और दूसरे इस लिए कि मानों इन में स्वयं प्रकाश में आने की छटपटाहट नहीं है. तीनों संग्रहों के आमुख में प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा, राजस्थान के अवर निदेशक **अनिल बोर्दिया** ने इस योजना का थोड़ा-सा परिचय दिया है और लिखा है कि 'शिक्षा विभाग, राजस्थान ने उत्तम श्रेणी के शिक्षकों की श्रेष्ठ कृतियों के प्रकाशन में योग देने का निश्चय किया है'; यह भी कि शिक्षक-दिवस' ६७ के अवसर पर प्रकाशित होने वाले इन संग्रहों के लिए 'इस वर्ष समय बहुत कम था'; लेकिन संपादकों ने रचनाओं के चयन के बारे में कुछ नहीं लिखा. क्या ये रचनाएँ स्कूलों की पत्रिकाओं से ली गयी हैं, या सभी विद्यालयों के शिक्षकों से अपनी रचनाएँ भेजने का अनुरोध किया गया था और उन्हीं प्राप्त रचनाओं में से ये चुनी गयी हैं ? अगर इस संबंध में कुछ बताया गया होता तो वह न सिर्फ़ रुचिकर होता रचनाओं की 'स्थिति' का परिचायक भी होता, रचनाकार और पाठक के बीच की दूरी भी मिटती. ज़ाहिर है कि ये रचनाएँ शिक्षकों द्वारा भिन्न स्थितियों में और अपने-अपने परिवेश विशेष में लिखी गयी होंगी. गाँवों और क़स्बों के विद्यालयों में पढ़ाने वाले शिक्षकों को स्वयं नया या पुराना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्य कितना उपलब्ध होता है ? लिखने के लिए उन्हें कौन-सी चीज़ प्रेरित करती है ? क्या वस्तुतः ऐसा है कि बहुत कुछ प्रकाशनीय अप्रकाशित रह जाता है ? क्या ऐसे शिक्षक हैं जो लेखन-कर्म को गंभीरतापूर्वक लेते हैं ? ऐसे कितने ही सवाल इन संग्रहों को देख-पढ़ कर मन में उठते हैं.

कविता-संग्रह **प्रस्तुति** की प्रायः सभी कविताएँ साधारण हैं. इन में छायावाद से ले कर नयी कविता तक की अनुगूंज है और इन्हें पढ़ कर यही अनुमान लगाया जा सकता है कि अमुक कवि ने शायद छायावाद के बाद की कविता नहीं पढ़ी; अमुक कवि मात्र गीतकारों से परिचित हैं और अमुक कवि ने नयी कविता पढ़ कर कुछ उसी के अनुरूप लिखने की कोशिश की है. यानी कुल मिला कर ताज़ी अनगढ़ कविता या कविता की किसी प्रकार की कच्ची सामग्री भी नहीं मिलती--कुछ ऐसा जिसे पा कर लगे कि इस में तराश भले न हो लेकिन 'बात' की ऐसी तीखी गंध है जो दब-दबा कर भी बिना फूटे नहीं रहती. यहीं आ कर फिर चयन-प्रक्रिया वाली बात दुहराने की इच्छा होती है. यह भी कि रचनाएँ चुनी भर गयी हैं, या खोजी भी गयी हैं. बिना इस दिशा में सोचे ऐसे आयोजन अधूरे और काफ़ी कुछ बेमतलब होंगे.

कहानी-संग्रह **प्रस्थिति** की स्थिति भी कविता-संग्रह 'प्रस्तुति' से कुछ बेहतर नहीं. भाग्य, संयोग, कल्पना की अंतहीन उड़ानों की ये कहानियाँ भी किसी तरह के टटकेपन से अछूती हैं. अतिरंजित स्थितियाँ, भावुक मनः-स्थितियाँ इन्हें बिल्कुल छितरा देती हैं. हाथ लगते हैं कथानक के टुकड़े, अलंकृत भाषा और अनावश्यक वर्णन-विस्तार. कुछेक कहानियाँ ऐतिहासिक हैं और राजस्थान की धरती से संबंध रखती हैं. कुल मिला कर यही लगता है कि संग्रह में लेखकों की अपनी बात, अपना परिवेश या अपना संसार नहीं उभरता. इस मामले में विविध रचनाओं के संग्रह **परिक्षेप** की स्थिति सब से अच्छी है. इस में कई रचनाएँ सीधी, सहज ताज़गी भरी हैं. जैसे **श्रीनाथ किशोर** का संस्मरण 'विचून की बालिकाएँ' संग्रह में, 'एक अजाने आचार्य', 'संस्कृति का मूल स्वरूप', 'आचार्य किशोरी दास वाजपेयी', 'गीता में कर्मयोग', 'संत कवि दादू और उन का संप्रदाय' के साथ ही 'नयी कविता में सौंदर्य-बोध' पर भी एक लेख है. लेख बहुत अच्छे नहीं हैं. लेकिन फिर भी इन से अध्यापकों की रुचि, भाषा आदि का कुछ परिचय मिलता है.

प्रस्तुति (कविता-संग्रह), **प्रस्थिति** (कहानी-संग्रह) **परिक्षेप** (विविध): संपादक : ज्ञान भारिल्ल, प्रेम सक्सेना : प्रकाशक, शिक्षा विभाग राजस्थान. प्रत्येक का मूल्य ४ रुपये.

विज्ञान

ज़ोंद-५ : एक वैज्ञानिक उपलब्धि

सोवियत संघ ने फिर एक बार यह दिखा दिया है कि वह अंतरिक्ष की अधिक से अधिक जानकारी प्राप्त कर के उस से लाभ उठाने के बारे में अमेरिकियों से अधिक कृतसंकल्प है. १९६६ में रूसी अंतरिक्षयान लूना-९ पहला नियंत्रित यान था जो धीरे से चाँद पर उतरा था और अब चंद्रमा का चक्कर काट कर पुनः पृथ्वी पर लौटने वाला अंतरिक्षयान भी सोवियत संघ का ही है. वाशिंगटन में अमेरिकी अंतरिक्ष विशेषज्ञों ने यह स्वीकार किया है कि सोवियत वैज्ञानिकों की उपलब्धि 'बहुत ही महत्त्वपूर्ण है.' सोवियत संघ का अंतरिक्ष-यान, जो वास्तव में एक अंतरिक्ष प्रयोगशाला है, १५ सितंबर को एक पूर्व निर्धारित अंतरिक्ष मार्ग पर छोड़ा गया. सात दिन की यात्रा के बाद यह प्रयोगशाला पुनः भूमि के वायुमंडल में दाखिल हो गयी. वायुमंडल में प्रवेश के प्रायः १४ मिनट बाद इस ने हिंद महासागर में डुबकी लगायी. यह स्थान भी वैज्ञानिकों द्वारा पहले से ही निश्चित किया गया था.

तापमान और वापसी : इस सफल वैज्ञानिक चमत्कार में यह बात उतनी महत्त्वपूर्ण नहीं है कि इस अंतरिक्ष यात्रा ने चंद्रमा की परिक्रमा की है और न ही यह बात आश्चर्यजनक है कि इस अंतरिक्ष प्रयोगशाला ने चाँद के बारे में अनेक बातें मालूम कर ली हैं. वैज्ञानिक उपलब्धि केवल यह है कि 'ज़ोंद-५' ने प्रायः २१ किलोमीटर प्रति सेकिंड की गति से पृथ्वी के वायुमंडल में प्रवेश किया. इस से पहले भी अंतरिक्ष-यानों ने यह गति प्राप्त की है. मगर

दोनों भाई हैं? नहीं, पिता और बेटा!

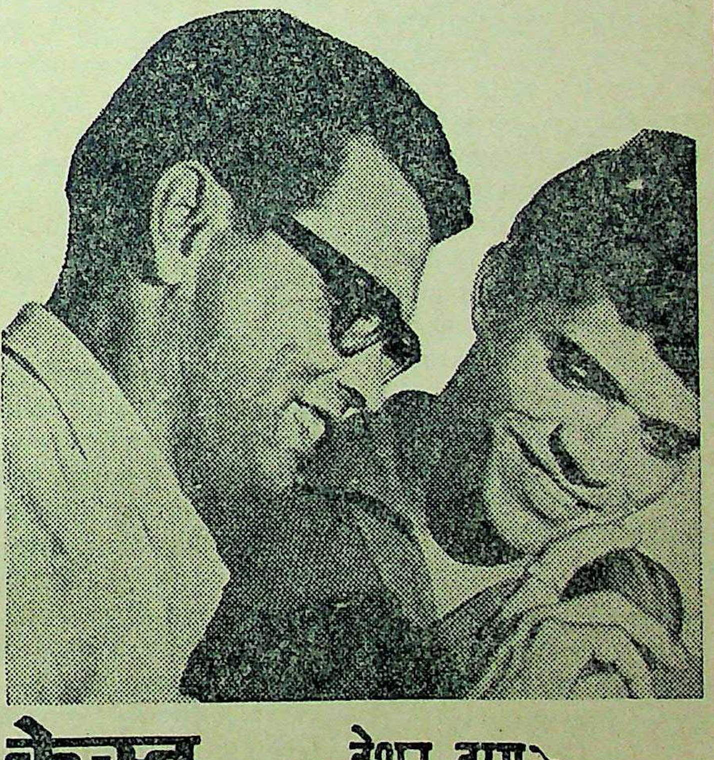

क्रेस्ट हेअर डाय ने

आप को सोचने पर मजबूर किया

क्रेस्ट बालों का कुदरती रंग वापिस ले आता है और आप फिर से अपनी जवानी की सूरत पा सकते हैं। क्रेस्ट खुद ही इस्तेमाल किया जा सकता है। इसका रंग न तो पानी से धुल जाता है, न ही ब्रश करने से निकलता है। बालों की सफ़ेद लड़ियों पर क्रेस्ट हेअर डाय स्टिक फेरिये। गीले, सूखे या तेल वाले बालों पर बराबर असर करता है। काले और गहरे भूरे, दो लोकप्रिय रंगों में स्टिक और डाय दोनों ही मिलते हैं।

साहिब सिंग का एक बढ़िया उत्पादन

केश-विन्यास के बारे में विशेष सलाह के लिए इस पते पर लिखिए:

क्रेस्ट ऐडवाइज़री सर्विस, पी. ओ. बॉक्स ४४०, नयी दिल्ली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस गति से कोई भी यान वापस नहीं आ सका है. इस का कारण यह है कि जब भी कोई तेज़ चलने वाली वस्तु वायुमंडल से गुज़रती है तो वायु की रगड़ से आस पास का तापमान बढ़ जाता है. जब एक अंतरिक्ष यान ८ किलोमीटर प्रति सैकिंड की गति से बाहरी अंतरिक्ष से पृथ्वी के वायुमंडल में आ गया था तो उस के आसपास की वायु का तापमान ८०००° तक हो गया था और २१ किलोमीटर प्रति सेकिंड गति वाले यान के साथ वाली वायु का तापमान १२०००° से १३०००° के बीच हो सकता है. स्पष्ट है कि इस तापमान पर तो कोई भी साधारण वस्तु राख हो जायेगी और यदि सोवियत अंतरिक्ष यान ज़ोंद-५ की वापसी यात्रा में विशेष सावधानी से काम नहीं लिया होता तो उस का पृथ्वी पर पहुँचना संभव नहीं था.

कुछ क़दम आगे : सोवियत संघ के पास इस प्रकार की वैज्ञानिक जानकारी है जिस के बल पर वह अंतरिक्ष यात्रा में आने वाली बाधाओं का मुक़ाबला कर सकता है. यह तो नहीं कहा जा सकता कि सोवियत संघ शीघ्र ही चंद्रमा पर मानव को उतारने में सफल हो सकता है मगर इतना जरूर कहना पड़ेगा कि रूसी इस दिशा में कई क़दम आगे निकल आये हैं. लंदन की जाड्रल बैंक प्रयोगशाला के निर्देशक सर बर्नार्ड लोवेल ने सोवियत संघ को इस कार्य पर बधाई देते हुए कहा कि 'आज की उपलब्धि के बाद यह बहुत संभव है कि चाँद को निकट से देखने का श्रेय अमेरिकियों से पहले किसी रूसी को ही मिलेगा.' ज़ोंद-५ जैसे अंतरिक्ष यान पर मनुष्य को चाँद की परिक्रमा करने के पहले सोवियत संघ को एक या दो बार बिना मनुष्य के ही इसी प्रकार के परीक्षण करने पड़ेंगे. तेज़ गति पर वायुमंडल में प्रवेश कराने में पूर्ण सफलता प्राप्त करने के लिए किसी गैस में गतिशील वस्तुओं का अध्ययन करना पड़ता है. इन की गति ध्वनि की गति से २० गुना अधिक हो सकती है.

ज़ोंद-५ मारीशस द्वीप के पास ही हिंद महासागर में उतरा है. एक समाचार के अनुसार इस अंतरिक्ष यान को कुछ ही दिनों में एक जहाज़ पर लाद कर बंबई लाया जा रहा है.

फ़िल्म

नव सिनेमा आंदोलन

हिंदी फ़िल्मों के व्यवसायी, वितरक और प्रदर्शकगण प्रचलित लीक से अलग हट कर बनायी गयी प्रयोगात्मक और साहसी (बोल्ड) फ़िल्म को हाथ लगाते हुए डरते हैं; क्यों कि उन के मन में यह भय समाया हुआ है कि कदाचित् ऐसी फ़िल्म दर्शकों की रुचि के अनुकूल सिद्ध नहीं होगी. 'नव सिनेमा आंदोलन' इस बेबुनियाद भय का खंडन करना चाहता है. हमारा विचार है कि सिने दर्शक की अभिरुचि केवल सिने दर्शक ही जान और समझ सकता है—दूसरा कोई नहीं. अतः यदि फ़िल्म और उस के दर्शकों के बीच की सारी व्यावसायिक कड़ियों को उन के सही स्थान पर रखा जाये (अर्थात् यदि निर्माता, पूंजीपति, वितरक, प्रचारक और प्रदर्शक को पूरी तरह नियंत्रण में रखा जाये) तभी दर्शक अपनी पसंद की फ़िल्म पा कर उसे सफल बना सकेगा और अरुचिकर व बुरी फ़िल्म को नापसंद कर उसे असफल सिद्ध कर सकेगा. फ़िलहाल जो स्थिति है वह तो यह है कि पैसा ख़र्च कर सिनेमा देखने वाले दर्शक की रुचि-अरुचि जाने बिना फ़िल्म उद्योग के 'अनुभवी' और जनता की नब्ज़ पर हाथ रखने वाले मठाधीश, तथाकथित मनोरंजन के नाम पर, ऊटपटांग फ़िल्में जनता के सिर पर मढ़ देते हैं और जनता है कि फ़िल्मों पर नहीं उन के बनाने वालों की मूर्खताओं और असंगतियों पर हँसती है. इसी लिए 'नव सिनेमा आंदोलन' ने अपने घोषणा पत्र में लिखा है—'हम केवल दो पक्षों को ही पहचानते हैं—जागरूक निर्देशक तथा जागरूक दर्शक और इन दो पक्षों के बीच जो भी शक्तियाँ काम करेंगी उन्हें अधिक से अधिक ईमानदार दलालों और कमीशन एजेंटों का दर्जा दिया जायेगा—इस से अधिक नहीं.'

'नव सिनेमा आंदोलन' की फ़िल्में हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में बनेंगी और इन की लंबाई दस हज़ार फ़ुट से अधिक नहीं होगी. प्रत्येक फ़ीचर फ़िल्म (१० हज़ार फ़ुट) के साथ दो लघु चित्र (१ या डेढ़ हज़ार फ़ुट) भी प्रदर्शित किये जायेंगे. इस का एक लाभ यह भी होगा कि जो प्रयोग एक लंबी फ़ीचर फ़िल्म में संभव न हो सकेंगे वे लघु फ़िल्मों में आसानी से किये जा सकेंगे. लघु फ़िल्मों द्वारा दूसरा लाभ यह होगा कि इन के द्वारा नये सिनारिस्टों और नये निर्देशकों को अपनी प्रतिभा प्रदर्शित करने का अवसर मिल सकेगा. तीसरा लाभ यह है कि ऐसी लघु फ़िल्में देशी-विदेशी टेलीविज़न द्वारा भी प्रदर्शित की जा सकेंगी.

अंत में लीजिए वे शंकाएँ जो **दिनमान** प्रतिनिधि ने व्यक्त की हैं—'नव सिनेमा आंदोलन' जहाँ साधारण व्यावसायिक सिनेमाघरों में अपनी फ़िल्में प्रबुद्ध एवं जागरूक दर्शकों के लिए प्रदर्शित करेगा वहाँ आंदोलन का 'अकादेमी सिनेमा' देशी-विदेशी कला-चित्रों द्वारा धीरे-धीरे साधारण प्रेक्षकों में फ़िल्म-बोध का विकास करेगा. सौभाग्य से इस समय समूचे देश में एक सौ से अधिक 'फ़िल्म सोसाइटियाँ' काम कर रही हैं; जिन्होंने पिछले दस वर्ष में प्रेक्षक की रुचि को खासा विकसित और परिष्कृत किया है. इन 'फ़िल्म सोसाइटियों' द्वारा प्रशिक्षित सिने प्रेमियों में से ही **सत्यजित राय, मृणाल सेन, ऋत्विक घटक, बासु भट्टाचार्य, सत्यदेव दुबे, अरुण गुह ठाकुर्ता, तपन सिन्हा, श्याम बेनेगल, अदूर गोपालकृष्णन, कुमार साहनी** आदि निर्देशक निकले हैं. इन पंक्तियों का लेखक स्वयं इसी 'फ़िल्म सोसाइटी आंदोलन' की उपज है और बंबई के 'फ़िल्म फ़ोरम' (एशिया की सब से बड़ी फ़िल्म सोसाइटी—सदस्यों की संख्या—लगभग २,९००) का संस्थापक-मंत्री है. दूसरे शब्दों में 'नव सिनेमा आंदोलन' फ़िल्म सोसाइटी आंदोलन का ही दूसरा और अगला चरण है.

फ़्रांस की 'नयी धारा फ़िल्मों' को कलात्मक प्रतिष्ठा और व्यावसायिक स्थिरता देने का श्रेय फ़्रांसीसी फ़िल्म-सोसाइटियों द्वारा प्रशिक्षित प्रबुद्ध दर्शकों को है—वहाँ की साधारण जनता को नहीं (जो अब भी फ़िलिप-द-ब्रोका की 'दैट मैन फ़्रॉम रियो' और 'द फाइव डे लवर' जैसी फ़िल्में पसंद करती है). अमेरिका के 'नव सिनेमा आंदोलन' (अंडर ग्राउंड फ़िल्मों) को वहाँ के इन्हीं गिने-चुने दर्शकों ने हॉलिवुड की 'मिलियन-डॉलरी' फ़िल्मों से टक्कर लेने की क्षमता दी. एक दिलचस्प उदाहरण 'नयी कविता' के विषय में भी दिया जा सकता है. 'नयी कविता' को कभी भी जनसमर्थन नहीं मिला है, वह यदि मिला है तो बंबई के पिटी शब्दावली वाले घटिया फ़िल्मी गीतों को मिला है. उस के बावजूद 'नयी कविता' को जो प्रतिष्ठा प्राप्त हुई है क्या वह हिंदी फ़िल्मी गीतों को मिली है ?

इस आंदोलन के अंतर्गत हम कलात्मक ईमानदारी से यथार्थवादी फ़िल्में बनाने के समर्थक हैं. क्यों कि एक फ़िल्म के निर्माण पर लागत अधिक आती है इस लिए उस पैसे को वापस लाने के लिए 'अकादेमी सिनेमा', वितरण और प्रदर्शन-कार्य को भी आंदोलन की योजना में शामिल किया गया है. यहाँ हमें सफल अमेरिकी निर्देशक **फ़्रैंक कापरा** की बात याद आती है—"मैं जनता की रुचि बिलकुल नहीं जानता. मैं केवल अपनी रुचि जानता हूँ, क्यों कि मैं अपनी फ़िल्मों में अपनी रुचि के प्रति ईमानदार हूँ—इस लिए दर्शकों का वह वर्ग जो मेरी तरह सोचता है मेरी फ़िल्म को पसंद करता है. शेष में से कुछ, मुझ से असहमत होते हुए भी, मेरी कलात्मक ईमानदारी का सम्मान करते हुए मेरी फ़िल्म देखते हैं." **यही कलात्मक ईमानदारी अंततः सारे समाज को प्रबुद्ध बनाती है.** 'स्टंट' तथा मूक फ़िल्मों के युग में सर्जी गयी आइजंस्टीन की फ़िल्मों ने ये सब कर दिखाया था.

'नव सिनेमा' का फ़िल्म निर्देशक फ़्रैंक कापरा के उपर्युक्त कथन को ध्रुव बना कर चलेगा और उस की कृति से ('दिनमान' प्रतिनिधि के कथनानुसार) 'इस सशक्त माध्यम का अवमूल्यन होगा या पुनर्मूल्यांकन'—इस का निर्णय वह आप पर (अर्थात् अपने प्रबुद्ध समालोचक पर) छोड़ देगा.

—अरुण कौल

(संपादक के नाम पत्र से)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नेस्कैफ़े का स्वाद ही बताता है कि:

१ यह दक्षिण भारत की सर्वश्रेष्ठ कॉफ़ी के दानों से बनायी गयी १००% शुद्ध कॉफ़ी है।

२ यह 'इंस्टेंट' कॉफ़ी बनानेवाली, दुनिया की सबसे अधिक अनुभवी कंपनी की बनायी हुई है।

३ यह अपनी इच्छानुसार तेज़ या हल्की बनायी जा सकती है :

लेकिन नेस्कैफ़े का स्वाद यह नहीं बताता कि:

४ यह किफ़ायती है। इसे प्याली में ही बनाया जाता है। इसलिए ज़रूरत से ज़्यादा कॉफ़ी डालनी नहीं पड़ती और ज़रा-सी भी बेकार नहीं जाती क्योंकि फेंकने जैसी कोई तलछट रहती ही नहीं।

NESTLÉ
नेस्ले का उत्पादन

NESCAFÉ* नेस्कैफ़े—वह कॉफ़ी जिसके स्वाद का जवाब नहीं!

NGE 6248

* नेस्कैफ़े नेस्ले की इंस्टेंट कॉफ़ी का रजिस्टर्ड ट्रेड मार्क है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परचून

ज़िंदादिल बीमारी

कोफेरिडिला (घना) के टाफ़ो गवर्नमेंट स्कूल की २० छात्राएँ अचानक ही एक दिन अपनी-अपनी कक्षाओं में हँसने-रोने या उछलने-कूदने लगीं. स्कूल के चिकित्सक डॉ. आप्पियाह के अनुसार किसी रहस्यमयी बीमारी ने इस स्कूल की लड़कियों पर असर कर दिया था, जिस के कारण वे तरह-तरह की अजीबोग़रीब हरकतें कर रही थीं. आश्चर्य की बात है कि इस बीमारी ने किसी भी लड़के को प्रभावित नहीं किया. यह बीमारी अस्थायी थी और छात्राओं को चिकित्सा के बाद अस्पताल से छोड़ दिया गया. पर स्कूल तब तक बंद रहेगा जब तक चिकित्सक इस अजीब बीमारी का कारण न बता सकेंगे.

हास्य-व्यंग्य में मेंढक

टोक्यो ह्यूमर क्लब ने, जिस का लक्ष्य है रोज़मर्रा की ज़िंदगी में तनाव कम करने के लिए उस में हास्य-व्यंग्य का पुट देना, पूर्वी टोक्यो में स्थित अपने लोकप्रिय तालाब में ३०,००० मेंढक और छोड़े हैं. इस से पहले भी तालाब में मेंढक रहे, पर पानी में गंदगी फैल जाने से वे मर गये. क्लब की ओर से बताया गया कि लगभग १०० स्कूल के बच्चों को मेंढक पकड़ने के काम में लगाया गया. क्लब के सदस्यों को ख़ुशी है कि वे फिर से तालाब के किनारे बैठ कर मेंढकों का टर्राना सुन सकेंगे.

नौकरी की तलाश

अमेरिका का वाणिज्यमंत्रालय, न्यूयॉर्क विश्वविद्यालय का नगर केंद्र और सरकारी रोजगार सेवा—इन तीनों संस्थाओं ने मिल कर नौकरियों के लिए प्रार्थियों से भेंट का एक नया तरीक़ा निकाला, जिस का असर कुल मिला कर अच्छा ही पड़ा. न्यूयॉर्क के सेंट्रल कर्माशियल स्कूल में २००० प्रार्थी एकत्रित हुए, जिन में ताज़े स्नातकों के साथ परीक्षा में असफल छात्र और कुछ ऐसी माताएँ भी शामिल थीं जिन को बच्चे बड़े हो जाने के कारण गृहस्थी के कामों से कुछ अवकाश मिल सकता है. औपचारिक भेंट के स्थान पर हर नौकरी की घोषणा निहायत ही अनौपचारिक ढंग से की जाती थी और उस के लिए कैसे व्यक्ति की आवश्यकता है, यह भी बताया जाता था. अपने को घोषित नौकरी के क़ाबिल समझने वाले घोषणा करने वाले तक पहुँचते, जहाँ उन्हें आगे जो कुछ करना है वह बताया जाता. ३७ संस्थाओं के प्रतिनिधियों ने निहायत ही अनौपचारिक बातचीत के ज़रिये विभिन्न नौकरियों के लिए इन प्रार्थियों की क़ाबलियत जानने की कोशिश की. पार्श्व से, हल्के-हल्के, आधुनिक संगीत की एक धुन लगातार बजायी जा रही थी, जिस से कि वातावरण में हल्कापन बना रहे और बातचीत करते समय प्रार्थी किसी प्रकार का मानसिक तनाव न महसूस करे. अक्सर देखा गया है कि औपचारिक भेंट से प्रार्थी घबरा जाता है और भेंट करने वाले को प्रभावित करने में वह असफल रहता है. यह प्रयोग विशेष रूप से उन व्यक्तियों को नौकरी पाने में सहायता देने के लिए किया गया था जो पहले प्रतियोगिता-परीक्षाओं में असफल हो चुके हैं; या फिर जिन की उम्र इन परीक्षाओं में बैठने के लिए ज़्यादा हो चुकी है. मज़े की बात है कि इस बार कोई भी प्रार्थी भेंट के बाद निराश नहीं लौटा, क्यों कि यहाँ नौकरियाँ ज़्यादा थीं, प्रार्थी कम.

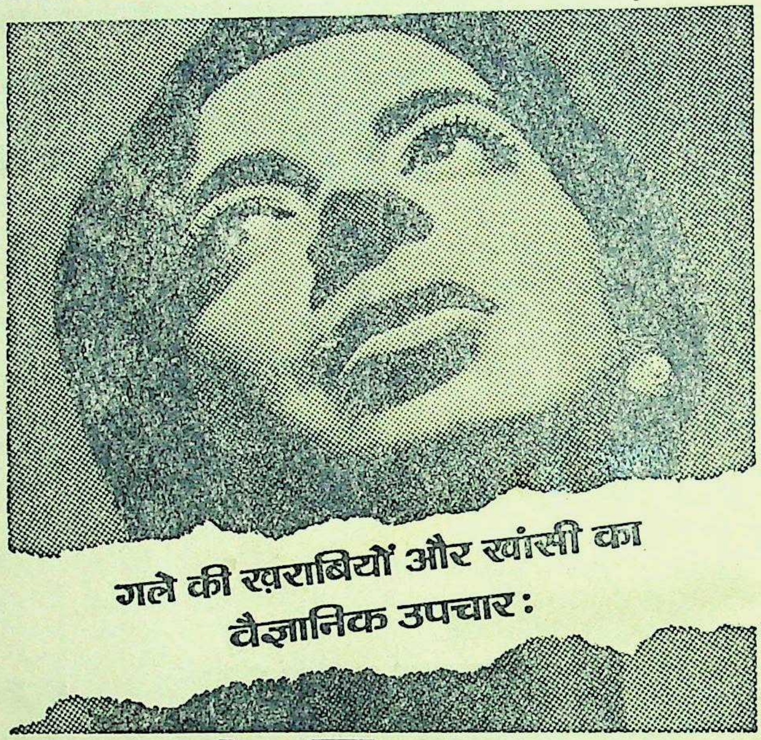

गले की ख़राबियों और खांसी का वैज्ञानिक उपचार:

केवल स्ट्रेपसिल्स इन ख़राबियों के रोगाणुओं का नाश कर सकती है – ज़्यादा तेज़ी से

यह इस लिए कि केवल स्ट्रेपसिल्स में दो शक्तिशाली रोगाणुनाशक तत्व हैं। यह हैं २ : ४ डाइक्लोरोबेन्ज़िल आल्कोहल और एमिल-मीटा-क्रिसोल। इन गले की ख़राबियों के मूल रोगाणुओं का नाश करने की शक्ति चिकित्सीय रूप से मानी हुई है। और आराम भी इतना जल्द मिलता है कि आप ने पहिले कभी किसी और वस्तु से प्राप्त न किया होगा। इसी लिए स्ट्रेपसिल्स का आप के पास होना नितांत आवश्यक है – स्ट्रेपसिल्स आप के लिए भी अच्छी है और आप के बच्चों के लिए भी।

स्ट्रेपसिल्स
गले की रोगाणुनाशक गोलियाँ
गले की ख़राबियों और खांसी के उपचार के लिए चिकित्सीय रूप से मान्य

गले की ख़राबी के प्रथम संकेत अर्थात, ख़राश, निगलने में कठिनाई, गले का बैठना, ख़ुश्क गला आदि पर स्ट्रेपसिल्स चूसिये।

A BOOTS RESEARCH PRODUCT

CMBS-1AHN

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आकर्षक पैकेज आकर्षक लेबेल ************* क्रेता की दृष्टि आकर्षित करने को वाध्य है

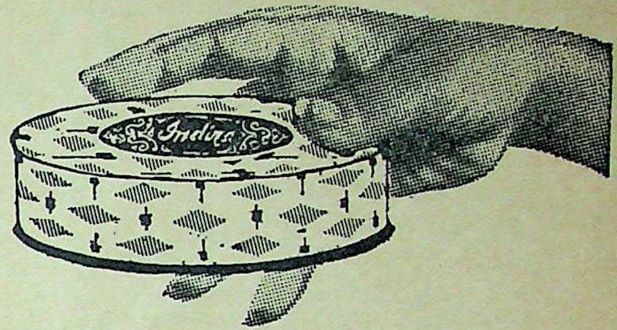

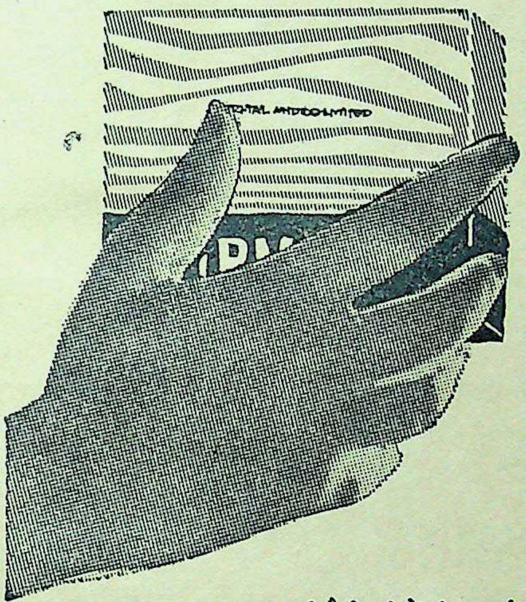

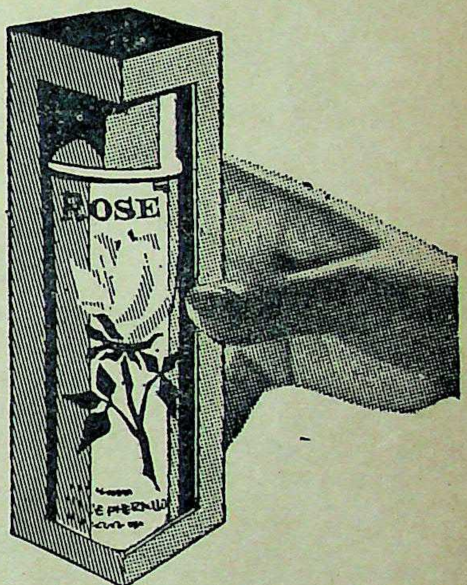

यह सही है कि चीजों की अच्छाई ही क्रेता को उन्हें खरीदने को मजबूर करती है—साथ ही साथ उन पैकेजों की विशेषता भी जिनमें चीजें हिफाजत से बन्द रहती है। पैकेज की सुन्दरता उसमें बन्द चीजों की सुन्दरता ही प्रगट करती है।

रोहतास डालमिया नगर स्थित अपने आधुनिक और उन्नतशील कारखाने में कार्टन और पैकेज बनाने लायक सर्वोत्तम पैकेजिंग पेपर और बोर्ड तैयार करते हैं, जिन पर बहु-रंगे छपाई के लिये भी भरोसा किया जा सकता है।

रोहतास पेपर्स और बोर्ड्स अच्छाई के प्रतीक हैं

रोहतास इण्डस्ट्रीज लिमिटेड
डालमिया नगर (बिहार)

मैनेजिंग एजेण्ट्स :—**साहू जैन लिमिटेड**, ११, क्लाइव रो, कलकत्ता-१
सोल सेलिंग एजेण्ट्स :—**अशोका मारकेटिंग लिमिटेड**, १८ए, ब्राबोर्न रोड, कलकत्ता-१

IPC : RI. 492 H (A)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

पंजीयित संख्या डी० १५०१

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बैनेट, कोलमैन एंड कम्पनी लिमिटेड, स्वत्वाधिकारी के लिए जे. एम. डिसूज़ा द्वारा नेशनल प्रिंटिंग वर्क्स, १० दरियागंज, दिल्ली-६ से मुद्रित और प्रकाशित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साप्ताहिक

दिनमान

टाइम्स ऑफ इण्डिया प्रकाशन

0 पैसे

२० अक्तूबर, १९६८
२८ आश्विन, १८९०

18-10-68

आश्वस्त पश्चिम जर्मनी • साढ़े तीन आयोजन : बदलता इनसान

Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जैसे २×२ पॉपलिन
जो तेज गर्मी में भी आपको शीतल रखे। आप की पसंद के लिए,
'टेरीन'/कॉटन मिला बाटिस्ट मौजूद है, जो पहनने में
चुस्त और धोने में आसान है। फिर सन्फोराइज्ड
पॉपलिन का क्या कहना–न
सिलवट, न ज्यादा इस्त्री की जरूरत।
इन आकर्षक कपड़ों की कीमतें हर व्यक्ति के माफिक हैं और
डिजाइन हर दिल को पसंद हैं।
चमकीले, शीतल और मृदु कोमल रंगोंमें प्राप्य हैं।

आरामदेह और शोभनीय कपड़ों पर शानदार प्रिंट्स

TATA *Textiles*

ULKA-TT-100 HN

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बॉम्बे डाइंग की साड़ी पहनिए और देखिए सबकी नज़र आप ही पर कैसे पड़ती है !

बॉम्बे डाइंग की साड़ियाँ किसी भी अवसर पर बेखटके पहनी जा सकती हैं। वॉड्रीन साड़ियाँ आसानी से धोयी जा सकती हैं, सिकुड़े बग़ैर जल्द सूख जाती हैं। इस्त्री की कोई ज़रूरत नहीं। मुलायम-मुलायम, टेबिलाइज़्ड और एण्टिक्रीज़ स्विस वॉइल की साड़ियाँ बड़ी शानदार फ़िनिशवाली होती हैं और खूब सजती हैं।

अत्याधुनिक वॉड्रीन ('टेरीन'/कॉटन) और हल्की-फुल्की स्विस वॉइल की साड़ियाँ हर महीने बारह नये-नये डिज़ाइनों और सुहाने रंगों में पेश की जाती हैं।

दिलफ़रेब, एण्टिक्रीज़ स्विस वॉइल की और वॉड्रीन ('टेरीन'/कॉटन) साड़ियों के लिए...

बॉम्बे डाइंग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मत और सम्मत

बार्ये-खदेड़ सरकार : कुछ समय से देश में जगह-जगह प्रदर्शन, हड़तालें, पथराव, लाठीचार्ज और गोलियाँ चल रही हैं. हमारी सरकार इसे विरोधी दलों की राजनैतिक स्वार्थ-सिद्धि का प्रयास घोषित कर, अध्यादेश और पुलिस ताक़त से दमन के लिए मैदान में कूद पड़ती है और अपने कुछ नागरिकों की हत्या कर विजय-गर्व से बैठ जाती है. क्या यह रवैया अधिक दिन तक इस लड़खड़ाते लोकतंत्र की रक्षा कर पायेगा, जिसे आंतरिक और बाह्य दोनों ही खतरे घेरते चले आ रहे हैं ?

देश में बढ़ती बेकारी-समस्या सरकार सुलझा नहीं पा रही है. फिर भी देशव्यापी विरोध के बावजूद विदेशों से कंप्यूटर ला कर 'ऑटोमेशन' करने को दृढ़ संकल्प है; मंत्रियों, लोकसभा और विधानसभाओं के सदस्यों एवं उच्च अधिकारियों के वेतन और भत्ते बार-बार बढ़ाये जा रहे हैं, चुनाव-कोष में धन ले कर लालाओं को बाजार भाव बढ़ाने की खुली छूट दी जा रही है. लेकिन बाबुओं की गुज़र-बसर करने लायक़ न्यूनतम वेतन की माँग असंगत और अव्यावहारिक बता कर नज़रअंदाज़ कर दी जाती है. एक तरफ़ कांतिलाल देसाई कांड है, दूसरी तरफ़ "वेतन वृद्धि पर रोक" है. जितना कड़ा रुख सरकार ने गुज़र-बसर लायक़ न्यूनतम वेतन माँगने वाले अपने कर्मचारियों के विरुद्ध किया क्या कभी करों की चोरी करने वाले और अनियमित रूप से धन-संग्रह कर कोठियाँ बनाने वाले व्यक्तियों के विरुद्ध किया है ?

हो सकता है कि मज़दूरों के इस असंतोष और दमन का लाभ उठा कर विरोधी राजनैतिक दल, जिन में विशेषकर कम्युनिस्टों का नाम लिया जाता है, अपनी स्वार्थ-सिद्धि कर रहे हों, परंतु इस सब का ज्ञान होने पर भी हमारी देश-भक्त और सर्वसाधन-संपन्न लोकतंत्र की संरक्षक कांग्रेस सरकार अपनी जनता की मुसीबतों पर ध्यान क्यों नहीं देती ? मज़दूरों की औचित्यपूर्ण माँगों को पूरा कर के उन्हें जीने क्यों नहीं दिया जाता ? देश में "बंगाल बंद", 'केरल बंद', 'महाराष्ट्र बंद' और 'भारत बंद' के सहारे विस्फोटक क्रांति ला देने की चेष्टा में लगे तत्त्वों के हाथों में जाने को यह सरकार मज़दूर वर्ग को ही क्यों मजबूर करती है ? यदि सरकार अध्यादेश और पुलिस राज के गर्व में जनता की कठिनाई नहीं समझ सकती, उस का शांतिपूर्ण हल नहीं निकालती तो देश में तोड़-फोड़ की प्रवृत्ति और कम्युनिज्म को बढ़ावा देने के लिए हमारी कांग्रेस सरकार ही उत्तरदायी होगी. वह सूझ-बूझ वाले देश-भक्तों को भी वामपंथी तत्त्वों के चंगुल में फँसने को बाध्य कर रही है. शायद हमारी कांग्रेस सरकार कम्युनिज्म को बढ़ावा देने के लिए वही भूमिका निभा रही है जो कट्टर हिंदू धर्म-पंथियों ने देश में ईसाई धर्म और मिशनरियों को बढ़ावा देने में निभायी थी.

कृषि-क्रांति : हिंदुस्तान के कृषि-स्नातकों एवं स्नातकोत्तरों की दशा जितनी दयनीय मध्यप्रदेश में है अन्यत्र नहीं. यहाँ के स्नातक रोज़ी-रोटी के लिए दूसरों के मोहताज हो रहे हैं. शासन द्वारा कृषि-स्नातकों को न तो ३० एकड़ जमीन और १५०००) ही दिये जाते हैं (यह योजना राज्य शासन की है) और न ही उन्हें उचित पद दिया जाता है, फलस्वरूप बेकार कृषि-स्नातक भूख की ज्वाला से झुलस रहे हैं. अभी पावस सत्र में कृषि-छात्रों एवं स्नातकों ने १५ दिवसीय प्रांत व्यापी आंदोलन चलाया, जिस में क़रीब साढ़े चार सौ छात्र हिरासत में ले कर जेल भेजे गये. इस शांतिपूर्ण आंदोलन के बाद भी राज्य शासन के कान में जूँ तक नहीं रेंगी. राज्य के सत्तारूढ़ दल ने यदि अपनी कुर्सी बचाने के अतिरिक्त छात्रों की ओर भी ध्यान दिया होता तो समस्या का संतोषजनक हल निकल आता. राज्य शासन की कृषि स्नातकों के प्रति उपेक्षापूर्ण नीति बरते जाने के कारण छात्रों में गहन असंतोष व्याप्त है

—रामपाल पांडेय, जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, रीवाँ.

राहत की राजनीति : बाढ़ को सरकार अन्य समस्याओं की तरह एक समस्या बताती है और आज तक इस का निराकरण कर पाने में असफल रही है. सच तो यह है कि बाढ़ समस्या नहीं सिरदर्द है. सिरदर्द का इलाज आसानी से हो सकता है, परंतु समस्या का हल ढूँढने में थोड़ा समय लग सकता है. यही कारण है कि सरकार इस को सिरदर्द नहीं समझती, समस्या समझती रहती है. जैसे देश की बहुत-सी समस्याएँ अटकी पड़ी हैं वैसे एक और सही. परंतु मेरी समझ में बात नहीं आती कि दूसरी समस्याओं से इस का क्या ताल-मेल है. भाषा की या जाति की समस्या के पीछे तो राजनीति छिपी बैठी है, या कुछ लोगों के व्यक्तिगत स्वार्थ निहित हैं. बाढ़ के पीछे न तो कोई राजनीति है और न कोई व्यक्तिगत स्वार्थ. फिर भी आज़ादी के बाद की इस लंबी अवधि में इस का निराकरण न हो सका. मुझे तो ऐसा लगता है कि ज़रूर इस के पीछे कोई साजिश है और वह साज़िश कुछ भी नहीं, बल्कि राहत की राजनीति है. इस के अतिरिक्त भी कुछ वजहें हैं. मानवतावादी दृष्टिकोण का अभाव, कर्त्तव्य के प्रति उदासीनता, व्यक्तिगत स्वार्थ इत्यादि.

बाढ़ का निराकरण बग़ैर किसी ठोस योजना को बनाये केवल अंधाधुंध पैसा खर्च कर के नहीं किया जा सकता है. परंतु नतीजा कुछ भी नहीं निकलता. आखिर क्यों ? इस लिए कि कार्यपद्धति ग़लत होती है. बाढ़ कमेटी, बाढ़ समिति गठित करने से इस का निराकरण संभव नहीं. सरकार सब से पहले अपने दिल और दिमाग़ को साफ़ कर के इस समस्या पर मानवतावादी दृष्टिकोण अपना कर विचार करे और एक ठोस कार्यक्रम बनाये. इस कार्यक्रम में वह जनता के प्रतिनिधियों एवं अन्य राजनीतिक दलों को एकत्र करे और उन से विचार-विमर्श करे. जब तक सरकार बाढ़ की बात अपने निज की बात समझ कर सोचेगी कोई हल नहीं होगा. इस कार्य में जनता का सक्रिय सहयोग आवश्यक है. सरकार को फिर भी थोड़ी चिंता अधिक करनी होगी. सड़कों पर नारे लगा कर, बड़े-बड़े भाषण दे कर सिवाय इस सिरदर्द को समस्या का रूप देने और पेचीदा बनाने के कुछ भी हल संभव नहीं हो सकेगा.

—हरिमोहन, समाजवादी चिंतन केंद्र, कलकत्ता

लज्जाजनक बात : गत १९ सितंबर को नयी दिल्ली के इंद्रप्रस्थ भवन में जिन घटनाओं के होने के समाचार प्रकाशित हुए हैं उन से देश के प्रत्येक शिक्षित एवं देश-भक्त नागरिक का मस्तक लज्जा से झुक जाना चाहिए. यह ठीक है कि व्यवस्था को बनाये रखना पुलिस का दायित्व है एवं क़ानून को भंग करने वालों के साथ क़ानून के अंतर्गत समुचित कार्यवाही करना उस का कर्त्तव्य है. पर नियम एवं व्यवस्था को बनाये रखने के नाम पर जिस प्रकार का अनुचित एवं आतंकपूर्ण

आप फ़रमाते हैं

व्यंग्य-चित्र : लक्षमण

मैंने अपनी कोशिशें और बढ़ा दी हैं. अब मेरे भाषण पहले से ज्यादा लंबे होंगे. अब मैंने अपने दौरे की अवधि भी एक महीने और बढ़ा दी है.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रश्न-चर्चा—४८

केंद्रीय सरकार के मंत्री साहित्य और कला के विषय में जब तब विचार प्रकट करते रहते हैं. अनुमान कीजिए कि उन में से अलग-अलग व्यक्ति आधुनिक या प्राचीन साहित्य में से क्या पढ़ते हैं.

व्यक्तियों के चुनाव और स्टीक अनुमान के आधार पर सर्वोत्तम उत्तर पर ५० रु० पुरस्कार. उत्तर ३ नवंबर १९६८ तक **प्रश्न चर्चा–४८, दिनमान ७, बहादुरशाह ज़फ़र मार्ग, नयी दिल्ली** के पते पर आयें. परिणाम १७ नवंबर के अंक में प्रकाशित होंगे.

व्यवहार अनेक बार हमारे देश में किया जाता है वह हमारे गणतंत्र के लिए गहरी चिंता का विषय है. विगत कुछ दिनों में आकाशवाणी से केंद्रीय सरकार के कर्मचारियों की १९ सितंबर की सांकेतिक हड़ताल के संबंध में जिस प्रकार तोड़-मरोड़ कर भ्रामक रीति से समाचार दिये गये हैं वह बहुत आपत्तिजनक है. आकाशवाणी का कार्य यथार्थ समाचारों को देना है. उस को दलगत राजनीति का साधन बनाना सर्वथा अनुचित है. हमारी अनेक कठिनाइयों का मूल कारण बढ़ती हुई मंहगाई है. यदि सरकार ने आवश्यक वस्तुओं के मूल्यों का नियंत्रण करने में अपनी शक्ति को प्रभावशाली ढंग से काम में लिया होता तो आज हमारे देश की ऐसी स्थिति न होती. **—राधेश्याम डंगायच, जयपुर**

साहित्य के सवाल : हिंदी के साहित्य का सामान्य पाठक हूँ. अपनी यह हैसियत पिछले साढ़े तीन दशाब्दों की है और इस पूरी अवधि में इसी देश का सामान्य नागरिक भी रहा हूँ. अपनी इन दोनों हैसियतों पर काफ़ी दिन पहले एक खीझ-सी महसूस होने लगी, जो लगातार बढ़ती ही गयी है. पहले अपने-आप पर, अर्थात् अपने मानसिक स्वास्थ्य पर कुछ संदेह हुआ था. मैं उन लोगों में हूँ जो स्वभाव से ही कृष्ण से कृष्ण स्थिति में भी कोई न कोई शुक्ल पक्ष ढूंढ ही लेते हैं और शुक्लता चाहे जितनी भी कम हाथ आये उतनी से ही खुश हो लेते हैं. विशेषज्ञ न होने पर भी अपने मन की परीक्षा करने का आदी रहा हूँ. इस मामले में भी तन्न-तन्न परीक्षा की. वहाँ कोई नयी बात नहीं. दोष देश की स्थिति और हिन्दी के साहित्य का ही होगा. देश की जो स्थिति है आइने की तरह आरपार देखी जा सकती हैं. साहित्य में आज के स्वर के ईमानदाराना होने का धोखा तो प्रायः होता है, पर जान पड़ता है कि जिन सवालों को ले कर हमारा साहित्य उलझ रहा है वे सवाल ही शायद आज की सचाई से बहुत दूर हैं. **—युगजीत, दिल्ली**

दक्षिण की उपेक्षा : मद्रास के मुख्यमंत्री अन्नादोरै हमेशा कहते हैं कि केंद्र सरकार विकास-कार्यों में दक्षिण की उपेक्षा करती है. एक बार श्री अशोक मेहता के साथ उत्तर भारत की राष्ट्रीय सड़कों की दुर्दशा देख कर वह बोल उठे, "इस से तो हमारे मद्रास राज्य की सड़कें कहीं अच्छी हैं," जिस पर श्री मेहता ने दक्षिण के साथ पक्षपात बरतने वाले उन के आरोप की उन्हें याद दिलायी, तो वह निरुत्तर हो गये. फिर भी यदाकदा इस प्रकार के आरोप, चाहे चावल के वितरण के बारे में श्री नंबूदिरिपाद द्वारा, इस्पात-कारखाने के स्थान के बाबत श्री ब्रह्मानन्द रेड्डी द्वारा या तेल साफ़ करने के कारखाने के लोकेशन के मामले में श्री चालिहा या अन्य नेताओं के मुख से सुने जाते हैं, जो अपने राजनैतिक अस्तित्व के लिए क्षेत्रीय भावनाओं को उभारते हैं. केंद्र सरकार सब की है और उस की दृष्टि में सभी प्रांत बराबर हैं, यह समझाने की बात है. क्यों नहीं केंद्र सरकार आँकड़ों द्वारा इस भ्रम को दूर करती? यह बात साफ़-साफ़ बतायी जाये कि पिछड़े इलाक़ों में, जैसे पूर्वी उत्तरप्रदेश, दक्षिण-पूर्व मध्यप्रदेश में प्रतिव्यक्ति विकास के लिए अधिक खर्च करना होगा. इस अखिल भारतीय दर्शन को समझाने और प्रचारित करने की आवश्यकता है, जिस से क्षेत्रीय नेतृत्व का विषैला प्रभाव हम को टुकड़े-टुकड़े होने से बचा सके. क्यों नहीं **दिनमान** भिन्न-भिन्न प्रदेशों के आर्थिक हालात को उजागर करता, जिस से एक समग्र न्यायिक दृष्टिकोण उपज सके, जो विकास की प्राथमिकताओं को अखिल भारतीय परिवेश में स्थिर करें. **—पी. एस. आगरकर, जयपुर**

[इसी अंक में आप आर्थिक योजनाओं के परिणामों का विश्लेषण पढ़ेंगे. **—सं]**

समाज का उपेक्षित वर्ग और हड़ताल : दिनमान ६ अक्तूबर के अंक में केंद्रीय सरकारी कर्मचारियों के आंदोलन के संदर्भ में किया गया विवेचन अपूर्ण ही रह जायेगा यदि हम एक महत्वपूर्ण और मुख्य पक्ष 'साधारण जनता' को भुला देंगे. मेरा तात्पर्य गाँव के खेतिहर तथा शहरों के श्रमजीवी मज़दूर, दूकान-कर्मचारी, कुली तथा रिक्शा-चालकों से है, जिन की आर्थिक स्थिति बद से बदतर हो रही है. इस के साथ उन्हें भी सम्मिलित किया जाना चाहिये जिन की दैनिक आय स्व० लोहिया जी के अनुसार तीन आने या साढ़े सात आने तक सीमित है . क्या इन वर्गों की 'न्यूनतम' आवश्यकतायें भी पूरी हो पा रही हैं ? इन बेचारों का कोई संगठन नहीं है, इन्हें कोई चीन या रूस भक्त नेता उपलब्ध नहीं है, अथवा इन्होंने अभी तक किसी प्रकार की उच्छृंखलता-अराजकता उत्पन्न नहीं की है —तो क्या इन को भोजन देने का उत्तर-दायित्व सरकार पर नहीं आता ? **—धीरेंद्र वर्मा, कासगंज (एटा)**

पिछले सप्ताह

(३ अक्तूबर से ९ अक्तूबर १९६८ तक)

देश

३ **अक्तूबर :** चंद्रमा की परिक्रमा करने वाला रूसी जोंद-५ का बंबई आगमन.

४ **अक्तूबर :** जयपुर में छात्रों द्वारा रेल-पटरियों को उखाड़ने की वारदातों के कारण १४० विद्यार्थी गिरफ़्तार. लोक-सभा के भूतपूर्व उपाध्यक्ष एस. वी. कृष्णमूर्ति राव का दिल्ली में देहांत.

५ **अक्तूबर :** उत्तर बंगाल में भयंकर वर्षा के कारण १५० व्यक्तियों की मृत्यु. मध्यप्रदेश की संयुक्त विधायक दल को सरकार से जनसंघ द्वारा हटने की धमकी.

६ **अक्तूबर :** स्वतंत्र पार्टी का पाँचवाँ राष्ट्रीय अधिवेशन ग़ैर-पार्टी संबंधी सरकार बनाने का प्रस्ताव पारित कर भुवनेश्वर में समाप्त.

७ **अक्तूबर :** संत अकाली दल और मास्टर अकाली दल का विलय.

८ **अक्तूबर :** सॉलिसिटर जनरल नीरेन डे भारत के नये एटॉर्नी जनरल नियुक्त. पश्चिम बंगाल की बाढ़ में मरने वालों की संख्या ७०० से भी अधिक.

९ **अक्तूबर :** केंद्रीय कर्मचारियों को बहाल करने का मामला मंत्रिमंडल द्वारा पुनः स्थगित.

विदेश

३ **अक्तूबर :** पेरू में सैनिक क्रांति. मेक्सिको में दंगों के कारण ओलिंपिक खेलों का भविष्य अनिश्चित. सोवियत नेताओं से बातचीत करने के लिए चेक कम्युनिस्ट पार्टी के प्रधान डुबचेक का मॉस्को आगमन.

४ **अक्तूबर :** पाकिस्तान के विदेशमंत्री अर्शद हुसेन द्वारा संयुक्तराष्ट्र में भारत की कड़ी आलोचना.

५ **अक्तूबर :** संयुक्तराष्ट्र में अर्शद हुसेन के आरोपों का भारतीय प्रतिनिधि-मंडल के नेता बलिराम भगत द्वारा खंडन. सोवियत संघ की सेना चेकोस्लोवाकिया में अस्थायी तौर पर बनाये रखने के लिए चेक नेता सहमत. न्यूयॉर्क में पुनः जातीय दंगों का विस्फोट.

६ **अक्तूबर :** म्यूनिख में लॉन टेनिस डेविस कप के अंतःक्षेत्रीय सेमिफ़ाइनल में भारत ३-२ से विजयी.

७ **अक्तूबर :** चे ग्वेवारा की पहली बरसी पर आर्जेंतीना स्थित बोलिविया दूतावास पर छात्रों का आक्रमण.

८ **अक्तूबर :** संयुक्तराष्ट्र में पश्चिम एशिया समस्या हल करने के बारे में इस्राइल का एक नौसूत्री प्रस्ताव.

९ **अक्तूबर :** ब्रिअफ़्रा द्वारा नाईजीरिया संघ के सैनिक मार डालने का दावा.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पत्रकार संसद

अन्न की आत्मनिर्भरता; नासिर की नये प्रयोग की खोज

भारत में अच्छी फ़सल होने के समाचारों का देश से कहीं अधिक विदेशों में स्वागत हो रहा है और इस संदर्भ में भारत की आर्थिक स्थिति का नये सिरे से विश्लेषण किया जा रहा है . कुछ पत्रों की राय में अच्छी फ़सल होने के बावजूद अन्न के मामले में भारत को अभी अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ेगा, अन्यथा वह अच्छी फ़सलों का भी लाभ नहीं उठा सकेगा. अमेरिकी पत्र **वर्ल्ड** में भारत की खाद्य-स्थिति पर एक लंबा लेख प्रकाशित हुआ है, जिस में इस वर्ष की अच्छी फ़सल के संदर्भ में भारत की अन्य समस्याओं की चर्चा है. लेख में कहा गया है—

अभी कुछ दिन पहले तक भारत से अन्न की कमी और अकाल के बुरे समाचार मिल रहे थे और हमें स्थिति का सामना करने के अनेक उपायों पर सोचना पड़ रहा था. बहुत अधिक जनसंख्या वाले इस अल्प विकसित देश में अकाल की स्थिति अवश्यम्भावी थी और अमेरिका तथा फ़ालतू अनाज वाले अन्य देश अकाल की इस स्थिति से निबटने के लिए बहुत बड़ी मात्रा में अनाज तेज़ी से भारत भेजने की तैयारी कर रहे थे. अब भारत में अच्छी फ़सल होने का शुभ समाचार है. पर उसे उतना महत्त्व नहीं दिया जा रहा है जितना दिया जाना चाहिए. लेकिन भारत के सामने अब भी एक समस्या है. यह समस्या अन्न की कमी की नहीं है, लेकिन फ़सल के अनाज को सुरक्षित रखने की है. भारत के इतिहास की यह सब से अच्छी फ़सल होगी.

भारतीय तो इतनी बढ़िया फ़सल होने को भाग्य की बात ही कहेंगे, पर इस का मुख्य कारण तो अच्छी वर्षा है. इस से भी महत्त्व-पूर्ण बात तो 'कृषि-क्रांति' है, जो ऐसे देश में हो रही है जहां पहले बैलगाड़ियों से खेती होती थी. अब बैलगाड़ी की जगह खेती के आधुनिक तरीक़ों ने ले ली है. भारतीय किसान मशीनों से खेती करना और रासायनिक खाद का उपयोग करना सीख गया है. अमेरिकी अनुसंधान के फलस्वरूप भारत में गेहूं और चावल की नयी क़िस्म की बुआई हुई है, जिस की उपज पहले से कहीं अधिक होती है.

भारत की अन्न की कमी की मुसीबत अभी दूर नहीं हुई है. अभी भारत को बाहर से अनाज मंगाने की जरूरत पड़ती रहेगी. भारत जब तक अपनी बढ़ती हुई जनसंख्या पर नियंत्रण रखने में सफल नहीं हो जायेगा अन्न के अभाव की उस की बुनियादी समस्या बनी रहेगी.

इन सब बातों के बावजूद एक उत्साहवर्द्धक बात यह है कि आधुनिक तरीक़े भारत जैसे पिछड़े देशों में धीरे-धीरे जड़ पकड़ते जा रहे हैं और इन तरीक़ों का सही इस्तेमाल सिखा कर हम इन देशों की बहुत मदद कर सकते हैं.

इसी प्रश्न पर ब्रितानी पत्र **इकॉनॉमिस्ट** का मत है कि इस वर्ष की फ़सल को भारतीय जितना अच्छा मान रहे हैं वास्तव में वह उतनी अच्छी नहीं है. पत्र ने अपने भारत स्थित संवाददाता का जो विवरण प्रकाति किया है उस में भारत की समूची खाद्य-स्थिति का विश्लेषण किया गया है. इस पत्र का मत है—

गर्मियों में जो फ़सल बोयी गयी थी उस की कटाई अब शुरू होने ही वाली है. पर भारतीयों को बहुत अच्छी फ़सल होने की भ्रांति अभी से होने लगी है. सब से अजीब व्यवहार मौसम का रहा है. कहीं-कहीं तो इतनी वर्षा हुई है कि बाढ़ ही आ गयी है. पश्चिम बंगाल और गुजरात ऐसे क्षेत्रों में प्रमुख हैं. उधर आंध्र, मैसूर और पश्चिमी राजस्थान राज्यों को सूखे का सामना करना पड़ा.

केंद्र सरकार को आशा है कि इस वर्ष उसे ६५ लाख टन अनाज आयात करना पड़ेगा. इस में सारा अनाज अमेरिकी सहायता के रूप में आयेगा. केवल पांच लाख टन व्यावसायिक तौर पर ख़रीदा जायेगा. अमेरिका ने कोई ३५ लाख टन अनाज भेजने के समझौते पर तो हस्ताक्षर कर दिये हैं. बाकी अनाज के समझौते पर, जो वर्ष की दूसरी छमाही में आना है, अभी राष्ट्रपति जॉनसन की स्वीकृति होनी है. भारत के उप-प्रधानमंत्री श्री मोरारजी देसाई ने अपनी हाल की अमेरिका यात्रा में राष्ट्रपति जॉनसन और विदेशमंत्री श्री डीन रस्क से संभवतः इसी प्रश्न पर बातचीत की है.

अब से दिसंबर तक के महीनों में भारत सरकार की मुख्य समस्या केरल और पश्चिमी बंगाल जैसे कमी वाले राज्यों को अनाज बराबर भेजते रहने की है. इन दोनों ही राज्यों में चावल अधिक खाया जाता है और चावल ही ऐसा अनाज है जिस की उपज भारत में कम हुई है. पिछले दस वर्षों में चावल की उपज में आधी या एक प्रतिशत से भी कम की वृद्धि हुई है. गेहूं तो अमेरिका से सहायता के रूप में भी मिल सकता है, पर चावल भारत को विदेशों से नक़द रक़म दे कर ख़रीदना होता है. केंद्र सरकार केरल और पश्चिम बंगाल को चावल की जगह गेहूँ स्वीकार करने के लिए राज़ी करने का बराबर प्रयत्न करती रही है. लेकिन दोनों ही राज्य इस का विरोध करते हैं. केरल राज्य की कम्युनिस्ट सरकार ने हाल ही में बहुत क्रोधित हो कर यह माँग की थी कि या तो केंद्र राज्य के लिए चावल का इंतज़ाम करे वरना जो विदेशी मुद्रा राज्य कमाता है उस से उसे बाहर से चावल आयात करने की अनुमति दी जाये ।

हालाँकि, केरल राज्य की यह माँग संघीय सिद्धांतों के बिलकुल विरुद्ध है पर यह केंद्र के लिए एक समस्या बन गयी है. केंद्र कमी वाले राज्यों की माँग उस समय तक पूरी नहीं कर सकता जब तक कि फ़ालतू अन्न वाले राज्य अपना बचा हुआ अनाज छोड़ने के लिए राज़ी नहीं हो जाते. आयात से सहायता ज़रूर मिलती है, पर इस से समस्या का समाधान तो नहीं होता. चाहे जो भी है भारत १९७१ तक अन्न के मामले में आत्मनिर्भर बनने का निश्चय कर चुका है. इस का मात्र उपाय यही है कि देश के भीतर अनाज की सप्लाई पर केंद्र का कड़ा नियंत्रण हो, जिस का साफ़ मतलब यह है कि राज्य क़िफ़ायत से काम लें. इस के लिए संभवतः न तो कमी वाले राज्य और न फ़ालतू अनाज वाले राज्य सहमत होंगे. अगर इसे केंद्र और राज्यों के संबंधों का सवाल बनाया गया तो राज्य इस समय अपने लिए अधिकाधिक अधिकारों की माँग कर रहे हैं.

नासिर का नया लोकतंत्र

पश्चिम एशिया की स्थिति अब फिर चिंता उत्पन्न कर रही है. अरब देशों और इस्राइल में जितनी तेज़ी से तनाव बढ़ रहा है शांति-प्रयत्न भी उसी गति से तीव्र हो रहे हैं. पर दोनों पक्षों में दिनोंदिन बढ़ती उत्तेजना इन प्रयत्नों को सफल नहीं होने दे रही है. वर्तमान स्थिति के संदर्भ में इधर तो अरब देशों और उधर इस्राइल की आंतरिक राज-

विश्व की बढ़ती हुई आबादी पर ल' पेली का व्यंग्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नीति भी नया मोड़ ले रही है. अरब देशों में राष्ट्रपति नासिर इस समय समूचे अरब जगत् के भाग्य-विधाता हैं. इस्राइल के प्रति अरब देशों के विरोध को संगठित दिशा देने के साथ-साथ उन्हें अपने देश की शासन-व्यवस्था में कुछ महत्त्वपूर्ण परिवर्त्तन लाने पड़ रहे हैं. इन आंतरिक परिवर्त्तनों का संकेत ब्रितानी पत्र **गार्डियन** में प्रकाशित एक लेख से मिलता है, जो काहिरा स्थित इस पत्र के संवाददाता **डेविड हर्स्ट** ने लिखा है. इस लेख में कहा गया है—

राष्ट्रपति नासिर के जिस नये लोकतांत्रिक प्रयोग का आनंद अब तक मिस्र के लोग उठा रहे थे उन्हें अब दमन के उसी पिछले दौर में पहुँचने की आशंका होने लगी है.

यह दौर यदि आया तो शायद ज़बर्दस्त दमन का दौर होगा. सरकार को निकट भविष्य में जिस कड़ी परीक्षा की घड़ी से गुज़रना होगा उस से बचाने के लिए पुलिस को विशेष रूप से ट्रेनिंग दी जा रही है. राष्ट्रपति नासिर इधर तो इस्राइल के साथ विवाद का कोई शांतिपूर्ण निपटारा चाहते हैं और उधर देश में उदारवादी कार्यक्रम लागू करना चाहते थे. पर इन दोनों बातों का साथ-साथ चलना उन के लिए मुश्किल हो रहा है. उदारवादी कार्यक्रम में बहुत से खतरे हैं, जो अक्सर इस तरह के तानाशाह शासन में हुआ करते हैं. लोगों को भाषण की आज़ादी देने का मतलब होगा सरकार को किसी भी ऐसे प्रश्न पर चुनौती दे देना जिस का वह निबटारा नहीं कर सकती. इन में मुख्य प्रश्न तो फ़िलीस्तीन का ही है. श्री नासिर ने इस बारे में अब तक जो ढील दी है उस से उन्हें स्पष्ट हो गया है कि बहुत से लोग हैं जो इस सवाल को ले कर तूफ़ान खड़ा कर सकते हैं. नासिर इस बात की पूरी-पूरी कोशिश कर रहे हैं कि उन्हें देश के सामने सीधे यह बात न रखनी पड़े कि इस्राइल के साथ युद्ध और देश में दमन इन दो में से एक का चुनाव उन्हें करना है. लेकिन अब लगता है श्री नासिर को देशवासियों के सामने यही बात रखनी पड़ेगी. इस बात की भी संभावना है, जैसा कि कुछ मिस्रियों का विश्वास है, कि नये लोकतंत्रीय आधार पर अपनी स्थिति को नये सिरे से दृढ़ बनाने के लिए नासिर संभवतः स्वतंत्र चुनावों की अनुमति दें.

राष्ट्रपति नासिर अपने लोकतंत्र की कमियों से अच्छी तरह वाक़िफ़ हैं इन कमियों को पूरा करने के लिए उन्हें अपने यहाँ की जनता को किसी और ढंग से प्रभावित करना है. इन में से एक ढंग तो सेना के लिए स्वेज नहर जैसा लड़ाई का कोई मौक़ा ढूँढ़ निकालना है. इस तरीक़े से बाहरी दुनिया पर रोब डालने के साथ-साथ देश के लोगों का हौसला ऊँचा रखने में भी मदद मिलती है.

भारतीय पत्रों की कार्यकुशलता

ब्रितानी पत्र **लंदन टाइम्स** ने विश्व के समाचारपत्रों पर अपना एक परिशिष्ट निकाला है, जिस में सीमित साधनों के रहते हुए भी भारतीय समाचारपत्र-उद्योग की कार्यकुशलता और धीमी गति से ही सही, उस की अब तक की प्रगति की सराहना की गयी है.

पाकिस्तान के समाचारपत्रों से तुलना करते हुए इस पत्र के दिल्ली स्थित संवाददाता पीटर हैज़ेलहर्स्ट ने अपने एक लेख में कहा है कि भारत के पड़ोसी पाकिस्तान के समाचारपत्र सरकारी सूचनाओं को प्रकाशित करने की एजेंसी मात्र हैं, जब कि भारतीय समाचार पत्रों को स्वाधीनता अधिक है और इस कारण उन में ज़िम्मेदारी और सतर्कता की भावना अधिक पायी जाती है. यह बड़ी उत्साहजनक बात है, पर भारत के आकार और व्यापक क्षेत्र को देखते हुए संपर्क के एक बहुत बड़े साधन के रूप में अभी भारतीय समाचारपत्रों को अपनी ज़िम्मेदारियाँ निभानी हैं. भारतीय समाचारपत्रों में अभी नगरों के पाठकों के लायक ही पाठ्य सामग्री मिलती है. राष्ट्रीय संपर्क माध्यम के रूप में गाँवों के लोगों के लिए ये समाचारपत्र अभी बहुत महत्त्वपूर्ण नहीं बने हैं.

पाकिस्तानी समाचारपत्रों के बारे में इस लेख में कहा गया है कि वैसे क़ानूनी तौर पर पाकिस्तानी समाचारपत्रों पर सीधे कोई नियंत्रण नहीं है, पर अप्रत्यक्ष रूप से सरकारी दबाव और धमकियों ने पाकिस्तानी समाचारपत्रों को ऐसी स्थिति में ला दिया है कि वे स्वयं अपने ऊपर सेंसर लगा बैठे हैं. बड़े-बड़े समाचारपत्रों और समाचार एजेंसियों पर आर्थिक कारणों से सरकार का अप्रत्यक्ष रूप से नियंत्रण है. राजनैतिक समाचार सरकारी नेताओं के भाषणों तक ही सीमित रहते हैं और विरोधी पक्ष के विचारों की एकदम उपेक्षा की जाती है.

ईरान की आर्थिक प्रगति

अल्प विकसित देशों में ईरान की आर्थिक प्रगति को संसार के अर्थ-विशेषज्ञों ने आश्चर्यजनक बताया है. चौथी पंचवर्षीय योजना के प्रथम वर्ष की समीक्षा के संदर्भ में एक अमेरिकी अर्थ विशेषज्ञ ने अपने एक लेख में कहा है—

ईरान का आर्थिक आयोजन पिछले दस वर्षों में भले ही सुनियोजित न रहा हो पर उस ने इस आयोजन के अंतर्गत भी काफ़ी प्रगति की है. पर अब ईरान के नेता सुनियोजित आर्थिक आयोजन में विश्वास कर रहे हैं और अनुभव करते हैं कि पिछले एक दशक की आश्चर्यजनक प्रगति के बावजूद अभी उन्हें नयी चुनौतियों का सामना करना है और पंचवर्षीय योजना से ही वे अपना लक्ष्य प्राप्त कर सकते हैं.

प्रेस जगत्

पत्रों की हड़ताल और जनमत

देश के प्रमुख समाचारपत्रों की हड़ताल के दिनों में प्रकाशित होते रहने वाले पत्रों में विश्व की प्रमुख घटनाओं पर लोकमत को दिशा विशेष देने के प्रयत्न स्पष्ट नज़र आ रहे थे. उन दिनों राजधानी से प्रकाशित पत्रों में से एक अंग्रेज़ी दैनिक में तो इन प्रयत्नों के फलस्वरूप कुछ भीतरी परिवर्त्तन भी आये. चेकोस्लोवाकिया के प्रश्न पर इस पत्र की नीति को एक पक्षीय बनाये रखने के लिए इस पत्र के संपादकीय विभाग को निरंतर दबाव में काम करना पड़ा. पत्र-संचालकों के विचारों से भिन्न विचार की अभिव्यक्ति संपादकीय विभाग के कर्मचारियों के लिए अनुशासन-हीनता बन गयी, जिस के लिए किसी को लंबी छुट्टी पर तो किसी को सदा के लिए समाचार-पत्र से जाना पड़ा. बड़े, और विचार व्यक्त करने की अपेक्षया अधिक स्वाधीनता रखने वाले पत्रों का प्रकाशन जितने दिन स्थगित रहा उतने समय लोकमत प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित रहा.

इस हड़ताल में देश के २० बड़े दैनिक पत्र, आधे दर्जन बड़े साप्ताहिक पत्र और कई विशेष रुचि के सामयिक पत्रों का प्रकाशन स्थगित रहा. इस से भी अधिक विचित्र बात यह हुई कि जिन शर्तों पर हड़ताल अंत में समाप्त हुई उन्हीं शर्तों पर हड़ताल पहले से खत्म नहीं करवायी गयी. इस हड़ताल की एक विशेषता यह भी रही कि हड़ताल के अंतिम सप्ताहों में कर्मचारी और मालिक किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो गये कि यह हड़ताल खत्म की जाये तो कैसे. दोनों को शीघ्र ही पता चल गया कि इस हड़ताल से जनमत का लोप होने से जनता की हानि और सत्तारूढ़ दल की सरकार की पाँचों घी मे हैं.

बड़ पत्रों की हड़ताल से खास कर दिल्ली में दो अंग्रेज़ी दैनिक पत्रों और एक हिंदी दैनिक पत्र की बन आयी. हज़ारों की जगह लाख से ऊपर इन की दैनिक प्रतियाँ छपने-बिकने लगीं. मुश्किल से मिलने वाले विज्ञापन अनायास प्राप्त हो गये. सत्तारूढ़ दल की सरकार पूर्णतः आश्वस्त हो कानों में तेल डाल कर सुख की नींद सोयी. प्रकाशित होने वाले पत्रों के पीछे न जनमत का विपुल बल था और न वार की तीक्ष्णता और उद्दण्डता. दरअसल सरकार को इतना चैन पिछले २०-२१ बरसों में कभी नहीं नसीब हुआ.

पत्र-पत्रिकाओं की हड़ताल की व्यापकता का अंदाज़ साथ के आँकड़ों से मिलता है.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साथ ही यह भी मालूम होता है कि हड़ताल की ६० दिनों की अवधि में किस प्रकार दो करोड़ से अधिक पाठक-पाठिकाएँ अपने प्रिय पत्र-पत्रिकाओं से मिलने वाली जानकारी से वंचित रहे. इस माध्यम के अभाव में न वे संसद की दोनों सभाओं में होने वाली बहस की जानकारी प्राप्त कर सके और न दुनिया में उग्र और अंध राष्ट्रवाद की वेदी पर समाजवादी चेकोस्लोवाकिया रूपी अजापुत्र की बलि चढ़ाने के पूरे समाचार और आलोचनाएँ पढ़ सके.

हड़ताल की अवधि में बंद १८ बड़े दैनिकों में हिंदी के तीन बड़े दैनिक, मराठी के भी तीन बड़े दैनिक, बंगला का एक सब से बड़ा दैनिक और गुजराती का भी एक बड़ा दैनिक तथा नौ बड़े अंग्रेजी दैनिक थे. साप्ताहिक पत्रों में हिंदी के ही तीन साप्ताहिक थे, हालाँकि समाचार साप्ताहिक 'दिनमान' केवल एक ही था. हड़ताल के सिलसिले में बंद पत्र-पत्रिकाओं की प्रेस रजिस्ट्रार की १९६८ की रिपोर्ट से ली गयी ग्राहक-संख्या से इस हड़ताल की व्यापकता का अंदाज़ा लग जाता है. अंग्रेज़ी के लगभग ४३ लाख ५३ हज़ार अनुमानित पाठक संख्या वाले और भारतीय भाषाओं के लगभग ५६ लाख ९७ हज़ार पाठक-संख्या वाले पत्र बंद रहे. हड़ताल के सिलसिले में बंद पत्र-पत्रिकाओं की यह ग्राहक-संख्या प्रेस रजिस्ट्रार की १९६८ की रिपोर्ट से ली गयी है. ज़ाहिर है कि इस में पिछले पौने दो वर्षों में कुछ नहीं तो १० प्रतिशत की वृद्धि ज़रूर हुई होगी . अनुमानित पाठक-संख्या ग्राहक-संख्या की दैनिक पत्रों की पाँच गुनी और पत्रिकाओं की ग्राहक-संख्या की सात गुनी कूती गयी है. इस प्रकार हड़ताल के दिनों में जानकारी से वंचित पाठकों की संख्या दो करोड़ होगी.

टेलीविज़न

पाक-भारत संघर्ष की एक याद

आकाशवाणी के टेलीविज़न विभाग को पिछले कुछ वर्षों में पश्चिम जर्मनी से इतनी व्यापक और मौलिक सहायता मिली है कि अब वह एक आधुनिक टेलीविज़न संस्थान के अनुरूप योजनाएँ बनाने में समर्थ हो गया है. यह सहायता कैमरों और मशीनों के रूप में मिली थी और इस पर काम करने वाले भारतीयों की सहायता के लिए कुछ वर्षों के वास्ते जर्मन टेलीविज़न के श्री डियर्क्स भारत में रहे थे. हाल ही में वह अपना कार्यकाल समाप्त कर पश्चिम जर्मनी वापस चले गये हैं—शायद जल्दी ही फिर आयेंगे, इस बार अमरनाथ की गुफ़ा पर एक फ़िल्म बनाने के लिए.

भारत के संबंध में यह उन की पहली फ़िल्म नहीं होगी. जनजीवन और राजनैतिक घटनाचक्र को ले कर डियर्क्स ने जर्मन टेलीविज़न को पचासों फ़िल्में भारत से भेजी हैं, किंतु उन के प्रिय विषय युद्ध पर उन्हें अपना बहुमूल्य फ़िल्म संकलन पाकिस्तानी अधिकारियों के हाथों सौंपना पड़ा था.

दिनमान को उन्होंने बताया कि जिस समय पाकिस्तान ने युद्ध आरंभ किया मुझे आदेश मिला कि मैं तुरंत वहाँ पहुँचूं. कराची या पीछे के मुकामों पर जा कर काम करना मेरा लक्ष्य नहीं था. मुझे ठीक अगाऊ मोर्चे तक पहुँचना था. जिस समय मैं किसी प्रकार पाकिस्तानी सेना के वाहनों में चढ़ता-उतरता मोर्चे तक पहुँचा ठीक उसी समय भारत ने अपूर्व युद्ध-नीति दिखा कर दूसरा मोर्चा खोल लिया. पाकिस्तानी सेना को तुरंत अपना एक बड़ा अंश दूसरे मोर्चे पर भेजने का शब्दे मिला. उन्हें गुमान भी नहीं था कि एकाएक आधी सेना दूसरी ओर घुमानी पड़ेगी. तब एक ही सड़क पर दो ओर जाती हुई सैनिक गाड़ियों की धकापेल शुरू हुई. रसद और हथियारों का बँटवारा करते हुए पाकिस्तानी सेनापति बदहवास नज़र आने लगे और उन के अधीन काम करने वाले सैनिक झुंझलाये हुए. मुझे भी वापस कराची पहुँचना था और वापस पहुँचने का एक ही रास्ता था कि लौटती हुई पाकिस्तानी सेना की किसी गाड़ी पर फिर सवार हो जाऊँ. लेकिन इस के पहले मुझे भारतीय रॉकेटों और बमों के अचूक निशानों में से गुज़रते हुए एक ही साथ विचित्र और भयंकर दृश्यों को देखने और अपनी जान बचाने के लिए भागने का दोहरा अनुभव प्राप्त हुआ. निशाने अचूक ज़रूर थे, शायद मैं ही एक ऐसा निशाना था जिस पर भारतीय गोलियाँ ठीक नहीं बैठीं. लौट कर कराची में मैंने 'बत्ती गुल' पायी. अपने होटल में मोमबत्ती जला कर मैं अपना वृत्तांत टाइप कर ही रहा था कि किसी ने दरवाज़ा खटखटाया और पहले तो मोमबत्ती की रोशनी को ले कर विवाद हुआ, जिस में मेरा तर्क था कि मैंने बीसों युद्ध देखे हैं और मुझे मालूम है कि यह रोशनी घर से बाहर नहीं जा रही है. इस के बाद वे लोग असली बात पर आये और उन्होंने मेरी फ़िल्में, कैमरे और टिप्पणियाँ ज़ब्त कर लीं. इस माल को छुड़ाने की बहुत कोशिशें की गयीं, लेकिन सब बेकार हुईं. ज़ाहिर है कि पाकिस्तान यह सामग्री प्रकाशित या प्रचारित होने नहीं दे सकता था, क्यों कि इस में उस के सैनिकों की भगदड़ और भारतीय युद्ध-कौशल का प्रमाण मौजूद था.

डियर्क्स का ख़्याल है—और यह बात वह अपने उस अनुभव के आधार पर कहते हैं जो उन्होंने वीएतनाम से ले कर गोआ तक की सैनिक कार्रवाई के प्रत्यक्षदर्शी बन कर पायी है, कि भारतीय सैनिकों के पास भारत-पाक संघर्ष में साज़-सामान चाहे इतना आधुनिक नहीं रहा जितना पाकिस्तान के पास था लेकिन पाकिस्तान के पास संगठन, अनुशासन और शिक्षा की भयंकर कमी थी. पाकिस्तानी सेना में जाने कहाँ-कहाँ से पकड़ कर लड़ने के लिए लाये हुए देहाती क़बायली थे, जिन्हें बंदूक पकड़ना सिखा दिया गया था और बता दिया गया था कि अल्ला के नाम पर मारना और मर मिटना है. इन में से अधिकांश अपढ़ थे, जब कि भारतीय सेना में साधारण सिपाही का भी शिक्षा-स्तर काफ़ी अच्छा था.

डियर्क्स ने भारतीय टेलीविज़न के साथ भी बहुत-सी छोटी-बड़ी फ़िल्में बनायी हैं, जो समय-समय पर यहाँ दिखायी जाती रही हैं.

डियर्क्स : गोआ में फ़िल्म और प्रतापसिंह कैरों से भेंट

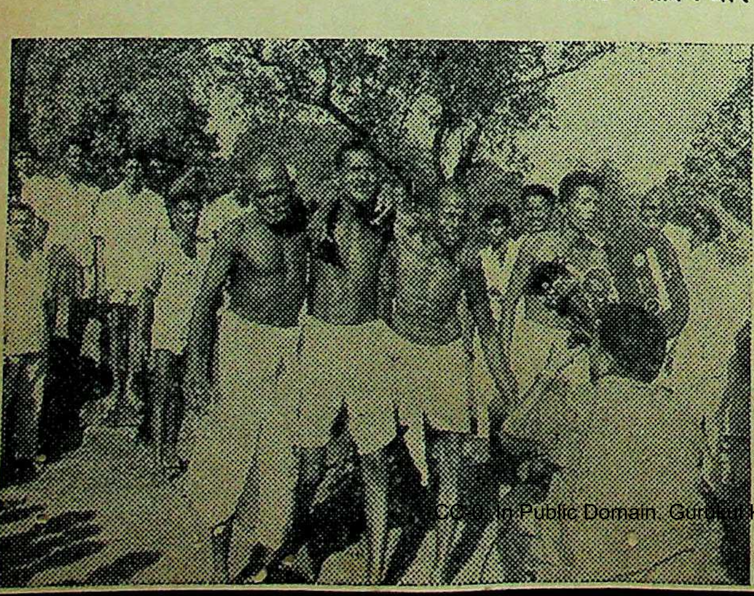

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चरचे और चरखे

हाँ या नहीं ?

रूसी कवि येव्तुशेंको ने विदेश से आये इस समाचार के बारे में अपनी राय देने से इनकार कर दिया कि उन्होंने सोवियत सरकार को एक पत्र लिख कर चेकोस्लोवाकिया पर रूसी आक्रमण का विरोध किया है. सुना गया है कि इस पत्र में उन्होंने रूस की इस हरक़त को एक बड़ी भूल कहा है.

येव्तुशेंको से जब पूछा गया कि सचमुच उन्होंने ऐसा कोई पत्र लिखा है या नहीं तो आवाज़ में ग़ुस्सा भर कर वह टेलीफ़ोन पर बोले, "मैं ने कोई पत्र नहीं भेजा है." यह पूछने पर कि ऐसा कोई पत्र लिखा गया था या नहीं येव्तुशेंको ने साफ़ कह दिया कि टेलीफ़ोन पर होने वाली वार्त्तालाप, पुर्ज़ों की ख़राबी की वजह से, अस्पष्ट सुनाई दे रही है और कोई बात उन के पल्ले नहीं पड़ रही. इस के बाद टेलीफ़ोन के पुर्ज़ों को सुधार कर फिर से येव्तुशेंको से संपर्क स्थापित करने के सारे प्रयास व्यर्थ ही गये, क्यों कि येव्तुशेंको की ओर से कोई जवाब ही नहीं मिला.

कुत्तों के प्रेमी

नेपल्स के नगर निगम में काम करने वाले पशु-चिकित्सक डॉ. कर्राडो वोल्पे ने पिछले महीने २४४ कुत्तों को गैस की कोठरी में डाल कर उन के प्राण ले लिये. एक कुत्ते को रैबीज़ की बीमारी हो जाने की ख़बर पाते ही डॉ. वोल्पे ने एक के बाद एक कुत्तों को मारना शुरू किया. पर इस का उन्हें भारी मूल्य चुकाना पड़ा. लावारिस कुत्तों को आश्रय देने वाली एक स्त्री ने उन पर गोली चला कर बुरी तरह घायल कर दिया. ४५ वर्षीय पशु-चिकित्सक जिस समय कुत्तों के ख़ाली अनाथालय के सामने अपनी गाड़ी में बैठे थे तो उन पर बार किया गया.

डॉ. वोल्पे पर गोली चलाने वाली स्त्री को लावारिस कुत्तों से बेहद प्यार था. उस ने इन कुत्तों के लिए जो आश्रम बनाया था उसे डॉ. वोल्पे ने, रैबीज़ फैलने के भय से, बंद करवाने की आज्ञा दी थी. क़ायदे के अनुसार तो इस बीमारी की जाँच के लिये हर कुत्ते को छह से आठ महीने तक निरीक्षण के लिये ज़िंदा रखना चाहिए, पर डॉ. वोल्पे ने इस बात की परवाह न करते हुए जो भी कुत्ता हाथ आया उसे ही मरवा दिया.

वैसे नेपल्स में हर वर्ष, गर्मी के मौसम में, रैबीज़ का आतंक फैलता है. इस वर्ष इस बीमारी की पहली ख़बर मिलते ही सारे लावारिस कुत्तों को मार डालने का हुक्म दे दिया गया. इटली में इस समय कुत्तों के विभिन्न प्रेमी २५०००० लावारिस कुत्तों को पालते हैं और मज़े की बात तो यह है कि कुत्तों के ये पालक अधिकांश स्वयं ही लावारिस और बिना किसी ठिकाने के होते हैं.

महारानी के व्यक्तिगत जीवन की झाँकियाँ

ब्रितानी दैनिक समाचारपत्र 'डेली एक्सप्रेस' ने महारानी एलिज़ाबेथ द्वितीय की लेटी हुई मुद्रा में लिये गये जो चित्र छापे हैं उन से ब्रिटेन का राजकीय परिवार तनिक भी प्रसन्न नहीं है.

चार वर्ष पहले, १९६४ में, महारानी के पुत्र एडवर्ड के जन्म के बाद लिये गये ये चित्र सब से पहले फ़्रांसीसी सचित्र पत्रिका 'पेरिस मैच' के हाथ लगे. इस पत्रिका के वितरकों का कहना है कि इन चित्रों की वजह से 'पेरिस मैच' की माँग दुगुनी हो जायेगी और उन्हें अधिक प्रतियाँ छापनी पड़ेंगी.

वैसे महारानी की कभी यह इच्छा न थी कि उन के ये व्यक्तिगत चित्र सब के सामने आयें. पर ब्रिटेन के बाहर जब ये पहली बार छपे तो ब्रितानी जनता में कुछ भ्रांतियाँ उत्पन्न हुईं, जिन्हें दूर करने का एकमात्र यही उपाय था कि उन्हें भी उन चित्रों को देखने का मौक़ा दिया जाये. इन दो चित्रों में से एक में अपने परिवार से घिरी हुई महारानी ने नवजात पुत्र को उठा रखा है और दूसरे में वह पलंग पर लेटी हुई हैं. कहते हैं कि अब तक राजकीय परिवार के जितने चित्र लिये गये हैं उन में से ये चित्र निहायत ही बढ़िया हैं. अनुमान लगाया जाता है कि ये चित्र राजकुमारी ऐन ने लिये होंगे, जो रानी के सपरिवार चित्र में उपस्थित नहीं हैं. बकिंगहम पैलेस के एक प्रवक्ता का कहना है कि 'क्यों कि ये चित्र महारानी की निहायत ही व्यक्तिगत घड़ियों को दिखाते हैं इस लिए महारानी उन का प्रकाशित न होना ही पसंद करतीं. इस लिए और पत्रों में इन के प्रकाशन की अनुमति हम नहीं दे सकते.

'डेली एक्सप्रेस' ने ये चित्र पेरिस से प्राप्त करने के बाद बकिंगहम पैलेस में दिखाये, पर उन के प्रकाशन के बारे में वहाँ से क्या राय आयी, इस बारे में कुछ भी नहीं कहा गया. इधर 'पेरिस मैच' के लंदन कार्यालय के वक्तव्य के अनुसार इन सुंदर चित्रों को छापने में कोई दोष नहीं. एक ब्रितानी ने, जिस का नाम गुप्त रखा गया, इन चित्रों को पेरिस के कार्यालय में पहुँचाया. इंग्लैंड में 'पेरिस मैच' के वितरकों का कहना है कि यदि पेरिस से इन चित्रों वाली प्रतियाँ आ जाएँ तो हम उन के वितरण के लिए राज़ी हैं. छपे चित्रों का मूल चित्रों की प्रतियाँ होने में कोई संदेह नहीं. इन के नेगेटिव भी उपलब्ध नहीं है. ये किसी ग़ैर-पेशेवर द्वारा लिये गये हैं. अब रानी के चित्र समेत पृष्ठों या उस पृष्ठ के किसी अंश को बिना अनुमति के दोबारा छापने पर प्रतिबंध लगा दिया गया है.

किफ़ायत

भारत सरकार को लगने लगा है कि उस ने ज़रूरत से ज़्यादा काम ओढ़ लिये हैं, इस लिए अब समय, शब्द और शक्ति की किफ़ायत की जानी चाहिए. लेकिन कहाँ और कैसे की जाये ? इस का एक रास्ता गृहमंत्रालय के उच्च अधिकारियों को सूझा—मंत्रिमंडल से सिफ़ारिश की गयी कि अक्तूबर मास में राष्ट्रीय महत्त्व के दो कार्यक्रम आयोजित करने पड़ते हैं, क्यों न इन को मिला कर एक कर दिया जाये. राष्ट्रीय एकता सम्मेलन (१९६१) की सिफ़ारिश पर गांधीजी के जन्म-दिवस (२ अक्तूबर) को राष्ट्रीय एकता प्रतिज्ञा आंदोलन आयोजित होता है, जो हफ़्ते भर चलता है. कुछ ही दिन बाद २० अक्तूबर को राष्ट्रीय अखंडता दिवस मनाया जाता है, जिस की शुरूआत चीनी हमले के बाद हुई थी. १९६२ में भारतीय जनता की सर्वोच्च प्रतिनिधि संस्था संसद् ने प्रतिज्ञा की थी कि राष्ट्र की अखंडता के लिए हम सारी कठिनाइयाँ उठाते हुए निरंतर संघर्ष करते रहेंगे. भारतीय जन उसी प्रतिज्ञा की पुष्टि हर साल करते थे.

दो प्रतिज्ञाएं एक साथ कर देने की बात समझ में आती है. लेकिन किफ़ायत और उपयोगिता के नाम पर प्रतिज्ञा की शब्दावली में जो हेरफेर किया गया है वह नौकरशाही की सीमित और धुंधली परिदृष्टि का परिचायक है. नये पाठ से दो महत्त्वपूर्ण टुकड़े ग़ायब हैं : 'मैं पुनः पुष्टि करता हूं· · ·' और 'संघर्ष चाहे जितना कठिन और लंबा क्यों न हो'. शायद सरकार अब यह नहीं मानती कि देशवासियों को राष्ट्रीय संकल्प की याद हर साल दिलायी जाये, कि जनता 'कठिन और लंबे' संघर्ष के लिए तत्पर रहे. शायद यह सरकार चौथे आम चुनाव के बाद तेज़ी से उभरते असंतोष से जुड़े उपद्रवों से; जो पुलिस को गोली चलाने पर मजबूर कर देते हैं, घबरा कर संघर्ष शब्द को बहिष्कृत कर देना चाहती है—जनता की स्मृति में खरोंच देना चाहती है.

अधिकारी का तर्क हो सकता है कि राष्ट्रीय एकता की प्रतिज्ञा का, जिस में आपसी झगड़े सुलझाने या आर्थिक-राजनैतिक शिकायतें दूर करवाने के लिए अहिंसा और शांतिपूर्ण उपायों पर ज़ोर दिया गया है दूसरी प्रतिज्ञा के 'संघर्ष' शब्द से मेल नहीं बैठता. यदि मंत्रिमंडल को संघर्ष के स्थानांतर का भय है—कहीं लोग अनेकता की समस्या संघर्ष से न सुलझाने लगें—तो सोचने-समझने वाले नागरिक की यह आशंका भी सही हो सकती है कि सरकार के दिमाग़ में यह दुर्घटना पहले ही घट चुकी है.

दो समारोहों या प्रतिज्ञाओं का आयोजन साथ-साथ करने से उन की समग्र उपयोगिता में जो वृद्धि होने वाली थी वह पहले से भी कम हो गयी हो तो इसे सरकारी क़िफ़ायत का नमूना मान लेने में कोई हर्ज नहीं होना चाहिए.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिस की लाठी उस की मानवता

पिछले दिनों अमेरिका के शिकागो, उत्तरी आयरलैंड के लंदनचेरी तथा दिल्ली के इंद्रप्रस्थ भवन में जो कुछ हुआ वह पुलिस के विश्व-रूप, अथवा यों कहिए कि विराट रूप का प्रतीक है.

इस का मतलब यह कदापि नहीं कि यदि लंदनचेरी की पुलिस पागलों का-सा आचरण करती है तो दिल्ली की पुलिस द्वारा बेगुनाह बाबुओं के सिर तोड़ने में क्या हर्ज है, बल्कि यह कि सारी दुनिया में इनसान विभिन्न अनुपात में अभी भी सभ्यता से कोसों दूर है.

चाहे पुलिस वाले हों अथवा साधारण नागरिक, हम में से अधिकांश प्रायः इस लिए उचित आचरण करते दिखाई देते हैं क्यों कि हम किसी न किसी बाहरी अनुशासन से बँधे हुए हैं. रास्ता चलता "भलामानुस" अगर कोई ग़लत काम नहीं करता तो प्रायः इस लिए कि उसे या तो क़ानून का भय होता है अथवा समाज की भृकुटि का. यदि यह सच है तो हम में से बहुत से लोग वास्तव में समाज तथा क़ानून द्वारा स्थापित अनुशासन की रस्सियों से बँधे हुए चोर हैं. इन रस्सियों की गाँठ ढीली कीजिए, फिर देखिये ये क्या रंग दिखाते हैं.

पुलिस का भी कुछ ऐसा ही हाल है. साधारण परिस्थितियों में यदि पुलिस का सिपाही रास्ता चलते किसी नागरिक पर डंडा चला दे तो उस के खिलाफ़ कुछ जाँच होने अथवा उस के पकड़े जाने का डर है. लेकिन जैसा कि दिल्ली के इंद्रप्रस्थ भवन में हुआ, जैसे ही अनुशासन टूटा और गड़बड़ी फैली हवलदार भी जी खोल कर डंडा घुमाता है.

अंग्रेज ने भारत पर एक ज़माने तक हुकूमत की, हमारा शोषण किया, इस के लिए हमारा अंग्रेज से नाराज होना स्वाभाविक है. लेकिन इस के बावजूद यह मानना पड़ेगा कि अंग्रेज़ ने दुनिया में बहुत-से अच्छे कामों की शुरूआत की. चाहे औद्योगिक क्रांति हो अथवा संसदीय जनतंत्र की स्थापना, अंग्रेज का इस के लिए अभिनंदन करना ही होगा. इस के साथ-साथ सामाजिक स्तर पर सभ्य व्यवहार करने का भी दावा इंगलैंड के निवासी बहुत दिनों से करते आये हैं. एकता, समता और इनसान के केवल इनसान के रूप में ही सम्मानित होने की बातें यूरोप के दार्शनिक एक ज़माने से कह रहे हैं. इस लिए एशिया के लोगों के दिल में यूरोप के निवासियों की एक ऐसी तस्वीर है जिस में उन्हें आधुनिकता के दर्शन होते हैं.

ऐसे में जब उत्तरी आयरलैंड में वहाँ के नागरिक आज भी इस लिए एक दूसरे का खून पीने पर उतारू होते हैं कि उन में से कुछ ईसाइयत के एक वर्ग के हामी हैं और कुछ दूसरे वर्ग के, तो यूरोप द्वारा सभ्यता के सब दावे खोखले दिखाई पड़ने लगते हैं.

एक समाचारपत्र में प्रकाशित विवरण के अनुसार उत्तरी आयरलैंड के रोमन कैथोलिक अल्पसंख्यक, प्राटेस्टेंट बहुमत द्वारा संचालित सरकार तथा स्थानीय संस्थाओं के विरुद्ध इस लिए प्रदर्शन कर रहे थे कि नौकरियों इत्यादि के मामले में कैथोलिक अल्प संख्यकों के साथ सौतेला व्यवहार होता है. लेकिन इस को क्या कीजे कि पुलिस विभाग में भी प्रोटेस्टेंट लोगों की भरमार है. फिर क्या था, मौक़ा मिलते ही उन्होंने अपने दिल का ग़ुबार कैथोलिक लोगों की पिटाई कर के निकाला.

और यह बात कोई पिछली सदी की नहीं. इसी अक्तूबर मास के पहले सप्ताह की बात है. पिटने वालों में उत्तरी आयरलैंड के संसद्-सदस्य श्री मे गेरार्ड फ़िट्ट भी थे.

दो-टूक बात

इंद्रलाल

अब उत्तरी आयरलैंड में गोरे काले का भी सवाल नहीं. चाहे रोमन कथोलिक हो अथवा प्राटेस्टेंट रंग दोनों की चमड़ी का सफ़ेद है. लेकिन फिर भी हाल यह है कि बेलफ़ास्ट तथा कई अन्य नगरों में भी कैथोलिक तथा प्राटेस्टेंट अलग-अलग मोहल्लों में रहते हैं. इतना ही नहीं बहुमत वाले प्राटेस्टेंट तो रहते हैं शहरों के अच्छे इलाक़ों में और बेचारे कैथोलिक गंदी बस्तियों में.

अब कोई पूछे कि इस स्थिति में तथा अमेरिका की रंग-भेद वाली स्थिति अथवा भारत की सांप्रदायिक स्थिति में क्या अंतर है? तो फिर इस सब का यही मतलब हुआ क्या कि इनसान मूल रूप से अभी भी जानवर ही है और तरक़्क़ी के सब दावे बेबुनियाद हैं.

जब-जब कोई मसीहा सूली पर टँगता है, जब-जब कोई गांधी अथवा कोई मार्टिन लूथर किंग हिंसा का शिकार होता है तो इनसान सोचता है कि उस के हाथों मानवता की यह आखिरी हत्या है. अब इतनी बड़ी क़ुर्बानी के बाद इनसान सभ्य हो जायेगा. लेकिन यह सभ्यता भी मृग-मरीचिका-सी ही कोई चीज़ दिखाई देती है.

किसी भी देश में दो-चार बड़े नेता अथवा विचारक हो जायें तो केवल उस से ही बात बनने की नहीं. पूछा जा सकता है कि फिर हर देश का हर नागरिक नेता बन जायेगा क्या ? जी नहीं. सवाल नेता बनने का नहीं, बल्कि इस बात का है कि जब तक जनसाधारण के विकास का एक न्यनतम स्तर स्थिर नहीं हो जाता तब तक सभ्यता हमारे लिए दूर की ही चीज़ रहेगी.

सभ्यता तो खैर बड़ी व्यापक परिकल्पना है, अपने देश में तो हमें अभी लगभग हर क्षेत्र में एक न्यूनतम स्तर स्थापित करना है.

इस देश में न विद्वानों की कमी है न नैतिकता का आदर्श उपस्थित करने वालों की. अमीर तो ऐसे-ऐसे हैं कि फ़ोर्ड और रॉकफ़ेलर को भी मात कर दें. क्या कला, क्या साहित्य, हर क्षेत्र में एक से एक दिग्गज पड़े हैं. लेकिन हमारी सब से बड़ी मुसीबत यह है कि किसी भी एक लाइन को ले लीजिए उस के दो सिरों के बीच की दूरी बहुत अधिक है. एक तरफ़ हैदराबाद के निज़ाम खड़े हैं तो दूसरी ओर ग़रीबी साक्षात रूप में विद्यमान है. एक तरफ़ साहित्य के आचार्य हैं तो दूसरी ओर सत्तासी प्रतिशत जनता अनपढ़ है. देश की हालत उसी दिन सुधरेगी जिस दिन प्रायः हर नागरिक पंडित भले ही न बने, लेकिन हस्ताक्षर की जगह अँगूठा नहीं लगायेगा.

इस दृष्टि से हमारी समस्या दूसरे देशों की समस्या से कहीं अधिक पेचीदा है. लेकिन आज ऐसी परिस्थितियाँ पैदा हो रही हैं कि किसी भी देश की राष्ट्रीय समस्याएँ एक मानी में अंतर्राष्ट्रीय हैं. इसी लिए जब शिकागो अथवा लंदनचेरी में कुछ होता है तो उस से हम आंदोलित होते हैं. उप-चेतन में हम अपनी तुलना भी उन लोगों से करने लगते हैं. कभी लगता है कि यदि दुनिया के बड़े विकसित कहलाने वाले देशों में ऐसा होता है तो हमारे यहाँ हो तो क्या हर्ज है. कभी हमें अपनी ही अंदरूनी समस्याओं को बाहर होने वाली इन घटनाओं के माध्यम से देखने में मदद मिलती है. लेकिन हमें शिकागो अथवा लंदनचेरी में नागरिकों के सिर पर बरसने वाले डंडे को विश्वव्यापी समस्या के विशाल संदर्भ में देख कर उस से अपने लिए हो सके तो कोई सीख ही लेने का प्रयत्न करना चाहिए.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शेख़ अब्दुल्ला पर पुनर्विचार

कश्मीर सम्मेलन के बाद गृहमंत्रालय में शेख अब्दुल्ला पर पुनर्विचार हो रहा है. विदेश से प्रधानमंत्री के वापस आते ही इस सारे प्रश्न पर ग़ौर किया जायेगा. मंत्रि-परिषद् में शेख की गतिविधियों को हमेशा ही संदेह की दृष्टि से देखा गया––किसी को शेख़ अब्दुल्ला के बारे में कोई भ्रांति नहीं रही. गृहमंत्रालय को प्राप्त रिपोर्टों से हमेशा केवल एक बात मालूम हुई कि शेख अब्दुल्ला कश्मीर में भारत-विरोधी आंदोलन को व्यापक बनाने में सक्रिय हैं. न केवल गृहमंत्री बल्कि मंत्रि-परिषद् के कुछ और सदस्य भी शुरू से ही शेख अब्दुल्ला की गतिविधियों पर किसी न किसी तरह का नियंत्रण लगाने के पक्ष में थे. कश्मीर के मुख्यमंत्री गुलाम मुहम्मद सादिक भी शेख अब्दुल्ला को कश्मीर के लिए एक ख़तरा मानते रहे. लेकिन उन का यह कहना था कि शेख अब्दुल्ला की गतिविधियों को और तरीक़ों से रोकना होगा. उन्हें दोबारा हिरासत में लेना बुद्धिमानी नहीं होगी. अब भी मंत्रिपरिषद् की इस राय में परिवर्तन नहीं हुआ है कि शेख अब्दुल्ला को हिरासत में नहीं लेना चाहिए क्यों कि इस से बहुत-सी क़ानूनी और अन्य तरह की उलझनें पैदा हो जायेंगी.

वास्तव में मंत्रिपरिषद् के सामने प्रश्न यह है कि शेख अब्दुल्ला की चुनौती का सामना कैसे किया जाये. अब तक उन के परस्पर विरोधी वक्तव्यों से उन के उन इरादों पर परदा पड़ा हुआ था जो कि भारत की प्रभुसत्ता और एकता के लिए चुनौती थे. कश्मीर सम्मेलन में उन की इस घोषणा ने कि, कश्मीर की अपनी अलग तक़दीर है जिस का फ़ैसला भारत के अंदर रह कर नहीं हो सकता, उन की इच्छाओं को बेनक़ाब कर दिया. कश्मीर सम्मेलन का वास्तविक अभिप्राय इस से उभर कर आ गया.

भारत सरकार और शेख अब्दुल्ला के बीच अब तक सब से सजीव कड़ी श्री जयप्रकाश नारायण रहे हैं. १९६६ के आखिरी महीनों में उन्होंने कश्मीर के विषय में उस समय के गृहमंत्री श्री गुलज़ारीलाल नंदा के रवैये से क्षुब्ध हो कर प्रधानमंत्री को एक पत्र लिखा था जो कि अब तक प्रकाश में नहीं आ पाया. श्री जयप्रकाश नारायण को यह शिकायत थी कि श्री नंदा अपनी हठधर्मिता और जल्दबाज़ी से कश्मीरी जन-मत को भारत के विरुद्ध कर रहे हैं. बाद में श्री जयप्रकाश नारायण को यह भी शिकायत रही कि प्रधानमंत्री ने उन के इस पत्र पर कोई कार्रवाई नहीं की.

श्री जयप्रकाश नारायण को शेख़ अब्दुल्ला के बारे में कुछ भ्रांतियाँ रही हैं जिन के कारण भारत सरकार को अक्सर उन की राय मान्य नहीं हुई. कश्मीर सम्मेलन से शेख के प्रति श्री जयप्रकाश नारायण का स्वप्न टूटा हो या न टूटा हो यह निश्चित है कि जयप्रकाश नारायण के प्रति शेख अब्दुल्ला का स्वप्न टूट गया. यह कह कर कि 'कश्मीर का फ़ैसला भारत के ढाँचे के भीतर ही हो सकता है' श्री जयप्रकाश नारायण ने शेख अब्दुल्ला का मोह भंग कर दिया. शेख अब्दुल्ला को झुंझला कर श्री जयप्रकाश नारायण के वक्तव्य का विरोध करना पड़ा.

शेख अब्दुल्ला का अब तक यह ख़याल था कि वह इस देश के उदार बुद्धिजीवी नेताओं के ज़रिए भारत सरकार पर दबाव डाल कर कश्मीर के लिए एक 'स्वतंत्र स्थिति' हासिल करने में कामयाब हो जायेंगे. इस में कोई संदेह नहीं कि इन बुद्धिजीवी नेताओं ने जाने-अनजाने कारणों से भारत सरकार पर यह दबाव डाला कि वह शेख को 'और अधिक स्वाधीनता' दें. 'स्वाधीनता' एक अस्पष्ट शब्द है. शुरू से शेख अब्दुल्ला को अपने विचार और कार्य की स्वाधीनता प्राप्त रही है. जब जनवरी १९६८ में उन की रिहाई का प्रश्न उठाया गया तब और तो और जनसंघ ने भी इस का बहुत विरोध नहीं किया बल्कि उस के नेता अटलबिहारी बाजपेयी ने यह कहा कि अनिश्चित काल तक नज़रबंद रखने से बेहतर यह है कि शेख अब्दुल्ला की तक़दीर का फ़ैसला अदालत में हो.

सभी पार्टियों और दो सौ से अधिक संसद् सदस्यों के दबाव से भारत सरकार ने शेख को रिहा कर दिया. उन की रिहाई के तुरंत बाद यह आशा की गयी थी कि वह कश्मीर समस्या को बदले हुए संदर्भ में देखेंगे और जैसा कि श्री जयप्रकाश नारायण ने कहा है उसे भारत की ही एक आंतरिक समस्या के रूप में सुलझाने का प्रयत्न करेंगे. लेकिन शेख अब्दुल्ला ने केवल केंद्र सरकार के विरुद्ध नहीं बल्कि समूचे गणतंत्र के विरुद्ध धुँआधार भाषण देना शुरू किया जिसे बाद में उन के मुख्य अनुयायी मिर्ज़ा अफ़ज़ल बेग ने पुस्तक के रूप में छपवा कर वितरित किया.

श्री जयप्रकाश नारायण का यह वक्तव्य एकतरफ़ा जान पड़ता है कि भारत सरकार ने सख़्त रवैया अपना लिया है. श्री नेहरू, उन के बाद श्री शास्त्री और उन के बाद अब की सरकार, ने कश्मीर पर पुनर्विचार करने की उत्सुकता दिखायी. लेकिन शेख अब्दुल्ला ने ही अपने दृष्टिकोण को बदलना आवश्यक नहीं समझा. ऐसी हालत में अगर सरकार को कश्मीर के बजाय शेख अब्दुल्ला पर 'पुनर्विचार' के लिए विवश होना पड़ रहा है तो इस में दोष ख़ुद शेख अब्दुल्ला का है.

दिनमान
समाचार - साप्ताहिक

"राष्ट्र की भाषा में राष्ट्र का आह्वान"

भाग ४ — २० अक्तूबर, १९६८
अंक ३२ — २८ आश्विन, १८९०

*

इस अंक में

विशेष रिपोर्ट	११
*	
मत और सम्मत	४
पिछला सप्ताह	५
पत्रकार-संसद्	६
चरचे और चरखे	९
दो-टूक बात : जिस की लाठी उस की मानवता	१०
अंतर्धारा	१६
परचून	४६
*	
राष्ट्रीय समाचार	१३
प्रदेशों के समाचार	१९
विश्व के समाचार	३६
समाचार-भूमि : पश्चिम जर्मनी	३४
खेल और खिलाड़ी : मैक्सिको ओलिंपिक	३१
*	
प्रेस-जगत् : पत्रों की हड़ताल	७
टेलिविज़न : भारत-पाक संघर्ष की एक याद	८
राजनैतिक दल : अकाली मिलन; जनसंघ; मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी	१७
सर्वेक्षण : आयोजित विकास	२४
संदर्भ : विधायकों का प्रशिक्षण	३९
साहित्य : समीक्षा; आर्वेल	४०
संगीत : आल इंडिया रेडियो सम्मेलन	४२
कला : संप्रेषण; प्रकाश रावल; लक्ष्मण पै	४३

*

आवरण-चित्र : पश्चिम जर्मनी के विदेशमंत्री विलि ब्रांड

*

संपादक
सच्चिदानंद वात्स्यायन

*

दिनमान

टाइम्स ऑफ़ इंडिया प्रकाशन
७, बहादुरशाह ज़फ़र मार्ग, नयी दिल्ली

चन्दे की दर	एजेंट से	डाक से
वार्षिक	२६.००	३१.५०
अर्द्धवार्षिक	१३.००	१५.७५
त्रैमासिक	६.५०	८.००
एक प्रति	००.५०	००.६०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजमाता का त्यागपत्र : अंतिम दृश्य

मध्यप्रदेश के लोक सेवक दल के नेतृत्व से श्रीमती विजया राजे सिंधिया के त्यागपत्र ने उस संकट को और भी गहरा कर दिया है जो कि मध्यप्रदेश शासक दल में पिछले १५ दिनों से व्याप्त है. मध्यप्रदेश में मध्यावधि चुनाव की आहट सुनायी पड़ रही है.

श्रीमती सिंधिया का इस्तीफ़ा श्री गोविंद-नारायण सिंह के इस्तीफ़ा न देने का जवाब है. मध्यप्रदेश की राजनीति सभी राज्यों में सब से अधिक सतही होने के बावजूद सब से अधिक उलझी हुई है. इस की मुख्य उलझन यह है कि 'संविद' की कोई भी इकाई एक दूसरे का मुँह देखने को तैयार नहीं, लेकिन किसी में भी मध्यावधि चुनाव का सामना करने का साहस नहीं है. इन सारी इकाइयों को आपसी प्रेम ने नहीं, बल्कि आपसी नफ़रत ने बाँध रखा है. डॉ॰ राममनोहर लोहिया के बाद 'ग़ैर-कांग्रेस-वाद' की सब से प्रखर प्रवक्ता श्रीमती विजया राजे सिंधिया ने इन सभी ग़ैर-कांग्रेसी दलों को अपने दबंग व्यक्तित्व से इस तरह बाँध रखा था कि मध्यप्रदेश की दूसरी दबंग हस्ती द्वारिकाप्रसाद मिश्र भी उन्हें नहीं तोड़ पाये.

लेकिन साल भर सत्ता से बाहर रह कर श्रीमती सिंधिया भी उस वास्तविकता से कट गयी हैं जो कि सत्ता को बनाये रखती है. 'संविद' पर पूरी तरह हावी होने के लिए उन्होंने श्री गोविंदनारायण सिंह से पीछा छुड़ाना आवश्यक समझा और जब श्री गोविंदनारायण सिंह ने अपना नक़ली त्यागपत्र राजा नरेशचंद्र सिंह की जेब में रख दिया तब उन्हें इस का सुनहरा मौक़ा मिला. वह इस नक़ली त्यागपत्र को असली में बदलने के लिए श्री गोविंद-नारायण सिंह पर लगातार दबाव डालती रहीं जिस की परिणति १६ मंत्रियों की खुली बग़ावत के रूप में हुई.

इस के बाद जनसंघ ने भी अपनी शक्ति का परिचय देने के लिए मंत्रिमंडल से हटने की धमकी दी. इस तरह पिछले चार महीनों में 'संविद' की प्रत्येक इकाई और प्रत्येक हस्ती अपना शक्ति-प्रदर्शन कर चुकी है और एक-दूसरे को अच्छी तरह धमका चुकी है. यह आख़िरी धमकी श्रीमती विजया राजे सिंधिया की है जो कि मध्यप्रदेश ग़ैर-कांग्रेसवाद का अंतिम दृश्य जान पड़ता है.

इस में कोई शक नहीं कि मध्यप्रदेश में संविद को साल भर तक शासन में बनाये रखने का सब से अधिक श्रेय श्रीमती विजया राजे सिंधिया को है. उन्होंने ही प्रत्येक संकट में आगे बढ़ कर कांग्रेस की वापसी या राष्ट्रपति के शासन की चुनौती का सामना किया. लेकिन अब लगता है कि वह स्वयं अपने ही अनुयायियों से आजिज़ आ चुकी हैं और उन्हें भी अब यह लगने लगा है कि इस सारी स्थिति का एकमात्र समाधान मध्यावधि चुनाव है जिस का देर-सबेर सामना करना ही पड़ेगा.

मध्यप्रदेश के अन्य दलों की अपेक्षा श्रीमती सिंधिया और उन का परिवार मध्यावधि चुनाव के लिए अधिक तैयार है और उस में उस की सफलता असंदिग्ध है. मध्यभारत से श्रीमती सिंधिया के जितने भी उम्मीदवार चुन कर आये थे, वे मध्यावधि में पराजित हो जायेंगे, ऐसा नहीं लगता. यद्यपि पिछले एक साल में मध्यप्रदेश में जनसंघ की लोकप्रियता उस की मनमानी के कारण कुछ कम हुई है, लेकिन तब भी मध्यावधि से उसे विशेष फ़र्क़ नहीं पड़ेगा. लोकप्रियता की क्षति को उस ने धन और संपन्नता से पूरा कर लिया है. पुलिस और सरकारी विभागों में जनसंघ के कार्य-कर्त्ता बड़ी तादाद में प्रवेश कर गये हैं और मध्यावधि चुनाव पर निश्चय ही इस का असर पड़ेगा.

शायद सब से हीन स्थिति श्री गोविंद-नारायण सिंह के दल की है जिस की कोई जड़ें नज़र नहीं आतीं. पिछले चुनाव में वे कांग्रेस के टिकट पर चुने गये थे. मध्यावधि में उन में से बहुतेरों का चुना जाना संदिग्ध है. यही कारण है कि वे मध्यप्रदेश में राष्ट्रपति शासन और मध्यावधि चुनाव नहीं चाहते. इस की बजाय वे कांग्रेस में लौट कर या कांग्रेस की सहायता से सरकार बनाना पसंद करेंगे.

पिछले सप्ताह उन के कुछ प्रवक्ताओं ने दिल्ली में कांग्रेसी नेताओं से बात-चीत की. लेकिन कांग्रेस हाई कमांड इस समय उन को कोई स्पष्ट आश्वासन देने के लिए तैयार नहीं है. इस का कारण यह है कि वे कांग्रेस में अपनी शर्त्तों पर वापस आना चाहते हैं जब कि मध्यप्रदेश कांग्रेस विधायक दल के नेता पंडित द्वारिकाप्रसाद मिश्र का अब भी यह आग्रह है कि उन्हें उन की शर्त्तों पर नहीं बल्कि कांग्रेस की शर्त्तों पर वापस लिया जा सकता है.

उन का एक संकट यह भी है कि श्री द्वारिकाप्रसाद मिश्र कांग्रेस की केंद्रीय चुनाव समिति के सदस्य भी हैं और अगर वह इस समय कांग्रेस में वापस आ जाते हैं तो इस की कोई गारंटी नहीं कि मध्यावधि की स्थिति में या कि अगले आम चुनाव में उन्हें टिकट मिलेगा. इस तरह वे खुद एक बड़ी उलझन में हैं.

श्रीमती सिंधिया ने उन की इसी उलझन का फ़ायदा उठाया है. लेकिन इस से समूचे 'संविद' की उलझन सुलझने की बजाय और उलझ गयी है. यह नहीं माना जा सकता कि इस सारी स्थिति को कांग्रेस और श्री द्वारिका प्रसाद मिश्र केवल चुपचाप देख रहे हैं. वे भी बारूद और सुरंगें बिछाने में लगे हुए हैं. किसी भी समय विस्फोट हो सकता है और मध्यप्रदेश में राष्ट्रपति शासन और उस के बाद मध्यावधि चुनाव का ऐलान किया जा सकता है—फ़रवरी में नहीं तो जून में.

—विशेष संवाददाता

कानोंकान

भारत सरकार शीघ्र ही बल्गारिया में अपना दूतावास क़ायम करने जा रही है. सोफ़िया में दूतावास के लिए उपयुक्त जगह की तलाश जारी है. अब तक बल्गारिया से भारत के राजनयिक संबंध बुख़ारेस्ट (रोमानिया) के जरिये थे. बल्गारिया को एक अर्से से यह शिक़ायत थी कि भारत ने उस के साथ दूतावास स्तर पर संबंध नहीं रखे हैं और इस तरह उसे वह हैसियत प्राप्त नहीं है जो पूर्वी यूरोप के अन्य देशों को प्राप्त है. प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी की इसी साल बल्गारिया यात्रा के दौरान भी इस शिक़ायत की प्रतिध्वनि सुनायी पड़ी. प्रधानमंत्री की पूर्वी यूरोप की यात्रा के बाद बल्गारिया में राजदूतावास क़ायम करने का निर्णय लिया गया. इस निर्णय के मुताबिक पहले सोफ़िया दूतावास का प्रमुख अधिकारी प्रथम सचिव की हैसियत का होगा. कुछ समय बाद राजदूत की नियुक्ति की जायेगी.

२६ जुलाई को प्रातः लाहौर में अंतरराष्ट्रीय नियमों का उल्लंघन कर इंडियन एयर-लाइंस कारपोरेशन के उस विमान की तलाशी ली गयी जो कि विश्व युवक महोत्सव सोफ़िया के भारतीय प्रतिनिधियों को ले कर नयी दिल्ली से ताशकंद जा रहा था. १९६५ के बाद यह पहला भारतीय नागरिक विमान था जिसे पाकिस्तान की सीमा पर से उड़ने की इजाज़त दी गयी थी. विमान में ८५ भारतीय प्रतिनिधि थे. पाकिस्तानी अधिकारियों ने भारतीय विमान को लाहौर हवाई अड्डे पर करीब दो घंटे तक रोका और विमान चालक के कक्ष में घुस कर देर तक तलाशी ली. पहले यह कहा गया था कि इंडियन एयर-लाइंस कारपोरेशन का विमान लाहौर में ईंधन के लिए रुकेगा. मगर ईंधन ले चुकने के बाद भी जब विमान हवाई अड्डे पर रुका रहा तो कई तरह की शंकाएँ पैदा हो गयीं. लाहौर हवाई अड्डे के अधिकारी विमान के अंदर आये और उन्होंने यात्रियों को तो नहीं छेड़ा लेकिन विमान चालक और उस के सहयोगियों को दो घंटे से अधिक समय तक पूछताछ और तलाशी की स्थिति में रखा. भारत सरकार ने अब तक इस संबंध में कोई विरोध-पत्र पाकिस्तान सरकार को नहीं भेजा है, इस से राजधानी के राजनैतिक क्षेत्र में आश्चर्य व्यक्त किया जा रहा है.

अगला दिनमान

इस अंक में साढ़े तीन योजनाओं के अधीन कार्य के परिणाम का सर्वेक्षण प्रकाशित हो रहा है : इस का उत्तरांश पढ़िए २७ अक्तूबर के अंक में.

अगले अंक में ही समाचार-भूमि : ब्रिटेन में गोरों का सूर्यास्त.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रधानमंत्री

परदेस के बाद देसी समस्याएँ

प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी को अपनी लातीनी अमेरिकी यात्रा से भारत आने पर कई समस्याओं का सामना करना पड़ेगा जिन में सरकारी कर्मचारियों की हड़ताल के सिलसिले में सरकार की नीति एक ऐसी समस्या है जिस पर प्रधानमंत्री और उन के सहयोगियों को सूझ-बूझ और संयम का परिचय देना होगा. पिछले तीन सप्ताह से हड़ताली कर्मचारियों के प्रति सरकार के व्यवहार की स्पष्ट रूप-रेखा निर्धारित करने के सिलसिले में कई बार अंतिम फ़ैसला स्थगित किया जा चुका है. यह कहा गया था कि उप-प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई के आने पर निर्णय होगा. मगर अब लगता है कि वास्तविक निर्णय के लिए प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी की उपस्थिति का महत्त्व महसूस किया जा रहा है.

भव्य स्वागत : श्रीमती इंदिरा गांधी की लातीनी अमेरिकी यात्रा कई अर्थों में एक सफल यात्रा कही जा सकती है. अन्य देशों के शासकों और आम जनता के साथ संपर्क स्थापित करना कभी भी अनुपयोगी नहीं होता. मगर इस सामान्य लाभ के अतिरिक्त भी लातीनी अमेरिकी देशों के दौरे से भारतीय नेताओं को इस बात का स्पष्ट परिचय मिला है कि जिन राष्ट्रों के साथ हमें कई वर्ष पूर्व निकट संबंध स्थापित करना चाहिए था वे राष्ट्र अब भी खुले दिल से हमारे सहयोग को स्वीकार करने के लिए प्रस्तुत है. आकार और जनसंख्या के लिहाज़ से भले ही यह देश भारत के मुकाबले में बहुत छोटे हैं मगर राष्ट्रों के रूप में राजनैतिक जगत् में इन का काफ़ी महत्त्व है. उरुग्वे, आर्जेंतीना, कोलोंबिया या ब्राज़ील जैसे देशों की यात्रा से एक नयी बात सामने आती है कि जिस क्षेत्र को अमेरिकी प्रभाव-क्षेत्र कहा जाता है वहाँ भी स्वतंत्र चिंतन और स्वतंत्र राष्ट्रीय नीति अपनाने की अभिलाषा और प्रवृत्ति काम कर रही है. उरुग्वे में प्रधानमंत्री ने शांति और मित्रता के लिए एक महान संधि के लिए आह्वान किया और देश की संसद् के सामने २० मिनट के उन के भाषण के दौरान कई बार संसद् सदस्यों ने तालियाँ बजा-बजा कर भारतीय प्रधानमंत्री के विचारों से सहमति का आभास दिया. उन्होंने इस लातीनी अमेरिकी देश के कई परीक्षणों की सराहना की और इन से लाभांवित होने की इच्छा प्रकट की. इसी प्रकार आर्जेंतीना में प्रधानमंत्री का जो स्वागत हुआ वह काफ़ी समय तक जनता की स्मृति से नहीं उतरेगा. चिले में राष्ट्रपति एडवारडो फ्राई ने सामान्य शिष्टाचार नियमों की परवाह न करते हुए श्रीमती गांधी के सम्मान में २१ तोपों की सलामी दिलवाई. इस प्रकार का सम्मान किसी देश के राष्ट्रपति को ही दिया जाता है. प्रधानमंत्री और चिले के विदेश मंत्री गैबरियल वाल्देज की वार्त्ता में दोनों देशों ने 'तीसरे विश्व की आवश्कता' को महसूस किया. सामान्यतया राजनैतिक क्षेत्रों में यही विश्वास किया जाता है कि विश्व में समाजवादी और पूंजीवादी देशों के दो बड़े वर्ग हैं मगर लातीनी अमेरिकी देश, अफ्रीका के सभी देश और एशिया के अधिसंख्य देश इस प्रकार के क्षेत्र में आते हैं जो न तो समाजवादी हैं और न ही उन्हें पूंजीवादी कहा जा सकता है. इस लिए ऐसे ग़रीब और विकासोन्मुख देशों का एक वर्ग

इंदिरा गांधी : फिर वही समस्याएँ

अपनी समस्याएँ और अपने समान संघर्ष के बंधन से बँधा हुआ है और बिना किसी वाद या सैनिक समझौते के भी वह एक तीसरे विश्व का रूप प्रस्तुत करता है. इन देशों में अब भी भारत के मानवीय मूल्यों के लिए काफ़ी सम्मान है. इस सिलसिले में चिले के राष्ट्रपति ने कहा कि "भारत आज अकेला महान देश है जो स्वतंत्रता, शांति और प्रजातंत्र के वास्तविक विचारों का पालन करता है और अपने हर प्रकार के व्यवहार में मानवीय भावनाओं से प्रेरित होता है." आर्जेंतीना की राजधानी ब्यूनोस आयर्स में श्रीमती गांधी का भव्य स्वागत किया गया और आपसी बातचीत में दोनों देशों के नेताओं ने एक दूसरे की समस्याओं को समझने का प्रयास किया. दोनों देशों के सामने आर्थिक विकास की समान समस्या है. इस लिए आर्थिक और तकनीकी सहयोग के सिलसिले में एक-दूसरे के निकट आने के लिए प्रयत्न जारी रखने का फ़ैसला हुआ. दक्षिण अमेरिकी के महत्त्वपूर्ण देश ब्राज़ील में श्रीमती गांधी ने ४ दिन बिताये. ब्राज़ील में प्रधानमंत्री ने ब्राज़ील के राष्ट्रपति के सम्मान में आयोजित एक भोज में कहा कि "इस युग के सैद्धांतिक अनिश्चय में हम ने एक मध्यम रास्ता खोजने की कोशिश की है. हमें इस बात का पूरा विश्वास है कि विश्व की वास्तविकताएँ सह-अस्तित्त्व की माँग करती हैं."

समानताएं : लातीनी अमेरिकी देशों की यात्रा के दौरान भारत और इन देशों के बीच कुछ महत्त्वपूर्ण समानताएं स्पष्ट हो गयीं और एक ऐसा मार्ग प्रशस्त हो गया जिस पर चल कर भारत और लातीनी अमेरिकी देश एक शक्तिशाली और उपयोगी सहयोगी कार्यक्रम बना सकेंगे. इन देशों के साथ निकट संपर्क स्थापित करने के लिए ज़रूरी है कि भारत और लातीनी अमेरीकी राष्ट्रों को आर्थिक सहयोग में बाँध दिया जाये. इस सिलसिले में प्रायः सभी लातीनी अमेरिकी देशों के साथ व्यापार बढ़ाने की नीति अपनाई जा रही है. कई लातीनी देशों के अभी तक नयी दिल्ली में न तो दूतावास हैं और न ही व्यापारिक प्रतिनिधि. इस लिए ज़रूरी है कि इस दिशा में शीघ्रातिशीघ्र कदम उठाया जाय. अमेरिकी आर्थिक माप-दंडों के अनुसार लातीनी अमेरिकी देश अभी बहुत पिछड़े हुए हैं. मगर छोटे होने के कारण तथा एक शक्तिशाली और समृद्ध क्षेत्र में रहने के कारण सामान्यतया ये देश आर्थिक संपन्नता में भारत से बहुत आगे हैं. कई तकनीकी क्षेत्रों में लातीनी अमेरिकी देश भारत को सहयोग दे सकते हैं जब कि भारत से अनेक वस्तुओं का निर्यात इन देशों को किया जा सकता है. ब्राज़ील, आर्जेंतीना, और चिले के साथ भारत के सांस्कृतिक संबंधों को सुदृढ़ करने पर भी बल दिया जाना चाहिए. प्रधानमंत्री के दौरे के सिलसिले में इस विषय पर लातीनी अमेरिकी नेताओं से बातचीत हुई. आर्जेंतीना और भारत के बीच सामान्य रूप से पारपत्र और वीसा जारी करने की प्रथा पर भी समझौता हुआ.

कर्मचारियों से व्यवहार : सामान्यतया प्रधानमंत्री की यह यात्रा भारत के लिए राजनैतिक रूप से लाभदायक सिद्ध होगी बशर्ते कि आरंभिक उत्साह को शीघ्र ही ठंडा नहीं पड़ने दिया जाये. अपनी यात्रा की समाप्ति पर प्रधानमंत्री को पुनः राष्ट्रीय समस्याओं पर ध्यान देना होगा, क्योंकि आंतरिक तनाव और अशांति किसी भी राष्ट्र की प्रगति को रोक सकते हैं. सरकारी कर्मचारियों की सांकेतिक हड़ताल के बाद अनेक कर्मचारियों को निलंबित किया गया और अनेक को नौकरी से निकाल देने की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

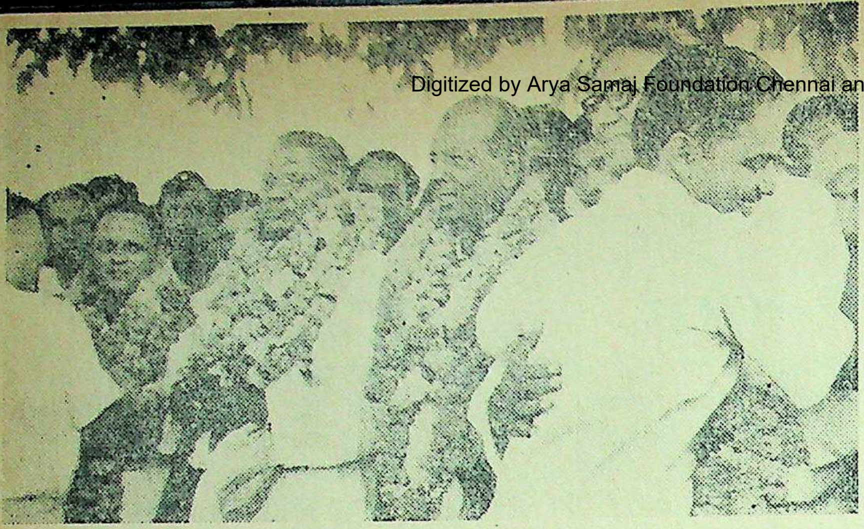

भूख-हड़ताली—के. जी. श्रीवास्तव, जे. पी. चौबे, एस. मधुसूदन और ओ. पी. गुप्त: आग्रह

धमकी दी गयी. डाक और तार विभाग, रेलवे विभागों के अस्थायी कर्मचारियों को नौकरी से हाथ धोना पड़ा है. इस सिलसिले में श्रमिक संगठनों के नेताओं द्वारा जो प्रयास किया गया उस का अभी तक कोई परिणाम सामने नहीं आया है जिस का प्रमुख कारण यही बताया जाता है कि मंत्रिमंडल प्रधानमंत्री की अनुपस्थिति में कोई महत्त्वपूर्ण फ़ैसला नहीं कर सकता. इस लिए ११ अक्तूबर से चार कर्मचारी नेताओं ने अनिश्चित काल के लिए भूख हड़ताल शुरू की है. इस अवसर पर कर्मचारियों की संयुक्त संघर्ष समिति के अध्यक्ष एस. एम. जोशी ने सरकार पर आरोप लगाया है कि सरकार बार-बार अपने वचन भंग करती रही है. प्रधानमंत्री के आने के बाद कर्मचारियों की ओर से एक प्रतिनिधिमंडल उन से भेंट करेगा जिस में कर्मचारियों को बहाल करने और उन की अन्य माँगों के संबंध में सहानुभूतिपूर्वक व्यवहार करने का अनुरोध किया जायेगा. आशा की जाती है कि प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी इस सिलसिले में कोई ऐसा फ़ैसला कराने में सफल होंगी जिस से सरकारी कर्मचारियों में व्याप्त तनाव कम हो जायेगा.

राष्ट्रपति

सहयोग और सहायता

१२ अक्तूबर को राष्ट्रपति डॉ. ज़ाकिर हुसेन पाँच दिन की यात्रा पर जब काठमांडू पहुँचे तो नेपाली और भारतीय परंपरा में भारत द्वारा निर्मित त्रिभुवन हवाई अड्डे पर महाराजा महेंद्र, राजकुमार वीरेंद्र, नेपाल-स्थित भारतीय राजदूत राजबहादुर सहित बहुत-से स्त्री-पुरुष उन का स्वागत-सत्कार के लिए वहाँ मौजूद थे. राष्ट्रपति ने परस्पर हित के मामलों तथा आर्थिक सहयोग की बात करते हुए दोनों देशों की मित्रता के ऐतिहासिक महत्त्व के वर्क पलटे. उन्होंने कहा कि इन मैत्रीपूर्ण संबंधों को प्रगाढ़ बनाने के लिए प्रयत्न किया जाना चाहिए. महाराजा महेंद्र ने भी दोनों देशों का दृष्टिकोण समान बताते हुए कहा कि पाँच साल के बाद भारत के राष्ट्रपति का एक बार फिर स्वागत कर उन्हें हार्दिक प्रसन्नता हुई है. १९६३ में पहली बार डॉ. राधाकृष्णन् नेपाल गये थे.

राष्ट्रपति की अगवानी करने के लिए नेपाल-स्थित पाकिस्तान के राजदूत तथा चीन के राजनैतिक अधिकारी और संवाददाता भी उपस्थित थे. १९६२ के भारत-चीन संघर्ष के बाद यह पहला मौक़ा है जब चीनी अधिकारी किसी भारतीय नेता के आगमन पर स्वागत के लिए पहुँचे थे.

अपनी इस यात्रा के दौरान राष्ट्रपति दोनों देशों के बीच और आर्थिक सहयोग बढ़ाने पर बातचीत करेंगे, और संभवतः दोनों देशों के बीच सुगमतापूर्वक व्यापार के बारे में भी बात की जायेगी. पिछले दिनों भारत ने नेपाल को साढ़े पाँच करोड़ रुपये अतिरिक्त सहायता के रूप में दिये. यह सहायता १९७१ तक १२५ करोड़ रुपये हो जायेगी. भारत नेपाल के कई विकास खंडों में सहायता कर रहा है और अब तक १०८ विकास योजनाएँ उस ने भारत की सहायता से पूरी की हैं. क्यों कि दोनों देशों में निर्बाध रूप से व्यापार होता है और नेपाल से आने और नेपाल जाने वाली किसी भी चीज़ पर चुंगी नहीं ली जाती, इस से बहुत-से लोग, ख़ास कर व्यापारी वर्ग फ़ायदा उठा रहे हैं. इस के कारण भारत-नेपाल सीमा पर तस्करी का बोलबाला भी है. इस तस्करी से भारत को बहुत नुक़सान हो रहा है क्यों कि नेपाल से कुछ ऐसा कच्चा माल भारत पहुँचने लगा है जो वास्तव में नेपाल का नहीं होता बल्कि कहीं और का बना हुआ होता है और इसी ही अनुपात में भारत के माल से मिलता-जुलता माल नेपाल पहुँच जाता है. इस तस्कर व्यापार को रोकने के लिए भारत सरकार कुछ कड़े प्रतिबंध लगाने की बात सोच रही है और इस बारे में नेपाल सरकार का ध्यान भी आकृष्ट किया जा चुका है. राष्ट्रपति अपनी यात्रा के दौरान इस तरह के व्यापार का प्रश्न उठायेंगे और इस के अलावा दोनों देशों के बीच परिवहन के नियमन के बारे में भी शायद बात हो.

सम्मेलन

वहाँ मिलन नहीं

कश्मीर के विवादास्पद नेता शेख़ अब्दुल्ला द्वारा आयोजित राज्य जनता सम्मेलन (स्टेट पीपुल्स कन्वेंशन) में उस वक़्त कुछ अतिरिक्त गर्मी आ गयी जब कश्मीरी कवि ग़ुलाम नबी ख़याल ने कश्मीर के भारतीय संघ में विलय का ज़ोरदार समर्थन किया और धर्म के आधार पर उस का पाकिस्तान में विलय चाहने वालों की तीखी आलोचना की. कवि ख़याल की इस चुनौती ने सम्मेलन में बहुसंख्यक के रूप में विराजमान जनमत संग्रह मोर्चे के सदस्यों तथा पाकिस्तान-समर्थकों में एक अजीबो-ग़रीब खलबली पैदा कर दी. कुछ समय के लिए बहस की गाड़ी पटरी से बहुत दूर गिरती महसूस हुई और सम्मेलन के अध्यक्ष शेख़ अब्दुल्ला ने जनमत संग्रह मोर्चे के सदस्यों तथा पाकिस्तान-समर्थकों को खरी-खोटी सुनायी और कहा कि इस प्रकार की अनियंत्रित प्रतिक्रियाओं से सम्मेलन के बुनियादी उद्देश्यों को धक्का लगता है. शेख़ अब्दुल्ला ने स्पष्ट शब्दों में उन्हें याद दिलाया कि सम्मेलन में भाग लेने की एक महत्त्वपूर्ण और बुनियादी शर्त यह थी कि लोग सहनशीलता का परिचय देंगे और अपने मत से भिन्न मत रखने वालों की अभिव्यक्ति की आज़ादी का भी ध्यान रखेंगे. "सहनशीलता और अभिव्यक्ति की आज़ादी पर आधारित बहस का रास्ता ही एकमात्र वह रास्ता है जिस के ज़रिये हम इस समस्या का लोकतांत्रिक समाधान प्राप्त कर सकते हैं," शेख़ अब्दुल्ला ने आवेश और असहनशीलता की आँधी में बह रहे सदस्यों को चेतावनी दी. सम्मेलन के तीसरे दिन कुछ सदस्यों ने यह शिकायत की कि जनमत संग्रह मोर्चा के सदस्य पूरी तरह माहौल पर छाये हुए हैं. जनमत संग्रह मोर्चा के अध्यक्ष मिर्ज़ा अफ़ज़ल बेग ने इस शिकायत को निराधार बताया और कहा कि सम्मेलन को कश्मीर समस्या से संबद्ध ६० लेख प्राप्त हुए हैं जिन में से केवल ६ लेख ही जनमत संग्रह मोर्चा के प्रतिनिधियों के हैं. अध्यक्ष की कुर्सी से शेख़ अब्दुल्ला ने अपने सहयोगी अफ़ज़ल बेग की इस सफ़ाई को भी अनावश्यक क़रार दिया.

इस व्यवधान के बाद सहनशीलता का माहौल धीरे-धीरे वापस आने लगा. अवामी संघर्ष समिति के अध्यक्ष मौलवी फ़ारूक़ ने इसी माहौल में अपना भारत-विरोधी लेख पढ़ा. कश्मीर विवाद में पाकिस्तान, कश्मीर और भारत तीनों को एक तराज़ू पर तोलते हुए फ़ारूक़ ने कहा कि अगर भारत सरकार यह समझती है कि आत्मनिर्णय के अधिकार का कोई विकल्प उस के पास मौजूद है तो उसे इस विकल्प को सामने लाना चाहिए. उन्होंने भारतीय संविधान के अधीन अधिकाधिक स्वशासन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शेख़ अब्दुल्ला : शेख़िए-कश्मीर

के सूत्र के इर्द-गिर्द कश्मीर समस्या के समाधान के सुझाव को भारत-पाक उपमहाद्वीप के पूरे २१ साल के ऐतिहासिक यथार्थ से कटा बताया. तीसरे दिन के इस सम्मेलन में कश्मीर को अधिकाधिक स्वशासन देने का सुझाव दक्षिण कम्युनिस्ट पार्टी के प्रतिनिधि ने अपने लेख में दिया था. कश्मीर के भूतपूर्व प्रधानमंत्री बख्शी गुलाम मोहम्मद ने सम्मेलन के नाम भेजे गये अपने लेख में भारतीय संघ में कश्मीर के विलय को पूर्ण और अंतिम बताया. श्रीनगर की एक आम सभा में भी बख्शी ने अपने इन विचारों को स्पष्ट तौर पर पेश किया. नेशनल कांफ्रेंस के १९४८ के प्रस्ताव से उद्धरण पेश करते हुए बख्शी गुलाम मोहम्मद ने इस ऐतिहासिक तथ्य को स्थापित करना चाहा कि कश्मीर भारतीय संघ का एक अनिवार्य अंग बन चुका है जिसे किसी भी क़ीमत पर उस से अलग नहीं किया जा सकता.

सम्मेलन की दिशा का निर्धारण सर्वोदय नेता जयप्रकाश नारायण ने वैसे अपने उस भाषण में ही कर दिया था जिसे भारतीय राजनीतिक क्षेत्रों में एक महत्त्वपूर्ण दस्तावेज माना जा रहा है. जयप्रकाश नारायण ने कश्मीर समस्या के समाधान को शुरू से ही एक मानवीय समस्या के समाधान के रूप में देखने की कोशिश की है और समय-समय पर केंद्रीय सरकार को यह याद दिलाते रहे हैं कि केवल क़ानूनी पेचीदगियों का सहारा ले कर वह इस समस्या का हल करने में कभी भी सफल नहीं हो सकेगी. लेकिन १९६५ के पाकिस्तानी आक्रमण के समय से ही श्री जयप्रकाश नारायण यह महसूस करते रहे हैं कि कश्मीर समस्या मुख्यतः भारत सरकार और कश्मीरी जनता के बीच की समस्या है जिस में पाकिस्तान की कोई अहमियत नहीं है. यही बात उन्होंने श्रीनगर सम्मेलन के प्रतिकूल माहौल में भी कही. श्री जयप्रकाश नारायण के वक्तव्य ने जनमत संग्रह मोर्चा तथा पाकिस्तान-समर्थकों में तीखी प्रतिक्रिया को जन्म दिया. और यह समाचार भी दैनिक पत्रों की मोटी सुर्खियों में छापा पाया गया कि शेख़ अब्दुल्ला जयप्रकाश नारायण के इस वक्तव्य से काफ़ी उदास और क्षुब्ध हैं. ग़लतफ़हमी कहीं कश्मीरी नेताओं और जनता की निर्णय शक्ति पर हावी न हो जाये, इस लिए जयप्रकाश नारायण ने एक प्रेस कांफ्रेंस में अपनी सफ़ाई भी पेश की. उन्होंने कहा कि मैं शेख़ साहब को काफ़ी अर्से से जानता हूँ और मैं यह भी जानता हूँ कि इस तरह की ग़लतफ़हमी की कोई गुँजाइश हमारे बीच नहीं है. फिर अपना कथन स्पष्ट करते हुए उन्होंने कहा कि कश्मीर समस्या का समाधान भारत सरकार के रुख और १९६५ के पाकिस्तानी आक्रमण के बाद बदली राजनैतिक परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए भारतीय संविधान के अधीन तलाशा जा सकता है बशर्ते भारत सरकार १९५३ के बाद के परिवर्त्तनों को वापस लेना शुरू करे.

कांग्रेस

कार्यसमिति : काफ़ी के प्यालों में क्रांति

कांग्रेस पार्टी अंदर से बीमार है और चौथे आम चुनाव के दौरान आपातकालीन स्तर पर जो उस की शल्य-चिकित्सा हुई वह भी कारगर साबित नहीं हुई. बीमार को दिन का प्रकाश दुख देता है, कांग्रेस को तथ्यों का उजाला. पिछले सप्ताह, कांग्रेस कार्यसमिति का जो जमावड़ा ८-९ अक्तूबर को राजधानी में हुआ और जिस में चौथे आयोजन के लिए प्राथमिकता के प्रश्न पर पूरे साढ़े ५ घंटे तक शाब्दिक आतिशबाज़ियाँ छोड़ी गयीं, किसी निश्चित निष्कर्ष पर पहुँचने का भ्रम पैदा कर के अनिश्चय के धुँधलके में खो गया. कहने को प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी की अनुपस्थिति के बावजूद कार्यसमिति का यह विशेष जमावड़ा था जिस में कश्मीर और असम के मुख्यमंत्रियों को छोड़ कर सभी कांग्रेसी मुख्यमंत्री उपस्थित थे लेकिन राजनैतिक दृष्टि से इसे शायद ही कोई विशिष्टता मिल सकी हो. हरयाणा कांग्रेस के गृह-युद्ध के प्रश्न पर कार्यसमिति ने अगर भूतपूर्व मुख्यमंत्री भगवत दयाल शर्मा से सख़्ती से पेश आने का संकेत दिया तो केंद्रीय संसदीय बोर्ड ने ९ अक्तूबर को अपने जमावड़े में 'अनुशासनहीनता को एक और मौक़ा देने' की नीति का अनुसरण किया. जब कार्यसमिति के सामने हरयाणा का मसला आया तो कांग्रेस अध्यक्ष निजलिंगप्पा ने मुख्यमंत्री बंसीलाल के विरोधियों के नेता भगवत दयाल शर्मा के प्रति आक्रामक दृष्टिकोण अपनाया और इस में संदेह नहीं कि आक्रामकता का यह माहौल कार्यसमिति पर हावी रहा. समिति ने भगवत दयाल शर्मा की गतिविधियों को पार्टी-विरोधी गतिविधियों की कोटि में रखा और अध्यक्ष निजलिंगप्पा के इस सुझाव से व्यापक सहमति व्यक्त की कि बहरहाल हरयाणा विधानसभा के नेतृत्व में कोई परिवर्त्तन नहीं किया जाना चाहिए. कांग्रेस अध्यक्ष का तर्क यह था कि एक तो इस से हरयाणा में राजनैतिक अस्थिरता पैदा होगी और दूसरे पंजाब, उत्तरप्रदेश, बिहार और पश्चिमी बंगाल के मध्यावधि चुनावों में कांग्रेस पार्टी की दुर्गति की संभावना बढ़ेगी. कांग्रेस कार्यसमिति में भगवत दयाल शर्मा की राजनैतिक गतिविधियों की जिस क़दर भर्त्सना की गयी उस से यह संभावना बनने लगी कि कांग्रेस हाई कमांड उन के ख़िलाफ़ अनुशासनात्मक कार्रवायी करने की हद तक जा सकता है. लेकिन ९ अक्तूबर को कांग्रेस संसदीय बोर्ड की बैठक में यह भ्रम एक झटके में टूट गया और यह संभावना तथ्य की शक्ल अख़्तियार करने लगी कि केंद्रीय नेतृत्व प्रदेश कांग्रेस में गृह-युद्ध को चलते रहने देगा और इस बात की कोशिश करेगा कि भगवत दयाल शर्मा या उन के किसी समर्थक को प्रदेश कांग्रेस का अध्यक्ष बना दिया जाए तथा जिन तीन मंत्रियों ने मुख्यमंत्री बंसीलाल के मंत्रिमंडल से अपने को अलग कर लिया है उन्हें फिर उस में शामिल कर लिया जाए. इस तरह कांग्रेस कार्यसमिति की एकमात्र उपलब्धि यही रही कि उसने अनिर्णय के निर्णय की अपनी पुरानी परंपरा को बनाये रखा. उपप्रधानमंत्री मोरार जी देसाई से यह आग्रह ज़रूर किया गया कि वह मुख्यमंत्री बंसीलाल और भगवत दयाल शर्मा में समझौता कराने का प्रयास करें.

जब हरयाणा प्रदेश कांग्रेस के गृह-कलह पर कांग्रेस कार्यसमिति विचार कर रही थी, भूतपूर्व कांग्रेस अध्यक्ष कामराज और तमिलनाड कांग्रेस के अध्यक्ष सुब्रह्मण्यम की झड़प से छन कर तमिलनाड प्रदेश कांग्रेस का गृह-कलह भी सामने आया. कामराज की शिकायत थी कि सुब्रह्मण्यम ने अभी तक तमिलनाड के उन कांग्रेसियों के ख़िलाफ़ अनुशासनात्मक कार्रवाई नहीं की है जिन्होंने खुले आम मेरी आलोचना की थी. सुब्रह्मण्यम का कहना था कि क्यों कि जिन कांग्रेसियों ने कामराज की आलोचना की थी वे अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के सदस्य हैं इस लिए कांग्रेस समिति उन के ख़िलाफ़ अनुशासनात्मक कार्रवाई नहीं कर सकती थी. हाज़िरजवाब कामराज ने सुब्रह्मण्यम को याद दिलाया कि प्रदेश कांग्रेस समिति इन सदस्यों को निलंबित कर सकती थी तथा बाद में अखिल भारतीय कांग्रेस समिति का अनुमोदन प्राप्त कर सकती थी. कामराज और सुब्रह्मण्यम के मतभेद काफ़ी पुराने रहे हैं लेकिन जब कामराज ने सुब्रह्मण्यम को प्रदेश कांग्रेस का अध्यक्ष नियुक्त करा दिया था तब यह समझा गया था कि दोनों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अंतर्धारा

सँकरी गली में जीप

बाढ़ की दर्दभरी ख़बरों के साथ कभी-कभी एक तस्वीर भी छपा करती है जिस में कोई राजनेता हेलिकोप्टर से लोक-व्यथा का निरीक्षण करता देखा जाता है. मंत्रियों के प्रचार-अधिकारियों से पूछना चाहिए कि क्या वे सचमुच समझते हैं कि ऐसी तस्वीरें देख कर पाठक आकाशचारी मंत्री की करुणा के क़ायल हो जायेंगे, या वे केवल इस लिए फ़ोटू छपा रहे हैं कि अपना चित्र देख कर प्रसन्न होना सामान्य विकार है? समय आ गया है--बल्कि कहें कि आ चुका है कि मंत्री की प्रसन्नता का मापक उस चित्र को बनाया जाये जो उन के ज़मीन पर पाँव रखने के बाद खींचा गया हो: इस दशा में जलपाइगुड़ी में श्री मोरारजी का कोई चित्र प्रकाशित नहीं हुआ है. किंतु कहना होगा कि उन के और राज्यपाल धर्मवीर के विमान-विचरण का चित्र भी न छाप कर उन के साथ सदभाव ही बरता गया है. वह चित्र किसी को भी पसंद नहीं आ सकता था. सड़ती लाशों की गंध के बहुत ऊपर से उड़ कर जाना जानकारी प्राप्त करने का उपाय है परंतु आज के अधीर, हतविश्वास जन-समुदायों से अपनी दूरी और बढ़ाने का सर्वोत्तम साधन भी है. इतना काफ़ी होगा कि प्रशासन के प्रतिनिधि यह जानकारी प्राप्त कर लें और जन-प्रतिनिधि को बता दें: उस से किसी का मन दुखेगा नहीं. आखिरकार सेवा-सहायता सेना सहित प्रशासन वाले ही करते हैं और उन्हें मंत्रियों से कहीं अधिक स्वाभाविक अधिकार है कि गले तक डूबे मनुष्यों की आवश्यकताएँ समझने के लिए उस के सर पर से उड़ कर जायें.

जलपाइगुड़ी की घटना बहुत कुछ बताती है. उपप्रधानमंत्री और केंद्रीय शासक प्रतिनिधि राज्यपाल का यह कह देना कि क्रोध से क्या समस्याएँ सुलझ जायेंगी उस घटना को बिल्कुल न समझने की दिशा में जाना है. अभी तक किसी सत्ताहितैषी ने श्री देसाई के इस संशय की पुष्टि का साहस नहीं किया है कि जलपाइगुड़ी के क्रुद्ध निवासी राजनैतिक उद्देश्य से चालित थे परंतु जब कभी यह घटना दिल्ली के राजनैतिक मंच पर याद की जायेगी तो कोई अजब नहीं कि यह तर्क कई टटपुंजियों के मुख से सुना जाये--यह जन-आक्रोश की अभिव्यक्ति के अनेक उदाहरणों के प्रसंग में सुना गया है. ओडिसा और बिहार के दुर्भिक्ष के और लखीसराय रेल-दुर्घटना के समय यही तर्क दिया गया था. इस तर्क का कवच भारतीय राजनीतिक ने ओढ़ लिया है और उस के पीछे वह तब तक के लिए सुरक्षित है जब तक वाद-विवाद दो राजनीतिकों में चल रहा है और कोई तीसरी शक्ति बीच में नहीं आती. वह शायद समझता कि वह जन-आक्रोश का लक्ष्य बना है तो यह कुछ व्यक्तिगत मामला है और उसे जन की नहीं अपनी रक्षा करनी है: धीरे-धीरे, घिसट-घिसट कर वह ममता मर चुकी है जिस से राजनीतिक देख सकता था कि यदि लोग यातना से उद्विग्न हैं तो सब से पहले वे ही रक्षा के पात्र हैं. निश्चय ही श्री मोरारजी का यह कथित उद्‌गार कि मेरा प्राण ले लो तो उस से तुम्हें क्या मिलेगा, आवश्यकता से अधिक घबराहट का नहीं तो अहं का सूचक है: उन का प्राण लेना नहीं, लोग अपना प्राण बचाना चाहते थे और यदि कारणवश उपप्रधानमंत्री भी वास्तव में उसी विपत्ति में पड़े होते जिस में लोग थे तो लोग अपने साथ मंत्री का प्राण भी बचाने की चिंता अवश्य करते.

स्थानीय सरकारी प्रबंध से व्याकुलता की हद तक असंतुष्ट भीड़ का जलपाइगुड़ी-प्रसंग अकेली घटना नहीं है. केवल उसी के गुण-दोष का विवेचन करना यहाँ अभीष्ट भी नहीं है. यह एक संपूर्ण इतिवृत्त है जिस में आज की राजनीति भीड़ की शब्द-शक्ति, वोट, का इस्तेमाल करने को लालायित है परंतु अपनी शब्द-शक्ति खो बैठी है--और इस न्यूनता से बेखबर है. जो भाषा हमारे राजनायक बोलते हैं वह वर्त्तमान की चुनौती से संघर्ष की भाषा नहीं है. वह या तो अतीत के संस्मरण की है या भविष्य के आश्वासन की है. यह लक्ष्य करना चाहिए कि जनता नेता से भविष्य के लिए माँगना धीरे-धीरे छोड़ रही है और अधिकाधिक व्यग्रता से पूछ रही है कि अभी तत्काल क्या किया जा रहा है जो अतीत से आगे हो और भविष्य को बना सके.

हो यह रहा है कि यह प्रश्न बार-बार दोहराया जा कर और संवाद न पा कर प्रश्न से प्रलाप बनता जा रहा है और प्रलाप जब दोहराया जाता है तो स्वयं जनता उसे सुनना नहीं चाहती. तब मंत्री जागते हैं और जनता से संवाद की माँग करते हैं--जलपाइगुड़ी में कहते हैं कि क्रोध से क्या होगा, अधिकारियों से सहयोग करो. स्पष्ट है कि वर्त्तमान की पहचान में मंत्री और जन की बुद्धि में अंतराल है: यह व्यवधान 'राजनैतिक उद्देश्य' से किसी विरोधी दल ने नहीं पैदा किया है, मंत्री और जन के मध्य की दूरी ने पैदा किया है. जलपाइगुड़ी में सँकरी गली के कीचड़ के कारण यह दूरी दुर्गम थी और जब मंत्री का जीप वह कीचड़ उछालता चला तो माँग आयी कि वह पैदल चलें. कहा जाता है अनंतर एक संवाददाता के प्रश्न पर मंत्री ने कहा--'मैं पैदल क्यों चलूँ ?... मैं नाटकीय अदाएँ नहीं दिखाता'. ऐसा जो कहता है वह शायद नहीं समझ पा रहा है कि इस कथन के बाद संवाद की सब संभावनाएँ समाप्त हो सकती हैं. किसी का उसे यह बात समझाना दोनों पक्षों से बड़े धीरज का तक़ाज़ा करेगा, यहाँ इतना याद दिलाना ही काफ़ी समझा जाये कि जीप से उतर कर अन्य लोगों की तरह पैदल चलने को उन से लोगों ने ही कहा था--उन के प्रचार विभाग ने नहीं. ...मगर मालूम नहीं कि यह संकेत उस वर्ग के लिए काफ़ी होगा या नहीं जो १९४८ में गांधी की शवयात्रा में भी अर्थी पर चढ़ कर चला था, पाँव पाँव नहीं.

--रघुवीर सहाय

नेताओं के मतभेद खत्म हो चुके हैं. **दिनमान** के प्रतिनिधि को कार्यसमिति के एक सदस्य ने बताया कि ये मतभेद इधर एक अर्से से अंदर ही अंदर गहरे हो रहे थे और कामराज ने कई बार सुब्रह्मण्यम् को यह धमकी भी दी थी कि अगर उन्होंने अपना रास्ता नहीं बदला तो वह उन्हें प्रदेश कांग्रेस के अध्यक्ष-पद से हटा कर रहेंगे. क्योंकि प्रदेश कांग्रेस पर कामराज का एकाधिकार अभी भी क़ायम है इस लिए उन की धमकी को नज़रअंदाज़ करना सुब्रह्मण्यम् के लिए काफ़ी महँगा साबित हो सकता है.

कांग्रेस कार्यसमिति की पूरे साढ़े पाँच घंटे तक खिंचने वाली बहस का आरंभ चौथे आयोजन में प्राथमिकता के प्रश्न से हुआ. मुख्यमंत्रियों ने अपनी टिप्पणियाँ पहले से ही भेज रखीं थीं और कार्यसमिति की बैठक से पहले ही यह स्पष्ट हो गया था कि चौथे आयोजन में कृषि को प्राथमिकता देने पर व्यापक सर्वमत तैयार हो जायेगा. मुख्यमंत्रियों ने टिप्पणियों में संबंधित प्रदेशों में मौजूदा आर्थिक स्थिति पर प्रकाश डालने के बहाने अपने-अपने प्रदेशों के विकास पर ज़्यादा व्यय किये जाने की माँग की थी. बहस के दौरान मुख्यमंत्रियों का यह आग्रह खुल कर सामने आया और कांग्रेस-अध्यक्ष निजलिंगप्पा तथा उपप्रधानमंत्री श्री मोरारजी देसाई को उन की आक्रामकता का दबाव झेलना पड़ा. आंध्रप्रदेश के मुख्यमंत्री ब्रह्मानंद रेड्डी इस जमावड़े के सब से मुखर साबित हुए. लंबी बहस के बाद कार्यसमिति ने चतुर्थ आयोजन में कृषि को प्राथमिकता देने और खास तौर पर सिंचाई की व्यवस्था को सुचारू बनाने की आवश्यकता पर ज़ोर दिया. लेकिन कुल मिला कर मुख्यमंत्रियों के सुझाव छिटपुट संकेत के रूप में थे जिन से कृषि-नीति और खास तौर पर जलनीति को कोई निश्चित दिशा नहीं मिल सकी. मुख्यमंत्रियों ने उपप्रधानमंत्री मोरारजी देसाई पर इस बात के लिए भी दबाव डाला कि वह घाटे की अर्थव्यवस्था का सहारा लें लेकिन मोरार जी ने उन का आग्रह स्वीकार नहीं किया. उपप्रधानमंत्री का तर्क था कि चालू वर्ष के बजट में पहले से ही ३०० करोड़ रुपये के घाटे की अर्थव्यवस्था का सहारा लिया गया है.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अकाली मिलन : दूसरे दौर की राजनीति

कोई पाँच साल पहले, १९६३ में संत फ़तह सिंह ने लक्ष्मण सिंह गिल और जीवन सिंह उमरांगल के निष्कासन के प्रश्न पर मास्टर तारा सिंह के अकाली दल से अलग जब एक नए अकाली दल का गठन किया था तब शायद ही किसी को इस ख्याल ने कुरेदा होगा कि मितभाषी संत न केवल धीरे-धीरे अपने राजनैतिक गुरु से बाजी मार ले जायेंगे बल्कि उन की नीतियों को भी गुज़रे जमाने की घटना साबित कर देंगे. चौथे आम चुनाव के नतीजे जैसे-जैसे सामने आते गए मास्टर तारा सिंह की नीतियों का हवा महल ढ़हता गया और जब चार दिन की सरगर्म बहस के बाद अमृतसर में मास्टर और संत अकाली दल के मिलन का निर्णय हो गया तो अकाली राजनीति का दूसरा दौर भी आरंभ हो गया. मास्टर तारा सिंह का दल इधर एक लंबे अरसे से यह महसूस करता रहा है कि मास्टर के निधन के बाद एक पृथक दल के रूप में उस का अस्तित्व संदेह का विषय बन चुका है. पृथक 'सिख राज' का नारा भी समय के साथ चुक रहा था और अंग्रेजी को राष्ट्र की संपर्क भाषा बनाए रखने की साज़िश का भी बुरा हाल हो रहा था. मध्यावधि चुनाव की अवधि भी पास सरकती आ रही थी और मास्टर तारा सिंह के अकाली दल के नेताओं को यह चिंता भी साल रही थी कि पंजाब के भूतपूर्व मुख्यमंत्री लक्ष्मण सिंह गिल की जनता पार्टी के साथ समझदारी बनाए रख कर कहीं मध्यावधि चुनाव में उनकी पार्टी प्रदेश की जनता से बची-खुची अपनी समझदारी भी न गँवा बैठे. यह आकस्मिक नहीं है कि दोनों दलों के विलय की पहल मास्टर अकाली दल के नेताओं ने की थी. मास्टर के अभाव में संत फतह सिंह को संयुक्त अकाली दल का अध्यक्ष मान लेने में मास्टर के अनुयायियों को कोई विशेष आपत्ति नहीं थी. सिख जनता में संत फ़तह सिंह की लोकप्रियता की काट प्रस्तुत करना मास्टर तारा सिंह के अकाली दल में किसी के बस की बात नहीं थी तथा भूतपूर्व मुख्यमंत्री लक्ष्मण सिंह गिल की कांग्रेस-समर्थित अल्पमत की सरकार में अपना एक प्रतिनिधि रख कर उन्हें बदनामी ही हाथ लगी थी.

इस तरह, अमृतसर में 'पवित्र अकाल तख़्त' की साक्षी दे कर पाँच साल से बिछड़े अकालियों का जो मिलन हुआ, वह कोई सनसनीखेज घटना नहीं थी. जैसा कि प्रत्याशित था, संत फ़तह सिंह नए अकाली दल के अध्यक्ष बने और मास्टर दल के भूतपूर्व संसद सदस्य कपूर सिंह उस के वरिष्ठ उपाध्यक्ष. नए दल की कार्यसमिति के १७ सदस्यों में १० सदस्य संत अकाली दल के और ७ सदस्य मास्टर अकाली दल के हैं. इसी तरह नए दल के संसदीय बोर्ड के १० सदस्यों में ७ सदस्य संत अकाली दल के और अध्यक्ष भूपिन्दर सिंह को मिला कर ३ सदस्य मास्टर अकाली दल के हैं.

पूरे पाँच साल के वियोग के बाद के इस मिलन को नए अकाली दल के अध्यक्ष संत फ़तह सिंह ने सिख पंथ के लिए मंगलकारी बताया है तथा अपने सहयोगियों को आश्वस्त किया है कि लक्ष्मणसिंह गिल और हुडियारा को किसी भी क़ीमत पर दल में घुस-पैठ नहीं करने दी जायेगी. संत फ़तह सिंह ने इस भय को निराधार बताया कि मास्टर दल के सदस्यों के कारण दल के 'प्रगतिशील रूप' में कोई परिवर्तन आयेगा. संत ने हिंदू-सिख एकता को नए दल की नीति का आधार बताया और संयुक्त विधायक दल के दूसरे साझेदारों की इस शंका का निराकरण करने का प्रयास किया कि भूपिन्दर सिंह और उन के सहयोगी जहाँ एक ओर पृथक 'सिख राज' और 'अंग्रेजी भाषा, संपर्क भाषा' के आग्रह के कारण जनसंघ को नाराज कर लेंगे वहाँ दूसरी ओर सिख सांप्रदायिकता का आग्रह करके कम्युनिस्ट पार्टियों से नए दल को छत्तीस कर देंगे. क्योंकि कुछ क्षेत्रों से यह आवाज भी उठी थी कि नया अकाली दल पृथक 'सिख राज' के सवाल को शब्दावली बदल कर उठायेगा, इस लिए संत फतह सिंह ने भारतीय संविधान से बाहर सुलभ किसी समाधान की अहमियत ही स्वीकार नहीं की.

प्रतिक्रिया और प्रतिक्रिया : मास्टर और संत अकाली दल के मिलन का निर्णय अक्तूबर के प्रथम सप्ताह में ही कर लिया गया लेकिन पंजाब की राजनीति पर पड़ने वाले इस के प्रभावों को लेकर प्रतिक्रियाओं और बहसों का सिलसिला अभी जारी है. पंजाब की ग़ैर-कांग्रेसी सरकार में भूतपूर्व मुख्यमंत्री और विघटित विधान सभा में अकाली दल के नेता गुरनाम सिंह ने इस मिलन को संयुक्त विधायक दल के लिए लाभकारी बताया है जब कि कांग्रेस के ज्ञान सिंह राड़ेवाला ने इसे कांग्रेस के लिए. भूतपूर्व मुख्यमंत्री लक्ष्मण सिंह गिल की जनता पार्टी ने तो इस पर एक प्रस्ताव ही पास कर डाला है जिस में मास्टर और संत अकाली दलों के मिलन से 'सिख राज' के लिए आंदोलन के फिर से शुरू होने का भय व्यक्त किया गया है. जनसंघ और दक्षिण कम्युनिस्ट पार्टी की भी अपनी चितायें और शंकायें हैं. जनसंघ के एक वरिष्ठ नेता ने **दिनमान** के प्रतिनिधि को बताया कि **"अकाली मिलन से हिंदू सिख एकता में आगे चलकर दरारें पैदा हो सकती हैं** क्योंकि मास्टर तारासिंह के अनुयायी पृथक सिख राज के लिए संत फ़तह सिंह पर दबाव डालते रहेंगे." दूसरी ओर कम्युनिस्ट पार्टी के एक प्रतिनिधि का कहना है कि मास्टर अकाली दल के नेता भूपिन्दर सिंह की सांप्रदायिकतावादी और प्रतिक्रियावादी मनोवृत्तियों से पूरे पाँच साल के परिश्रम से संत फ़तह सिंह के अकाली दल को जो प्रगतिशील ढाँचा देने में सफलता पायी थी उस पर पानी फिर सकता है. नए दल की कार्य-पद्धति और विचार-पद्धति के बारे में अभी निश्चित रूप से कुछ भी नहीं कहा जा सकता, लेकिन एक बात साफ़ है कि इस से पंजाब की राजनीति के समीकरण सुलझते भी हैं, उलझते भी हैं. बहुत संभव है कि इस से अकाली दल को मध्यावधि चुनाव में कुछ अधिक सीटों पर विजय मिले, लेकिन अगर पृथक सिख राज का आग्रह भूपिन्दर सिंह और उन के अनुयायी बनाए रखते हैं तो अकाली दल, जो १३ अक्तूबर को पंथ के एकता दिवस के रूप में मना रहा है, अगले वर्षों में 'दल के अंदर दल' की दारुण स्थिति का भी जायज़ा लेने पर मजबूर हो सकता है. दूसरी स्थिति 'संत के बाद कौन' का सवाल उठने से पहले या बाद में कभी भी पैदा हो सकती है.

जनसंघ

दो मोर्चों पर लड़ाई

८ अक्तूबर को आधी रात के बाद तक सरगर्म बहस कर चुकने के बाद भी जनसंघ के केंद्रीय संसदीय बोर्ड ने मध्यप्रदेश के संबंध में फैसले को २४ अक्तूबर तक के लिए टाल दिया और इस तरह इस अफ़वाह के लिए ठोस आधार तैयार किया कि जनसंघ की दिलचस्पी मध्यप्रदेश की संविद सरकार से अलग होने में उतनी नहीं है जितनी कि सत्ता की जोड़-तोड़ में अपनी स्थिति को बीस बनाने में है. नयी दिल्ली में केंद्रीय संसदीय बोर्ड के सदस्यों ने पार्टी की मध्यप्रदेश शाखा के निर्णय को ग़लत नहीं ठहराया लेकिन बहरहाल यह कह कर अनिर्णय का ग़म ग़लत करना चाहा कि उस समस्या प्रदेश में ग़ैर-कांग्रेसी संविद सरकार के पतन की ज़िम्मेदारी जनसंघ पर नहीं आनी चाहिए. मतलब यह कि जनसंघ सत्ता-राजनीति का लाभ भी हथियाना चाहता है और यह भ्रम भी बनाये रखना चाहता है कि सत्ता-राजनीति में उस की कोई दिलचस्पी नहीं है. और यह कोशिश उस ने पहली बार नहीं की है. पार्टी के एक प्रवक्ता ने **दिनमान** के प्रतिनिधि को बताया कि 'यह राजनीति है और यहाँ सभी कुछ चलता है.'

मध्यप्रदेश में ग़ैर-कांग्रेसवाद का यह संकट जिस की अनुगूंज ८ अक्तूबर को आधी रात

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के बाद तक नयी दिल्ली के जनसंघी क्षेत्रों में सुनाई पड़ती रही, नया नहीं है. संसदीय बोर्ड के सदस्यों में इस बात को ले कर काफ़ी मतभेद रहा कि जनसंघ मुख्यमंत्री गोविंद नारायण सिंह के मंत्रिमंडल से आखिरी रूप से अपने मंत्रियों को वापस बुला ले या नहीं. पार्टी के कुछ सदस्यों का कहना था कि अब वह अवसर आ गया है जब ग़ैर-कांग्रेसवाद के जहाज़ को बीच धारा में डूबने के लिए छोड़ देना चाहिए. लेकिन अध्यक्ष वाजपेयी और उन के समर्थकों का कहना था कि ऐसा कर के पार्टी बदनाम हो जायेगी और न केवल अपने ग़ैर-कांग्रेसी सहयोगियों, मसलन संयुक्त समाजवादी पार्टी और राजमाता तथा उन के सामंतवादी सहचरों का विश्वास खो बैठेगी बल्कि कांग्रेस-विरोधी जनता के क्रोध का भी शिकार होगी. संसदीय बोर्ड की बैठक से छुट्टी पाने के बाद जब मध्यप्रदेश के जनसंघी उपमुख्यमंत्री श्री सकलेचा भोपाल पहुंचे तो उन्होंने संवाददाताओं को यह ज़रूर बताया कि पार्टी ने प्रदेश के शाखा के फ़ैसले से सहमति जाहिर की है लेकिन इस सवाल का उत्तर नहीं दिया कि इस सहमति की व्यावहारिक अभिव्यक्ति क्या होगी. सकलेचा ने मध्य-प्रदेश की सत्ता-राजनीति में जनसंघ की जोड़-तोड़ की मुख्य समस्या से संवाददाताओं का ध्यान हटाते हुए मुख्यमंत्री गोविंद नारायण सिंह की सरकार के प्रति राजमाता सिंधिया के गहरे असंतोष का हवाला दिया और फिर नहले पर दहला मारते हुए दार्शनिक की मुद्रा में कहा कि समस्या केवल गोविंद नारायण सिंह की कुर्सी पर राजा नरेशचंद्र को बिठा देने से हल नहीं हो पायेगी. एक लंबे अर्से से जनसंघ मध्यप्रदेश में अपनी राजनैतिक महत्वाकांक्षा को नये-नये रूपों में प्रकट करता रहा है और अब जब यह राज़ खुलने लगा है, पार्टी के केंद्रीय और प्रादेशिक नेतृत्व ने निर्णय और अनिर्णय का समीकरण उलझाना शुरू कर दिया है. मुख्यमंत्री गोविंद नारायण सिंह राजमाता और जनसंघ की साज़िश से बेहद तंग आ चुके हैं और वह नहीं चाहते कि जनसंघ सत्ता के अंदर रह कर निरंकुश राजनैतिक जोड़-तोड़ करता रहे. अखिल भारतीय जनसंघ के उपाध्यक्ष पीतांबरदास ने संवाददाताओं को बताया कि केंद्रीय संसदीय बोर्ड अगर इस बार कोई निर्णय नहीं कर सका तो इस का कारण सिर्फ़ यही है कि वह ग़ैर-कांग्रेसी मोर्चे के अपने अन्य सहयोगियों की राय भी जानना चाहती है. लेकिन संवाददाताओं से यह छिपा नहीं रहा कि जनसंघ का मौजूदा नेतृत्व एक साथ ही दूसरे युद्ध लड़ रहा है. एक वह गृहयुद्ध जो पार्टी के अंदर अर्से से चलता रहा है और जिस से अनिर्णय की स्थिति सहज स्थिति बनती रही है और दूसरा वह युद्ध जो वह अवसर के उपयुक्त होने पर अपने ग़ैर-कांग्रेसी सहयोगियों से लड़ता रहा है.

मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी

नया, मतलब 'गया-नया'

कलकत्ता में पूरे ५ दिन तक खिंचने वाली बहस के बाद मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी की केंद्रीय कार्यकारिणी समिति ने १०००० शब्दों का जो प्रस्ताव स्वीकार किया उस में कुल मिला कर नया के नाम पर 'गया-नया' की ही प्रचुरता थी. संसदीय लोकतंत्र की सीमाओं में शिखर के समाजवाद की स्थापना के सपनों को क्रमशः बिखरते देख रहे पार्टी के चोटी के नेताओं ने कम्युनिस्ट आंदोलन के दोहरे खतरों—दक्षिण पंथी और वामपंथी अवसरवादिता—पर जम कर माथापच्ची की. यह स्वीकार किया गया कि सर्वहारा के आंदोलन को उच्च मध्यवर्गीय प्रभावों, शक्तियों और संस्कारों ने पूरी तरह ग्रस लिया है. क्रांतिकारी परिवर्तन के रास्ते में कई बाधायें उठ खड़ी हुई हैं—एक बाधा का संबंध दक्षिण-वादी अवसरवादिता से है जब कि दूसरी का संबंध वामपंथी अवसरवादिता से. प्रसंगवश लेनिन की व्याख्याओं को दोहराया गया और कम्युनिस्ट आंदोलन के ख़तरों का अंतरराष्ट्रीय संदर्भ तलाश किया गया. भारत में साम्यवादी आंदोलन की विफलता के लिए सोवियत संघ और साम्यवादी चीन की कम्युनिस्ट पार्टियों को भी कठघरे में खड़ा किया गया. तर्क यह कि इन दोनों कम्युनिस्ट देशों की पार्टियों का अंतरराष्ट्रीय स्तर पर इतना व्यापक प्रभाव है कि राष्ट्रीय कम्युनिस्ट आंदोलन उन से प्रभावित हुए बग़ैर रह नहीं सकता. इस तरह, एक झटके में मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी की केंद्रीय समिति ने १९६४ में कम्युनिस्ट आंदोलन में पैदा हुई दरार को सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की संशोधनवादी नीतियों की तार्किक परणति बताया. इसी तरह गत वर्ष जो नक्सलबाड़ी के बागियों और आंध्रप्रदेश के उग्र वामपंथियों के कारण साम्यवादी कम्युनिस्ट पार्टी से बड़े पैमाने पर लोगों ने अपना संबंध-विच्छेद किया तथा एक नयी क्रांतिकारी पार्टी के संगठन की दिशा में सोचना शुरू किया, उसे केंद्रीय समिति ने चीन की कम्युनिस्ट पार्टी की नीतियों का असर क़रार दिया.

इस तरह, अपने राजनैतिक प्रतिद्वंद्वियों को क्रमशः सोवियत संघ और साम्यवादी चीन की ग़लत नीतियों का अंध अनुयायी घोषित कर मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी की केंद्रीय समिति ने संसदीय सीमाओं में पैंतरेबाजी कर रही अपनी पार्टी की नीतियों को राजनैतिक स्थिति की सही व्याख्या बताया और यह दावा किया कि मौजूदा नेतृत्व क्रांति के भारतीय संदर्भों की तलाश को समर्पित है तथा सोवियत संघ और साम्यवादी चीन दोनों देशों की पार्टियों के अनुभवों से लाभ तो उठाना चाहता है लेकिन उन का आँख मूंद कर अनुकरण करने का कायल नहीं है. प्रस्ताव में सोवियत संघ और साम्यवादी चीन की पार्टियों द्वारा दूसरे देशों की पार्टियों के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप की भी आलोचना की गयी है. यह हस्तक्षेप क्यों कि मार्क्सवाद, लेनिनवाद और अंतरराष्ट्रीय साम्यवाद के नाम पर किया जाता है, इस लिए इस का विरोध मूलभूत सिद्धांतों के विरोध के रूप में प्रचारित किया जाता रहा है.

मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी के महामंत्री श्री सुंदरैय्या ने संवाददाताओं को बताया कि साम्यवादी चीन की कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा अंतरराष्ट्रीय राजनैतिक स्थिति की जो व्याख्या पेश की जाती रही है, उस से हमारी पार्टी के कुछ मतभेद भी हैं. उन्होंने अपनी आवाज़ को संयत करते हुए कहा कि हमारी पार्टी यह नहीं मानती कि सोवियत संघ अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अमेरिकी साम्राज्यवाद को बढ़ावा दे रहा है, यद्यपि हम इस बात से सहमत हैं कि लंबे अर्से से सोवियत संघ के नेताओं ने संशोधनवादी रास्ता अख्तियार कर रखा है. उन्होंने स्वीकार किया कि यद्यपि सिद्धांतों के स्तर पर मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी ने सोवियत संघ और साम्यवादी चीन की कम्युनिस्ट पार्टी से पृथक अपनी स्वतंत्र स्थिति बना ली है लेकिन कुछ प्रदेशों को छोड़ कर अन्य प्रदेशों में व्यापक जनाधार गठित करने में वह विफल रही है. फिर चौथे आम चुनाव के बाद की राजनैतिक स्थिति पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए सुंदरैय्या ने ग़ैर-कांग्रेसी सरकार को सत्ता से हटाये जाने और संबद्ध प्रदेशों में राष्ट्रपति शासन लागू किये जाने की कांग्रेसी साज़िश की कड़ी आलोचना की और बंगाल में मध्यावधि चुनाव को टालने की कोशिश को भी इसी साजिश से नत्थी कर दिया. केंद्रीय समिति के प्रस्ताव में संशोधनवादी नेतृत्व की खबर ली गयी है. इस बात पर चिंता व्यक्त की गयी है कि देश का मजदूर आंदोलन संशोधनवादी नेतृत्व ने दूषित कर रखा है. इन तमाम प्रवृत्तियों के उदय को एक व्यापक राजनैतिक प्रक्रिया की अनिवार्य परिणति के रूप में स्वीकार करते हुए प्रस्ताव में तीन पंचवर्षीय आयोजनों के दौरान देश में पूंजीवाद के विकास और इस विकास की आँधी में श्रमिक वर्ग में मध्यवर्गीय बाबुओं तथा अन्य वर्गों की घुसपैठ पर चिंता व्यक्त की गयी है. मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी का नेतृत्व क्रांतिकारी सिद्धांतों और कार्यक्रमों की वापसी के लिए इस शर्त को अनिवार्य समझता है कि श्रमिक वर्ग की क्रांतिकारिता और मध्यवर्गीय उग्रवादिता में फ़र्क़ किया जाना चाहिए.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रदेश

बाढ़ग्रस्त राज्य

ध्वंस का सर्कस : बहता हाथी, मरते लोग

बाढ़ की विभीषिका. चारों तरफ़ गंदा-मटमैला पानी. धार में बहते हुए झाड़-झंखाड़, मरे हुए मवेशी और आदमी—ढह कर गिरते हुए मकान. चीख-कराह और हाहाकार. बिहार और बंगाल में वर्षा और बाढ़ के कारण विनाश का जो दृश्य उपस्थित हुआ है वह रोंगटे खड़े कर देने वाला है. अब तक १३५० से ज़्यादा लोग मृत्यु के शिकार हो चुके हैं. पानी में क़ैद हो गये लाखों लोगों के लिए ज़िंदगी अनिश्चय और भय का पर्याय बन गयी है. बहुत से हिस्सों का संबंध देश के शेष हिस्सों से टूट-सा गया है. जगह-जगह सड़कें और रेल-मार्ग टूट गये हैं और उन की वजह से गाड़ियों का आना-जाना ठप्प पड़ गया है. मुसाफ़िर भटक रहे हैं. इस दैवी विपत्ति पर क़ाबू पाने की कोशिश में सेना के जवान, सरकारी कर्मचारी और दूसरी संस्थाओं के स्वयंसेवक अपना खून-पसीना एक कर रहे हैं. वर्षा के कारण जगह-जगह भूस्खलन हुआ है और उस से जान और माल की भारी क्षति हुई है. अकेले दार्जिलिंग ज़िले में ७०० आदमियों की जानें गयी हैं. जलपाईगुड़ी और ग्वालपाड़ा ज़िले में विध्वंस का तांडव ज़ोरों पर रहा. जगह-जगह बिजली के खंभे गिर गये—तार टूट गये. जलप्रदाय के कारखाने बेकार हो गये. सिलीगुड़ी और पंखाबाड़ी के बीच का संबंध खत्म हो गया और हज़ारों की संख्या में यात्री और घुमक्कड़ दुख, परेशानी और भटकाव के चंगुल में फँस गये. जलपाईगुड़ी के सरकारी गोदामों में रखा हुआ ७००० टन चावल और गेहूँ बर्बाद हो गया. वहीं पर एक व्यक्ति अपने मकान की दूसरी मंज़िल की छत पर ७२ घंटे तक पड़ा रहा और पानी कम होने पर किसी तरह सिलीगुड़ी पहुँच सका. बाढ़ग्रस्त लोगों की परेशानी का जो हाल उसने बताया उसे सुन कर लोगों ने दाँतों तले अंगुली दबा ली. अभी भी बीसों हज़ार लोग सहायता की प्रतीक्षा में हैं. दिनाजपुर क्षेत्र में पानी की रफ़्तार इतनी तेज थी कि उसमें एक हाथी भी बह गया. टिन की छत वाला लकड़ी का एक पूरा दुमंज़िला मकान भी कोसों दूर तक बहते हुए देखा गया.

बाढ़ ने ध्वंस का अपना सर्कस सिक्किम और भोटान में भी दिखाया है. रंगपुर, रोराथांग, मेली बाज़ार आदि में ७ पुल नष्ट हो गये. सेना के २५ जवान, ३२ तिब्बती शरणार्थी और ५० नागरिक मर गये.

भारतीय वायुसेना और फ़ौज के जवान हेलीकॉप्टरों की सहायता से बाढ़ग्रस्त क्षेत्रों के लोगों के लिए हवाई जहाज से खाना और दवाएं आदि गिराते रहे हैं. जलपाईगुड़ी का पूरा शहरी इलाक़ा ७२ घंटे तक १२ फ़ीट पानी के अंदर रहा और वहाँ के अभागे लोगों को यह वक़्त बिना अन्न और पानी के गुज़ारना पड़ा. बाद में जब सिलीगुड़ी से अन्न और दवाओं को भेजने की व्यवस्था की गयी तो लोगों को थोड़ी-सी तस्कीन हुई. विनाश की ऐसी ही स्थिति उत्तर बिहार के ज़्यादातर क्षेत्रों में है, जहाँ पर बागमती, गंडक और केरह नाम की नदियों में भयंकर बाढ़ आई हुई है. भैंसालोटन के पास बागमती और गंडक का पानी खतरे के बिंदु से बहुत ऊपर पहुँच गया और लगभग १०० वर्गमील भूमि पर सिर्फ़ पानी ही पानी दिखाई देने लगा. कोसी में भी भयंकर बाढ़ आई हुई है. कोसी की बाढ़ से विराउल के २५, घनरामपुर के २६, कुशेश्वर स्थान के ३० और सिंघिया ब्लाक के १५ ँव कोसी की बाढ़ से प्रभावित हुए हैं. यहाँ लगभग २० लाख लोग परेशानी, चिंता और भय की ज़िंदगी गुज़ार रहे हैं. इस क्षेत्र की ४० हज़ार एकड़ भूमि पर खड़ी फसल लगभग नष्ट हो चुकी है. कई हज़ार पशु तेज़ धार में बह गये हैं. लगभग २५०० वर्गमील जमीन बाढ़ के पानी के नीचे दब गयी है.

सहायता के बावजूद : सेना और स्वयंसेवकों द्वारा बाढ़ग्रस्त क्षेत्रों में सहायता का जो कार्य किया जा रहे हैं उस से जनता में थोड़ा-सा ढाढ़स बंधा है लेकिन इस बीच सरकार के प्रति अक्सर जो रोष व्यक्त किया गया उस का मतलब सिर्फ़ यही था कि उसने पहले से सतर्कता का रास्ता नहीं अपनाया. जलपाईगुड़ी के कुछ नागरिकों का कहना था कि उन्हें आकस्मिक ढंग से इस संकट का सामना करना पड़ा. अगर कर्मचारी सतर्क होते तो उन्हें कुछ पहले ही सूचना मिल गयी होती. बाढ़ की विभीषिका के जो समाचार देश के अन्य राज्यों से आये हैं उन में बिहार और बंगाल की ही स्थिति सर्वाधिक नाज़ुक है. रेल-मार्गों के ध्वस्त हो जाने के कारण आसाम की तरफ़ जाने वाली रेलगाड़ियाँ रास्ते में ही रुक गयीं. बरौनी और कटिहार में लगभग ८ गाड़ियों के ३ हज़ार मुसाफ़िर बेसहारा हो गये. ५-६ अक्तूबर को इन स्टेशनों पर जो तहलका मचा वह रेलवे अधिकारियों की उदासीनता को अच्छी तरह व्यक्त करता है. बरौनी में गाड़ियाँ रुक गयीं. चारों तरफ़ त्राहि-त्राहि मच गयी लेकिन मौक़े पर रेलवे का कोई भी वरिष्ठ अधिकारी नहीं पहुँचा. स्टेशन के थोड़े से कर्मचारियों में यह बूता नहीं था कि वे यात्रियों की अपेक्षित मदद कर सकें. कुछ यात्रियों ने तार या टेलीफ़ोन द्वारा अपने मित्रों और रिश्तेदारों से संपर्क स्थापित करने की कोशिश की लेकिन उस में वे सफल नहीं हो सके. टेलीफ़ोन एक्सचेंज में सिर्फ़ एक आदमी था. जब भी कोई यात्री उस से टेलीफ़ोन की लाइन माँगता था वह यही जवाब देता था कि सारी लाइनें बेकार हो गयी हैं. डाकखाने की भी यही हालत थी. वहाँ भी सिर्फ़ एक हरकारा था. यह सँभव नहीं था कि वह उतनी बड़ी भीड़ को अकेले ही संभाल सके. औरतें, बच्चे और बूढ़े प्लेटफ़ार्म पर पड़े रहे. स्टेशन के विश्रामालय में केवल ५० आदमियों की जगह थी. लोग चारों तरफ़ ठसाठस भरे हुए थे. यात्रियों के सामने सब से बड़ी समस्या भोजन की थी. खोंमचे वालों ने मौक़े का फ़ायदा उठाया. प्याले भर दूध की क़ीमत एक रुपया—एक दर्जन केले का दाम ४ रुपये और वे चीज़ें भी नहीं

बाढ़ और भूस्खलन के बाद : पहले चित्र में : एक मकान बह गया. दूसरा खतरे के निकट है. दूसरा चित्र दार्जिलिंग की भोटिया बस्ती का है. यहाँ भी कई मकान बर्बाद हुए. उस में लोकप्रिय बौद्ध भिक्षुणी सिस्टर वज़ीरा (स्काटी कुमारी एलविस) भी मौत की शिकार हो गयीं.

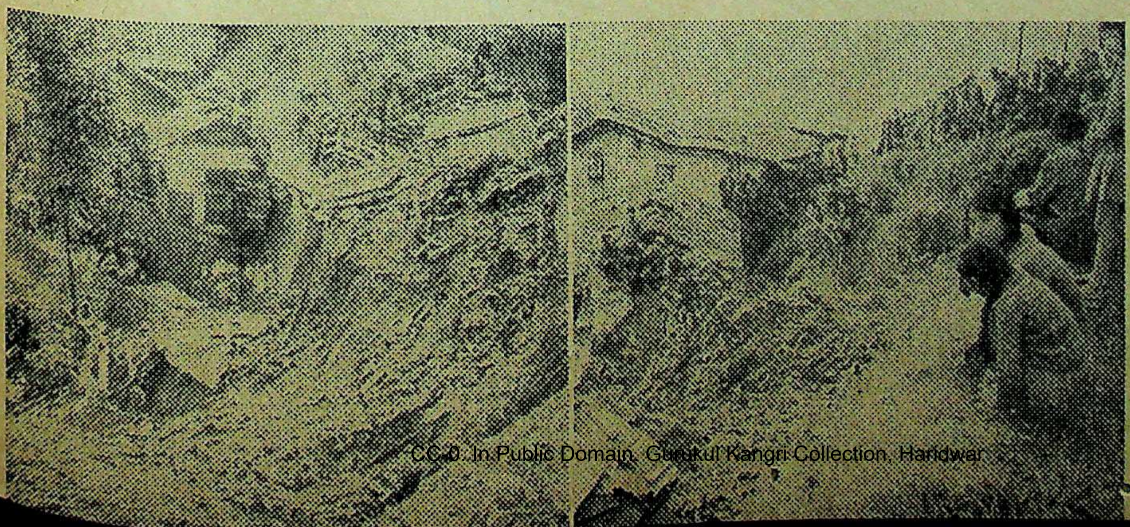

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

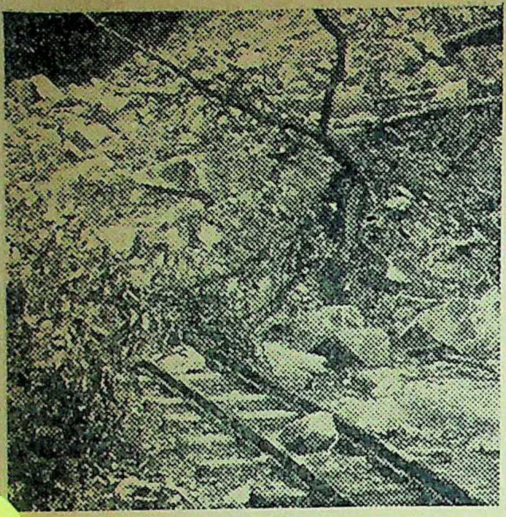

रोंगटांग (दार्जिलिंग) के पास का क्षतिग्रस्त रेल-पथ

मुश्किल से केवल उन्हीं लोगों को मिल सकीं जिन की जेब में पैसे थे. ज़्यादातर यात्रियों को भूख और प्यास से संघर्ष करना पड़ा. एक यात्री का कहना था कि रेलवे-कर्मचारियों ने यात्रियों के प्रति ज़रा भी सहानुभूति नहीं दिखाई. भीड़ के कारण प्लेटफ़ार्म पर गंदगी बढ़ गयी. बदबू से सांस लेना दूभर हो गया. पीने के लिए पानी की भी कमी अनुभव की गयी. कुछ यात्रियों का कहना था कि यदि ऐसी हालत थी तो दिल्ली की तरफ़ से आने वाली गाड़ियों को पटना में ही क्यों नहीं रोक दिया गया.

पता चला है कि बाढ़ की पूर्वसूचना जलपाईगुड़ी के ज़िला अधिकारियों को समय से पहले ही दे दी गयी थी लेकिन उन्होंने उसे कोई महत्त्व नहीं दिया. तीस्ता बाज़ार से २४ घंटे पहले पानी के ख़तरे के बिंदु पार कर जाने की चेतावनी टेलीफ़ोन द्वारा दी गयी थी. यदि अधिकारियों ने उस पर अमल किया होता तो जान-माल की इतनी बड़ी क्षति नहीं हुई होती. यह सही है कि ये विपत्तियाँ आकस्मिक हैं और इन पर उतनी आसानी से क़ाबू नहीं पाया जा सकता. हर साल बाढ़ आती है और देश के बहुत से हिस्से उस के शिकार होते हैं. लेकिन क्यों कि ऐसा प्रायः हर साल ही होता है, अतः यदि सरकार पहले से चौकसी का प्रबंध करे तो परेशानियाँ कुछ कम अवश्य हो जायेंगी. सब से अधिक निंदा की बात तो यह है कि ऐसे मौक़ों पर हमारा सरकारी कर्मचारी ज़्यादातर उदासीनता का परिचय देता है. संयोगवश यदि उस में सहानुभूति पैदा भी होती है तो भी वह अपने कर्त्तव्य के पालन में अमल की ज़रूरत नहीं महसूस करता.

केंद्रीय नेताओं ने ध्वंस का वह सर्कस हवाई जहाज़ से देखा और चिंता तथा सहानुभूति व्यक्त की. उप-प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई की जलपाईगुड़ी-यात्रा बहुत मँहगी साबित हुई. राजकटोरा क्षेत्र में एक बैठक में कुछ जन-प्रतिनिधियों के व्यवहार से देसाई जी की सामान्य उत्तेजना का पता चल गया था मगर उस के बावजूद वह सैनिक पुलिस की सुरक्षा में मौक़े का मुआयना करने निकले. सड़कों पर कूड़े, कीचड़ और मलबे के ढेर पड़े थे. जब उन की जीप आगे नहीं जा सकी तो भीड़ ने आवाज़ लगाई कि वह पैदल चलें. पैदल चलने की बजाय जब जीप लौटाई जाने लगी तो भीड़ का धैर्य टूट गया. फिर मुट्ठियाँ कसने, गालियाँ देने और धूल-कीचड़ फेंकने की क्रिया शुरू हो गयी. उन्हें किसी तरह वहाँ से निकाला जा सका. श्री देसाई ने ज़िला-धिकारियों की अक्षमता पर गहरा असंतोष व्यक्त किया और जनता को सलाह दी कि वह अपनी शक्ति और सामर्थ्य का उपयोग जनहित में करे, लेकिन कोई असर नहीं हुआ. फ़िलहाल केंद्र ने १ करोड़ रु. की सहायता का ऐलान किया है.

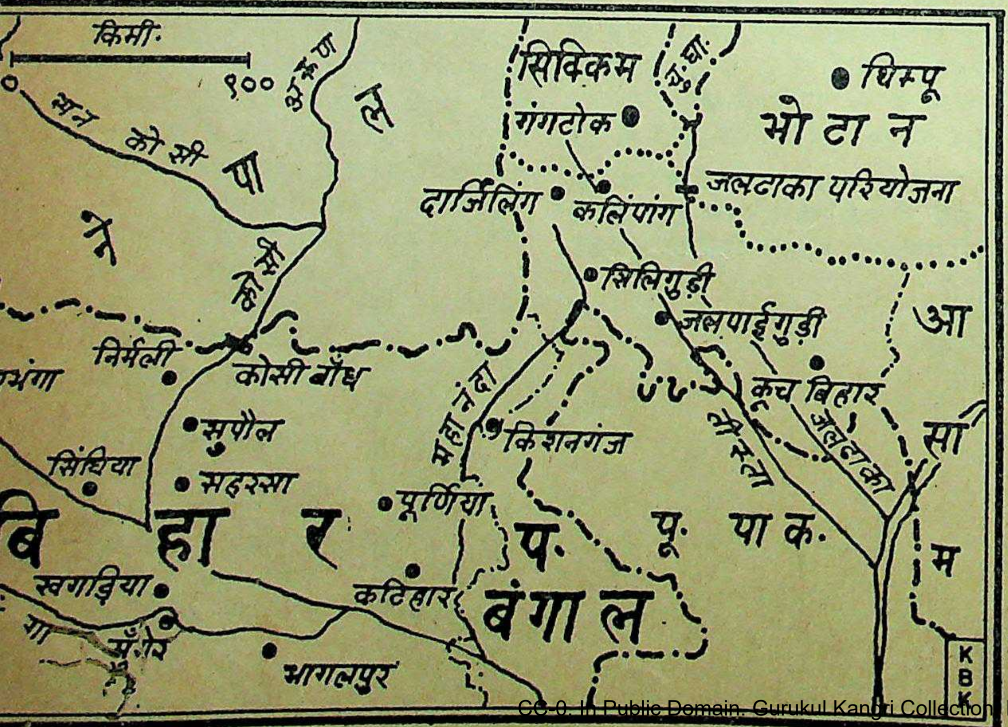

मद्रास

वहीं के वहीं

तमिषनाड प्रदेश कांग्रेस समिति में मद्रास के भूतपूर्व मुख्यमंत्री कामराज, जिन की कभी मद्रास में तूती बोलती थी को पूछने और जानने वालों की संख्या दिनों दिन घटती जा रही है. उन के समर्थकों में भूतपूर्व खाद्यमंत्री श्री सी. सुब्रह्मण्यम भी आजकल उनके ख़िलाफ़ ही हवा बाँध रहे हैं. इस बात का प्रमाण पिछले दिनों प्रदेश कांग्रेस समिति की उस बैठक में मिला जब सदस्यों ने सभी नैतिक मानदंडों को ताक पर रख कर हाथापाई का रवैया अख़्तियार किया. कामराज के ख़िलाफ़ नारे लगाये गये और उन्हें अवसर वादी तक कहा गया. सुब्रह्मण्यम ने लोगों से संतुलन बनाये रखने की अपील की लेकिन सुब्रह्मण्यम ऊपर से चाहे जितनी मरज़ी एकता की अपीलें जारी करते रहें, भीतर से वह कामराज का दबदबा मिटाने की कोशिश में हैं.

सुझाव : प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने कामराज को नगर संसदीय निर्वाचन-क्षेत्र से चुनाव लड़ने की सलाह दी थी. तब कामराज ने प्रधानमंत्री के सुझाव पर कोई प्रक्रिया व्यक्त नहीं की थी. आजकल कामराज इस निर्वाचन-क्षेत्र में अपनी स्थिति का जायज़ा लेने के लिए दौरा कर रहे हैं. कामराज के निकटवर्ती सूत्रों का यह भी ख़याल है कि अगर कामराज को यह यक़ीन हो गया कि इस निर्वाचन-क्षेत्र से उन का जीतना संभव है तो वह एक बार फिर सक्रिय राजनीति में आ जायेंगे.

कोतवाली का स्थानांतरण

ऐतिहासिक दिल्ली कोतवाली को गुरुद्वारा शीशगंज के सुपुर्द कर देने का जो कार्यक्रम (**दिनमान : १३ अक्तूबर**) शर्तों की गड़बड़ी के कारण स्थगित हो गया था, वह पिछले दिनों विधिवत् संपन्न हो गया. उप-राज्यपाल आदित्य नाथ झा ने जिस समय स्थानांतरण के रस्म की अदायगी की, राजधानी और आस-पास के क्षेत्र के सिखों की बड़ी जमात ने ख़ुशियाँ मनायी. राजधानी के सभी सिख स्कूल बंद रहे. विभिन्न गुरुद्वारों में दीवाली मनायी गयी. गुरुद्वारा प्रबंधक समिति के सचिव सरदार संतोख सिंह की पत्नी ने श्री झा को सरोपा भेंट कर के सम्मानित किया. समझौते के अनुसार कोतवाली का एक भाग गुरुद्वारे को दिया गया है. स्थानांतरण की कारवाई १६ महीनों में समाप्त होगी. कोतवाली का महत्त्व सिखों के लिए ख़ास तौर पर यों महत्त्वपूर्ण है कि उस से गुरु तेग़बहादुर के बहुत से संस्मरण जुड़े हुए हैं.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिहार

गृहमंत्री का स्वागत

'बिहार में प्रचुर मात्रा में खनिज संपत्ति है. भूमि उपजाऊ है और जन-शक्ति तथा प्रतिभा भी पर्याप्त है. राजनैतिक और औद्योगिक क्षेत्रों में ऐसे नेतृत्व की आवश्यकता है जो इन साधनों का सदुपयोग कर सके.' इन शब्दों के साथ केंद्रीय गृहमंत्री चव्हाण ने उद्योगपतियों और राजनीतिज्ञों का आह्वान किया कि वे बिहार की ग़रीबी की चुनौती स्वीकार करें तथा राज्य को एक संपन्न भूभाग में परिणत करने के प्रयत्न करें. विगत वर्षों के सूखे और बाढ़ ने बिहार की अर्थ-व्यवस्था को अस्त-व्यस्त कर दिया है. प्राकृतिक साधनों से भरपूर बिहार की धरती पर भुखमरी का जो तांडव नृत्य होता रहा है, हो रहा है, वह आँखें खोल देने वाला है. इस में कोई संदेह नहीं कि यदि बिहार के राजनैतिक नेता अपनी शक्ति का अपव्यय उखाड़-पछाड़ की राजनीति में न कर संपूर्ण शक्ति से राज्य की खुशहाली के लिए प्रयत्न करें तो निश्चय ही बिहार को आये दिन अकालग्रस्त होने से बचाया जा सकता है. राजनैतिक स्थिरता के बिना उद्योगपतियों से यह आशा करना व्यर्थ ही होगा कि वे बिहार में नये-नये उद्योगों की स्थापना के लिए पूँजी लगाने को तैयार हो जायेंगे.

बिहार उद्योग संस्था के अध्यक्ष और प्रसिद्ध उद्योगपति शांतिप्रसाद जैन ने उसी बैठक में शिकायत की कि राज्य के दो बड़े उद्योगों—चीनी और चावल मिलों के मामलों में राजनैतिक नेता हस्तक्षेप कर रहे हैं. उन्होंने माँग की कि इन उद्योगों की समस्याओं का समाधान राजनैतिक स्तर पर न कर के आर्थिक स्तर पर किया जाये. चीनी और चावल मिलें बिहार के दो बड़े उद्योग हैं और राज्य की खुशहाली में इन उद्योगों का बहुत बड़ा हाथ है. यदि इन उद्योगों की दशा सुधारने की ओर समुचित ध्यान नहीं दिया गया तो राज्य की अर्थ-व्यवस्था पर उस का बहुत बुरा प्रभाव पड़ेगा. इन उद्योगों की सारी मशीनरी पुरानी हो चुकी है. पुरानी मशीनों के स्थान पर नयी मशीनें लगा कर ही उद्योगों से समुचित लाभ उठाया जा सकता है.

चव्हाण और शांतिप्रसाद जैन :
खुशहाली का सुझाव

श्री जैन द्वारा आयोजित अपने स्वागत समारोह में भाषण करते हुए गृहमंत्री ने कहा कि बिहार का चीनी-उद्योग कृषि पर आधारित एक महत्त्वपूर्ण उद्योग है और चीनी मिलों का यहाँ से हटाना हितकर नहीं होगा. काफ़ी दिनों से चर्चा है कि कुछ उद्योगपति अपनी चीनी-मिलें बिहार से हटा कर उत्तरप्रदेश में ले जाना चाहते हैं. गृहमंत्री ने उद्योगपतियों के इस क़दम को राज्य के लिए अहितकर बताया. राज्य में राष्ट्रपति-शासन लागू किये जाने पर टिप्पणी करते हुए गृहमंत्री ने कहा कि किसी विशेष परिस्थिति के कारण राष्ट्रपति शासन लागू करना पड़ा. हमें उस का अधिक से अधिक उपयोग करना चाहिए.

उत्तरप्रदेश

आंदोलन और राजनीति

राज्य के २ लाख प्राथमिक शिक्षक बहुत दिनों से यह माँग करते रहे हैं कि उन का ११० रुपये का वर्त्तमान वेतन (जिस में भत्ता भी शामिल है) बढ़ा कर १५० रुपये कर दिया जाये. २ साल पहले कोठारी आयोग ने इस तरह की सिफ़ारिश की थी, तभी से यह माँग किसी न किसी रूप में निरंतर सामने आती रही है. राज्यपाल से बातचीत असफल हो जाने के बाद गांधी जन्म-शताब्दी के आरंभ के दिन से अध्यापकों ने सचिवालय के सामने भूख-हड़ताल शुरू कर दी. पुलिस वालों ने हड़तालियों का तंबू ज़रूर हटा दिया लेकिन उस के बावजूद नियमित ढंग से २० अध्यापकों की टुकड़ी २४ घंटे के लिए भूख-हड़ताल पर बैठती है और दूसरे दिन दूसरी टुकड़ी उस का स्थान ले लेती है.

शिक्षकों की माँग और उस के संघर्ष को ले कर अखिल भारतीय शिक्षक संघ के अध्यक्ष हीरालाल पटवारी और प्रदेश कांग्रेस के सर्वाधिक प्रभावशाली नेता चंद्रभानु गुप्त के बीच इन दिनों विवाद चलता रहा है. श्री गुप्त ने वक्तव्य दिया कि श्री पटवारी से अध्यापकों की समस्याओं के बारे में उन की जो बातचीत हुई थी उस में अध्यापकों के प्रति सहानुभूति प्रदर्शित करते हुए मैंने सिर्फ़ यह कहा था कि उस की पूर्त्ति राज्य की आर्थिक स्थिति पर ही निर्भर करती है. लेकिन श्री गुप्त का आरोप था कि हीरालाल पटवारी ने अध्यापकों में यह झूठा प्रचार किया कि अगर मध्यावधि चुनाव के बाद कांग्रेस शासक बनी तो अध्यापकों को एक कौड़ी भी अधिक नहीं मिलेगी. श्री पटवारी संघर्ष से पहले राज्यपाल से भी मिले थे और उस के बाद उन्होंने श्री गुप्त से भेंट की. कुछ लोगों का कहना है कि श्री पटवारी श्री गुप्त से मिलने के लिए राज्यपाल के सुझाव पर ही गये थे. मुमकिन है कि राज्यपाल ने उन्हें गुप्त से मिलने का सुझाव इस लिए दिया हो कि चुनाव के बाद कांग्रेस ही सत्ता प्राप्त करेगी. बातचीत के दौरान शायद श्री गुप्त ने पटवारी से यह भी कहा कि अध्यापक वेतन बढ़ाने की माँग तो बहुत ज़ोर-शोर से करते हैं, लेकिन अपने कर्त्तव्य का पालन निष्ठापूर्वक नहीं करते. जब श्री गुप्त ने अध्यापकों की नैतिकता की बात उठायी तब पटवारी ने कहा कि यह कहाँ की नैतिकता है कि अध्यापकों के वेतन से जबरदस्ती कांग्रेस निर्वाचन-कोष के लिए चंदा इकट्ठा किया जा रहा है. श्री पटवारी ने ऐसा कोई अधिकृत वक्तव्य नहीं दिया है जिस से इन समाचारों की पुष्टि हो सके. लेकिन ग्रामीण क्षेत्रों से इस तरह के समाचार आये हैं कि ज़िला बोर्ड अध्यापकों से ज़बरदस्ती चंदा लिया गया है. अध्यापक संघ ने जिस तरह का निश्चय किया है उस के अनुसार संघर्ष को लंबे दौर तक चलना है.

पुलिस राज्य : यों तो इस राज्य की जनता पुलिस के ज़ुल्म की शुरू से ही शिकार रही है लेकिन इधर उस का धैर्य और साहस बिल्कुल जवाब दे गया है. जब से राष्ट्रपति-शासन लागू हुआ है तब से तो पुलिस का ज़ुल्म अपनी सीमायें पार करने लगा है. लगता है ग़रीब जनता का कोई भी पुरसाँहाल नहीं है. पिछले कुछ महीनों में उस के अत्याचारों के जो समाचार गोंडा, बकेवर, कपासड़ तथा अन्य जगहों से मिले हैं वे इस बात के प्रमाण हैं कि पुलिस कितनी निरंकुश और स्वेच्छाचारी हो गयी है. गोंडा कांड को ले कर पहले तो काफ़ी दिनों तक सरकार चुप रही, लेकिन बाद में विरोध का स्वर बहुत तीव्र होने पर उस ने न्यायिक जाँच की माँग स्वीकार की. राजनैतिक दलों—प्रसोपा, संसोपा, कम्युनिस्ट और रिपब्लिकन ने इन अत्याचारों को ही ध्यान में रख कर राज्यपाल पर आरोप लगाया है कि 'वह अक्षम हैं तथा उन्हें शासन चलाने का कोई अधिकार नहीं है.' अभी कुछ ही दिनों पहले कपासड़ गाँव के ५५ हरिजन केंद्रीय अन्नमंत्री जगजीवनराम से मिले थे और उन्हें अपना दुखड़ा सुनाया था. रामकली नामक एक मोची की बीवी ने जगजीवनराम से कहा कि पुलिस के सिपाहियों ने उस के साथ दुर्व्यवहार किया. अपनी लिखित शिकायत में हरिजनों ने कहा कि २० सितंबर को पुलिस के सिपाहियों ने ११ चमारों को पकड़ा और ज़मींदार के दरवाजे पर ले गये. वहाँ पर रामकली से किसी कागज़ पर अँगूठा लगाने के लिए कहा गया. किशन नाम के एक व्यक्ति ने पुलिस दरोगा से आपत्ति की कि यह बात ठीक नहीं है कि एक निरक्षर औरत से उस कागज़ पर अँगूठे की निशानी लगवायी जाये जिस में लिखी बातों के बारे में उसे कोई पता नहीं है. ज़मींदार को इस पर गुस्सा आया और उस ने उसे

0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मार-मार कर बेहोश कर दिया. कहा जाता है कि बेहोश किशन को रामगंगा में फेंक देने के लिए ज़मींदार के आदमी ले जा रहे थे तब उस की पत्नी सुनहरी तथा दूसरे व्यक्तियों ने किसी तरह उसे बचाया. जब वे लोग सघना थाने में रिपोर्ट लिखवाने के लिए गये तो पुलिस ने रिपोर्ट लिखने में आनाकानी की. काफ़ी बहस-मुबाहसे के बाद रिपोर्ट लिखी गयी, तो उस में यह नहीं लिखा गया कि किशन को दरोगा की ही उपस्थिति में पीटा गया था. हरिजनों का कहना था कि उन की सुरक्षा ख़तरे में पड़ गयी है. उन्होंने जगजीवनराम से इस बात की भी माँग की वह उन्हें बचाने का प्रयत्न करें.

ओडिसा

आरोपों की कसौटी

ग़ैर-कांग्रेसी सरकार के मुख्यमंत्री आर. एन. सिंह देव और उन के दो मंत्रियों के खिलाफ़ विधानसभा में कांग्रेस पार्टी के नेता सदाशिव त्रिपाठी ने कुप्रशासन और भ्रष्टाचार के जो आरोप लगाये थे उन्हें उन से मुक्त कर दिया गया है. इन आरोपों की जाँच के लिए भूतपूर्व न्यायाधीश आर. एन. मधोलकर की अध्यक्षता में एक जाँच-आयोग का गठन किया गया था. अपने प्रतिवेदन में श्री मधोलकर ने मुख्यमंत्री तथा उन के दो मंत्रियों के खिलाफ़ लगाये गये आरोपों को बेबुनियाद ठहराया है. आरोपों की इस सूची में भूतपूर्व मुख्यमंत्री हरेकृष्ण मेहताब का भी नाम था, जिन की जाँच अभी तक पूरी नहीं हो पायी है. श्री मधोलकर ने मेहता से संबंधित कुछ तथ्य इकट्ठे किये हैं, जो सरकार को भेजे जायेंगे. एक और भूतपूर्व मुख्यमंत्री एन. के. चौधरी को भी श्री मधोलकर ने मिलने को कहा था, लेकिन उन्होंने ऐसा करने में अपनी असमर्थता ज़ाहिर कर दी. श्री मधोलकर की तीन खंडों की रिपोर्ट मुख्यमंत्री सिंहदेव को २९ सितबंबर को ही प्राप्त हो गयी थी, लेकिन विधानसभा में वक्तव्य देने से पहले मुख्यमंत्री इस प्रतिवेदन की अच्छी तरह जाँच-पड़ताल कर लेना चाहते हैं. प्रतिवेदन का पूरा कोश अभी तक प्राप्त नहीं हुआ है. लोकसभा में संसोपा के नेता रबिराय के मुख्यमंत्री द्वारा विधानसभा में रिपोर्ट रखने और उस पर बहस करने की बात को श्री सिंहदेव की दयानतदारी का सबूत माना है.

अगस्त १९६७ में ओडिसा विधानसभा में कांग्रेसी विरोधी पार्टी के नेता सदाशिव त्रिपाठी ने राष्ट्रपति को एक ज्ञापन दिया था, जिस में उन्होंने मुख्यमंत्री श्री सिंहदेव के दो साथी मंत्रियों के खिलाफ़ भ्रष्टाचार का आरोप लगाया. जब यह ज्ञापन गृहमंत्री चव्हाण को भेजा गया तो उन्होंने मुख्यमंत्री सिंहदेव की प्रतिक्रिया जाननी चाही.

सिंह देव : आरोप-मुक्त

पहले तो मुख्यमंत्री ने यह कह कर कि ये आरोप तथ्यों से परे हैं बात को ख़त्म करना चाहा, लेकिन गृहमंत्री के ज़ोर देने पर वह उस की जाँच करवाने के लिए सहमत हो गये. भूतपूर्व न्यायाधीश श्री मधोलकर की अध्यक्षता में दिल्ली और भुवनेश्वर में गुप्त रूप से कई बैठकें हुईं. अपनी इन बैठकों में श्री मधोलकर ने संबंधित व्यक्तियों से बातचीत की और इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि श्री त्रिपाठी द्वारा लगाये गये आरोप बेबुनियाद हैं. विधानसभा में इस प्रतिवेदन पर बहस के बाद संभव है कुछ और तथ्य प्रकाश में आयें.

गुजरात+मध्यप्रदेश

कृषि विश्वविद्यालय की राजनीति

गुजरात में कृषि विश्वविद्यालय स्थापित करने के लिए स्थान नियत करने के प्रश्न पर काफ़ी अर्से से विवाद चल रहा है. राज्य विधानसभा के वर्षाकालीन सत्र में भी इस विषय पर जम कर बहस हुई. सरकारी घोषणा के अनुसार यह तय किया गया है कि कृषि विश्वविद्यालय का मुख्यालय तो उत्तर गुजरात के तीन ज़िलों में से किसी एक में रहेगा, पर उस की कुछ शाखायें जूनागढ़ (सौराष्ट्र) में भी रहेंगी.

सौराष्ट्र के १९ विधायकों, कांग्रेसी नेताओं, ज़िला पंचायत और सहकारी समितियों के अधिकारियों ने गुजरात विधानसभा में कांग्रेस पार्टी के इस निर्णय का समर्थन किया है कि कृषि विश्वविद्यालय उत्तर गुजरात में ही स्थापित किया जाये. सौराष्ट्र के नेताओं ने भूतपूर्व मुख्यमंत्री डॉ० जीवराज मेहता के इस वक्तव्य का खंडन किया कि उन के क्षेत्र के प्रति भेद-भावपूर्ण नीति बरती गयी है. उन्होंने अहमदाबाद में एक संयुक्त वक्तव्य जारी कर के कहा कि कांग्रेस पार्टी का निर्णय सर्वसम्मति से लिया गया और वह राज्य के व्यापक हित की दृष्टि से उचित है.

असंतुष्ट लोगों का कहना है कि विशेषज्ञों की राय से योग्य ज़मीन की जाँच किये वग़ैर और जूनागढ़ में कृषि विश्वविद्यालय के लिए पर्याप्त सुविधायें उपलब्ध होते हुए भी सरकार ने उत्तर गुजरात में ही कृषि विश्वविद्यालय का मुख्यालय स्थापित करने का पक्षपातपूर्ण निर्णय किया है. जूनागढ़ में एक जनसमारोह में संघर्ष समिति गठित कर के सरकारी निर्णय के विरुद्ध कार्रवाई करने का निश्चय किया गया. इस समिति ने राजनैतिक पार्टियों के नेताओं, व्यावसायिक संस्थाओं और विद्यार्थियों के प्रतिनिधियों के पास १००० पत्र भेज कर अनुरोध किया कि वे अखिल सौराष्ट्र जनसमारोह में शामिल हों और निर्णय का विरोध करें. तीन प्रमुख राजनैतिक दल—कांग्रेस, जनसंघ और स्वतंत्र पार्टी इस आंदोलन को प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से प्रोत्साहन दे रहे हैं. जनसंघ ने तो आधिकारिक रूप से अखिल सौराष्ट्र जनसमारोह का समर्थन किया है, किंतु कांग्रेस और स्वतंत्र पार्टी के सदस्य व्यक्तिगत हैसियत से ही इस समारोह में शरीक़ होंगे. भूतपूर्व मंत्री रतुभाई अदनी ने कहा है कि जूनागढ़ के प्रति अनेक बार भेद-भावपूर्ण नीति बरती गयी. कृषि विश्वविद्यालय के लिए स्थान निर्धारित करना तो इन्हीं नीतियों में से एक है. जूनागढ़ की नगर कांग्रेस समिति ने भी खुले रूप से इस मुद्दे पर सरकारी रुख की तीव्र आलोचना की है, लेकिन जूनागढ़ के कांग्रेसी विधायक विधानसभा में कड़ा रुख नहीं अपना सके. इस प्रस्तावित आंदोलन की गतिविधियों का राज्य सरकार पर असर पड़ा है. इसी लिए हाल ही में गुजरात के मुख्यमंत्री श्री हितेंद्र देसाई ने जूनागढ़ ज़िले के कांग्रेसी नेताओं को समझाने के इरादे से राज्यमंत्री को भेजा था. लेकिन राज्यमंत्री को अपने मिशन में सफलता नहीं मिली, क्यों कि जूनागढ़ के प्रभावशाली कांग्रेस सदस्य श्री प्रभुलाल दवे ने कांग्रेस के भूतपूर्व तथा वर्तमान मंत्रियों व अनेक कांग्रेस कार्यकर्त्ताओं से विचार-विमर्श कर के इस आंदोलन में शरीक़ होने का फ़ैसला किया है.

वादे का वास्ता : अपने निर्णय के पक्ष में कांग्रेस पार्टी ने यह तर्क दिया है कि उत्तर गुजरात में कोई विश्वविद्यालय नहीं है और इस क्षेत्र में कृषि विश्वविद्यालय खोलने का वचन तो सरकार ने तभी दे दिया था जब सौराष्ट्र और दक्षिण गुजरात में विश्वविद्यालय स्थापित किये गये. जूनागढ़ ज़िले के कांग्रेसी तथा प्रतिपक्षी विधायकों और विशिष्ट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जनों से परामर्श ले कर ही सरकार ने यह निर्णय किया. बहरहाल राजनैतिक कारण जो भी हों कृषि विश्वविद्यालय के लिए स्थान तय करने के इरादे से गठित विशेषज्ञों की समिति ने तो विश्वविद्यालय का मुख्यालय भावनगर में ही बनाने की सिफ़ारिश की थी. सरकार ने इस सिफ़ारिश की अवहेलना कर के विश्वविद्यालय का मुख्यालय राजकोट में बनाने का फ़ैसला किया है और जब भावनगर ज़िले में इस फ़ैसले से तीव्र असंतोष व्यक्त हो गया और कांग्रेसी विधायकों ने पार्टी छोड़ने की धमकी दी तो सरकार ने भावनगर में भी विश्वविद्यालय का संयुक्त मुख्यालय खोलने का आश्वासन दिया, जो भविष्य में स्थानीय विश्वविद्यालय का रूप ले लेगा.

कृषि-स्नातकों की माँग

मध्यप्रदेश विधानसभा के गत अधिवेशन में कृषि-स्नातकों ने अपनी समस्याओं के संबंध में दर्शक-दीर्घा से पर्चे फेंके और यह माँग की कि सरकार उन की शिकायतों पर तुरंत विचार करे. इस कार्रवाई के लिए अनेक छात्रों को गिरफ़्तार किया गया और बाद में उन्हें रिहा कर दिया गया. इन दिनों रायपुर तथा अन्य स्थानों के कृषि महाविद्यालयों में हड़ताल चल रही है. कृषि-स्नातकों की समस्याओं को ले कर लगभग एक वर्ष से विवाद चल रहा है, किंतु न तो आंदोलन ही तीव्र रूप धारण करता है और न शासक ही छात्रों की माँगों पर विचार कर रहे हैं.

मधुर आश्वासन : काफ़ी अर्से पूर्व छत्तीसगढ़ के कृषि-स्नातकों ने रायपुर में आयोजित एक बैठक में अपनी समस्याओं पर विचार किया और अपनी माँगें मनवाने के लिए आंदोलन चलाने का भी इरादा ज़ाहिर किया था. मध्यप्रदेश कृषि-स्नातक संघ के अध्यक्ष श्री कृष्णानंद शर्मा ने बताया कि हज़ारों कृषि-स्नातक बेरोज़गार हैं और उन्हें शासन की ओर से सिवाय मधुर आश्वासनों के और कुछ नहीं मिलता. कृषि-स्नातकों ने **दिनमान** प्रतिनिधि को बताया कि उन की बहुत-सी समस्यायें खड़ी करने के लिए तो कृषि-विभाग ही ज़िम्मेदार है. मध्यप्रदेश में दूसरे प्रांतों के कृषि-स्नातक नियुक्त किये गये हैं, जब कि प्रदेश के कृषि-स्नातक बेकार घूम रहे हैं.

कृषि-स्नातकों ने शासन से अपने १५ सूत्रीय माँग पत्र में यह अपील की है कि कृषि की शिक्षा को तकनीकी शिक्षा घोषित की जाये. राज्य के सभी संभागों में ३०० एकड़ के दो-दो कृषि-प्रदेश स्थापित किये जायें, जिन्हें परिवहन, सिंचाई तथा बिजली की सुविधायें मुहैया की जायें और प्रति ३० एकड़ ज़मीन पर एक कृषि-स्नातक नियुक्त किया जाये. जो स्नातक नौकरी न कर के खेती करना चाहते हैं उन्हें ३० एकड़ साधन-संपन्न ज़मीन तथा ३० हज़ार रुपया नक़द अथवा ३० एकड़ ज़मीन, एक विद्युत चालित ट्यूबवेल और ५ हज़ार रुपया नक़द दिया जाये. ज़मीन तथा रुपया देने का संबंध कृषि-संचालक कार्यालय से रखा जाये और कोलोनाइज़ेशन एक्ट की १२वीं धारा रद्द कर दी जाये. कृषि-स्नातकों की नियुक्ति ग्राम-सेवक के पद पर नहीं, कृषि-विस्तार अधिकारी या इसी के समकक्ष स्तर पर किया जाये. राज्य शासन के अंतर्गत सहकारी विभाग में जो कृषि-सहकारी समितियाँ बनी हैं उन्हें चलाने के लिए कृषि-स्नातकों को नियुक्त किया जाये. राज्य के समस्त शासकीय उच्चतर माध्यमिक शालाओं में कृषि की शिक्षा अनिवार्य कर दी जाये और अध्यापन के लिए कृषि-स्नातकों की नियुक्ति हो और उन्हें कृषि-विस्तार अधिकारी के बराबर वेतन दिया जाये. जो कृषि-स्नातक प्रदेशवासी होने का जाली प्रमाणपत्र दे कर नौकरियाँ पा गये हैं उन्हें तत्काल निकाल कर स्थानीय कृषि-स्नातकों को नियुक्त किया जाये. ग्राम-सेवक के पद पर नियुक्त कृषि-स्नातकों की तत्काल पदोन्नति की जाये. जब तक कृषि-स्नातकों को ज़मीन या नौकरी नहीं मिलती तब तक उन्हें १४० रु० प्रति-माह बेकारी-भत्ता दिया जाये. कृषि-स्नातकों को ग्राम-सेवक न बना कर ग्राम कृषि-सलाहकार का पद दिया जाये और उन्हें १९० रु० माहवार प्रारंभिक वेतन दिया जाये. जिन कृषि-स्नातकों के पास अपनी ज़मीन है उन्हें आधुनिक वैज्ञानिक साधन इस्तेमाल करने के लिए १५ हज़ार रु० दिया जाये.

पुरानी शिकायत : मध्यप्रदेश में जवाहरलाल कृषि विश्वविद्यालय से संबद्ध ६ कृषि महाविद्यालय हैं और प्रत्येक महाविद्यालय से प्रति वर्ष १५० कृषि-स्नातक निकलते हैं. रायपुर, रींवा, जबलपुर, ग्वालियर, इंदौर और सीहोर में स्थित इन महाविद्यालयों की संचालन-व्यवस्था जबलपुर स्थित कृषि विश्वविद्यालय के कार्यालय से होता है. पढ़ाई तथा पाठ्यक्रम के मुद्दे पर लगभग दो वर्ष पूर्व भी कृषि-छात्रों ने आंदोलन किया था, जिस की वजह से प्रदेश के सभी महाविद्यालयों में हड़ताल हो गयी थी. उस समय छात्रों की विशेष माँग यह थी कि प्रदेश में कृषि-शिक्षा अमेरिकी पद्धति पर आधारित न हो कर भारतीय पद्धति पर होना चाहिए. **दिनमान** प्रतिनिधि को कृषि-स्नातकों ने बताया कि अमेरिकी पद्धति पर आश्रित रहने से छात्रों की स्वतंत्रता छिन जाती है और शिक्षक अपनी मर्ज़ी से छात्र का जीवन बना या बिगाड़ सकता है. आंदोलन के बावजूद अमेरिकी पद्धति आज भी बरक़रार है, हालाँकि अब इस पद्धति का थोड़ा-बहुत भारतीयकरण भी हो गया है.

कृषि-छात्रों की १५ सूत्री माँगों का विश्लेषण करने से ऐसा प्रतीत होता है कि खास कर यदि कृषि-स्नातकों को उन की मर्यादा के अनुकूल नौकरियाँ मिल जायें और खेती के इच्छुक स्नातकों को ज़मीन और आवश्यक सुविधायें मुहैया की जायें तो तमाम पेचीदगियों का हल निकल आयेगा, क्योंकि इन के अलावा अन्य माँगें तो गौण हैं, इन्हीं से संबद्ध हैं. सैद्धांतिक रूप से तो शासन ने कृषि-स्नातकों की माँगें पूरी करने का आश्वासन दिया ही है, कठिनाई सिर्फ़ इस आश्वासन को क्रियान्वित न कर पाने से पेश आ रही है.

राम-झरोखा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

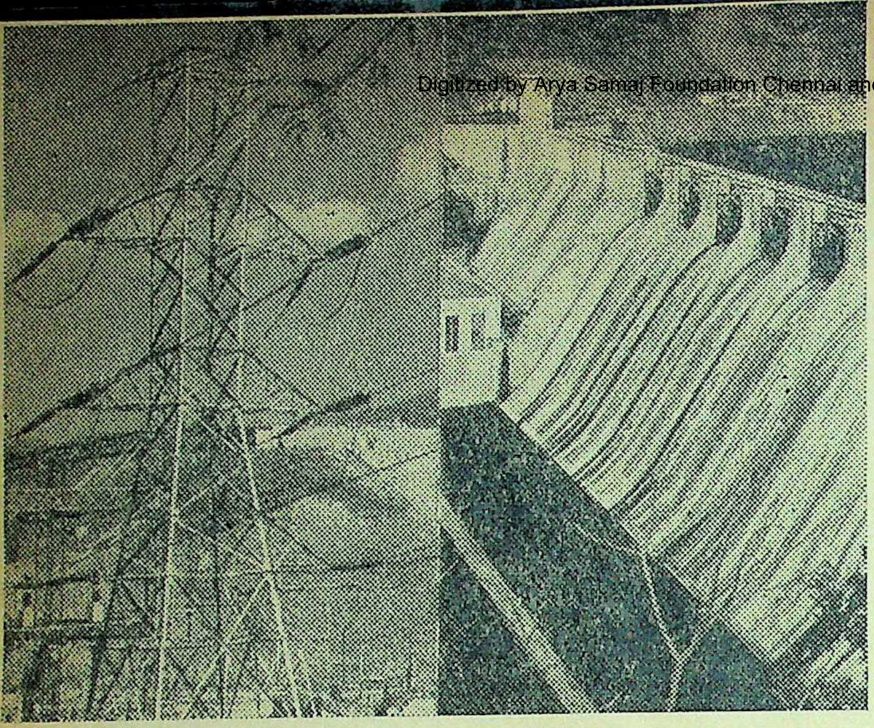

बिजली का उत्पादन और पानी पर नियंत्रण : विकास के पथ पर

सर्वेक्षण

आयोजित विकास : आदमी कितना बदला है ?

धूमधाम से आज़ादी आयी, फिर धूमधड़ाके से आर्थिक आयोजन. पहली पंचवर्षीय 'योजना', फिर दूसरी और तीसरी. लेकिन फिर पहिये पटरी से उतर गये. सार-सँभाल के लिए, पहिये को फिर पटरी पर लाने के लिए बहुत-सी बाहरी कोशिशें की गयीं. अकाल आया, बाढ़ आयी और जब कुछ सँभलता दीखा तो विदेशी कर्ज़ के देनदारों की बेरुखी ने एक नया झटका दिया. चौथे आयोजन की रूप-रेखा तिबारा बनाने की ज़रूरत आ पड़ी है. तीन साल से वार्षिक योजनाएँ बना कर अपने को दिलासा दिया जा रहा है कि आयोजित विकास का चक्र चल रहा है, जब कि असलियत कुछ दूसरी ही है. एक अर्से तक विदेशों का मुँह ताकने के बाद कहा जा रहा है कि अब हम अपने ही बूते पर आत्मनिर्भर बनने की कोशिश करेंगे—रास्ते में चाहे जितनी मुश्किलें क्यों न आयें. आयोजित विकास का पल्ला न छोड़ा जाये, तब भी और छोड़ दिया तब भी, दोनों सूरतों में मुश्किलात बढ़ेंगी: आयोजन का सिलसिला आगे न बढ़ायें तो विकास का सारा तामझाम गले का बोझ बन जायेगा—उद्योगों की मंदी का स्वाद पिछले साल हम चख चुके हैं और यदि उसे आगे बढ़ायें तो परमुखी अर्थ-रचना को स्वावलंबी बनाने में दिक़्क़तों का, अभावों का सामना करना ही पड़ेगा.

जिस आदमी से अतिरिक्त त्याग की अपेक्षा की जा रही है उस की क्या स्थिति है; तीन अथवा वार्षिक क़िस्तों समेत साढ़े तीन आयोजनों ने उसे कहाँ पहुँचा दिया है; यह जान लेना कम ज़रूरी नहीं है. आयोजित विकास से भारत का आर्थिक नक्शा बदला है, लेकिन कितना और किस तरह, यह बात अधिक महत्त्व की है : समृद्धि आयी है, लेकिन सब के लिए नहीं. आगे बढ़ने का संदेश मिला है लेकिन किसी-किसी को. आयोजनों की सफलता मापने की शायद सब से सच्ची कसौटी यही है कि उस ने विकास-अभियान में कितनों को साझीदार बनाया है. इस का उत्तर हमें निराश ही करता है. फिर भी आर्थिक परिवर्त्तन के दौर में नया कुछ बनते और पुराना कुछ टूटते समय भारत का इनसान आज अपने को कहाँ पाता है, यह जानने के लिए **दिनमान** ने एक विस्तृत सर्वेक्षण का आयोजन किया.

सर्वेक्षण में 'सोनार बँगला' की महानगरी कलकत्ता और उस के आसपास के क्षेत्र, इलाहाबाद ज़िले, गोरखपुर के पास के कुछ गाँव, आंध्रप्रदेश और मध्यप्रदेश के आदिवासी और ग़ैर-आदिवासी इलाक़ों में रहने वाले लोगों की मिज़ाजपुर्सी की गयी. ये क्षेत्र प्रतिनिधि-क्षेत्र माने जा सकते हैं. समूची सामग्री दो क़िस्तों में दी जा सकेगी. पहली खेप में 'दिनमान' प्रथम तीन क्षेत्रों की सैर करायेगा और दूसरी में बाकी तीनों की.

विकसित बंगाल: विकसित कंगाल

पिछले बीस बरसों में बंगाल काफ़ी बदल गया है.

गुलाम भारत में कलकत्ता सब से बड़ा औद्योगिक केंद्र था—यहाँ पूँजी, श्रम, कच्चे माल और परिवहन-सुविधा, किसी चीज़ की कमी नहीं थी. आज़ादी के बाद कलकत्ते का यानी बंगाल का तीव्र विकास हुआ—निजी क्षेत्र में नये उद्योगों की स्थापना और पुराने उद्योगों के विस्तार के अलावा सार्वजनिक क्षेत्र में दुर्गापुर इस्पात संयंत्र, चित्तरंजन इंजन कारखाना जैसे कारखाने खड़े किये गये. दामोदर घाटी निगम और हल्दिया बंदरगाह जैसी परियोजनाएँ हाथ में ली गयीं. छोटे-बड़े कारखानों की भरमार-सी हो गयी. उन ग्रामीण क्षेत्रों का जहाँ बिजली पहुँच गयी है स्वरूप ही बदल गया है. इसी तरह औद्योगिक क्षेत्रों में एक नयी ज़िंदगी ने जन्म लिया.

आज **चौबीस परगने** (ग्राम निश्चिंतपुर) का एक किसान **विनोद बैनर्जी** पास रेडियो रख कर संगीत की लहरी पर गाय दुहता है. गाँव के लोग रेडियो से अच्छी तरह परिचित हैं. इस लिए उस के पास गाँव वाले या पड़ोसियों की कोई भीड़ नहीं. उस का छोटा भाई साइकिल से पढ़ने जाता है. समाचार, मौसम और मनोरंजन के लिए रेडियो उपयोगी है, लेकिन साइकिल अत्यावश्यक. सिगरेट, चाय, बिस्कुट और लेमनचूस अब 'विलासिता' की चीज़ नहीं रह गयी हैं.

लेकिन हर गाँव का हर किसान ऐसा नहीं. गाँवों में एक-चौथाई से भी कम परिवार ऐसे हैं जो रेडियो और साइकिल ख़रीद सकते हैं, ख़रीदते कम ही हैं. गाँवों में एक छोटे वर्ग की आमदनी बढ़ी है और ख़र्च करने की प्रवृत्ति में काफ़ी परिवर्त्तन आया है. पहले उन के पास पैसा नहीं था. अगर था तो ख़र्च करने की आदत और ज़रूरत नहीं थी. आज किसान या खेतिहर मज़दूर अपने बच्चों के लिए न केवल बेहतर खाना-कपड़ा जुटाने के लिए मानसिक रूप से तैयार और प्रयत्नशील है बल्कि छुट्टी के दिनों में उन्हें सिनेमा देखने के लिए शहर भेजने में भी कोई ख़राबी नहीं समझता.

जिन्हें आयोजनों ने पीछे ढकेल दिया: गाँवों में भूमिहीन कृषि-मज़दूरों का एक ऐसा

उर्वरक-कारखाना : अधिक अन्न की आशा

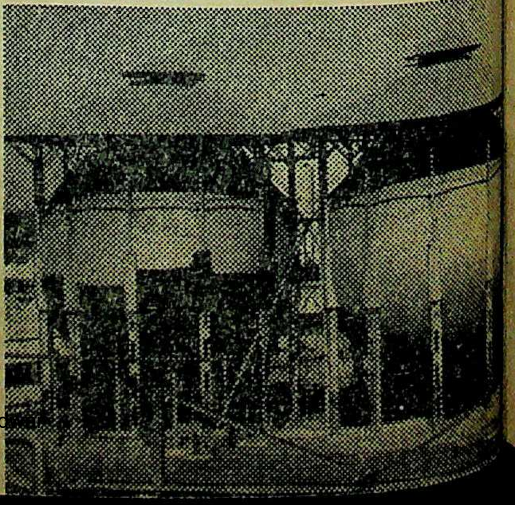

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन्नत बीज : एक उपलब्धि

वर्ग है जिसे हमारी विकास योजनाओं ने काफ़ी पीछे ढकेल दिया. थोड़ी भूमि वाले, यानी दो-तीन एकड़ भूमि के किसान मज़दूर भी अपने भूमिहीन भाइयों से कुछ ही बेहतर हैं. कृषि-मज़दूर बड़ी तेज़ी से शहरों की ओर भागते और गंदी बस्तियों का विस्तार करते रहे हैं. अनाजों की क़ीमतों में वृद्धि से मध्यम श्रेणी के और बड़े किसान अच्छा पैसा पैदा कर सके, जब कि छोटे किसान और कृषि-मज़दूर उल्टे आफ़त में पड़ गये. अनाज के दाम चौगुने-पँचगुने बढ़ गये, जब कि मज़दूरी दुगुनी-तिगुनी से ज़्यादा नहीं बढ़ी. गाँवों में मज़दूरी का कुछ भरोसा नहीं, साल में छह महीने मिल जाये, यही काफ़ी है. इस लिए **पाँचलगी** (हुगली ज़िला) का **मंगल** रिसड़ा में रिक्शा चलाना बेहतर समझता है. रिसड़ा से बामुनआड़ी रिक्शा के लिए सिर्फ़ बीस-पच्चीस मिनट का रास्ता है, लेकिन बरसात में एक ट्रिप में ही पाँच तक वसूल लेता है. लेकिन रिक्शा उसे एक और कारण से पसंद है. 'गाँव में मल्लिक बाबू का काम सेवक के रूप में उन के आदेशों के अनुसार करना पड़ेगा. न इंकार कर सकते हैं और न मोलभाव ही कर सकते हैं. लेकिन यहाँ सेवक होने के बावजूद मालिक हैं. चलायें, न चलायें. अपनी बात पर बड़े-से-बड़े बाबू को झुका दें, 'इतने से कम नहीं होगा !'

लेकिन रिक्शा हर मज़दूर के बस का नहीं, कारखानों के दरवाज़े हर मज़दूर के लिए नहीं खुले.

कस्बे : किस्से बदल रहे : स्पष्ट परिवर्तन शहरों, कस्बों और औद्योगिक बस्तियों में देखे जा सकते हैं. बीस-पच्चीस साल से कम उम्र का हर कोई फ़ुलपैंट, कमीज़ या बुशर्ट में मिलता है. जवान लड़कियाँ अलबत्ता साड़ियों में अधिक मिलती हैं हालाँकि पहले जैसी 'शारीरिक सतर्कता' या ढाँक-तोप नहीं है. मध्यम वर्गीय माँ-बाप को अपने लड़के-लड़कियों के घूमने पर कोई एतराज़ नहीं. बाँके लड़कों का तो क्या कहना.

खर्च करने की प्रवृत्ति में भारी तबदीली आयी है. एक 'भद्रलोक' आज हफ़्ते में एक-दो दिन माँस-मछली खा कर कुछ पैसे बचाना और उस का रेडियो, पंखा, सोफ़ा जैसी चीज़ों के लिए उपयोग करना बेहतर समझता है. थोड़ी-सी अच्छी स्थिति होने पर वह रेफ़्रिजरेटर और गाड़ी की भी सोचने लगता है. मध्यम वर्ग का वही साधारण व्यक्ति, जो कभी बच्चों की फ़ीस ३ रुपये ज़्यादा समझता था और नहीं दे पाता था आज १३ और २३ रु० देता है.

फ़ासले बढ़े : विकास प्रक्रिया से समाज का बहुसंख्यक वर्ग प्रभावित हुआ है लेकिन जहाँ तक अमीरी और ग़रीबी के बीच विद्यमान फ़ासले का सवाल है, वह पिछले दो दशकों में और बढ़ा है; जिसकी जीती-जागती तस्वीर कलकत्ता है. एक तरफ़ बेशुमार आलीशान इमारतें हैं और दूसरी तरफ़ बेहिसाब फैलती-घुटती गंदी बस्तियाँ. अमीर और गरीब दोनों दो छोर पर हैं और दोनों ही एक-दूसरे को हिकारत की नज़र से देखते हैं. कलकत्ता आदमी से फट रहा है. दस-पंद्रह साल पहले ४०-५० लाख लोग रहते थे. अब एक करोड़ तक हो गये हैं ! अपने आप में यह एक विस्फोटक स्थिति है. फ़ुटपाथ पर सोने वालों की संख्या दो लाख हो गयी है. हुआ करे.

व्यापक जीवन से लड़कर : सर्वेक्षण में यह बात उभर कर सामने आयी है कि योजना-बद्ध विकास का व्यापक जीवन से कोई गहरा संस्पर्श नहीं रहा. होता तो अवसाद और निराशा नहीं होती. आज समाज में विद्यमान अवसाद पारिवारिक और निजी है. पथरिया घाट के **शंभूनाथ वाशिमकर** हाई स्कूल पास कर यू को बैंक में नौकरी करते हुए बहुत खुश हैं—हमेशा खुश रहे हैं, लेकिन उन का जवान लड़का काशीनाथ वाशिमकर बी. ए. पास करने और अपने पिता से अच्छी नौकरी कनारा बैंक में पाने के बाद भी वैसा खुश और संतुष्ट नहीं है. 'हमारी परेशानी यह है कि हमारा लड़का परेशान है.'

जीवन के मूल्य बदले : साप्ताहिक **'आर्थिक जगत'** के संपादक **पं. प्रतापनारायण बाजपेयी** संतुलित विकास के लिए आयोजन को आवश्यक मानते हैं. आयोजित विकास का आम जीवन पर असर है : 'हमारे मुहल्ले हेस्टिंग्स में १५-२० साल पहले २००० रु० प्रति कट्ठा ज़मीन कोई पूछता नहीं था, आज २०,००० रु० कट्ठा भी ज़मीन नहीं अँट रही. वैसे ठीक है कि एक साधारण आदमी के लिए पहले २००० रु० बड़ी चीज़ थी और आज २०,००० रु० भी बड़ी चीज़ है. लेकिन पहले दो हज़ार दुर्लभ हो सकते थे, आज बीस हज़ार दुर्लभ नहीं हैं.

समाज में व्याप्त निराशा के विषय में आप का विचार है कि देखा-देखी लोगों ने अपनी आवश्यकताएँ बढ़ा ली हैं, उपलब्ध साधनों का ख्याल नहीं किया है—देखा-देखी साधे जोग, छीजे काया बाढ़े रोग.

आदर्शवाद ले डूबा : मर्चेन्ट्स चैंबर ऑफ़ कॉमर्स, कलकत्ता के अध्यक्ष **भगवतीप्रसाद अग्रवाल** देश के औद्योगिक व्यापारिक विकास में सार्वजनिक क्षेत्र के आदर्शवाद को सब से बड़ी बाधा मानते हैं. 'सरकारी क्षेत्र में लगभग अढ़ाई हज़ार करोड़ रुपये की पूंजी लगी हुई है, लेकिन अधिकांश उद्योग घाटे में चल रहे हैं. सरकारी हस्तक्षेप में माँग और पूर्ति पर आधारित मुक्त बाजार ढाँचा अब नहीं रहा. भयंकर मुद्रास्फीति से क़ीमतों में वृद्धि होती जा रही है, जिस से साधारण

हेस्टिंग्स (कलकत्ता) : अमीरी-ग़रीबी का साहचर्य

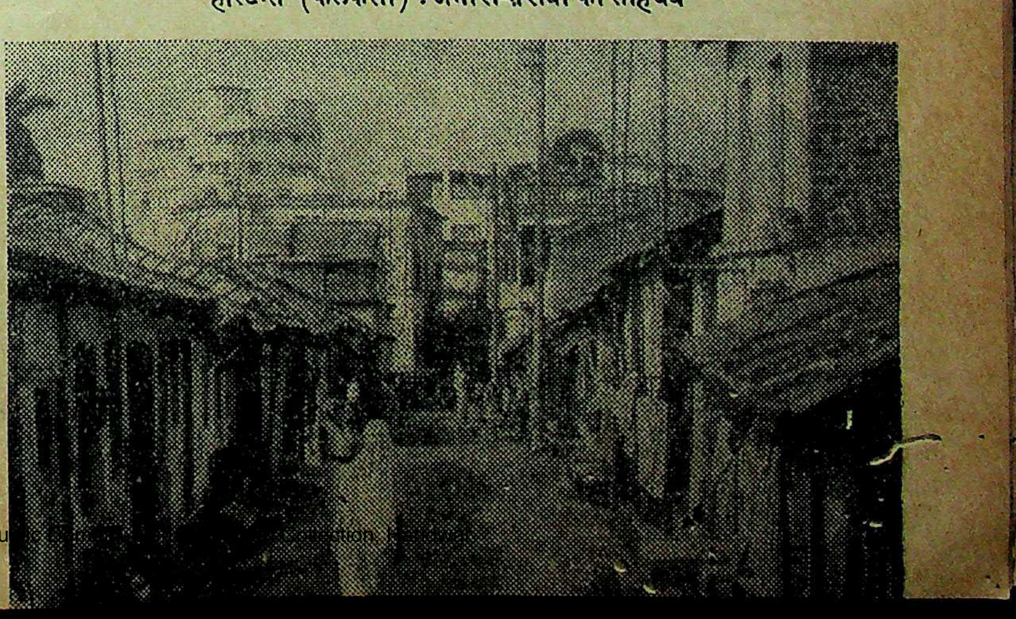

CC-0. In Public Domain...

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आनंदप्रकाश अग्रवाल   शंभूनाथ वासिक   मदनलाल   भगवतीप्रसाद अग्रवाल

जनता बेहद परेशान है. भारत दुनिया का सर्वाधिक कर वाला देश हो गया है.'

किराये की किस्तों से मोटरों की बिक्री के व्यापार में अनुभवी **आनंदप्रकाश अग्रवाल** को इस बात में बिल्कुल संदेह नहीं कि कलकत्ता और पूरे बंगाल ने संतोषजनक प्रगति की है. १९६७ में कलकत्ते में कुल २४,००० प्राइवेट गाड़ियाँ थीं; उन की संख्या अब ७०,००० हो गयी है. 'मैं खाली हाथ देवबंद से कलकत्ता आया था, अब लाखों का कारोबार है. मैं प्रारंभिक जीवन में राजनैतिक, कहूँ कांग्रेसी कार्यकर्त्ता था. भला हो बंगाल के नेता डॉ. प्रफुल्लचंद्र घोष का, जिन्होंने यहाँ की राजनीति में किसी ग़ैर-बंगाली की संभावना को क्षीण बताते हुए कोई कारोबार या नौकरी कर लेने की सलाह दी.'

बालीगंज के विनोद भट्टाचार्य : विकास में असंतुलन कर-वंचन से है. अनुपार्जित और कर-वंचन से कुछ हाथों में एकत्रित राशियाँ काला बाज़ार का दायरा बढ़ा रही हैं. उपभोग्य वस्तुओं की कमी का कारण काले धन से की जाने वाली जमाख़ोरी है. योग्यता और परिश्रम से कोई अच्छा खा, पी और रह सकता है, लाखों-करोड़ों की लागत से इमारतें नहीं बना सकता.

आय कर के वकील **मदनलाल** के अनुसार करदाताओं की तीन शिकायतें हैं : अत्यधिक करारोपण, करदाताओं को अमेरिका या दूसरे देशों जैसी सुविधाएँ न देना और कर से प्राप्त राजस्व का दुरुपयोग, ख़ासकर अनुत्पादक कार्यों में लगाना. १०,००० रु० की आय तक कोई कर नहीं लगाना चाहिए—ख़र्च और वसूली बराबर बैठती है. दूसरे, इस सीमा तक छूट देने से बचत में वृद्धि होगी और विनियोग बढ़ेगा, उपभोग्य वस्तुओं की खपत बढ़ेगी.

'केलकराज हूज़ हू इन बिज़नेस' के संपादक-संचालक ३५ वर्षीय **कृष्णकुमार तनेजा** १७ साल पहले मुल्तान से कलकत्ता खाली हाथ आये थे. 'कलकत्ता बदल गया है, अपने हज़ारों साथियों के साथ हम बदल गये हैं. कलकत्ते में सत्तू की दूकानें एक-चौथाई से भी कम हो गयी हैं.'

दिदिरपुर: बाज़ार में कपड़े के दुकानदार **यमुनाप्रसाद शुक्ल** की स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं. बढ़ी क़ीमतों के कारण उन की अवनति हो गयी है. बाज़ार में एक की जगह दस दुकानें खुल गयी हैं. उन की बिक्री ३० से ४० फ़ीसदी घट गयी है.

हेस्टिंग्स में सरकारी राशन के दुकान वाले **गोवर्धन सा** के लिए सरकार 'सब कुछ ठीक कर रही है.' उन का पड़ोसी **गंगू** मेहतर जैसा था वैसा ही है. 'शराब महँगी हो गयी है.' कलकत्ता पोर्ट कमिश्नर्स के **द्वारिका राम** (क्रेन चालक) बिल्कुल संतुष्ट हैं, 'ऐसे लोग जो आठ आने पर मँहगे हैं, सरकार से ४००-५०० रु० मासिक ले रहे हैं. अब क्या चाहिए बाबू, सरकार क्या करे ?'

रिसड़ा का रिसता ज़ख़्म : रिसड़ा यानी बंगाल का एक औद्योगिक क़स्बा, जो पिछले डेढ़ दशक में बिल्कुल बदल गया है. रेलवे लाइन के उस पार खड़ी सैकड़ों नयी, ख़ूबसूरत इमारतों को देख कर इस बात का अंदाज़ा लगा पाना मुश्किल हो जाता है कि यहाँ ग़रीब भी रहते हैं. नयी इमारतें अधिकांशतः बाहर से आ कर यहाँ जमने वालों की बनी हैं, लेकिन दस-पंद्रह साल पहले जो गंदी बस्तियाँ थीं वे ज्यों की त्यों हैं, बल्कि और फैल गयी हैं, और सघन हो गयी हैं.

कृष्णकुमार तनेजा   प्रतापनारायण बाजपेयी

शेयर के कारोबार में अच्छी आमदनी करने के बाद **रामदास मेहरा** यहाँ अच्छा मकान बना कर सुखी हैं. उन के लिए रिसड़ा कलकत्ते का एक कोना है. लेकिन **दुलालचंद ढेंकी** के लिए रिसड़ा में कोई परिवर्तन नहीं हुआ. बारह साल पहले प्रेसीडेंसी जूट मिल बंद हो गयी और ४० रुपये हफ़्ते की आमदनी हमेशा के लिए जाती रही. अब इंडिया जूट मिल में कभी-कभी काम मिलता है. 'सब समय पावा जाय ना.' ग़नीमत यह है कि 'निजेर बाड़ी आछे', जिस से घर भाड़ा नहीं चुकाना पड़ता.

५५ वर्षीय **अपजाकुमार गुप्त** रिसड़ा नगरपालिका में सफ़ाई-निरीक्षक हैं. १९४८ में आप को कुल ९० रु. मिलता था और आज २१५ रु. मिलता है. उन की तनख़्वाह दुगुनी बढ़ी और दायित्व छह गुना. तब परिवार में तीन थे, आज पंद्रह हैं. एक लड़का फ़ॉस्फ़ेट कंपनी में काम करता है, ट्यूशन ढूँढता रहता है. 'कोनो रक़म चोलचे' **रंगनाथ दास** एक दक्षिण भारतीय हैं, जो पिछले ४५ वर्ष से रिसड़ा में हैं. उन की तनख़्वाह ७० रु० से बढ़ कर १९६ रु. हो गयी है, लेकिन जीना पहले से ज़्यादा मुश्किल हो गया है. दक्षिण भारत से आ कर यहाँ बसने से कोई फ़ायदा नहीं हुआ. यह पूछे जाने पर कि आर्थिक स्थिति में न सही, दूसरी स्थितियों में क्या तब्दीलियाँ आयी हैं, आप ने कहा : 'अब मैं अपनी स्थिति में किसी परिवर्तन की आशा नहीं करता'.

ग्राम-गरिमा : पिछले तीन-चार साल से, जब से अनाजों की क़ीमतें कई गुना बढ़ गयी हैं, गाँवों का महत्त्व बढ़ गया है, बड़े किसानों की आमदनी अचानक कई गुना हो गयी है. पश्चिम बंगाल में ज़मींदारी का उन्मूलन नहीं हुआ है. ज़मींदारों या जोतदारों से बँटाई पर ज़मीन ले कर खेती करने वाले 'बरगादार' राज्य के हर हिस्से में पाये जाते हैं. कई-कई सौ या हज़ारों बीघे ज़मीन के ज़मींदार अक्सर शहरों में रहते हैं. खेती बँटाई पर या मज़दूरी पर दूसरे लोग करते हैं. नक्सलबाड़ी आंदोलन के दौरान ज़मींदारों की ऐसी ही ज़मीनों और अन्न-भंडारों पर ज़बरदस्ती कब्ज़ा करना शुरू कर दिया गया था. भूमि सुधार क़ानून सरकारी फ़ाइलों तक महदूद है.

निश्चिंतपुर (चौबीस परगना) के **विजय बाबू** निश्चिंत हैं और दक्षिण रायपुर के **सुधांशु बाबू** के खेतों में सुधा की वर्षा होने लगी है—बारहों महीने कुछ-न-कुछ होता रहता है. इन दोनों ही जोतदारों के पास भरपूर खेत हैं, इस लिए हर फ़सल अगर ठीक हुई तो १०,००० से ३०,००० रु. तक की आमदनी हो जाती है. विजय बाबू का कहना है कि 'गाँवों का तेज़ी से विकास जारी है.'

बारह बीघा खेत वाले **सुबोध राय** (बीरपुर, हावड़ा) फ़रमाते हैं कि गाँवों की जनता के साथ न्याय करना है तो सब से पहले, भूमि का समान वितरण होना चाहिए और भूमिहीन कृषि-मज़दूरों को, जिन की हालत बेहद दयनीय है, भूमि उपलब्ध करायी जानी चाहिए. ऐसे मज़दूरों के लिए विकास और आज़ादी का कोई ख़ास मूल्य नहीं है.

पाँचलगी (हुगली) के **राखाल बाबू** की

दुलालचंद ढेंकी,   काशीनाथ सिंह,   रंगनाथन दास,   अपजाकुमार गुप्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिकायत है कि कोई पढ़ा-लिखा आदमी गाँवों में रहना पसंद नहीं करता. वह गाँव की सुविधाओं को नितांत अपर्याप्त और वातावरण को बिल्कुल अनाकर्षक, विषाक्त मानता है. वोट की महिमा से गाँवों में आपसी मेलजोल घट गया है. दलबंदी के कलकत्ते से लगभग बीस-पच्चीस मील दूर **नंदनपुर** की **सावित्री**, **बेंजनहरिया** की **लक्ष्मी** और **आजुमन** और मल्लिक पाड़ा की **गोरा** एक साथ दिन भर घास काटती हैं. इन के पास खेत नहीं, लेकिन न का कार्य-क्षेत्र खेत है. एक-दो रुपये मिल जाया करते हैं. **दिनमान** के प्रतिनिधि ने बातचीत के लिए आजुमन को रोका तो वह झुँझला उठी. 'केनो की कोरबे—की हबे' (—फ़ायदा क्या है ! आखिर इस से क्या होगा !) जब एक आदमी ने बताया कि तुम्हारी अवस्था की रिपोर्ट लालबाड़ी जायेगी तो उस की आँखें कुछ नम हो उठीं, फिर उस ने अपने घर के १३ सदस्यों के विषय

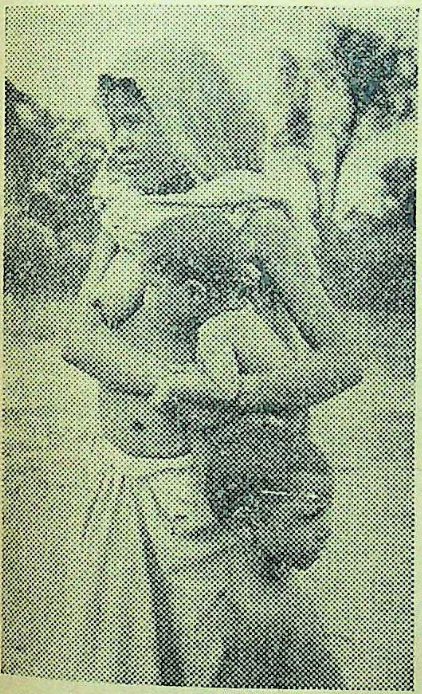

मलिना अमलिना : 'सार्थक जनम आमार जन्मेछि एइ देशे'

में बताया : किसी तरह चल जाता है. खाविंद नहीं रहे, पाँच बच्चों में से दो पढ़ते हैं. १९ वर्षीय सिराजुल दो रुपये कमा लेता है. सावित्री के साथ ग़नीमत है कि उस के स्वामी आशुदास बारोज़गार—बजबज में मिस्त्री हैं. लेकिन १० के परिवार में एक के कमाने से क्या होगा—इस लिए उसे भी अपनी छोटी लड़की के साथ घास काटनी पड़ती है. लक्ष्मी और गोरा ने एक-एक गाय रख छोड़ी है. बेंजनहरिया के **सादीमनी बेग** के अनुसार गाँवों के ९९ फ़ीसदी लोग दुखी हैं.

रायपुर की तेइस वर्षीया **अमलिना** के तीन बच्चे हैं. तीन बार गाँव बदल चुकी, लेकिन कहीं राग नहीं जमा. हंसा अपनी **अमली** को बहुत प्यार करता है. लेकिन बाँस की क़ीमतें घट गयी हैं, टोकरियों की माँग पहले जैसी नहीं रही.

गोरखपुर : गाँवों के आसपास

गोरखपुर ज़िले के आसपास के गाँवों में यदि आप यह मान कर जायें कि पिछले तीन आयोजनों से होने वाली 'समृद्धि' की झलक मिलेगी तो ज़्यादातर स्थितियों में आप निराश होंगे और ऐसे गाँव भी काफ़ी संख्या में मिलेंगे जो सचमुच 'अंधकारमय क्षेत्र' जान पड़ेंगे—उसी तरह धूल के अँधेरे में लिपटे और उदास, संभावनाहीन, जहाँ विकास-योजनाओं का हल्का-सा स्पर्श भी नहीं मिलेगा. ग्राम शिक्षा निकेतन या ग्रामोद्योग-प्रशिक्षण केंद्र तो दूर, प्राइमरी स्कूल भी नहीं मिलेंगे, जो टाट के टुकड़ों और काले तख़्तों से पहचाने जाते हैं. जिन गाँवों में आयोजन से स्पष्ट 'लाभ' दिखाई देगा वहाँ कभी-कभी यह भी लगेगा कि लाभ का बहुत बड़ा हिस्सा सामान्य जन के लिए नहीं, एक विशिष्ट वर्ग के लिए है.

यह भी कम रोचक नहीं कि गाँव वाले 'योजना' के बारे में नहीं जानते, 'ब्लॉक' या 'विकास' के बारे में जानते हैं. ब्लॉक का कोई संबंध योजना से है ? होगा ! सड़कें, ट्यूबवेल, अच्छे बीज, अच्छी खाद का वितरण, खेती-संबंधी नया प्रशिक्षण या प्रयोग और अब कभी-कभी परिवार-नियोजन की सूझ-बूझ या प्रचार यही सब ब्लॉक और जनता के रिश्ते हैं. गाँव की जनता के, जो पहले सिर्फ़ चौंकती थी और अब जिस ने यह सब 'स्वीकार' कर लिया है—परिवार-नियोजन वाले मुद्दे को छोड़ कर—क्योंकि परिवार नियोजन के लिए 'केस' स्वेच्छा से कभी नहीं मिलता, सिर्फ रुपये की शर्त पर मिलता है. झूठ का एक ही चेहरा नहीं है, कई चेहरे हैं. कलानी गाँव के **रामप्यारे त्रिपाठी** ने बताया कि 'ब्लॉक से अच्छे बीज हम ले जाते हैं—हमेशा नहीं मिल पाता, जब नहीं मिलता है तब भी रजिस्टर में हमारे नाम से दर्ज हो सकता है.' समृद्धि आयी है गाँवों में—लेकिन उतनी नहीं जितनी काग़ज़ों पर, आयोजना-आयोग के आँकड़ों में या ज़िला नियोजन कार्यालय से प्रसारित होने वाली रिपोर्टों में. बहुसंख्यक किसानों के लिए अब भी साधन वही हैं जो वर्षों पहले थे और फ़ायदा भी वैसा ही है जैसा पहले था—'गुज़र-बसर हो सके', बस इतना ही. जागरूकता के बावजूद मान्यताएँ भी जहाँ की तहाँ हैं—कोई क्रांतिकारी परिवर्त्तन बुनियादी धारणाओं में हुआ हो, ऐसा नहीं है. आदर्श ज़रूर धुँधले पड़ गये हैं और अब लोग उन की चिंता नहीं करते. गाँव के लोगों की ही भाषा में लोग पहले की अपेक्षा 'चालू' हो गये हैं. झूठ से ही उन्नति होनी है तो उन्हें आपत्ति नहीं (आद्यप्रसाद : गाँव परसिया इंद्रपुर). इसी के साथ यह भी सही है कि सभी गाँव एक-जैसे नहीं हैं— न उन की आर्थिक या सामाजिक प्रगति एक जैसी है न समस्याएँ. सभी गाँवों में राजनैतिक-सामाजिक प्रतिष्ठा का आधार भी एक जैसा नहीं है. एक जैसी हैं तो मान्यताएँ—उन में अंतर आया है तो सब कहीं, अंतर नहीं आया है तो फिर कहीं नहीं आया है.

सभी गाँव **रामपुर बल्डीहा** नहीं हो सकते, जहाँ लोग मान कर चलते हैं कि 'पुरुषार्थ' का कोई विकल्प नहीं है. साधारण स्थिति के घरों में भी सिलाई की मशीनें हैं (पूरे गाँव में करीब ६०) जो रेडीमेड कपड़े बनाती हैं. दूसरे शब्दों में, यह उद्यमी गाँव है और 'उद्यम' सब कहीं फैलता है. ब्राह्मण वर्ग के लोग 'मरने में भी खाते हैं और जीने में भी' और उन्हीं के सामने कोइरियों की काश्त बढ़ती जा रही है. यों मुसलमान इस गाँव में ज़्यादा हैं और उन्हीं की राजनैतिक प्रतिष्ठा भी बढ़ी है (सामाजिक प्रतिष्ठा नहीं—क्योंकि समाज ज़रा अपने ढंग से चलता है). इसी तर्क से जहाँ ब्राह्मण गाँव में ज़्यादा हैं वहाँ ब्राह्मणों की (जैसी कालोनी में), जहाँ सैंथवार केवट ज़्यादा हैं—वहाँ संथवारों या केवटों की (जैसे परसिया में), जहाँ हरिजन ज़्यादा हैं वहाँ हरिजनों की (जैसे रजौड़ा में) राजनैतिक प्रतिष्ठा बढ़ी है. कम्युनिस्ट पार्टी के लोग भी जीतेंगे तो जाति वाले तर्क का फ़ायदा उठा कर. पर प्रतिष्ठा चाहे जिस की बढ़े, रामपुर बल्डीहा के **जगदीश नारायण तिवारी** के अनुसार 'संपन्न हुआ है शूद्र, क्यों कि वह कमाई पर रहता है. हर घर के लोग कोयला खदानों में हैं या टाटा में—वे आते हैं, ब्राह्मणों की जमीन खरीद जाते हैं—मकान पक्का कर जाते हैं. लेकिन विश्लेषण कर के देखा जाये तो इस वर्ग की संपन्नता नज़र आने का कारण यह है कि इन का कोई आधार पहले से नहीं था—शून्य से इन की शुरूआत है. खेती जिनके पास थी, है. वितरण में तो फर्क आया नहीं—खेती उसी की अच्छी है जिस की काश्त है—यहाँ भी कोइरी नंबर मार ले जायेगा !' लेकिन 'पुरुषार्थ से—योजना से मिलने वाली सुविधाओं से नहीं'—क्योंकि सुविधाएँ तो अक्सर उसे बाद में मिलेंगी. इस सवाल को एक दूसरी दृष्टि से भी देखना चाहिए—शहरों की तरह गाँवों में भी मजदूरी बढ़ी है और मजदूर आसानी से नहीं मिलते हैं—सुविधाजीवी वर्ग के लिए यह एक बड़ी असुविधा हो गयी है. हल चलाने का मासिक रेट १५ से ६० रुपये महीने तक आ गया है. जानकारी ज़रूर बढ़ गयी है. काग़ज़ पर दिखाई देने वाली गोष्ठियों-सेमिनारों के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निर्जीव होने के बावजूद जानकारी बढ़ाने का सब से समर्थ साधन साबित हुआ है नये उपकरणों से संभव होने वाला व्यावहारिक लाभ. जहाँ योजनाओं का कुछ भी संपर्क, प्रभाव है वहाँ का किसान संकर मक्का, ताई-चुङ धान, लरमा 'तेजो' गेहूँ 'पूसा ५२' गेहूँ आदि की बातें बड़े मजे से करता है. किसान ये सुविधाएँ पाने की चिंता अपने-आप करता है और उस की शिकायत रहती है कि सुविधाएँ जितनी चाहिए, नहीं मिलतीं. नौकरशाही के तरीके भी रुकावट डालते हैं. गाँव के किसान की पहुँच प्रायः 'ग्रामसेवकों' तक होती है—'विकास खंड अधिकारियों' तक नहीं. अधिकारी उन मेलों में ही दिखाई देते हैं जो किसी मंत्री या उच्चतर अधिकारी को सिर्फ़ दिखाने के लिए और अनुदान की रक़म को वित्त वर्ष के अंत तक निबहा देने के लिए लगाये जाते हैं. यह भी नौकरशाही की ही कृपा है कि किसान के लिए खाद है, तो बीज नहीं, बीज है तो खाद नहीं और कभी-कभी खाद के साथ वह बीज भी किसान के गले मढ़ दिया जाता है जिस का उपयोग, किसान जानता है कि उसे नहीं करना है.

सरकारी कर्मचारियों के प्रति घृणा है तो आतंक भी है. पुलिस के दलाल बढ़ गये हैं. घूस की रक़म बढ़ गयी है, मुद्दे बदल गये हैं, घूस सभी देते हैं; शिक्षित-अशिक्षित सभी, क्यों कि 'ट्यूबवेल से पानी लेना है, बिजली का फ़ायदा लेना है—थोड़ी अतिरिक्त सुविधाएँ भी लेनी हैं' काफ़ी हद तक कहना सही है कि बदली स्थितियों में भी गाँवों में स्वस्थ जन-तांत्रिक व्यवस्था नहीं के बराबर है. राष्ट्रपति शासन हो या जनता का शासन, नौकरशाही का अंकुश व्यवस्था पर हर हालत में कायम है.

इन तमाम चित्रों को मिला कर देखने के लिए एक बार दो तरह के और समीपी गाँवों को लेना चाहिए. उदाहरण के लिए परतावल ब्लाक का गाँव है **परसिया इंद्रपुर** और पनियरा ब्लाक का गाँव है **रजौड़ा**. परसिया में १०० घर होंगे—सब से ज्यादा सैंथवार, फिर मुसलमान, केवट, मल्लाह, ब्राह्मण, कुम्हार. कायस्थ घर एक ही है. रजौड़ी कुछ बड़ा ही है—१४ टोलों का गाँव—जिस में हरिजन ज्यादा हैं. पर समृद्धि **पनियरा** में है और स्पष्ट है—रजौड़ा पृष्ठभूमि में है—पिछड़ा हुआ है. पनियरा में समृद्धि के आने का क्रम देखना हो तो यह समझना चाहिए कि पहले सिर्फ़ तीन घरों में 'ओसारे' (बरामदे) थे—बरसात के दिनों में बहुत-से लोग इन्हीं में शरण लेते थे. अब करीब-करीब सभी घर पक्के हैं—छल्लियाँ लग गयी हैं, सब के बरामदे हैं. अमीर अमीर हुआ है ग़रीब और ग़रीब, यह धारणा ग़लत साबित हुई है. उत्पादन बढ़ा है—कई गुना, क्यों कि सुविधाएँ भरपूर मिली हैं. यह जानने की बात है कि इसी गाँव से लगे हुए मटहट बाजार में इटावा के बाद उत्तर-

अकाल की छाया : एक और तस्वीर

प्रदेश में सब से पहले सामुदायिक विकास योजना शुरू हुई थी. अभी इस गाँव के **हरिहर सिंह** की खेती की प्रगति ने रेकार्ड कायम किया है, जिसे राज्यपाल डॉ० वी. गोपाल रेड्डी देखने आये थे. किसान जागरूक है. खेत कभी खाली नहीं रहते—रोटेशन से खेती होती है. दूसरे उद्योग भी पनप रहे हैं. बढ़ई इस गाँव में कई हैं, जिन के कारखाने हैं, जो सरकार के लिए भी चीज़ें बनाते हैं. स्कूल भी हैं. लोग संतुष्ट हैं. इस गाँव में मज़दूर नहीं मिलेगा—वह अपना काम करेगा. लेकिन रजौड़ा तक सड़कें नहीं जातीं—सभी साधन सुलभ नहीं हैं—स्कूल अब जा कर खुला है—बढ़ई यहाँ भी हैं, लेकिन चोरी से लकड़ी जंगल से मार लेंगे; हाथ पर हाथ धर कर बैठे रहेंगे—घर घुस्सू भी हैं. वही—'अंधकारमय क्षेत्र!'

कहीं-कहीं समृद्धि का क्रम सीधा है—वर्ग के क्रम से विषमता नहीं है उस में. पिपरौली ब्लाक के **कलानी** गाँव के पुराने ज़मींदार **ब्रह्मानंद त्रिपाठी**. मकान काफ़ी बड़ा है. पिछले दिनों बीस बीघे खेत का 'बैनामा लिया हैं'. खेती से खाने के बाद १००० का गल्ला बिक जाता है. मध्यवर्ग के **रामप्यारे त्रिपाठी** ने अपने भाइयों की मदद से हालत सुधार ली है. नौकरी की आय से ७ एकड़ बैनामा लिया है—मकान बना लिया है. **भोला** हरिजन के घर वाले 'कमाई' पर रहते हैं, १००० रुपये की मासिक आय हो गयी है. हाल में ही चार एकड़ बैनामा लिया है, मकान बनाया है. मतलब यह कि सभी पहले से संतुष्ट सुखी हैं. यहाँ भी योजना का फ़ायदा कम है, पुरुषार्थ का ज्यादा. योजना वाले तो यह देखने भी नहीं आते कि पहली-दूसरी योजना में बनी हुई नालियाँ आज तक कच्ची क्यों हैं.

सब मिला कर जनतांत्रिक व्यवस्था नहीं है, या स्वस्थ नहीं है. राजनैतिक दल निष्क्रिय हैं या संकीर्ण स्वार्थों-असंगतियों के शिकार हैं और नौकरशाही क्रूरता की हद तक दूषित और विकृत हैं.

इलाहाबाद : विकास की प्रतीक्षा में

उत्तरप्रदेश का इलाहाबाद यद्यपि प्रधान-मंत्रियों का नगर है फिर भी वह पिछड़ा हुआ है. विकास की दृष्टि से भी वह उपेक्षित है.

इलाहाबाद की आबादी ३० लाख से अधिक है (१७ वर्षों में ३३ प्रतिशत से अधिक की वृद्धि हुई है). औद्योगिक उत्पादन और खेती की स्थिति एक दृष्टि से सँवरी हुई है. सरकारी दावा है कि खाद्योत्पादन में ५० प्रतिशत वृद्धि हुई है; उद्योग-क्षेत्र में केवल नैनी औद्योगिक बस्ती थी, लेकिन अब फूलपुर में भी एक औद्योगिक बस्ती बनी है. एक केंद्र बमरौली के आसपास भी बन रहा है. लेकिन वास्तविकता यह है इलाहाबाद आज भी ग़रीब है. पिछले तीन वर्षों में सूखा ने इस ज़िले को और भी तबाह कर दिया है.

मूल-समस्या : इलाहाबाद उत्तरप्रदेश के अन्य ज़िलों की तरह मुख्यतः कृषि-प्रधान क्षेत्र है. सरकार का अपुष्ट दावा है कि खेती के क्षेत्र में वृद्धि हुई है, दो फ़सली क्षेत्र का विकास हुआ है, खेती के उन्नत साधनों का प्रयोग बढ़ गया है लेकिन सामान्य किसान या ग़रीब खेतिहर की हालत में कोई परिवर्त्तन नहीं है. वह जैसा था वैसा ही है. पहले आयोजन के समय कुल १०,६८७०६ एकड़ भूमि में खेती होती थी. आज १२,४१,००० लाख एकड़ भूमि में खेती हो रही है. केवल १७,२२९४ एकड़ भूमि में खेती नये सिरे से हो सकी. सरकारी आँकड़ों में इस का हवाला कहीं भी नहीं है कि कितनी नयी ज़मीन तोड़ी गयी.

यदि नयी भूमि तोड़ी नहीं गयी, केवल जितने खेत बने उस में ही खेती होती रही तो इस वृद्धि का मतलब क्या है? खेतिहर मजदूर आज भी उसी दशा में है जिस दशा में आज से बीस वर्ष पहले था. वह मजदूरी और बेगार करने के लिए विवश है. शहर में आ कर रिक्शा चलाता है और देश में विकास का साझीदार नहीं बन पाता. पहले आयोजन के शुरू में केवल ३.१७ लाख टन अन्न होता था. पहले आयोजन के अंत में ३.८० लाख टन, दूसरे आयोजन के अंत में ४.५४ लाख टन और तीसरे आयोजन के अंत में ४.७७ लाख टन अन्न पैदा हुआ, जब कि ३३ प्रतिशत के हिसाब से आबादी बढ़ी है. आयोजनों में जितना रुपया खर्च किया गया है उस के अनुपात में खेती नहीं बढ़ी है. इस का कारण क्या है?

इस के कई कारण हैं. पहले तो यह कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृषि योजना का लाभ सब को नहीं मिला. वह उसी को मिला जो ज़मानत दे सकता था और सरकारी पैसा क़र्ज़ ले सकता था. यह क़र्ज़ लेने वाला वर्ग या तो बड़ा या मध्यम वर्ग का ज़मींदार है, जो अपनी पूरी ज़मीन खुद कभी भी नहीं बोता. वह या तो लगान पर ज़मीन उठाता है या बिना खेत में मेहनत किये कोदों, सावाँ, मटर आदि बो देता है और उस की परवाह नहीं करता. परवाह न करने का कारण यह है कि वह पटवारी के काग़ज़ में अपनी मिलकियत दिखाने के लिए खेती करता है. नतीजा यह है कि पहले आयोजन के दौरान जिस गति से पैदावार बढ़ी है वह दूसरे आयोजन में नहीं बढ़ी. तीसरे आयोजन में वृद्धि की दर और भी घट गयी. दूसरा कारण यह है कि योजनाओं का सारा पैसा गाँव के एक विशिष्ट राजनैतिक वर्ग को मिलता है—कांग्रेस को राजनैतिक लाभ पहुँचाने वाला वर्ग. आज भारतीय गाँवों में सत्ता, अधिकार और राजनीति उस ख़ास वर्ग के पास है जो हर प्रकार से तक़ावी से ले कर ग्रामसभा, कूप, नलकूप तक के लिए सरकारी पैसा लाता है. बदले में वह राजनैतिक मत और वोट का भी हिसाब-किताब रखता है. पूरे गाँव के गठन में खाद में चोरबाज़ारी से ले कर सड़क, कुआँ, मदरसा आदि तक के बनने और बनवाने में यही वर्ग सामने आता है. यदि इस की चमड़ी उधेड़ कर देखा जाये तो इस में वही पुराना ज़मींदार, साहूकार, ब्राह्मण, ठाकुर और वैश्य है जो ज़मींदार के समय मौज करता था. अंतर केवल इतना आया है कि नेता वर्ग, जो स्वतंत्रता के पहले इन से लड़ता था, वह भी इस दल में शामिल हो गया है.

विकास की लीला किस के हाथ में है : "कितना समय आप क्षेत्रों में दे पाते हैं ?" इस प्रश्न पर एक विकास अधिकारी पहले तो मौन रहे, फिर बोले, "पूरा समय ही समझिए". लेकिन जब इस पूरे समय का विश्लेषण कराया तो पता चला कि इस विकास लीला में ९० प्रतिशत शक्ति फ़ाइलों के अवलोकन में सर्फ़ हो जाती है. केवल १० प्रतिशत शक्ति वास्तविक रूप में गाँवों में लग पाती है. 'ब्लाक ऑफ़िसर' को अधिकांश समय काग़ज़ का पेट भरने में देना पड़ता है. कृषि अधिकारी के पास साधन नहीं हैं. बहुत मामूली-सी व्यवस्था है मिट्टी की प्रकृति की जाँच की. बिना इस की जाँच किये न तो खाद की क़िस्म जानी जा सकती है और न ज़मीन की उत्पादन शक्ति. मिट्टी की जाँच के लिए किसानों को वाराणसी जाना पड़ता है.

यही दशा सिंचाई की भी है. पहले आयोजन में इलाहाबाद में कुल २,००,८८० एकड़ जमीन की सिंचाई हो सकती थी. शेष आठ लाख एकड़ जमीन को आकाश-वृत्ति पर खेती करनी पड़ती थी. सरकारी आँकड़ों के अनुसार तीसरी योजना के अंत में अब २९६११६ एकड़ ज़मीन की सुविधा हो सकती है. दूसरे शब्दों में, पंद्रह वर्षों में केवल ९५२३६ एकड़ ज़मीन को अतिरिक्त सुविधा मिली है. आँकड़ों का कहना है कि सिंचाई में ४७ प्रतिशत की वृद्धि हुई जब कि वास्तविकता यह है कि केवल ६३४२ एकड़ ज़मीन सालाना की गति से सिंचाई सुविधाओं का विकास हुआ. इस गति से लगभग बीस साल से अधिक लग जायेंगे. इस में भी हमारी योजना पद्धति ने सामूहिक विकास का रूप गांवों में नहीं फैलाया है. नलकूप वहीं लगा सकता है जो चार-पाँच हज़ार रुपये की जमानत दे सकता हो.

औद्योगिक विकास : इलाहाबाद स्वतंत्रता के पूर्व केवल सांस्कृतिक केंद्र माना जाता था. यहाँ छोटे-बड़े मिला कर कुल २० कारखाने थे. सरकारी विज्ञप्ति के अनुसार तीसरे पंचवर्षीय आयोजन के अंत तक इलाहाबाद में ६८६९ छोटे-बड़े कारखाने बन गये हैं. लेकिन अभी तक कोई २०० कारखाने दर्ज हो पाये हैं. सरकार की ओर से १९५१ में २०० एकड़ में नैनी का औद्योगिक नगर बसाया गया था. आज नैनी औद्योगिक बस्ती ४०८४ एकड़ में फैली हुई है लेकिन इस विस्तार की कोई सार्थकता नहीं है क्योंकि इस क्षेत्र में उद्योग करने वाले लोगों को कच्चा माल समय से नहीं मिल पाता. नैनी के १२ बड़े उद्योगों में ६.०४ करोड़ रुपया लगा है. इन उद्योगों में लगभग ५००० आदमी काम करते हैं. शेष ९५ छोटे उद्योगों में भी लगभग १२०० आदमी लगे हैं.

कुटीर उद्योग : इलाहाबाद के गाँवों में घूमने के बाद कुटीर उद्योगों की दशा देख कर निराशा हुई. कुटीर उद्योग उन खेत मजदूरों और भूमिहीनों के विकसित होने थे जिनके पास आय का और कोई साधन नहीं था, लेकिन इस पक्ष पर बहुत कम ध्यान दिया गया. यह उपेक्षा गाँव के समाज को विकृत कर रही है. बेंत, बाँस एवं मूँज की कलात्मक वस्तुओं के निर्माण के लिए केवल ५४ हजार रुपये का क़र्ज़ और १२६८९ रुपये का अनुदान दिया गया है. बस ! गाँव की अच्छी-खासी आबादी हरिजनों आदि की होती है. १९५५-५६ में एक बार ही केवल ५ हज़ार रुपये कर्ज़ और २५ हज़ार रुपया अनुदान के रूप में चमड़े के काम के लिए दिया गया था. उस के बाद पिछले बारह साल में किसी ने उधर ध्यान ही नहीं दिया.

छोटे उद्योग : छोटे उद्योगों की दशा अपेक्षया अच्छी है. पूरे ज़िले में लगभग ३१३२ हथकरघे हैं. हथकरघों के उद्योग में पूरे ज़िले में कुल ३३ सहकारी समितियाँ हैं. इस योजना में १,०४ ४२,८२५ रु. हिस्सा-पूँजी के रूप में लगा है. बिक्री-कर की छूट के रूप में सरकार ने १५,३९,००० रुपया दिया है. इस योजना में भी अधिकतर उच्च मध्यम वर्ग ही आ पाया है. सरकारी आँकड़ों के हिसाब से इस उद्योग ने पिछले दस वर्षों में लगभग ३ करोड़ रुपये की क़ीमत का २,१३,००,००० मीटर कपड़ा बेचा है. इस का यदि हिसाब लगाया जाये तो एक करघे की साल भर की उत्पादन शक्ति केवल ६८० मीटर आती है. अर्थात् यदि २० ग़ज़ का थान मान लिया जाये तो ३४ थान सालाना उत्पादन होता है जो लगभग ३ थान महीने अर्थात् १८० रु. मास का माल पैदा करता है. यदि एक आदमी के पास चार हथकरघे हों तब भी वह ७५० रु. का माल महीने में पैदा करता है. बचत के रूप में उसे क्या मिलता है, कहा नहीं जा सकता क्योंकि कुछ लोगों का कहना है कि यह व्यवसाय केवल एक सहायक रोज़गार के रूप में ही चल सकता है. यही हाल पावरलूम का भी है. इस समय ज़िले में ३०० पावरलूम चल रहे हैं जिन की वार्षिक उत्पादन क्षमता ३० लाख रुपये का कपड़ा तैयार करना है.

सहकारिता की करामात : तीसरे आयोजन के अंत में ५३७ सहकारी समितियाँ और ५२५ साधन समितियाँ बन गयी हैं. १८ बड़ी क्षेत्रीय सहकारी समितियों का भी संगठन हो गया है. १९६६ तक इन समितियों की सदस्य संख्या १,८७,६५७ हो गयी. खेती के क्षेत्र में पूरे ज़िले में केवल ३० समितियाँ ही शेष कार्य कर रही हैं. पूरे ज़िले में क्रय-विक्रय के क्षेत्र में ४ प्रोसेसिंग यूनिट के रूप में १२ श्रमिक समितियाँ और ६३ ब्लाक समितियाँ कार्य कर रही हैं. ज़िला स्तर पर एक सहकारी बैंक, एक दूध सप्लाई यूनियन, एक थोक उपभोक्ता स्टोर और ३६ प्रारंभिक उपभोक्ता स्टोर हैं. यद्यपि ये समितियाँ पूरे ज़िले के लिए पर्याप्त नहीं हैं फिर भी जितनी हैं उतनी भी कुशलता से नहीं चल पा रही हैं.

गाँवों में शिक्षा की स्थिति : सतही तौर पर यदि देखा जाये तो १९४७ में ग्रामीण क्षेत्र में छह वर्ष से ११ वर्ष के लड़कों की संख्या प्राइमरी स्कूलों में ४५६८८ थी और लड़कियों की १८२१. १९६६ में लड़कों की संख्या बढ़ कर १४८१८० और लड़कियों की ८२३७७ हो गयी है. इसी प्रकार १९४७ में प्राइमरी स्कूलों की संख्या ४६९ थी. १९६६ में उनकी संख्या बढ़ कर १४४८ हो गयी. लड़कों और लड़कियों के सीनियर बेसिक स्कूलों की संख्या भी ३१.५ के अनुपात में बढ़ गयी है. इस समय देहातों में ५४ से भी अधिक माध्यमिक शिक्षण संस्थाएँ चल रही हैं. शिक्षा के इस विकास का केवल एक ही वर्ग ने लाभ उठाया है और वह है गाँव का मध्यम वर्ग, क्योंकि योग्यता से अधिक वह माई-भतीजावाद निभा ले जाता है. गाँवों में बी. ए. तक पढ़े बेकार लड़के धीरे-धीरे असामाजिक प्रवृत्तियाँ अपना रहे हैं.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माताओं और पिताओं !

जरा सोचिये कि क्या आप अपने बच्चों के लिये वह सब कुछ कर रहे हैं जो ज़रूरी है ?

नैशनल एण्ड ग्रिण्डलेज़ बैंक में सेविंग्स एकाउण्ट आपको शीघ्र इस चिन्ता से मुक्त कर सकता है

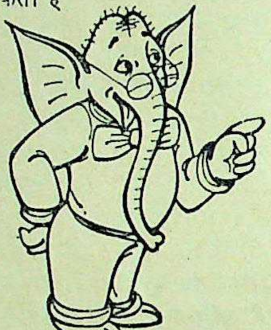

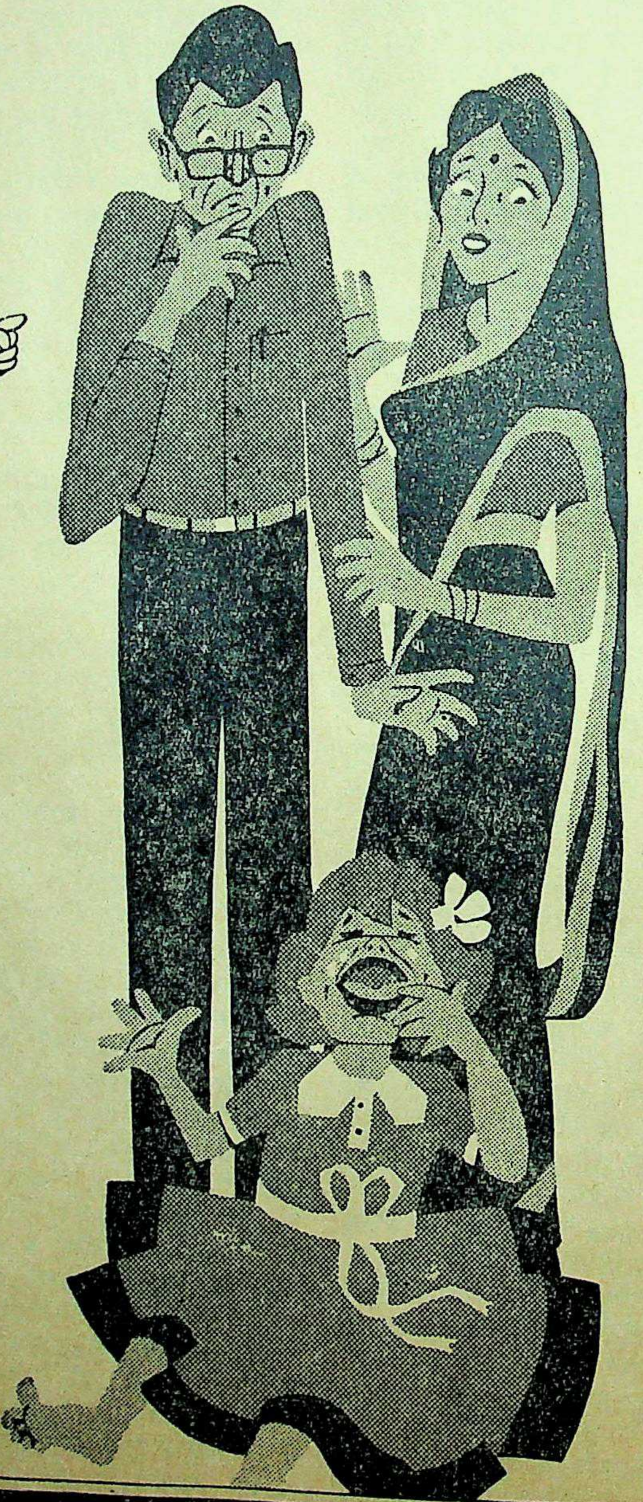

नैशनल एण्ड ग्रिण्डलेज बैंक में सेविंग्स एकाउण्ट एक निश्चित कदम है।

क्यों कि यह :

उस दिन की तैयारी है जब बच्चे बच्चे न रहकर सयाने हो जायेंगे।

उस समय आपके काम आएगा जब आप अपनी लाड़ली बेटी का विवाह करेंगे।

आपको वह सामर्थ्य देगा जिससे आपको बच्चों की उचित आवश्यकताओं को पूरा करने से विमुख न होना पड़े।

आपके जीवन में अधिक सुगमता और संतोष लाता है।

इसी सप्ताह हमारे यहां पधारिये।

एकाउण्ट खोलने के लिये केवल ५ रुपये ही पर्याप्त है।

नैशनल एण्ड ग्रिण्डलेज़ बैंक लिमिटेड

(संयुक्त राज्य में संस्थापित, सदस्यों का दायित्व सीमित है)

छोटे हो या बड़े—यह बैंक सबका काम करें

नैशनल एण्ड ग्रिण्डलेज़ बैंक की नजदीकी शाखा से बिना मूल्य "हाउ टु स्टॉप वरींग एण्ड स्टार्ट सेविंग" नामक पुस्तिका लेकर पढ़िये

NGB-20A 1/68 HIN

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूस और अमेरिका में बिना हथियारों की लड़ाई

१२ अक्तूबर को जब मेक्सिको शहर के मुख्य स्टेडियम में मेक्सिको के राष्ट्रपति गुस्तावो डियाज़ ओर्दाज़ ने १९वीं ओलिंपिक खेलों का उद्घाटन किया तो उस समय स्टेडियम के बाहर और भीतर लगभग ६,००० सैनिकों का कड़ा पहरा था. १९३६ में नाज़ी जर्मनी में हुए ओलिंपिक खेलों के बाद यह पहला ऐसा अवसर था जब ओलिंपिक खेलों की शुरुआत इतने तनावपूर्ण वातावरण में हुई थी. ख़ैर, कुछ एक मामूली प्रदर्शनों के अलावा कोई अप्रिय या अशोभन घटना नहीं घटी. सब काम पूर्व-निर्धारित कार्यक्रमानुसार हुआ, हज़ारों कबूतर उड़ाए गये, १२४ देशों की टीमों ने मार्च पास्ट में हिस्सा लिया और ओलिंपिक खेलों के इतिहास में पहली बार पवित्र ओलिंपिक मशाल जलाने की रस्म एक खिलाड़िन ने पूरी की.

अमेरिका के मशहूर ओलिंपिक खिलाड़ी जैसी ओवेंस ने कहा कि मैंने १९५२ के बाद से हर ओलिंपिक खेल को देखा है मगर मैंने ऐसा शानदार और भव्य ओलिंपिक खेल कभी नहीं देखा. पोप पाल ने अपने संदेश में कहा कि आप लोग एक महान् कार्य कर रहे हैं. आप का काम लड़ाई के मैदानों को खेल के मैदानों में बदलना है यानी घृणा के बदले प्यार बाँटना है.

मार्च १८९६ में प्रथम आधुनिक ओलिंपिक खेलों का उद्घाटन करते हुए बैरोन द कोबरटिन ने, जिन्हें आधुनिक ओलिंपिक खेलों का जन्मदाता भी कहा जाता है, कहा था—"ओलिंपिक खेलों में विजय प्राप्त करना इतना महत्त्वपूर्ण नहीं है जितना कि इनमें भाग लेना. हम जिंदगी की हर बाज़ी जीतें यह ज़रूरी नहीं है. ज़रूरी यह है कि हम अपनी ओर से जी-जान से संघर्ष करें."

१२ अक्तूबर को मेक्सिको शहर में १९वीं ओलिंपिक खेलों के उद्घाटन समारोह में भी कोबरटिन के इन्हीं शब्दों को (उन्हीं की आवाज़ में) दोहराया गया. स्वर्गीय कोबरटिन द्वारा ७२ वर्ष पूर्व कहे गये ये शब्द आज भी उन के एक भतीजे के पास एक रिकार्ड में बंद हैं. ७२ सालों में इन शब्दों के अर्थ कितने बदल गये हैं इस का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि अब दुनिया के दो बड़े देश रूस और अमेरिका ओलिंपिक खेलों में मात्र भाग लेने की भावना से नहीं जाते बल्कि एक दूसरे से आगे बढ़ने की भावना से जाते हैं.

आज ओलिंपिक खेल एक तरह की लड़ाई ही है, लेकिन इस शस्त्रविहीन संघर्ष में सैनिक नहीं लड़ते बल्कि खिलाड़ी लड़ते हैं. और हार-जीत का फ़ैसला स्वर्ण पदकों के आधार पर किया जाता है. राजनीति का क्षेत्र हो, या विज्ञान का या फिर खेल-कूद का हर क्षेत्र में अमेरिका और सोवियत संघ की प्रतिद्वंद्विता है. अमेरिका यदि मेक्सिको ओलिंपिक में अपने ३९३ प्रतिनिधि भेजता है तो रूस ४६२. दोनों देशों ने खेल शुरू होने से पहले ही यह दावा करना शुरू कर दिया है कि अब की हमारे खिलाड़ी ज़्यादा स्वर्ण पदक बटोरेंगे. ख़ैर फ़ैसला होने में

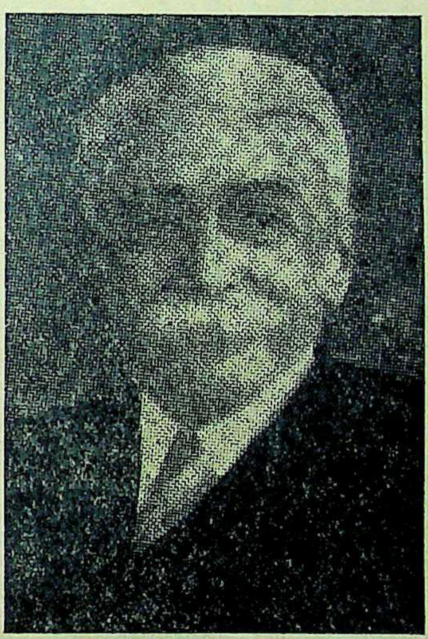

आधुनिक ओलिंपिक खेलों के जन्मदाता : बैरोन द कोबरटिन

अब ज़्यादा देर नहीं है. दो सप्ताह भर में सब परिणाम सामने आ जायेंगे. मगर भविष्य-वाणियाँ करने वाले पंडितों ने अभी से कहना शुरू कर दिया है कि इस बार 'कौन कहाँ रहा' की सूची में अमेरिका का नाम सब से ऊपर रहेगा. १९वीं ओलिंपिक खेलों में विभिन्न स्पर्द्धाओं की १९ प्रतियोगिताएँ होंगी और कुल १७२ स्वर्ण पदक, १७२ रजत पदक और १८३ कांस्य पदकों का बँटवारा होगा. जर्मनी के एक खेल-कूद सूचना सेवा केंद्र ने भविष्यवाणी की है कि इस बार अमेरिका ५१ स्वर्ण पदक, ३६ रजत पदक और २६ कांस्य पदक प्राप्त करेगा और सोवियत संघ ३२ स्वर्ण पदक, ४९ रजत पदक और २३ कांस्य पदक प्राप्त करेगा. तीसरा और चौथा स्थान क्रमशः पश्चिमी जर्मनी और पूर्वी जर्मनी को प्राप्त होगा.

नीग्रो खिलाड़ी : आखिरकार अमेरिकी नीग्रो खिलाड़ियों ने मेक्सिको ओलिंपिक खेलों में भाग लेने का निश्चय कर ही लिया. उन के इस फ़ैसले से अमेरिकावासी जितने खुश हैं, उतना शायद ही कोई और हो क्योंकि इतनी बात तो हर कोई (स्वयं अमेरिका भी) जानता है कि बिना नीग्रो खिलाड़ियों के सहयोग के 'कौन कहाँ रहा' की सूची में प्रथम स्थान पाना एक तरह से असंभव ही है. नीग्रो खिलाड़ी मेक्सिको ओलिंपिक खेलों में शांतिपूर्ण ढंग से अपने असंतोष का प्रदर्शन करने की योजना बना रहे हैं. १०० मीटर के मशहूर दौड़ाक चार्ली ग्रीन (जानकारों का कहना है कि इस बार वह स्वर्ण पदक अवश्य जीत जायेंगे) ने कहा है कि मैं अमेरिका की रंगभेद की नीति के विरोध स्वरूप स्वर्ण पदक जीतना चाहता हूँ—"मैं व्यक्तिवादी हूँ. मैं दौड़ में हिस्सा लूँगा और जीत हासिल करूँगा. यह अपने आप में कितनी बड़ी बात है. किसी काले आदमी द्वारा दौड़ जीतने में क्या विरोध की ध्वनि नहीं है." उन्होंने यह भी कहा कि "स्वर्ण पदक जीतने के बाद मैं उस स्वर्ण पदक को दुनिया के सभी काले व्यक्तियों को समर्पित कर दूँगा." उन का कहना है कि काले खिलाड़ियों ने अब तक बहुत से स्वर्ण पदक जीते हैं मगर उन में से किसी ने खुले

भारत की हार : इतिहास में पहली बार

भारत, जो १९२८ से लेकर अब तक सात बार ओलिंपिक खेलों में स्वर्ण पदक जीत चुका है, न्यूज़ीलैंड के विरुद्ध खेले गये पहले ही मैच में २-१ से हार गया. भारतीय हॉकी के इतिहास में किसी ओलिंपिक खेल के पहले ही मैच में हारने का यह पहला मौका था. भारत को पेनेल्टी कार्नर के अवसर तो बहुत बार मिले मगर वे हर बार चूक करते गये. हार के बाद भारत ने अपना विरोध प्रकट किया, जो कि बाद में जजों और अंपायरों की बैठक में अस्वीकृत कर दिया गया. खेल के जानकारों का कहना है कि इस तरह हार के बाद छोटी-छोटी बातों पर विरोध प्रकट करना कोई स्वस्थ खेल परंपरा नहीं है.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आम ऐसी घोषणा नहीं की जो मैं कर रहा हूँ. चार्ली ग्रीन को अपने आप पर कितना भरोसा है इस की कल्पना उन के इस कथन से की जा सकती है. उन का कहना है कि दुनिया में हर कोई यह कहता फिरता है कि १०० मीटर के फ़ासले की दौड़ में मेरा और जिम हिंस का कड़ा मुक़ाबला होगा मगर यह बात सब को जान लेनी चाहिए कि मेरे और हिंस के मुक़ाबले में हिंस को केवल रजत पदक ही प्राप्त होगा.

ओलिंपिक रिकार्ड : अमेरिका और रूस इन दोनों देशों में कौन ज़्यादा स्वर्ण पदक बटोरता है यह तो दो सप्ताह बाद ही पता चल सकेगा. फ़िलहाल मेक्सिको ने १९वीं ओलिंपिक खेलों का शानदार ढंग से आयोजन करके एक नया रिकार्ड स्थापित कर दिया है. जितने देशों के खिलाड़ी मेक्सिको ओलिंपिक में भाग ले रहे हैं उतने आज से पहले किसी ओलिंपिक खेल में इकट्ठे नहीं हुए. यह अपने आप में एक शानदार रिकार्ड है. १९६४ की तोक्यो ओलिंपिक खेलों में ९४ देशों के ५७११ खिलाड़ियों ने भाग लिया था. १९६० में ८४ देशों के ५,७७७ खिलाड़ियों ने भाग लिया और १८९६ में एथेंस में हुए प्रथम ओलिंपिक खेलों में १२ देशों के लगभग ३०० खिलाड़ियों ने भाग लिया था.

झलकियाँ

अंतरराष्ट्रीय ओलिंपिक समिति के अध्यक्ष एवेरी ब्रंडेज चार सालों के लिए फिर इस समिति के अध्यक्ष निर्वाचित हो गये हैं. अमेरिका के करोड़पति ८१ वर्षीय ब्रंडेज ने अपने एकमात्र प्रतिद्वंद्वी फ़्रांस के काउंट जीन द बिऊमोंथ को हराया. जिस समय चुनाव हो रहा था, उस समय दोनों उम्मीदवार कमरे से बाहर बैठे थे. कुछ लोगों का विचार था कि अध्यक्ष की अवधि दो वर्ष कर दी जानी चाहिए मगर ब्रंडेज ने कहा कि आप मुझे अध्यक्ष बनायें या न बनायें मगर अध्यक्ष की नियुक्ति चार साल के लिए ही होगी.

× × ×

१९७२ की बीसवीं ओलिंपिक खेल प्रतियोगिता म्यूनिख में होगी. अब १९७६ के ओलिंपिक खेलों के लिए भी कुछ देशों ने अपने आवेदन-पत्र भेजने शुरू कर दिये हैं. अब तक जो-जो देश अपने यहाँ १९७६ की ओलिंपिक खेलों का आयोजन करवाने की इच्छा प्रकट कर चुके हैं उनमें से तीन के नाम इस प्रकार हैं : मांट्रियाल (कैनाडा) लास एंजेल्स (अमेरिका) और अल्जीरिया (शहर का नाम अभी तय नहीं किया गया).

× × ×

उत्तर कोरिया की मुँह माँगी मुराद पूरी हो गयी है. वर्षों से उत्तर कोरिया यह कोशिश करता आ रहा था कि ओलिंपिक खेलों में उस के देश का नाम उत्तर कोरिया से बदल कर 'लोकतंत्र जनवादी कोरिया' कर दिया जाये. हाल ही में हुई अंतरराष्ट्रीय ओलिंपिक समिति की बैठक में यह फ़ैसला किया गया कि मेक्सिको ओलिंपिक में तो इस का नाम उत्तर कोरिया ही रहेगा लेकिन म्यूनिख (१९७२) के ओलिंपिक खेलों में इस को नये नाम से पुकारा जायेगा.

संक्षिप्त समाचार

डेविस कप : "जहाँ तक डेविस कप के अंतरक्षेत्रीय फ़ाइनल मैच के लिए स्थान का सवाल है यह हमारे सोचने या चिंता करने की बात नहीं है. स्थान का चुनाव अमेरिका को करना है और जहाँ भी वह कहेंगे वहीं हमें खेलना होगा." ये शब्द रामनाथन् कृष्णन् ने मद्रास पहुँच कर कहे. उन्होंने कहा "डेविस कप का फ़ाइनल भले प्वेर्तो रीको में हो या कैलिफ़ोर्निया में, अमेरिका से जीतना बड़ा मुश्किल है." अमेरिकी खिलाड़ी आर्थर एश आजकल अपने पूरे फ़ार्म में है और उसे हराना कोई आसान काम नहीं है.

हिंदी के माध्यम से उच्चतम स्तर तक ज्ञानार्जन संभव करने की दिशा में हिंदी समिति अब तक ज्ञान-विज्ञान के सभी विषयों पर लगभग १६० ग्रंथ प्रकाशित कर चुकी है. विश्वविद्यालय स्तर के ये ग्रंथ विद्यार्थियों के लिए अत्यंत उपयोगी है.

इन्हें विषय के मर्मज्ञ शिक्षाविद् एवं अनुभवी लेखकों से लिखवाया अथवा अनुवाद करा के प्रकाशित किया गया है. अतः शिक्षा-जगत में इनके द्वारा एक अभाव की पूर्ति होती है.

उच्चस्तरीय विषय-वस्तु के अतिरिक्त बढ़िया काग़ज़ पर सुंदर छपाई तथा कपड़े की सुदृढ़ जिल्द और अपेक्षाकृत कम दाम इन प्रकाशनों की विशेषता है. पुस्तक-विक्रेताओं और पुस्तकालयों के लिए उपयुक्त कमीशन देने की भी व्यवस्था है.

डिग्री कक्षाओं के लिए कुछ प्रकाशन

प्रायोगिक भौतिकी १२.०० डॉ० सेठी एवं डॉ० कुलश्रेष्ठ
त्रिकोणमिति : ६.०० श्री राजेन्द्र स्वरूप गुप्त
पश्चिमी दर्शन : ४.०० डॉ० दीवान चन्द्र
भारतीय दर्शन : ८.०० श्री उमेश मिश्र
आभास और सत् ९.०० श्री एफ० एच० ब्रैडले
यूनानी राजनीतिक विचारधारा, ९.०० श्री टी० ए० सिनक्लेयर
प्रमुख देशों की शासन पद्धतियाँ : ९.०० डॉ० गोरखनाथ चौबे
पाश्चात्य राजनीतिक विचारधारा का इतिहास : १४.०० विश्वनाथ प्रसाद वर्मा
विश्व इतिहास : १४.५० डॉ० राम प्रसाद त्रिपाठी
सुदूरपूर्व में भारतीय संस्कृति और उस का इतिहास : १५.०० डॉ० बैजनाथ पुरी
पूर्वी एशिया का आधुनिक इतिहास : १४.०० हैराल्ड एम० विनाके
समाज सेवा का क्षेत्र : १७.५०
शैक्षिक समाज शास्त्र : ७.५० डॉ० सीताराम जायसवाल
मनोविज्ञान का क्षेत्र : ७.५० डॉ० राम मूर्ति लुम्बा
भारत की आधुनिक आर्थिक प्रगति : ५.५० श्री पी० सी० जैन
मूल्य और पूंजी : ९.०० जे. आर. हिक्स
भारत का आर्थिक भूगर्भ शास्त्र : १०.०० डॉ० विद्यासागर दुबे

हलायुध कोश २५-००
उर्दू-हिन्दी शब्दकोश १६-००

अन्य ग्रंथों के पूर्ण विवरण के लिये :—

सचिव,
हिन्दी समिति, सूचना विभाग
उत्तर प्रदेश शासन,
लखनऊ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुजरात पधारिये

जो अपनी संस्कृति एवं पुरातत्व संबंधी परम्परा के लिये प्रसिद्ध है

सांस्कृतिक

- सोमनाथ मन्दिर (वेरावल)
- सूर्य मन्दिर (मॉडेहरा)
- हिलती मीनारें एवं खुदी हुई पत्थर की जाली (अहमदाबाद)
- जैन मन्दिर (पालिताना)
- रुद्रमल (सिद्धापुर)
- जंगल के राजा, गिर के शेर (जूनागढ़) केवल एकमात्र एशिया में शेर देखने का स्थान

पुरातत्व संबंधी

- लोथाल में इतिहासेतर खुदाई

औद्योगिक

- काम्बे, अंकलेश्वर एवं कालोल में तेल का क्षेत्र
- गुजरात रिफाइनरी और
- उर्वरक कारखाना (बड़ौदा)
- अमूल डेरी (आनंद)

विस्तृत सूचना के लिये कृपया संपर्क करें :

१. सूचना निदेशक,
गुजरात सरकार, सचिवालय
अहमदाबाद फोन ७६११
एक्सटेन्शन ३०३,३०८

२. गुजरात सूचना केन्द्र
७२, जनपथ नयी दिल्ली
फोन : ४६२४८

३. गुजरात सरकार, पर्यटन कार्यालय
धनराज महल, एपोलो बन्दर, बम्बई
फोन : २५७०३९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उलझाने की नहीं, सुलझाने की राजनीति

संयुक्तराष्ट्र महासभा एक ऐसा मंच है जिस के भीतर दो या अधिक देशों के प्रतिनिधि एक दूसरे पर आरोपों और प्रत्यारोपों की भयंकर बौछार करते हैं लेकिन जब वे सभा से उठ कर बाहर आते हैं तो बाहर की लॉबी में हाथ मिला-मिला कर एक दूसरे का उसी उत्कटता से सत्कार भी करते हैं. सभा के भीतर की राजनीति दो देशों के उसूलों और सिद्धांतों की लड़ाई होती है जो अपने अपने देशों के दृष्टिकोण प्रस्तुत करने तक सीमित होती है लेकिन लॉबी की राजनीति केवल मानवीय पक्ष से ही आँकी जाती है.

पिछले दिनों रूस के विदेशमंत्री ग्रोमिको ने चेकोस्लोवाकिया में सैनिक हस्तक्षेप की बात को तर्कसंगत बताया और कहा कि ऐसा न करने से उन्हें अपने बंधु समाजवादी देशों की चुनौतियों का सामना करना पड़ता. लेकिन साथ ही वह यह भी कहना न भूले कि बॉन में कुछ ऐसे राजनीतिज्ञ हैं जो यूरोप का नक्शा बदलने पर तुले हुए हैं. उन्होंने पश्चिमी जर्मनी के पश्चिमी बर्लिन पर दावे को बेबुनियाद बताते हुए कहा कि पश्चिम बर्लिन किसी भी तरह और किसी भी रूप में पश्चिमी जर्मनी के अधीन नहीं है और अगर इस क्षेत्र में किसी क़िस्म की तनावपूर्ण स्थिति पैदा होती है तो उस के लिए पश्चिम जर्मनी पूरी तरह से ज़िम्मेदार होगा. अपना यह भाषण दे जब ग्रोमिको सभा से बाहर निकले तो उन्हें पश्चिमी जर्मनी के विदेशमंत्री विलि ब्रांड के साथ देख कर प्रतिनिधियों को तो हैरत हुई ही समाचारपत्रों के संवाददाताओं और फ़ोटोग्राफ़रों ने उन्हें चारों ओर से घेर लिया. कुछ अनोखे अंदाज़ से उन्होंने अपने चित्र भी खिचवाये और फिर संवाददाताओं के घेरे को तोड़ते हुए दोनों एक कमरे में पहुँचे. वहाँ दोनों ने डेढ़ घंटे तक जर्मनी और यूरोप से संबंधित विषयों पर आपसी हितों की बातचीत की. दुआ-सलाम के आलम से निकल कर इन दो देशों के विदेशमंत्रियों की गंभीर बात को खास तरजीह दी गयी है. राजनयिक सूत्रों का कहना है कि ब्रांड और ग्रोमिको की बातचीत विश्व में शांति और खास तौर पर चेकोस्लोवाकिया के मामले में पश्चिमी जर्मनी के वक्तव्यों के संदर्भ में बड़ी ही लाभदायक सिद्ध हो सकती है. इन दो देशों के विदेशमंत्री ६ वर्ष बाद मिले हैं. इस से पहले १९६२ में जिनेवा निरस्त्रीकरण सम्मेलन में जर्मनी के भूतपूर्व विदेशमंत्री ग्रहार्ड श्योरोडर और ग्रोमिको की भेंट हुई थी. तब से इन दो देशों के विदेशमंत्री नहीं मिले थे और न ही अनौपचारिक रूप से उनके मिलने की खबर मिली है. इस भेंट से पहले विलि ब्रांड और अमेरिका के विदेशमंत्री डीन रस्क में बातचीत हो चुकी थी और इस बातचीत के दौरान रस्क ने ब्रांड को यह यक़ीन दिलाया था कि पश्चिम जर्मनी ने रूस को जो यह धमकी दी है कि रूस द्वारा पश्चिम जर्मनी और पश्चिम बर्लिन में हस्तक्षेप को बर्दाश्त नहीं किया जायेगा, अमेरिका उस का समर्थन करता है. रूस द्वारा उग्र रवैये से एकदम नर्म रवैया अख़्तियार कर लेने और विलि ब्रांड से लंबी बात करने से इस बात का सबूत मिलता है कि चेकोस्लोवाकिया में हस्तक्षेप करने वाली अपनी नीति को फिर से दोहरा रूस अपने विरोधियों की संख्या और नहीं बढ़ाना चाहता. रूस अब इस बात पर भी सहमत हो गया है कि २८ अक्तूबर को चेकोस्लोवाकिया की ५०वीं वर्षगाँठ से पहले चेक सीमा से अपने दो लाख ३५ हज़ार सैनिकों में वह ५० हज़ार या अधिक से अधिक एक लाख सैनिक ही वहाँ तैनात रखेगा.

रूस और वारसा-संधि की फ़ौजों द्वारा चेकोस्लोवाकिया में सैनिक हस्तक्षेप के कारण पश्चिम जर्मनी ने रूस की आलोचना की और इस से रूसी नेता बौखला उठे. बॉन में रूसी राजदूत चेराप्किन ने प्रधानमंत्री कीसिंगर से अपनी डेढ़ घंटे की बातचीत में उन्हें इस बात के लिए मुतासिर करना चाहा कि पश्चिम जर्मनी के इस तरह के वक्तव्य रूस के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप हैं. पिछले २० महीनों से कीसिंगर की मिली-जुली सरकार पूर्वी यूरोपीय देशों के साथ जिस तरह व्यापार बढ़ा रही है उस से भी रूस को गिला है. उन्होंने समाजवादी देशों के प्रति प्रधानमंत्री को इस तरह का उग्रवादी रवैया और नीतियाँ न अपनाने की तो सलाह दी ही है लेकिन साथ ही धीमे से वह यह भी कहते गये कि अगर पश्चिम जर्मनी सरकार अपनी हरकतों से बाज नहीं आयी तो उस की ज़िम्मेदारी उन पर होगी. वास्तव में रूसी नेता चाहते हैं कि मौजूदा सरकार कुछ वैसी ही शीतयुद्ध जैसी नीतियाँ अपनाये जो स्वर्गीय डा० आडिनावर ने कम्युनिस्ट देशों और पूर्वी यूरोपीय देशों के प्रति अपनायी थीं. अपने विरोध-पत्र में रूस ने यह भी कहा कि वह संयुक्तराष्ट्र चार्टर की धारा ५३ और १०७ के अंतर्गत पश्चिम जर्मनी को 'शत्रु-राज्य' कह उसमें हस्तक्षेप भी कर सकता है. इस तरह की धारणा इस लिए भी बलवती होती जा रही है कि पश्चिमी जर्मनी में नात्सीवादी तत्त्व दिनों-दिन बढ़ रहे हैं और नेशनल डेमोक्रेटिक

दीपावली

के अवसर पर

हम

अपने संरक्षकों और माननीय ग्राहकों को

अपनी बधाइयाँ और शुभकामनाएँ

प्रस्तुत करते हैं

एम० एल० धूत
सचिव

टी० आर० तुली
अध्यक्ष

दि न्यू बैंक आफ इंडिया लिमिटेड

पंजीकृत कार्यालय—जनपथ, नई दिल्ली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

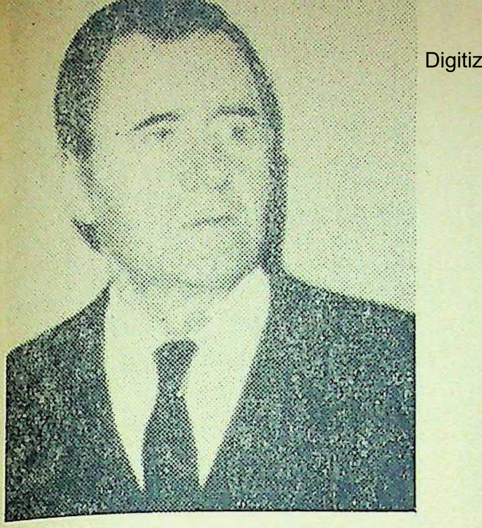

ग्रोमिको : दोहरी चाल

चेकोस्लोवाकिया पर क़ब्ज़े का औचित्य बताते हुए बॉन स्थित रूसी दूत ज़ाराप्किन (बायें) और (दायें) कीसिंगर : यथा आदेश

पार्टी पर नात्सीवादी होने का शुबहा किया जा रहा है. ऐसी भी ख़बर है कि १९६९ के चुनावों में नेशनल डेमोक्रेटिक पार्टी भी मिली-जुली सरकार के साथ चुनाव लड़ेगी और अगर नेशनल डेमोक्रेटिक पार्टी ने चुनाव में भाग लिया तो रूस यह समझता है कि देश में नात्सीवाद का पुनः उद्भव हो जायेगा. अगर ऐसा हुआ तो मित्र देश होने के नाते उसे पश्चिमी जर्मनी में हस्तक्षेप करने का पूरा अधिकार होगा. रूस सरकार कई बार पश्चिम जर्मनी को इस बारे में आगाह करती आयी है कि देश में फासिस्ट तत्त्वों का विकास लगातार हो रहा है. मास्को में भी पश्चिमी जर्मनी के राजदूत को क्रेमलिन में बुलाया गया और इस बात के प्रति रूसी नेताओं ने अपनी नाराज़गी व्यक्त की है कि पश्चिमी जर्मनी की सरकार चेकोस्लोवाकिया में आर्थिक सुधारों के नाम पर राजनैतिक नेता भेज रही है. पश्चिम जर्मनी सरकार ने रूस के इस विरोधपत्र को विशेष दूत द्वारा अमेरिका भेजा और उस से सलाह चाही. प्रधानमंत्री कीसिंगर ने रूस की नीति को डराने-धमकाने की नीति बताया है. विदेशमंत्री विलि ब्रांड ने रूस के रवैये की व्याख्या करते हुए कहा कि विजयी शक्तियों को अपने एक पुराने शत्रु देश के भीतरी मामलों में किसी तरह का भी हस्तक्षेप करने का अधिकार नहीं. ब्रांड ने यह भी कहा कि पूर्वी यूरोपीय देशों के साथ उन की व्यापार-नीति में किसी भी तरह की कसावट नहीं आयेगी. ब्रांड यह महसूस करते हैं कि उन्हें रूस की बहकी बातों में नहीं आना चाहिए और काम उकसाहट से नहीं साहस से करना चाहिए. नेशनल डेमोक्रेटिक पार्टी पर, जिस पर नात्सी पार्टी होने का आरोप भी लगाया गया है और जिसे बर्लिन सिनेट के मेयर क्लाउज़ शट्ज़ बेबाक हो नात्सी पार्टी कहते फिरते हैं, प्रतिबंध लगाने के लिए अमेरिका, ब्रिटेन और फ़्रांस में विचार किया जा रहा है. इस से पैदा होने वाली समस्याओं से पश्चिम जर्मनी समेत सभी देश परिचित हैं और रूस भी इस पार्टी के बढ़ते हुए प्रभावों से ही पश्चिम जर्मनी को रोज़-रोज़ नयी धमकियाँ दे रहा है. अगर मित्र देश इस पार्टी पर प्रतिबंध लगाने का निर्णय करते हैं और प्रधानमंत्री कीसिंगर इस का पालन नहीं करते तो उन्हें नात्सीवाद का समर्थक क़रार दिया जा सकता है और कहीं ऐसी स्थिति पैदा हो गयी तो सोवियत संघ की मन की मुराद पूरी होगी. मित्र देशों का पश्चिम बर्लिन पर हक़ ज़रूर है लेकिन वे बड़े पशोपेश में हैं कि अगर नात्सी प्रवृत्तियों का फैलाव बढ़ता है तो क्या वे पश्चिमी जर्मनी में हस्तक्षेप कर सकते हैं. पश्चिमी जर्मनी के संविधान के अनुसार किसी पार्टी पर तभी प्रतिबंध लगाया जा सकता है जब वह बुनियादी लोकतांत्रिक सिद्धांतों के अस्तित्व के लिए ख़तरा साबित हो. सेक्सनी में पिछले हफ़्ते जो स्थानीय चुनाव हुए थे उन से यह बात ज़ाहिर हो गयी थी कि पिछले साल के मुक़ाबले इस साल नेशनल डेमोक्रेटिक पार्टी के सदस्यों की संख्या २५ प्रतिशत कम हुई है. इस से यह बात साबित हो जाती है कि नेशनल डेमोक्रेटिक पार्टी की लोकप्रियता दिनोंदिन कम होती जा रही है. पश्चिम बर्लिन में नेशनल डेमोक्रेटिक पार्टी की सदस्य संख्या ५०० बतायी जाती है.

व्यापार का फैलाव : पश्चिम जर्मनी के व्यापार का दायरा आजकल केवल पश्चिमी यूरोपीय देशों तक ही नहीं, पूर्व यूरोपीय देशों तक भी बढ़ गया है. इस दायरे को फैलाने के लिए पश्चिम जर्मनी ने जी-तोड़ कोशिश की है और चेकोस्लोवाकिया पर रूस के सैनिक-हस्तक्षेप के दौरान रूसियों ने जिन जर्मनों को वहाँ पर सक्रिय पाया, पश्चिम जर्मनी सरकार के अनुसार वे राजनीतिज्ञ नहीं, बल्कि व्यापार प्रतिनिधिमंडल के सदस्य थे. इधर चेकोस्लोवाकिया के साथ पश्चिम जर्मनी के व्यापार में भी बहुत बढ़ोतरी हुई है. इस के अलावा इंदोनेसिया का आर्थिक संकट हल करने के लिए भी पश्चिम जर्मनी की सरकार वहाँ के कृषि और उद्योग-व्यवस्था के आधुनिकीकरण में मदद कर रही है. दूसरे देशों को विकास कार्यों में सहयोग देने के पहले पश्चिम जर्मनी पहले वहाँ कुछ स्वयंसेवक भेजती है. ये स्वयंसेवक वहाँ पर इस बात का जायज़ा तो लेते ही हैं कि उन के देश का माल यहाँ कैसे और कितना खप पायेगा, वे लोग आम आदमी के पास भी पहुँचने की कोशिश करते हैं. जिस देश में वे काम करते हैं उस देश की भाषा, रीति-रिवाज वे सीखते हैं और लोगों से अपने आप को परिचित कराने की भरसक कोशिश करते हैं. ऐसे ही कई स्वयंसेवक पूर्व यूरोपीय देशों में गये और अपने देश का व्यापार बढ़ाने के लिए इन देशों में ज़मीन तैयार की. व्यापार के क्षेत्र में भी कीसिंगर और विलि ब्रांड की सरकार ने उदारवादी रवैया अपनाया.

जर्मनी का पड़ोसी पूर्व जर्मनी एक ऐसा देश है जो रूस की हर सही-गलत नीतियों की आँख मूँद कर ताईद करता है जिस से उस का अपना वजूद कहीं भी नज़र नहीं आता. अपना वजूद न होने की वजह से पूर्व जर्मनी का अपना कोई दबदबा नहीं है. लेकिन भीतर ही भीतर वहाँ के नागरिक यह महसूस करते पाये गये हैं कि मौजूदा सरकार का रवैया रूस के प्रति इतना झुकाव वाला नहीं होना चाहिए. एक समाचार समिति ने तो यह भी समाचार प्रकाशित किया है कि पूर्व जर्मनी में कम से कम ३ हज़ार नागरिकों ने चेकोस्लोवाकिया के साथ हमदर्दी ज़ाहिर की है. इस तरह तनावपूर्ण वातावरण के घेरे में घिरे रहने के कारण रूस ने संभवतः यही उचित समझा होगा कि इस समय पश्चिम जर्मनी से उस का बिगाड़ उस के आड़े आ सकता है. इसी लिए शुभचिंतक देशों ने ग्रोमिको और विलि ब्रांड की बातचीत की भूमिका तैयार कर इसे नाटकीय रूप दिया. उन की इस बातचीत से पश्चिम जर्मनी और रूस के तनावपूर्ण संबंध सामान्य होंगे, कहा पाना मुमकिन नहीं.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्व

रोडेसिया

मेरे जीते जी तो नहीं...

ब्रिटेन और रोडेसिया के प्रधानमंत्रियों की ४ दिन की बातचीत विल्सन की विवशता का ढिंढोरा पीट कर टूट गयी.

जिब्राल्टर में ब्रितानी नौ सेना के युद्धपोत 'फ़ियरलेस' पर ब्रितानी प्रधानमंत्री श्री विल्सन और रोडेसिया की विद्रोही सरकार के नेता इयान स्मिथ की आमने-सामने बातचीत होने से पहले ही दोनों नेताओं ने अपनी इस बातचीत के परिणामों को संदिग्ध घोषित कर दिया था. श्री विल्सन ने इयान स्मिथ से मिलने से पहले ही यह चेतावनी दे दी थी कि रोडेसिया की समस्या का समाधान इस बातचीत का अनिवार्य परिणाम नहीं मान लिया जाना चाहिए. संवाददाताओं से बातचीत करते हुए श्री विल्सन ने इस बारे में लंदन और सालसवरी के बीच पिछले कुछ सप्ताहों से चले आ रहे संपर्क की याद दिलायी. उन का कहना था कि इयान स्मिथ उस जगह से नहीं हटे जहाँ से हटने पर ही कोई समझौता संभव हो सकता है. इधर श्री स्मिथ ने भी कह दिया था कि बातचीत से पहले ही उस के सफल होने का अंदाजा लगा लेना ज्यादती होगी. दोनों नेताओं की इस मनःस्थिति में जो बातचीत होगी उस की परिणति का अनुमान कर लेना बहुत कठिन नहीं था.

गुप्त वार्ता : इस स्थिति के बावजूद दोनों नेता पूर्वनिर्धारित कार्यक्रम के अनुसार मिले. शुरू में तो उन्होंने अकेले गुप्त रूप से बातचीत की और बाद में अपने-अपने प्रतिनिधिमंडलों को बुला लिया. पहले दिन प्रधानमंत्रियों की बातचीत तो केवल १५ मिनट ही चली पर प्रतिनिधिमंडलों की उपस्थिति का समय मिला कर ब्रिटेन और रोडेसिया की यह वार्त्ता कुल ३० घंटे चली.

श्री इयॉन स्मिथ ने जिब्राल्टर पहुँचते ही कह दिया था कि समस्या के समाधान का यह अंतिम प्रयत्न है. उन के विचार में किसी भी समझौते पर पहुँचने का यह आखिरी अवसर है, क्यों कि नया संविधान अभी बन ही रहा है और उस के लागू हो जाने के बाद उस से कभी पीछे नहीं हटा जा सकता. लेकिन उन्होंने यह स्पष्ट कर दिया कि रोडेसिया में अफ्रीकी बहुमत का शासन मेरे जीते जी तो हो नहीं सकता. इयान स्मिथ के इस पक्के इरादे के संदर्भ में बातचीत से रोडेसिया की समस्या के समाधान की आशाएँ धूमिल थीं.

हर उपाय बेकार : स्मिथ-सरकार को रास्ते पर लाने के ब्रिटेन के सभी उपाय बेकार गये हैं. पहले ब्रितानी सरकार को आशा थी कि आर्थिक प्रतिबंध लगाने से रोडेसिया की सारी अर्थ-व्यवस्था अस्त-व्यस्त हो जायेगी, जिस का असर रोडेसिया की राजनीति पर पड़े बिना नहीं रहेगा. यह कोरा भ्रम ही निकला. ब्रिटेन के अलावा संसार के अन्य देशों द्वारा लगाये गये प्रतिबंध भी स्मिथ को रास्ते पर नहीं ला सके. वह पुर्त्तगाल और दक्षिण अफ्रीका की सहायता से बराबर काम चलाता रहा. इन प्रतिबंधों का रोडेसिया के तंबाकू के निर्यात पर असर जरूर पड़ा, जो देश की अर्थ-व्यवस्था को सामान्य बनाये रखने का एक बहुत बड़ा साधन है, पर इस से स्मिथ सरकार का गोरा सिंहासन नहीं हिला.

जिज्ञासुओं की यह जिज्ञासा अस्वाभाविक नहीं होगी कि फिर विल्सन ने विद्रोही से बातचीत कर के उस का सम्मान क्यों बढ़ाया ? जानकारों का दावा है कि दक्षिण अफ्रीका के प्रधानमंत्री वर्स्टर इस वार्त्ता के पक्ष में थे— स्मिथ थोड़ा झुक कर यदि रोडेसिया को 'विधि-सम्मत स्वाधीनता' दिला सके तो दक्षिण अफ्रीका को बड़े पैमाने पर सहायता की तबालत नहीं उठानी पड़ेगी. इस के अलावा विल्सन अपने प्रतिपक्षियों को इस आरोप का जवाब देना चाहते थे कि विल्सन रोडेसिया-समस्या सुलझाने के लिए कुछ नहीं कर रहे हैं. तीसरे, विल्सन अगले साल जनवरी में राष्ट्रकुल प्रधानमंत्री सम्मेलन का रास्ता निष्कंटक करना चाहते रहे हों तो कोई आश्चर्य नहीं.

(बायें) विल्सन और (दायें) स्मिथ : सीधी उँगली घी नहीं निकलता

पश्चिम एशिया

शांति चाहिए, मगर

पश्चिम एशिया में शांति-स्थापना की समस्या किसी सम्मानजनक हल से इतनी ही दूर है जितनी कि पिछले वर्ष के अरब-इस्राइल युद्ध से पहले थी. हाल ही में अरब समाजवादी संगठन की केंद्रीय समिति को संबोधित करते हुए राष्ट्रपति नासिर ने कहा कि यदि अरब-समस्या का कोई संतोषजनक हल नहीं निकलता तो हमें 'एक-एक इंच भूमि को बलात वापस लेना होगा'. उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा कि संयुक्त अरब गणराज्य अपनी सैनिक शक्ति और नागरिक प्रतिरक्षा को सुदृढ़ कर रहा है, ताकि 'निर्णायक युद्ध' के लिए तैयारी हो सके. वास्तव में अरबों को

एबन : शक्ति की शांति

इस बात से बहुत बड़ा आघात पहुँचा है कि संयुक्त राज्य अमेरिका ने इस्राइल को ५० फ़ैंटम जेट यान बेचने का फ़ैसला किया है. यद्यपि राष्ट्रपति जॉनसन ने केवल इतना कहा कि विदेशमंत्री डीन रस्क को इस्राइल के साथ बातचीत जारी करने का अधिकार दिया गया है, फिर भी अधिकारियों का कहना है कि जॉनसन ने वास्तव में इस्राइल को आधुनिक प्रकार के युद्धवाहक बेचने का आदेश जारी कर दिया है. इस्राइली सैनिक अधिकारियों के अनुसार फ़ैंटम यानों को इस्राइल पहुँचने में एक साल का समय भी लग सकता है क्यों कि इन के क्रय-विक्रय के संबंध में अभी किसी प्रकार की बातचीत शुरू नहीं हुई है. जवाबी कार्रवाई के रूप में खबर है कि सोवियत संघ ने भी २०० लड़ाकू जेट विमान (सुखोई–७ और मिग-२१) तथा ५०० टैंक संयुक्त गणराज्य को देने का आश्वासन दिया.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह आश्वासन तभी पूरा किया जायेगा जब अमेरिका इस्राइल को फैंटम और अन्य युद्ध-सामग्री देगा.

अरब भावना : राष्ट्रपति नासिर की ही भाँति अन्य अरब राजनीतिज्ञों ने भी शक्ति-परीक्षण की भावनाएँ व्यक्त की हैं. तुर्की के विदेशमंत्री एहसान साबरी के अनुसार अरब राष्ट्रों द्वारा जो नम्रता और सूझ-बूझ का व्यवहार व्यक्त किया गया है उस के अनुरूप इस्राइल की प्रतिक्रिया नहीं हुई है. संयुक्त-राष्ट्र संघ में भी संयुक्त अरब गणराज्य के विदेशमंत्री मुहम्मद रियाद ने अमेरिका पर इस्राइली शासकों को प्रोत्साहन देने का आरोप लगाया है. उन के अनुसार इस्राइल की शांति योजना में कोई नयी बात नहीं है किंतु पत्रकारों से बात करते हुए उन्होंने कहा कि संयुक्त अरब गणराज्य इस शिकायत पर ज़ोर नहीं देता कि शांति-वार्त्ता से पहले इस्राइल अरब क्षेत्रों को छोड़ दे. वास्तव में कई राजनैतिक विशेषज्ञों के अनुसार मुहम्मद रियाद की यह बात राष्ट्रपति नासिर के भाषण से मेल नहीं खाती. इस लिए कई क्षेत्रों में अनुमान लगाया जा रहा है कि संयुक्त अरब गणराज्य को इस्राइल से युद्ध न करने की इच्छा होते हुए भी अरब भावनाओं के प्रतिकूल चलने का साहस नहीं होता.

नौ सूत्री योजना : इस्राइल के विदेशमंत्री अब्बा एबन ने संयुक्त राष्ट्र महासभा में जो ९ सूत्री शांति योजना रखी है उस का मुख्य और महत्त्वपूर्ण भाग यह है कि इस्राइल अरब क्षेत्रों से पीछे हटने को तैयार है बशर्ते कि अरबों और इस्राइल के बीच 'स्थायी सुरक्षित और मान्य सीमाएँ' स्थापित की जायें. इस प्रकार की संरक्षित सीमाओं के संबंध में इस्राइली सरकार का मत है कि वही सीमाएँ संरक्षित समझी जायेंगी जो 'स्थायी शांति की परिधि में आती हैं.' एबन के अनुसार संयुक्त अरब गणराज्य के विदेशमंत्री रियाद उन के साथ एक संयुक्त विज्ञप्ति जारी करें कि स्वेज़ नहर और अकाबा की खाड़ी अंतरराष्ट्रीय जलमार्ग हैं, जिन पर दोनों पक्षों का बराबर अधिकार है. अरब शरणार्थियों के संबंध में उन के अनुसार सभी पश्चिमी एशियाई देशों को मिल कर एक पंचवर्षीय योजना बनानी चाहिए जिस में कि ये शरणार्थी समाज की मुख्य धारा में मिल जायें. इन शर्तों के पूरा होने तक भी इस्राइल शांति-वार्त्ता में भाग लेने के लिए तैयार है. मगर उस के अनुसार वास्तविक शांति-वार्त्ता अरबों और इस्राइलियों के प्रत्यक्ष संवाद से ही हो सकती है. एबन की ९ सूत्री योजना का एक महत्त्वपूर्ण भाग फ़िलीस्तीनी धार्मिक स्थानों के संबंध में है. इस सिलसिले में इस्राइली नीति यह है कि फ़िलिस्तीन में ईसाइयों और मुसलमानों के धार्मिक स्थानों पर इस्राइल अपना एकाधिकार नहीं रखेगा. इन स्थानों के संबंध में वह सर्वसम्मत योजना पर चलने के लिए तैयार है.

तनाव की स्थिति : यद्यपि दोनों पक्ष इस बात को महसूस करते हैं कि पश्चिम एशियाई में शांति-स्थापना दोनों के हित में है और अधिक समय तक तनाव का कुपरिणाम दोनों पक्षों के सामाजिक और आर्थिक ढाँचे पर पड़ सकता है, फिर भी राष्ट्रीय भावनाओं की लपेट में आ कर दोनों पक्ष अपनी स्थितियों से हटने को तैयार नहीं. इस्राइल के प्रमुख विशेषज्ञों और राजनीतिकों को इस बात का अहसास है कि पिछले वर्ष के जून-युद्ध में अभूतपूर्व सफलता के बावजूद समस्या का हल नहीं निकला और स्वेज़ नहर के आर-पार और जोर्डन नदी के तट पर बीच-बीच में जो झड़पें होती हैं उन से इस क्षेत्र में हर समय युद्ध-भूमि का सा तनाव बना रहता है. इस्राइल एक छोटा देश है और अपनी तकनीकी और आर्थिक सफलताओं के बावजूद वर्त्तमान स्थिति का उस की आर्थिक प्रगति पर बहुत प्रभाव पड़ रहा है. इसी प्रकार अरब राष्ट्र और विशेषकर संयुक्त अरब गणराज्य की सरकारें समझती हैं कि इस्राइल से युद्ध करना अरब एकता और आर्थिक प्रगति के मार्ग में एक बहुत बड़ी बाधा है. मगर फिर भी अरब देशों में पिछले वर्ष युद्ध से पहले का-सा वातावरण बनता जा रहा है. हाल ही में क़ाहिरा में आयोजित मुस्लिम उलेमा के चौथे अधिवेशन में ३७ देशों के मुसलमान प्रतिनिधियों ने अरब देशों को इस्राइल के साथ सभी संबंध तोड़ने के लिए कहा क्यों कि उन के अनुसार 'शत्रु के साथ' सहयोग करना इस्लाम की शिक्षा के विरुद्ध है.

यूनान

'अच्छे यूनानियों का राष्ट्र'?

किसी भी देश की सरकार को जनता का ९२ प्रतिशत समर्थन मिलना उस के लिए आत्म-गौरव और सौभाग्य की बात है. कर्नल जॉर्ज पापाडुपूलोस की सैनिक सरकार ने पिछले दिनों जनमत-संग्रह में अपनी सरकार को इस सौभाग्य का हक़दार साबित कर दिया है. यूनानी संविधान के नये प्रारूप को इतने अधिक मतों से जन-समर्थन दिला कर कर्नल पापाडुपूलोस ने एक ओर तो २८ वर्षीय सम्राट् कांस्तंतीन के अधिकारों को बहुत अधिक सीमित कर दिया और दूसरी ओर पिछली अप्रैल में सैनिक क्रांति से हथियाई गयी सत्ता का औचित्य स्थापित कर के उसे लोकतांत्रिक बनाने का भी दावा किया है. इस कामयाबी के कई कारण हैं. जिन में सियासी हथकंडों और पुलिस के दबाव का भी काफ़ी हाथ है.

मतदान से पूर्व घोषणा की गयी थी कि सरकार तमाम राजनैतिक बंदियों को रिहा कर देगी, जिस से कि वे संविधान के नये प्रारूप के समर्थन या विरोध में अपना मत ज़ाहिर कर सकें. किंतु ख़ास मौक़े पर सरकार अपने वादे से मुकर गयी. भूतपूर्व प्रधानमंत्री जॉर्ज पापांद्रेउ और कानेलोपूलोस (नेशनल रेडिकल यूनियन के नेता) सहित केवल सात ही राजनैतिक बंदियों को रिहा किया गया. १३ केंद्रीय संसद्-सदस्यों तथा ३० अन्य और कम्युनिस्ट बंदियों को मतदान के लिए रिहा नहीं किया गया. २५०० कम्युनिस्टों को मुक्त करने का तो सवाल ही नहीं उठा.

नया संविधान : यूनानी संविधान के नये प्रारूप में शाह को राजनीति में कोई महत्त्वपूर्ण स्थान नहीं दिया गया है. और न प्रतिष्ठित सत्ता के विरोधियों को ही उभरने का कोई अवसर. संसद् के अधिकारों में कटौती की जायेगी और विधानसभा का कार्य-क्षेत्र भी सीमित कर दिया जायेगा. ग़ैर-संसदीय मंत्रियों का एक मंत्रिमंडल गठित किया जायेगा और एक संवैधानिक न्यायालय भी स्थापित किया जायेगा जो लोकतंत्र के विवादों को हल करेगा. प्रधानमंत्री ने कहा कि उन्हें ज्ञात नहीं कि संविधान की सभी (१३८) धाराओं को क्रियान्वित किया जायेगा अथवा नहीं. वह केवल इतना ही आश्वासन दे सके कि नये प्रारूप के मुताबिक 'सड़कों में तय होने वाले विवादों को संसद् भवन में ले जा कर सुलझाया जायेगा.' संसद्-सदस्यों को मंत्री नहीं बनाया जायेगा. संविधान में राजा को यह अधिकार दिया गया है कि बहुमत वाली पार्टी प्रधानमंत्री का चुनाव करे और अगर किसी भी पार्टी को पर्याप्त बहुमत न मिल सके तो फिर संसद्-सदस्यों के बहुमत से ही प्रधानमंत्री का चुनाव किया जाये. राजा का सेना पर 'काग़ज़ी' नियंत्रण तो रहेगा, पर वह किसी भी अधिकारी को नियुक्त नहीं कर सकेगा. संसद् में स्वीकृत प्रस्तावों पर राजा को अनिवार्य रूप से हस्ताक्षर करना पड़ेगा. संविधान के प्रारूप की एक प्रति राजा कांस्तंतीन के पास रोम भेज

कर्नल पापादुपूलोस : नीति या राजनीति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दी गयी है. संसद्-सदस्यों की संख्या घटा कर ३०० से १५० कर दी गयी है. जो पार्टी चुनाव में निर्दिष्ट सीमा से कम वोट प्राप्त करेगी, उसे संसद् से हटा दिया जायेगा.

सर्वाधिक प्रभावशाली प्रशासनिक इकाई राष्ट्रीय परिषद् होगी, जिस में प्रधानमंत्री, संसद् का अध्यक्ष, संसदीय दलों के नेता, उच्च न्यायालय का अध्यक्ष, सार्वजनिक सेवा का प्रमुख अधिकारी और विश्वविद्यालयों के तीन रैक्टर शामिल होंगे. कुल मिला कर सरकारी परिभाषा के अनुसार संविधान के नये प्रारूप का मक़सद यूनान को 'अच्छे यूनानियों का राष्ट्र बनाना है."

स्पेनी गिनी

अपनी सरकार

अफ़्रीकी जनता के सतत संघर्ष और दृढ़ संकल्प से पराभूत हो कर अंततोगत्वा स्पेन ने इक्वाटोरियल गिनी को पिछले दिनों पूर्ण स्वाधीनता दे दी.

स्वायत्त सरकार : इक्वाटोरियल गिनी कोई १९० वर्ष तक पराधीन रहा. अफ़्रीकी और एशियाई देशों में उपनिवेशवाद के विरुद्ध संघर्ष छिड़ने के साथ ही अफ़्रीका के इस छोटे से देश ने भी अपनी स्वाधीनता का संग्राम छेड़ दिया. काफ़ी अर्से तक स्पेनी शासकों के कान पर जूँ न रेंगी, किंतु इस से संघर्ष मंद नहीं हुआ. स्वाधीनता की माँग समय के साथ ज़ोर पकड़ती गयी. १९६४ में आ कर अफ़्रीकी जनता की मुराद, आंशिक ही सही, पूरी हुई. १९६३ के जनमत संग्रह और १९६४ के चुनावों के बाद इक्वाटोरियल गिनी में स्वायत्त सरकार की स्थापना हुई. जनता द्वारा निर्वाचित ८ अफ़्रीकी सदस्यों का मंत्रिमंडल बना. सुरक्षा और विदेशी मसले स्पेन सरकार के प्रतिनिधि तथा गिनी के उच्चायुक्त के अधीन बने रहे.

इक्वाटोरियल गिनी, रिओ म्यूनी और फर्नोडो ५ द्वीपों को मिला कर बना है, जिन का कुल क्षेत्रफल २८,००० वर्ग किलोमीटर से कुछ ही अधिक है. जनसंख्या पौने तीन लाख के लगभग है जिन में ८,००० के करीब यूरोपीय हैं.

पनामा

सैनिक क्रांति

"नेशनल गार्ड के कुछ छोटे अधिकारियों के मूर्खतापूर्ण रवैये से हमें बड़ा आश्चर्य हुआ. कुछ विद्रोहियों को जिन्हें पुलिस पहले से ही जानती थी, छोड़ कर हमें नेशनल गार्ड के अध्यक्षों, अधिकारियों तथा सैनिकों का विश्वास प्राप्त है." पनामा के अपदस्थ राष्ट्रपति अर्नुल्फो एरिआस ने 'रक्तहीन' सैनिक क्रांति पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए कहा. १२ अक्तूबर की क्रांति के बाद राष्ट्रपति ने अमेरिका शासित पनामा नहर-क्षेत्र स्थित बाल्बोआ नगर में शरण ली और अब वह वहीं हैं.

चाँदनी ११ दिन की : यह तीसरा अवसर है जब कि राष्ट्रपति एरिआस को सैनिक क्रांति के परिणामस्वरूप सत्ताच्युत होना पड़ा. १९४१ और १९५१ की सैनिक क्रांतियाँ भी राष्ट्रपति एरिआस की सरकार के विरुद्ध हुई थीं. किंतु इस बार वह केवल ११ दिन तक ही राष्ट्रपति-पद पर रह सके. हाल की क्रांति का नेतृत्व गार्ड नेशनल के जिन सैनिक अधिकारियों ने किया, पद की दृष्टि से उन का कोई ख़ास रुतबा नहीं है. अमर टोरीजोस लेफ़्टिनेंट कर्नल हैं और मेजर बोरिस मार्टीनेज़ चिर्की प्रांत की सैनिक टुकड़ी के प्रधान हैं. क्रांति से एक दिन पूर्व ही राष्ट्रपति एरिआस ने अमर टोरीजोस को अल सल्वाडोर में पनामा का सैनिक परामर्शदाता और मध्य अमेरिका प्रतिरक्षा संगठन का पर्यवेक्षक नियुक्त किया था और इस प्रकार उन्हें एक प्रकार का देश निकाला ही दे दिया था.

'राष्ट्रपति एरिआस ज़िंदाबाद' : लेफ़्टिनेंट कर्नल अमर ने घोषणा की कि क्रांति का उद्देश्य नेशनल गार्ड के हितों की रक्षा करना और देश को तानाशाही सरकार से बचाना है. उन्होंने कर्नल बोलिवार उरुतिया को सैनिक सरकार का अध्यक्ष नियुक्त किया. कर्नल उरुतिया को क्रांति से एक दिन पहले राष्ट्रपति एरिआस ने नेशनल गार्ड का प्रधान मनोनीत किया था. ताजा ख़बरों के अनुसार पनामा शहर में राष्ट्रपति एरिआस के समर्थकों और क्रांतिकारियों के बीच संघर्ष छिड़ा हुआ है. इन घटनाओं से यह संकेत मिलता है कि राष्ट्रपति एरिआस के समर्थकों की संख्या काफ़ी है. नेशनल गार्ड में भी अपदस्थ राष्ट्रपति के समर्थक अधिकारी अवश्य होंगे जो फ़िलहाल अवसर देखते हुए चुप लगा गये हैं. ऐसी स्थिति में यह कहना कठिन है कि वर्त्तमान सैनिक सरकार देश को स्थायी सरकार देने में सफल होगी. पेरू की सैनिक क्रांति के कुछ दिनों बाद ही पनामा में सैनिक क्रांति हो जाने से यह संकेत अवश्य मिलता है कि लातीनी अमेरिका की पहले से ही अस्थिर राजनीति और भी अस्थिर होती जा रही है.

चेकोस्लोवाकिया

मास्को दरबार की हाज़िरी

पिछले दो महीनों में चेक प्रधानमंत्री अब चौथी बार मास्को दरबार में हाज़िरी देने गये (या बुलाये गये). अनुमान है कि इस बार वह चेकोस्लोवाकिया में वारसाउ संधि संगठन की सेनाओं की उपस्थिति के बारे में रूसी नेताओं से समझौता-वार्त्ता करेंगे. मास्को पहुँचने पर प्रधानमंत्री चेर्निक का हवाई अड्डे पर भव्य स्वागत किया गया. रूसी प्रधानमंत्री कोसीगिन उन के स्वागत के लिए हवाई अड्डे पर उपस्थित थे. पहले भी जब-जब चेक नेता मास्को गये, हवाई अड्डे पर उन का स्वागत राजकीय अतिथि के रूप में किया गया किंतु हर बार यात्रा समाप्त होने पर यह तथ्य सामने आया कि रूसी नेताओं ने अपनी शर्तें मनवाने के लिए ठीक वैसा ही व्यवहार किया जैसा एक स्वामी अपने सेवक के साथ करता है. चेक नेताओं को हर बार अपमानित हो कर रूसी दबाव के नये बोझ को सिर लाद कर स्वदेश लौटना पड़ा. इस बार भी प्रधानमंत्री चेर्निक की यात्रा का उस से भिन्न कोई और परिणाम होगा इस की आशा नहीं करनी चाहिए.

शर्तों का पुलिंदा : इस महीने के आरंभ में जब चेक कम्युनिस्ट पार्टी के नेता डुबचेक और प्रधानमंत्री चेर्निक रूस गये थे, तो रूसी नेताओं ने उन के साथ ऐसा अपमानजनक व्यवहार किया कि ऐसा अनुमान लगाया जाने लगा कि ये दोनों चेक नेता कुछ अन्य व्यक्तियों के साथ अपने पदों से त्यागपत्र दे देंगे. किंतु डुबचेक की सहनशीलता और धैर्य ने उन्हें ऐसा नहीं करने दिया. लगता है कि चेक जनता का लाड़ला डुबचेक हर प्रकार का अपमान सह कर भी अवसर मिलने पर रूसियों को सबक सिखाने के लिए दृढ़-संकल्प है. अपने राष्ट्र और राष्ट्रहित में उन की वही निष्ठा बनी हुई है जो कि रूसी आक्रमण से पहले थी.

चेर्निक से पहले : प्रधानमंत्री चेर्निक से पहले ही चेक सैनिक और सरकारी अधिकारियों का एक प्रतिनिधिमंडल उप-प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में मास्को पहुँच चुका था. आरंभ में इस प्रतिनिधिमंडल की मास्को यात्रा को गुप्त रखा गया. किंतु बाद में इसे गोपनीय नहीं रखा जा सका. ऐसा अनुमान है कि यह प्रतिनिधिमंडल पिछले दिनों संधि की शर्तों के बारे में रूसी नेताओं से विचार-विमर्श करता रहा. रूसी नेता चाहते हैं कि चेक नेता वही करें जिस के लिए उन्हें मास्को से निर्देश मिले. अर्थात् उन पत्रकारों को दंड दें जिन्होंने रूसी हमले के समय उस का विरोध किया और रूस की काली करतूतों का भंडाफोड़ किया था; वे पश्चिमी देशों से कोई भी समझौता—चाहे आर्थिक हो या राजनैतिक—करने से पहले मास्को से परामर्श करें; सेना में उच्चाधिकारियों की नियुक्ति मास्को की सलाह से करें; हर समाचारपत्र के लिए सरकारी सेंसर की व्यवस्था करें और चेक नागरिकों की विदेश-यात्रा पर प्रतिबंध लगायें. दूसरे शब्दों में इसे यों भी कहा जा सकता है कि चेक नेता अपने देश को रूस का उपनिवेश समझें और समाजवाद की बलिवेदी पर अपनी स्वाधीनता का बलिदान कर दें.

किंतु रूसी नेता इतने भर से संतुष्ट नहीं हुए. अब वे चाहते हैं कि समझौते की बाक़ायदा लिखा-पढ़ी हो जाये और इसी लिए प्रधानमंत्री चेर्निक को एक बार फिर मास्को दरबार में उपस्थित होना पड़ा.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संसदीय प्रजातंत्र और विधायकों का प्रशिक्षण

भारत विश्व का सब से बड़ा देश है जिस ने संसदीय प्रजातंत्र को अपनाया और यह स्वाभाविक है कि इतने बड़े और विविध परंपराओं वाले देश में एक स्वस्थ संसदीय प्रणाली का विकास करने के मार्ग में अन्य देशों से कहीं अधिक बाधाएँ और कठिनाइयाँ उपस्थित होंगी. मगर साथ ही यह भी सत्य है कि यदि बाधाओं से जूझने का प्रयत्न नहीं किया गया तो संसदीय प्रणाली और उस के फलस्वरूप स्वयं प्रजातंत्र की जड़ें हिल जायेंगी. देश के विभिन्न राज्यों में विधानसभाओं की जो स्थिति आज दिखायी देती है वह किसी भी सूरत में संतोषजनक नहीं कही जा सकती. विधायकों का व्यवहार कहीं-कहीं अत्यंत निम्न कोटि का रहा है, जिस से संपूर्ण सभा का वातावरण विषाक्त हो गया है और संसदीय व्यवस्था का स्तर गिर गया है. यह सत्य है कि इस में केवल व्यक्तिगत विधायकों का ही उत्तरदायित्व नहीं. बहुधा अपने दलों के स्वार्थ सिद्ध करने के लिए या कभी-कभी दल-नेताओं के आदेश पर भी विधानसभाओं में विधायकों का व्यवहार सम्मानजनक और शोभनीय नहीं रहता. फिर भी इस तथ्य से भागना संभव नहीं कि यदि विधानसभाओं और स्वयं संसद् के सदस्यों का व्यक्तिगत स्तर ऊँचा हो तो उस से विधानसभाओं की कार्रवाइयों में एक स्वस्थ वातावरण पैदा होने में सहायता मिलेगी.

दर्शक सदस्य : अनुचित और अशोभनीय व्यवहार के अतिरिक्त भारत की विधानसभाओं में एक प्रमुख कठिनाई यह भी है कि नये-नये सदस्य संसदीय प्रणाली में पूर्ण रूप से सुशिक्षित नहीं होते. क्यों कि भारत एक ऐसा देश है जहाँ अभी शिक्षितों का अनुपात बहुत कम है इस लिए ऐसे क्षेत्रों के सदस्य-संसद् भवन में या विधानसभाओं में पहुँच कर अपने-आप को अजनबी जैसा महसूस करते हैं, जो पहाड़ी क्षेत्रों से अथवा पिछड़ी हुई जातियों के प्रतिनिधि होते हैं. इस का परिणाम यह होता है कि वर्षों तक नये सदस्य संसदीय कार्रवाई में कोई भी योगदान नहीं कर सकते. प्रायः यह देखा जाता है कि विधानसभाओं में बोलने वाले सदस्य या तो मंत्री होते हैं या फिर विरोधी दलों के नेता और प्रमुख सदस्य. अधिसंख्य सदस्य श्रोताओं और दर्शकों के रूप में ही विधानसभा भवनों में बैठे रहते हैं. उन्हें इस बात का विश्वास नहीं होता कि वह खड़े होने पर उपयुक्त बात कह सकेंगे या प्रभावशाली आलोचना कर सकेंगे और न ही उन के दल के नेताओं को इस बात का विश्वास होता है कि वह यदि इन नये सदस्यों को बोलने का अवसर दें तो वे उन के दल की नीतियों और प्रतिष्ठा के अनुरूप चल सकेंगे. यह चित्र देश की सभी विधानसभाओं का है.

आज देश में आवश्यकता इस बात की है कि इस प्रकार का स्थायी मंच या संस्था स्थापित की जाये जहाँ इस प्रकार के सदस्य जा कर अपनी कठिनाइयों को छाँट सकें और उन के हल ढूंढने का प्रयास करें. इस सिलसिले में संवैधानिक और संसदीय अध्ययन संस्थान ने एक महत्त्वपूर्ण क़दम उठाया है. १३ अक्तूबर को शिमला में जम्मू और कश्मीर, पंजाब, हरयाणा और दिल्ली के कुछ विधायकों का एक शिविर आरंभ हो रहा है, जिस में विधायकों की व्यक्तिगत और कार्य-संबंधी कठिनाइयों पर विचार होगा.

डॉ० लक्ष्मीमल सिंघवी : सक्रिय

महत्त्व की बातें : एक पत्रकार-सम्मेलन में संस्थान के कार्यवाहक अध्यक्ष ने कहा कि नये सदस्यों के सामने इस प्रकार की कठिनाइयाँ आ जाती हैं कि वे उन पर खुल कर बात नहीं कर सकते, क्यों कि उन्हें संसदीय प्रणाली का पूरा अभ्यास नहीं रहता. इस तरह वह अपने चुनाव-क्षेत्र और संपूर्ण देश का पूर्ण रूप से प्रतिनिधित्व नहीं कर पाते. इस लिए उन की दिन प्रतिदिन की कठिनाइयाँ को हल करने और सही मार्ग दिखाने के लिए यह शिविर शुरू किया जा रहा है, जिस से वह अपनी योग्यता और मौलिकता का उपयोग जन-सेवा के लिए कर सकें. इस शिविर में प्रदेश राज्यपाल, मंत्री, प्रशासन, राजनैतिक दल, विधानसभा के अध्यक्ष, विधायकों के कर्त्तव्य, उन के अधिकार और प्राप्त सुविधाएँ, संसदीय व्यवहार, प्रश्न-काल का महत्त्व, समिति-पद्धति, सचेतकों का महत्त्व, गठबंधन, दल-बदल की समस्या आदि विषयों पर एक सप्ताह तक विचार प्रकट किये जायेंगे. इन नये सदस्यों को देश के प्रसिद्ध और सिद्धहस्त संसद-सदस्यों और विशेषज्ञों से मिलने और उन के विचार सुनने का अवसर दिया जायेगा. इस शिविर का उद्घाटन संसदीय मामलों के मंत्री डॉ. राम सुभग सिंह करेंगे और २० अक्तूबर को अंतिम भाषण केंद्रीय आवास और पूर्तिमंत्री जगन्नाथ राव देंगे. इन के अतिरिक्त हिमाचलप्रदेश के मुख्यमंत्री डॉ. परमार, प्रसिद्ध संसद् सदस्य डी. के. कुंते, प्रकाशवीर शास्त्री, बी. के. पी. सिन्हा आदि भी अपने विचार प्रकट करेंगे.

यद्यपि विधानसभा-सदस्यों को पूर्ण रूप से सुशिक्षित करने का उद्देश्य इस शिविर से पूरा नहीं होगा फिर भी यह उस दिशा में प्रेरणा-स्रोत का काम करेगा. वास्तव में संसदीय शिविर और प्रशासन उसी प्रकार एक विशिष्ट ज्ञान की शाखा होनी चाहिए जिस प्रकार क़ानून या स्वास्थ्य.

अध्यक्षों का काम : शिमला में होने वाले इस सम्मेलन में संवैधानिक और संसदीय संस्थान के आयोजकों को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि हाल ही में त्रिवेंद्रम में आयोजित विधानसभाओं के अध्यक्षों की बैठक और इसी प्रकार की पिछले वर्ष की बैठक में पारित प्रस्तावों और सुझावों को भी दृष्टि में रखें, क्यों कि विधायकों के उत्तरदायित्व के साथ ही संसदीय प्रणाली के सुधार का काम समाप्त नहीं होता. यह भी ज़रूरी है कि विधानसभाओं के अध्यक्षों का व्यवहार और निष्पक्षता क़ायम रहे. पिछले वर्ष पश्चिम बंगाल और इस वर्ष पंजाब विधानसभा में जो हंगामे हुए उन में वास्तव में विधानसभाओं के अध्यक्षों के सम्मान को काफ़ी धक्का लगा है. यह ज़रूरी है कि अध्यक्ष अपने अधिकारों के साथ-साथ अपने कर्त्तव्यों और अपनी सीमाओं को भी समझें. विधायकों, प्रशासकों और न्यायालयों के अधिकार पूर्ण रूप से निश्चित किये जाने चाहिएँ, ताकि ये एक-दूसरे की सीमाओं का अतिक्रमण न करें. साथ ही विरोधी दलों के व्यवहार को भी नियमित करना ज़रूरी है. अध्यक्षों की इस बैठक में एक सुझाव यह दिया गया है कि विरोधी पक्ष के नेता को एक संस्था के रूप में परिणत कर दिया जाये, जिस के अनुसार विरोधी पक्ष के नेता को एक वेतन मिलेगा और उन्हें स्थान तथा कार्यालय की सुविधाए सुलभ की जायें. यही व्यवस्था कई पश्चिमी देशों में है. यह एक सौभाग्य की बात है कि संवैधानिक और संसदीय अध्ययन संस्थान देश में प्रजातांत्रिक मूल्य और वेतन-चेतना जागृत करने के लिए प्रयत्नशील है. विधायकों के इसी प्रकार के शिविर देश के अन्य क्षेत्रों में भी स्थापित किये जायेंगे. कार्यवाहक अध्यक्ष डॉ. लक्ष्मीमल सिंघवी के अनुसार मद्रास के अध्यक्ष ने इसी प्रकार का शिविर मद्रास में आयोजित करने का अनुरोध किया है.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चौंकने पात

योजनाएँ इस लिए होती हैं कि देश की अर्थनीति को किसी खास ठिकाने पहुँचाया जाये. सोचने की बात यह होती है कि वह ठिकाना कौन-सा हो. होता यह है कि जितने सोचने वाले होते हैं, उतने ही ठिकाने सुझाये जाने लगते हैं. कारण यह है कि हर किसी का अपना-अपना हित उस के सोचने को अपने-अपने अनुरूप मोड़ दे लेता है. फिर मतों के आग्रह भी होते हैं. योजना बना लेने पर लोगों को उस में तरह-तरह के दोष दिखाई देने लगते हैं. उसे लागू करने के ढंग को लेकर भी नुक्ताचीनियाँ होती हैं. जितने मुँह उतनी बात होती है. इसी लिए हर आलोचना का अगर एक 'पक्ष' होता है तो एक 'विपक्ष' भी होता है. हमारी अब तक की योजनाओं में जितने भी दोष दिखाये गये हैं, उन में से बस एक ही ऐसा है, जिस को बड़ा दोष मानने में सभी आलोचक एकमत हैं. वह दोष यह रहा है कि देश के साधारण नागरिक को योजना में योगदान का अवसर नहीं मिलता. निजी तौर पर हो या पेशे के स्तर पर, आम लोग योजना के बनाने या लागू करने में हाथ बँटाने से रह जाते हैं. एक तो इस के लिए उन के भीतर कोई उत्साह जग ही नहीं पाता और अगर राम-भरोसे जग भी ले तो यह पता उन्हें चल नहीं पाता कि हम आखिर करें भी तो क्या करें. नेता लोग यह सूखा-सूखा नारा तो बार-बार देते हैं कि योजना को जन-सहयोग चाहिए, मगर जन-सहयोग की राह में जो रुकावटें हैं, उन्हें दूर करने की कोई कोशिश वे नहीं करते. ऐसा लगता है कि देश के आर्थिक उद्धार के पुण्य में किसी को भी साझीदार बनाना उन्हें सरासर नागवार जान पड़ता है. फल यह है कि योजना को लागू करना तो बस नौकरशाही काम भर रह गया है और शेष सारा देश या तो मूक दर्शक भर रह गया है या अधिक से अधिक आलोचक भर. योजना की यह बड़ी ही गंभीर मनोवैज्ञानिक कमज़ोरी है. उस के प्रति जन-साधारण की प्रतिबद्धता तो लगभग शून्य के बराबर है और भावनात्मक दायित्व अगर थोड़ी बहुत है भी तो बिलकुल ही नाकाफ़ी है.

अधमरे पत्र को आप चाहें तो अधरीता भी कह सकते हैं. नज़र-नज़र की बात है. पत्रकार वर्गीज़ अधमरा कहना ही पसंद करने वालों के संप्रदाय में हैं. कृष्ण-पक्ष की ठोकरों से आगाह करते फिरने में उन्हें उतनी दिलचस्पी नहीं जितनी कि शुक्ल पक्ष की सैर कराने में है, जिस के प्रभाव में उकठे ठूँठ तक में थोड़ी बहुत लुनाई तो आ ही जाती है. यही शुभ-दर्शन-वादी संकल्प लेकर वर्गीज़ ने १९६४ ई० के शुरू में भारत के कोने-कोने का दौरा किया और आर्थिक विकास के लक्षणों के प्रमाण एकत्र कर के एक लेखमाला तैयार की जो **टाइम्स ऑफ़ इंडिया** के उस वर्ष जनवरी से जुलाई के बीच के अंकों में **इंडिया-१९६४** के नाम से छपी. **भावी भारत की रूपरेखा*** उसी लेखमाला का हिंदी अनुवाद है.

अनुवादक ने भाषा को यथासंभव सरल और प्रवाही रखने की पूरी कोशिश की है मगर एक तो हिंदी उस की मातृभाषा नहीं जान पड़ती (जहाँ तहाँ मराठी की गंध है) और दूसरे अंग्रेज़ी का वाक्य विन्यास उस की शैली पर बुरी तरह हावी है. नतीजा यह जहाँ ये शब्द इकट्ठे आ गये हैं, जैसे वस्तु सूचियों में, वहाँ कितने ही वाक्य ऐसे बन गये हैं कि अंग्रेज़ी न जानने वाले पाठक के पल्ले वे हरगिज़ नहीं पड़ने के. नमूना: ". . . यूनिट के डिज़ाइन के अलावा सभी डिज़ाइन भारतीय टेकनीशियनों ने तैयार किये हैं. . . .उन में भंडार टंकियों, टी-इ-एल. के ब्लैंडिंग यूनिट (जिस में तैयार गैसोलीन का आपटेन स्तर ऊँचा किया जाता है) लोडिंग रैक, कूलिंग टावरस, वाटर ट्रीटमेंट प्लांट,. . .के डिज़ाइन भी शामिल हैं". वर्तनी-विकार की बीमारियाँ 'क्यूजेक' ऐंजिन' आदि तो हैं ही, 'लेथिराज्म' के साथ 'पेलाग्रा' भी है, जिस की टीका है : "जिस के परिणाम-स्वरूप चमड़ी की बीमारियाँ और डायरिया हो जाते हैं". अंगरेज़ी मुहावरों की कृपा से 'सफ़ेद कालर वाले कर्मचारी', 'अधिक भोजन उपजाओ का अर्थ केवल अधिक अन्न उपजाना समझने लगते हैं. हिंदी शब्दों से अपरिचय 'पवनचक्की' का 'पनचक्की', 'पेरने' को 'पिरोना', 'खेसारी' को 'केसरी' और 'चिमटने' को 'चिपटना' बना डालता है, 'अनेकों' पर कृपा तो खैर हिंदी मातृभाषा वालों की भी है. तत्समों के मैदान में भी 'रक्तक्षीणता' है जिस की भाखा-टीका 'लोहे की कमी' है. भारत-भूमि से अपरिचय के प्रमाण 'केप कमोरेन', 'तलछर', 'निवेली-सालम' आदि कोरियों नाम हैं. माना कि 'नबल आय' हिंदी के कोश में वृद्धि करेगा, मगर वे अडिग अव्यय किस काम आयेंगे जिन के मारे 'उस प्रथा. . .के अंतर्गत जोंक की तरह चिपटे हुए ज़मींदार' टस से मस होने का नाम नहीं लेते ? और उस अवधान को लेकर हिंदी कहाँ जा पहुँचेगी, जिस के 'अंतर्गत' प्रयोगात्मक रूप से मछली पकड़ने के चरण धीरे-धीरे हर महीने आगे बढ़ाये जा रहे हैं' या जिस के 'एटलस स्टील के साल तक खिंच गयी' जैसे वाक्यों का अर्थ लगाने में विश्व की तमाम भाषाओं का ज्ञान मिल कर भी सहायक नहीं सिद्ध हो सकने का ?

शिक्षा दिली पाहिजे

भारतीय और पाश्चात्य शिक्षा के इतिहास में आने वाले व्यक्ति-नामों, संस्था-नामों, पद्धति-नामों, विविध युगों की शिक्षा-व्यवस्थाओं, शिक्षा-संबंधी विविध मतवादों (जैसे. आदर्शवाद, प्रकृतिवाद, यथार्थवाद, प्रयोगवाद आदि), शिक्षा पर उन मतवादों के प्रभावों और उन के आधार पर बने विविध शिक्षा सिद्धांतों, शैक्षणिक मनोविज्ञान और शैक्षणिक समाजशास्त्र के कुछ पारिभाषिक शब्दों, शिक्षा विधियों, विद्यालय–प्रबंध संबंधी आवश्यक विषयों आदि के कुल ३३३ मुद्दों पर सौ सवा सौ से लेकर आठ-नौ सौ शब्दों तक के छोटे-बड़े, अच्छे-बुरे, ठंडे और गहरे-छिछले-सतही परिचय-लेखों के गड़मड़ संकलन का नाम है 'शिक्षा विज्ञान कोश'.× इन परिचय लेखों को नागरी वर्ण-क्रम से लगाने का संकल्प तो इस ग्रंथ में स्पष्ट लक्षित होता है, पर उस संकल्प की साधकता का अभाव क्रम लगाने वाले में स्पष्टतर है.

अक्सर परिचय-लेखों की प्रकृति अभ्यासी बालकों के अभ्यास-लेखों की सी है. लेखक के विज्ञापित परिचय में कहा गया है कि शिक्षा-विज्ञान की दो दर्जन से अधिक हिंदी-अंग्रेज़ी पुस्तकों की रचना करने वाले इन विख्यात शिक्षाविद् की आधी दर्जन कृतियों को उत्तर प्रदेश सरकार (प्रायः हज़ार-हज़ार रुपये से) पुरस्कृत कर चुकी है और एकाध को स्वयं प्रकाशित भी कर चुकी है. मगर एक विश्वविद्यालय के शिक्षा-विभाग के रीडर-पद पर विराजित यह लेखक महोदय सूत्रकालीन शिक्षा के इतिहास में 'चरण' शब्द का नाम तक नहीं लेते और वेदांगों की सूची में प्रथम गण्य 'शिक्षा' को अंग्रेज़ी 'एजुकेशन' का पर्याय मानते हैं. तिस पर तुर्रा यह कि "संस्कृत के ग्रंथ" 'अमर कोष' का श्लोक उद्धत करते हैं, और पता नहीं कितनी दूर की कौड़ी ला कर 'शिक्षः शिक्षण' की सी व्युत्पत्ति भी देते हैं. जैसे गाँव के अधपढ़ पुरोहित बात अपने मतलब की करेंगे और वैधक का श्लोक स्मृति के प्रमाण-रूप में दुहरा जायेंगे या अपनी गंवइ बोली में ही 'अमौट्छस' विभक्तियाँ लगा कर रोब जमा लेंगे.

धन्यव है शिक्षा विज्ञान की हार्वर्डी-मिशगिनी ज्ञान-गरिमा और धन्य है उसे पूजने वाली उत्तर प्रदेश सरकार.

---

*भावी भारत की रूपरेखा. लेखक बी. जी. वर्गीज. अनुवादक : जी. एस. जोशी. प्रकाशक : राजकमल प्रकाशन प्रा. लि., नयी दिल्ली-६. पृष्ठ १६ (भूमिका आदि)+३५६+८ (सांख्यिकी आदि)+८ (मानचित्र), डिमाई अठपेजी. मूल्य : १२.५० रु.

×शिक्षा विज्ञान-कोश लेखक : डा० सीताराम जायसवाल. प्रकाशक : राजकमल प्रकाशन प्रा. लि.,दिल्ली-६ पृष्ठ : ४३५+३ 'हिंदी अंग्रेज़ी पारिभाषिक शब्द सूची), डिमाई अठपेजी., मूल्य : १६.०० रु०.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाषा-परिष्कार का आग्रह

जॉर्ज ऑर्वेल (जिन के निबंधों का संकलन, पत्रकारिता संबंधी लेख और पत्र हाल ही में प्रकाशित हुए हैं) का आग्रह है कि राजनैतिक लेखों में भी कलात्मक निखार अवश्य होना चाहिए. इस दृष्टि से वह स्वयं भी काफ़ी सफल हैं और सामान्य रूप से उन की शैली का राजनैतिक लेखकों पर व्यापक प्रभाव पड़ा है. बेशक राजनीतिकशास्त्र के प्राध्यापकों और प्रशासनिक अधिकारियों के लेखों में प्रयुक्त अंग्रेज़ी भाषा का स्तर आज से २० या ३० वर्ष पूर्व की भाषा से अपेक्षाकृत कम अपरिष्कृत, कम बनावटी और अधिक प्रभावोत्पादक है फिर भी कलात्मक दृष्टि से इस में अभी भी काफ़ी सुधार होना बाक़ी है. सन् १९४६ में प्रकाशित ऑर्वेल के निबंध 'राजनीति और अंग्रेज़ी भाषा' का पाठकों ने काफ़ी स्वागत किया. इस विषय पर बाद में ऑर्वेल के निबंध-संग्रह भी प्रकाशित हुए.

'राजनीति और अंग्रेज़ी भाषा' शीर्षक निबंध में ऑर्वेल ने अपने शैलीगत सिद्धांतों का प्रतिपादन किया है. यद्यपि राजनैतिक लेखों को लक्ष्य कर के ही उन्होंने अपने सिद्धांत प्रतिपादित किये हैं, किंतु उन के ये सिद्धांत सामान्य रूप से सभी अंग्रेज़ी लेखों पर लागू होते हैं. अपनी स्थापनाओं के समर्थन में त्रुटिपूर्ण लेखों के उद्धरण प्रस्तुत करते हुए उन्होंने लिखा है—'अंग्रेज़ी भाषा इस लिए भद्दी और असमर्थ हो जाती है कि हमारे विचार मूर्खतापूर्ण होते हैं, लेकिन हमारी भाषा का सामर्थ्य मूर्खतापूर्ण विचारों की अभिव्यक्ति को भी सहज बना देता है ! हेराल्ड लास्की जैसे राजनीतिशास्त्र के विख्यात प्राध्यापक के गद्य के भी कुछ त्रुटिपूर्ण उदाहरण ऑर्वेल ने अपने निबंध में दिये हैं. ऑर्वेल ने जिन विशेष त्रुटियों पर जम कर प्रहार किया है वे हैं—बिंबों का बासीपन और भाव और विचारों के अनुकूल सशक्त भाषा का अभाव. उन के विचार से "अस्पष्टता का मिश्रण और ख़ालिस सामर्थ्यहीनता ही आधुनिक अंग्रेज़ी गद्य और ख़ास कर किसी भी तरह के राजनैतिक लेखों की प्रमुख विशेषता है" : जैसे ही किसी विषय पर चर्चा छिड़ती है ठोस तथ्य पिघल कर अमूर्त हो जाते हैं और लगता है कि कोई भी भावानुकूल भाषा के बारे में नहीं सोचता. गद्य में वे शब्द कम होते जा रहे हैं जो निहित अर्थ को सबल अभिव्यक्ति दे सकें. सशक्त शब्दों के बदले अधिक से अधिक पुराने मुहावरों की भरमार होती जा रही है.

ऑर्वेल ने 'पुराने अलंकारों के ढेर' में से नमूने के तौर पर अनेक ऐसे अलंकार चुने हैं जो अपनी सांकेतिक और अर्थ-विस्तार की शक्ति खो कर निरीह हो गये हैं. उन के विचार से नये अलंकार गढ़ने की सूझ-बूझ के अभाव से ही लेखक इन खोखले अलंकारों का प्रयोग करते हैं. ऑर्वेल ने अनर्गल मुहावरेबाज़ी पर जम कर प्रहार किया है और आडंबरपूर्ण, निरर्थक और खोखले शब्दों की काफ़ी बड़ी सूची भी तैयार की है.

अपने तर्कों के समर्थन में ऑर्वेल ने 'एक्लेजिस्ट्स' से लिये गये एक समाजशास्त्रीय वक्तव्य का अनुवादित अंश पेश किया है:—

मैंने लौट कर दिन के उजाले में देखा कि दौड़ में हमेशा तेज गति से भागने वाले की ही जीत नहीं होती, न युद्ध में हमेशा शक्तिशाली की ही जीत होती है और न प्रबुद्ध व्यक्तियों को ही सुख-सुविधाएं मिलती हैं और न समझदार व्यक्ति ही समृद्धि के हक़दार होते हैं और न कुशल कार्यकर्त्ताओं को ही समर्थन मिलता है; समय और अवसर की महिमा से ही ये तमाम नियामत हासिल होते हैं.

ऑर्वेल ने उक्त उद्धरण को अपने शब्दों में यों तेश किया है:—

समसामयिक हालातों को निष्पक्ष रूप से

ऑर्वेल : बनावटी सहजता से घृणा

देखने पर यही परिणाम निकलता है कि प्रतियोगितात्मक गतिविधियों में सफलता या असफलता प्राप्त करने का किसी के अंतर्निहित सामर्थ्य से कोई संबंध नहीं है. इस दृष्टि से अनागत भविष्य में निहित शक्तियों को ही विशेष महत्त्व दिया जाना चाहिए.

ऑर्वेल ने लंबे-लंबे वाक्यों से 'चिपके' हुए शब्दों, जिन का सिलसिला किसी ने पहले से ही व्यवस्थित कर दिया है, को घुमा-फिरा कर इस्तेमाल करने की प्रवृत्ति की कटु आलोचना की है और इसे 'कोरा बकवास' क़रार दिया है. आसान तरीक़े को अपनाने की कमज़ोरी ही इस दोष को दुहराने का मूल कारण है. 'यदि आप बने-बनाये मुहावरों को इस्तेमाल करें तो आप न केवल उपयुक्त शब्दों की तलाश की तकलीफ़ से बच जाते हैं बल्कि आप को अपने वाक्य की लयात्मकता के बारे में भी चिंता करने की ज़रूरत नहीं पड़ती, क्यों कि प्रचलित मुहावरों में तो पहले से ही ऐसे शब्द विद्यमान रहते हैं जिन से वे थोड़ा-बहुत श्रुतिमधुर लगते ही हैं.'

शैली की उत्कृष्टता और निखार के लिए ऑर्वेल ने ये छः नियम सुझाये हैं:—

१—कभी भी उस अलंकार, उपमा या वाक्य-रचना का उपयोग न करें जिन्हें आप अक्सर छपा हुआ देखते हैं.

२—जहाँ छोटे शब्द से काम चल सकता है वहाँ बड़े शब्दों का प्रयोग क़त्तई न करें.

३—जब किसी शब्द को काटने से काम चल सकता है तो उसे बेहिचक काट दें.

४—जहाँ आप कर्तृवाच्य से अपने भावों को व्यक्त कर सकते हैं वहाँ कर्मवाच्य के प्रयोग की कोई ज़रूरत नहीं है.

५—यदि आप सीधे-सादे और रोज़मर्रा इस्तेमाल होने वाले शब्दों से अपने विचार व्यक्त कर सकते हैं तो फिर उन के बदले किसी विदेशी मुहावरे, वैज्ञानिक या अनर्गल शब्द के प्रयोग से यथासंभव बचें.

६—कुछ अशिष्ट या असंस्कृत कहने से पूर्व आप इन में से किसी भी नियम का उल्लंघन कर सकते हैं.

शैली विषयक ऑर्वेल के सुझावों को अपनाने में ग़लतफ़हमी हो सकती है, क्यों कि संक्षिप्तता के निर्वाह में उन के व्यवहार से लेखक को अपने भावों और विचारों के प्रति अक्सर निर्मम होना पड़ेगा, या वह व्यवधान महसूस करेगा. किंतु ऑर्वेल ने स्वयं कहा है कि वह बनावटी सहजता के पक्षपोषक नहीं हैं और वह ख़ुद भी लैटिन शब्दों के बदले हमेशा आंग्ल-सैक्सन शब्द ही इस्तेमाल करने के हक़ में नहीं हैं. मेकॉले भी संभवतः ऑर्वेल के सिद्धांतों से सहमत थे. ऑर्वेल की दिलचस्पी साहित्यिक भाषा में नहीं, राजनैतिक लेखों में प्रयुक्त भाषा में है. उन का मत है कि भाषा के अशुद्ध और सदोष होने का कारण यह है कि 'हमारे युग में राजनैतिक भाषण और लेख ज़्यादातर ऐसी वस्तुओं की सुरक्षा पर सर्फ़ होते हैं जिन की सुरक्षा हो ही नहीं सकती.' ऑर्वेल के वक्तव्य का यह अंश कि 'यदि अच्छा परिणाम निकल सके तो मैं अपने विरोधी की हत्या करने में भी विश्वास करता हूँ' को थोड़ा-बहुत संशोधित कर के चेकोस्लोवाकिया पर रूस के आक्रमण के पक्षपोषक १९६८ में भी इस्तेमाल कर सकते हैं. उन का वक्तव्य इस प्रकार है:—

इस बात का मुक्त समर्थक होते हुए भी कि सोवियत शासकों के शक्ति-प्रदर्शन की भर्त्सना की ओर मानवतावादियों का झुकाव है, मैं समझता हूँ, हमें यह स्वीकार कर लेना चाहिए कि राजनैतिक विरोध के अधिकार में संशोधन का संक्रमणकाल का अविभाज्य और सहवर्त्ती तत्त्व है और जो निर्मम कार्य रूसी जनता से कराया जा रहा है वह ठोस उपलब्धि को ध्यान में रखते हुए काफ़ी हद तक न्यायसंगत है.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'तानसेन ही नहीं 'कानसेन' भी

चौदह वर्ष से हर वर्ष ऑल इंडिया रेडियो संगीत-सम्मेलन का आयोजन करता है. इस अवसर पर जनता को उत्तमोत्तम संगीतज्ञों को सुनने और देखने का सुअवसर मिलता है. इस बार सम्मेलन आज़ाद भवन में हो रहा है. यह हॉल राजधानी की धड़कन और चहलपहल से कुछ परे पड़ जाता है, फिर भी कई बैठकों में जनता ने अपार संख्या में उमड़ कर अपने प्रिय कलाकारों का स्वागत किया.

इस वर्ष सम्मेलन की १३ अक्तूबर तक कुल मिला कर बीस बैठकें होंगी, जिन में २६ मुख्य कलाकार और ४५ साज़िंदे भाग ले रहे हैं. इन में हिंदुस्तानी और करनाटिक दोनों मुख्य गायन-शैलियों के सर्वोच्च एवं उदीयमान कलाकार शामिल हैं. हिंदुस्तानी शैली की आठ बैठक दिल्ली व एक-एक बंबई, कलकत्ता और पटना में हो रही हैं. करनाटिक संगीत की तीन बैठक मद्रास में व एक-एक बैठक दिल्ली, हैदराबाद, विजयवाड़ा, बंगलौर, तिरुचिरापली, त्रिवेंद्रम और शायद पहली बार, **पांडेचरी** में हो रही हैं. सम्मेलन के पूर्व एक अखिल भारतीय संगीत-प्रतियोगिता होती है, जिस में युवा कलाकार अपनी संगीत-प्रतिभा का प्रदर्शन करते हैं और सफल कलाकारों को पुरस्कार दिये जाते हैं.

नयी दिल्ली संगीत-सम्मेलन की पहली बैठक बिस्मिल्ला ख़ाँ और उन के साथियों के शहनाई-वादन से ६ अक्तूबर को आरंभ हुई. सम्मेलन का उद्घाटन सरकारी परंपराओं के अनुरूप मंत्रियों के भाषण से हुआ. यशवंतराव चव्हाण ने अपने उद्घाटन-भाषण में कुछ सराहनीय सुझाव दिये. उन का कहना था कि सारे देश में संगीत-श्रोताओं के क्लब स्थापित करने चाहिएँ. पंडित विष्णु दिगंबर जी पलुस्कर के शब्दों में तानसेन ही नहीं 'कानसेन' भी होना आवश्यक है. उन के अन्य सुझाव थे हिंदुस्तानी और करनाटिक संगीत-शैलियों को समीप लाने का प्रयत्न और लोक-संगीत को शास्त्रीय पद्धति में स्थान देना. इन सुझावों का उत्तर शायद सूचना एवं प्रसारणमंत्री के. के. शाह के इस वाक्य में मिल जाता है कि ऑल इंडिया रेडियो के कार्यक्रमों में हर प्रकार के संगीत का अपना विशिष्ट स्थान है.

बिस्मिल्ला ख़ाँ ने संगीत-सभा का श्री गणेश राग श्याम कल्याण से किया. ख़ाँ साहब हाल ही में अमेरिका तथा अन्य कई देशों का भ्रमण कर के लौटे हैं. उन्होंने अपनी शहनाई की शान भारत में ही नहीं सारे संसार में स्थापित की है. श्याम कल्याण में पहले उन्होंने एक प्रभावोत्पादक अलाप बजायी, उस के बाद झपताल विलंबित और तीन ताल में द्रुत गत. ख़ाँ साहिब ने अपनी पार्टी में कुछ रद्दोबदल कर दी है. ख़ुर्दक पर छोटेलाल की जगह उन का लड़का था. अन्य साथियों में भी चिरपरिचित लोग नहीं थे. अथक ताल-मेल बैठते कुछ देर लगी और राग का निखार द्रुत गत में भरपूर प्रस्फुटित हुआ. एक सप्तक से अन्य दो सप्तकों में स्वाभाविक उतार-चढ़ाव तथा अत्यन्त कोमल एवं कमनीय स्वर लहरी का सृजन बिमिल्ला ख़ाँ की विशेषताएँ हैं. फूंक के नियंत्रण और मौलिक कलात्मक सृष्टि में ख़ाँ साहब अपना सानी नहीं रखते. उन्होंने अपने वादन को श्रृंगारी हल्कीफुल्की धुन से आरंभ किया.

अन्य वादकों में श्रीमती राजम् का वायलन-वादन सर्वोत्तम रहा. श्रीमती राजम् ने हिंदुस्तानी संगीत की शिक्षा-दीक्षा स्व० ओंकारनाथ ठाकुर से प्राप्त की. उन को करनाटिक संगीत का भी खासा ज्ञान है. हिंदुस्तानी राग में दक्षिणी शैली का पुट सोने पर सुहागे का काम करता है. उन के अहीर भैरव में गंगा की गंभीरता और गहराई थी. साफ़-सुथरा-स्थिर, राग के रूप को एक-एक स्वर द्वारा सँजोया गया था. करनाटिक शैली के अनुरूप कभी-कभी एक ही स्वर को विभिन्न तानों द्वारा मुखरित करने में राग के प्रवाह में गति-रोध का भास होने लगता था.

गायन में भीमसेन जोशी और कानन ने भाग लिया. युवा कलाकारों में मीरा खिड़वादकर देवगिरी बिलावल को सार्थक रूप में प्रस्तुत करने में समर्थ नहीं हो सकीं. ग, पा, नी, सा की पुनरावृत्ति के कारण राग शंकरा की झलक दे रहा था. ऊँचे सप्तक में उन की आवाज़ प्रायः दुर्बल प्रतीत होती थी. मंद्र में स्वरों का सौंदर्य स्पष्ट न हो सका. उन की भैरवी की ठुमरी भावपूर्ण थी.

भीमसेन जोशी हमारे सर्वश्रेष्ठ संगीतज्ञों में से हैं. उन का पूरिया पूरी सजधज के साथ प्रस्तुत किया गया. स्वरों की स्पष्टता एवं भावपूर्ण संगीत भीमसेन की विशेषताएँ हैं. हाल ही में देखा गया है कि वह ऊँचे स्वरों में अपनी आवाज़ को बहुत बारीक बना देते हैं, जिस से स्वर की शक्ति दब जाती है. कानन के गायन में तीनों सप्तकों का भरपूर प्रयोग होता है और तानों की विविधता एवं अनूठेपन से गायन में चार चाँद लग जाते हैं.

सुगम संगीत में बेग़म अख़तर ने एक ठुमरी, एक ग़ालिब की ग़ज़ल और एक दादरा पेश किया. शायद इस सभा में सब से अधिक भीड़ थी. बेग़म अख़तर की आवाज़ की कोमलता और स्पष्टता अद्वितीय है. उन का दादरा बहुत सफल रहा. ग़ज़ल की बँदिश अनूठी और बोल प्रभावोत्पादक थे.

संगीत-सम्मेलन कितने ही वर्षों से हो रहे हैं. पिछले वर्षों में इन सभाओं में कई सुधार किये जा चुके हैं. अब उत्तरी भारत में एक बैठक करनाटिक संगीत की और दक्षिण में एक बैठक हिंदुस्तानी संगीत की आयोजित होने लगी है, जिस से दोनों शैलियों का सराहनीय प्रचार हो रहा है. कुछ वर्षों से उदीयमान युवा कलाकारों को भी संगीत सम्मेलन में सम्मिलित कर के उन को प्रोत्साहित किया जा रहा है. सुगम संगीत की सभाएँ तो बहुत ही लोकप्रिय सिद्ध हुई हैं. लेकिन भारतीय संगीत के प्रसार एवं प्रचार के लिए आल इंडिया रेडियो को इन सभाओं को आयोजित कर के ही संतुष्ट नहीं हो जाना चाहिए. एक वर्ष में इस तरह एक बार कुछ संगीत-सभाएँ करने से शास्त्रीय संगीत की स्थायी सेवा नहीं हो सकती और न नवीन कलाकारों को संतोषजनक प्रोत्साहन मिल सकता है. शिक्षा-मंत्रालय के सहयोग से संगीत-शिक्षा का देश में समुचित प्रबंध होना आवश्यक है. कलाकारों को कुछ वर्षों के लिए उचित पारिश्रमिक दे कर उन्हें सर्वोत्तम कलाकारों से शिक्षा दिलाने का आयोजन करना चाहिए, अन्यथा पं. ओंकारनाथ ठाकुर तथा बड़े ग़ुलाम अली ख़ाँ जैसे कलाकारों की उपज असंभव प्रतीत होती है.

बेग़म अख़्तर : प्रभावोत्पादक संगीत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राविधिक कलात्मकता : दादी अम्मा से अध्यापक अम्मा

वॉशिंग्टन स्थित स्मिथसोनियन संस्था के अंतरराष्ट्रीय कला-कार्यक्रम द्वारा आयोजित और भारत में अमेरिकी सूचना सेवा द्वारा इस हफ़्ते दिल्ली में प्रदर्शित 'कला के ज़रिये संप्रेषण' प्रदर्शनी के चित्रों से आज की अमेरिकी चित्रकला का कोई प्रतिनिधिक परिचय नहीं होता. प्रदर्शनी के आयोजकों का उद्देश्य भी शायद तीन अमेरिकी अंचलों में स्थित दो संग्रहालय-निदेशकों और एक विश्वविद्यालय के कला-विद्यालय के अध्यक्ष की रुचियों से, या ज़्यादा से ज़्यादा इन तीन अंचलों की औसत कला गतिविधि की जानकारी करा देना भर है. संबंधित अंचल ऑकलैंड (कैलिफ़ोर्निया) रोशेस्टर और इलिनोय हैं. चित्रों का चयन ऑकलैंड कला-संग्रहालय के क्युरेटर पॉल मिल्स, रोशेस्टर विश्वविद्यालय की मेमोरियल कलावीथी के निदेशक हैरिस प्रायर और इलिनोय के कला-विद्यालय के डीन एलेन वेबलर ने किया है. चयनकर्त्ताओं ने काग़ज़ पर प्रतिलिपि उतारे गये चित्रों तक ही अपने को सीमित कर अपनी हदें और भी बाँध ली हैं.

धूप-छाँह : इस प्रदर्शनी के दौरान अमेरिकी पुस्तकालय में चल रहे दूसरे कार्यक्रम अमेरिकी कला से हमारे परिचय के क्षेत्र को ज़्यादा व्यापक बनाते हैं. चित्रकार आंद्रेयू वाइथ इस प्रदर्शनी की चौदहवीं में नहीं आते, पर २४ मिनट की फ़िल्म 'वाइथ फेनामना' में परदे पर लगभग उन की सभी प्रमुख कृतियाँ देखने को मिल जाती हैं. संग्रहालयों के वातावरण, या वाइथ के अपने घर और इलाक़े के वातावरण में एक-एक शबीह, दृश्यांकन या आकृति हमारे सामने आती है. अपने हर महत्त्वपूर्ण पहलू को विस्तृत रूप में उभारती है—धूप-छाँह-रोशनी और व्यक्तियों की दुनिया से परिचय करा के चली जाती है. वाइथ के हाथ से पट पर चढ़े तैल रंगों में हर सताया हुआ निग्रो, ज़िंदगी के

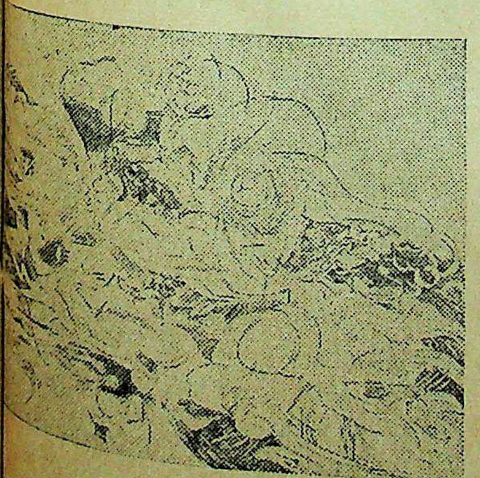

ली चेज़्नी : तरंग संगीत

कटु-तिक्त अनुभवों के प्रति अनासक्त हो चुकी बुढ़िया, मैदान में हरी-हरी दूब पर लेटी हुई लड़की, अपने-अपने तमग़े टाँके हुए योद्धा, क़स्बे की सड़क, शती पूर्व पूर्वजों के बनवाये मकान और देहाती दृश्य अद्‌भुत अद्वितीय व्यक्तित्व ग्रहण कर लेते हैं. कैमरा विस्तृत पट के हर महत्त्वपूर्ण अंग को हमारे सामने विस्तार से उजागर करता है. अधरों और पलकों की एक-एक सिलवट हमें दृष्टिगोचर होती है. इतने सारे सशक्त व्यक्तित्व, एक चित्र में एक ही और हरएक इतने अकेलेपन से घिरा हुआ और हर एक का ख़ास अपना अकेलापन. इन चित्रों के प्रभाव में को भी कुछ देर तक आस पास का हर व्यक्ति एक अनुपम व्यक्तित्व लगने लगता है और लगता है कि हम हर एक के उस के ख़ास अकेलेपन के क्षण

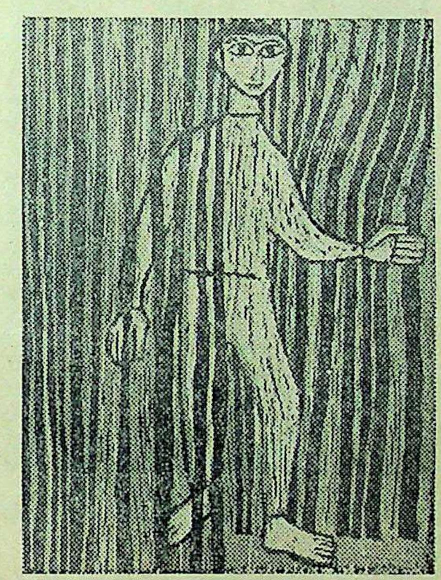

मार्गो हिफ़ : लंबी घास

को जान-पहचान सकते हैं. बच्चों की पुस्तकों को चित्रित करने वाले एक सिद्धहस्त चितेरे के पुत्र और ख्याति की सीढ़ियों पर चढ़ रहे एक सफल चित्रकार के पिता आंद्रेयू वाइथ की कृतियों में आकृति और दृश्य की सूक्ष्मतम अभिव्यक्तियों को भी अत्यंत सावधानी से अंकित करने की लाजवाब कोशिश की गयी है और हर चित्र अत्यंत कुशल कारीगरी और चित्रकार की अन्यतम मानवीय सहानुभूति का नमूना है.

दृश्य-अदृश्य : सिनेमा के परदे पर दिखे वाइथ के इन चित्रों और कला के ज़रिये संप्रेषण' प्रदर्शनी के चित्रों की दुनिया इतने भिन्न स्तरों पर रची गयी है कि प्रदर्शनी के अधिकांश चित्र क्या संप्रेषित करते हैं, कह पाना कठिन है. ज़्यादातर नमूने किसी चित्र

जून वेन : अश्रुभरी विदाई

प्रविधि की विशेषताओं को ही प्रकट करते हैं. वुडकट, मोनोप्रिंट, लीथोग्राफ़, मिल्कस्क्रीन, इग्रेविंग, काग़ज़ पर जलरंग, तैलरंग या पैंसिल, रंगों में चमक या ख़ासियत लाने के लिए कहीं-कहीं मोम, प्लास्टिक, या अल्युमिनियम का इस्तेमाल और हर माध्यम के इस्तेमाल में लायी गयी हर विधि और काम में लाये जा रहे हर पदार्थ का भरपूर कलात्मक इस्तेमाल करने की कोशिश—यही इन चित्र-प्रतिलिपियों की विशेषताएं हैं और यही इन की सीमाएं हैं. प्रविधि की ताक़त और क्षमताएं उद्घाटित करने की कोशिश में मानवीय सहानुभूति कहाँ लुप्त हो जाती हैं, वाइथ के सशक्त आकृति चित्रों को देखने के बाद यह बात बार-बार महसूस होती है. यह बात नहीं कि इन चित्रकारों द्वारा अपनी अनुभूति के ताप को अदृश्य रखने की कोशिश के कारण ऐसा लगता है बल्कि उन का ज़ोर ही मुख्यतः प्रविधि पर है.

बिंब-प्रतिबिंब : पॉल मिल्स ने अपना चयन उत्तरी कैलिफ़ोर्निया की महिला कलाकारों के काम में से किया है. उन के अनुसार अमेरिका की प्रमुख क्षेत्रीय प्रतियोगितात्मक प्रदर्शनियों में चुन कर जो चित्र प्रदर्शित होते हैं उन में पंचमांश महिला कलाकारों की कृतियाँ होती हैं. अत्यंत कठोर चुनाव में भी राष्ट्रीय स्तर की प्रदर्शनी में दस कलाकारों में से एक महिला होती है. इस प्रदर्शनी में महिलाओं के चित्रों में कोई ख़ास नारी विशेषता नहीं है, विविधता है और 'उन में से कुछ ने ही श्रेष्ठ विधिक कुशलता और महारत हासिल करने की कोशिश की है' (वास्तव में, जैसा कि इन चित्रों को देखने से लगता है और ख़ास तौर पर यदि प्रमुख समकालीन भारतीय चित्रकारों के पटों पर ज़ाहिर प्राविधिक कोशिशों से तुलना की जाये तो लगेगा कि इन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महिला चित्रकारों का ज़ोर प्रधानतया प्रविधि पर ही है.) मिल्स का यह भी कहना है कि 'इन में से अधिकांश कलाकारों की अपने द्वारा इस्तेमाल में लायी जा रही सामग्री में से ही अपने बिंब स्वयमेव और अनौपचारिक रूप से प्रस्फुटित होते देने में तमाम समकालीनों की तरह की दिलचस्पी है.' यह दिलचस्पी स्वयमेव चित्रण के प्राविधिक और औपचारिक रूपगत मूल्यों की ओर ले जाएगी.

मूर्त-अमूर्त : कई वर्ष पहले अमेरिकी सूचना विभाग ने वृद्धावस्था में चित्रकला शुरू करने वाली अशिक्षित महिला दामी अम्मा मोसेज़ 'ग्रैंडमा मोसेज) के चित्र-आकृतियों की नुमायश की थी. उस सीधी-सादी कतिपय भावों में बनैली संवेदना की तुलना में इन महिलाओं की प्रविधि संवेदना बहुत हद तक स्कूली लगती है—डोर बायवेन की 'क़बायली औरतें' केवल टोटमोंक गोदनों का संगठन हो कर रह गयी है—मार्गो हॉफ़ की 'लंबी घास', एलेन लेनियान का 'प्रथम पुष्प पौध' या बेद वान होएजेन का आकृत रेखांकन 'सिथिया' अपने रेखाओं और रंगों की कोमलता और मधुरता के बावजूद इनसानी दुखानुभूति या आनन्दानुभूति को किसी गहराई तक व्यंजित नहीं करते. यही बात बहुतेरे पुरुष चित्रकारों के बारे में भी कही जा सकती है. दादी अम्मा की तुलना में ये अध्यापक अम्माएँ अपनी शिक्षा को कंधे पर लाद कर चलती हुई लगती हैं.

डीन वेलर ने चयन करते समय की अध्यापिकों को ही तरजीह दी और बाद में भी पाया कि कुछ दूसरे चित्र भी जो उन्होंने चुने उन के चित्रकार भी कला-संकायों में अध्यापक थे, या रह चुके थे. नोरियो अजुमा का सिल्क स्क्रीन 'क़स्बा' उन आठ नमूनों में से है जिन्हें तीनों चयनकर्त्ताओं के चयनों के अलावा, नुमाइश को संभवतः अमेरिकी ग्राफ़िक कला का प्रतिनिधिक स्वरूप देने की कोशिश में शामिल किया गया है—चित्र अमूर्त है—बिंब ज्यामितिक है और आयतों-वर्गों का एक-दूसरे को दबाता-उभारता संयोजन देश-विभाओं की भावना पैदा करता है. एक दूसरा अमूर्त चित्र कैरोल समर्स का स्त्रोम्बोली रंगों में, जो प्राथमिक रंगों को पट पर नपी-तुली हिंसा के साथ फैलाने में पाल वुंडेट के कुछ चित्रों की बराबरी करता—शायद वुड़कट होने के कारण माध्यम की विवशतावश बिंबों के यौन संकेतों से मात्र शृंगारिकता का अनुभव करता है. जैक बोल्सकी के 'जीव जातियों का उद्भव' में गोंद, अल्युमिनियम पत्थरों आदि का इस्तेमाल कर के बिंबों को चमकदार बनाने की कोशिश की गयी है. टामस स्ट्रोबेल का स्पेनी दृश्यालेख भी इसी तरह का अमूर्त्त चित्र है, जिस में कागज़ पर तैल रंगों में भूमध्य सागरीय धरती पर सूर्य और उस के ताप-प्रकाश की कोमल तहें जमाने की कोशिश है. डीन पीकर के चित्र

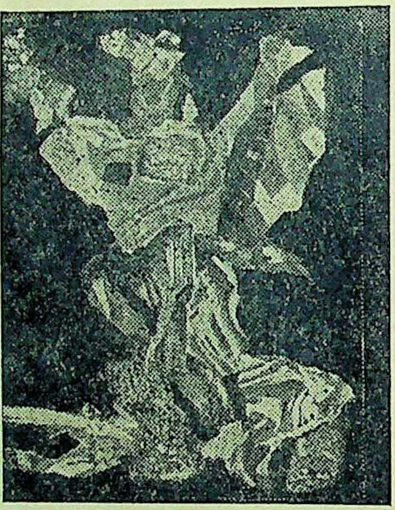

रावल : विजता

'डार्टस की किस्मत' (सिल्क स्क्रीन) में प्रायः दूसरे मोटे कैनवसों पर लगने वाली प्लास्टिक सतहों पर उभरे सिंदूरी रंगों में किसी जीव का अस्थि-जाल खड़ा किया गया है. बिली जैक्सन के उत्खनन 'महान् प्रसारण' में भिंडियों और दूसरी वनस्पतियाँ सूख कर तड़-तड़ फूटती और बीज छितराती हुई लगती हैं—पर भारतीय चित्रकार अंबादास के वनस्पति-जगत् की जीवन रूपांतरण की कोशिकी प्रक्रिया के स्तर पर चित्रण में अपेक्षाकृत अधिक प्राण और गरमी लगती है.

प्रदर्शनी के लगभग सारे चित्र आँखों को भाते हैं, प्यारे लगते हैं और कमरे में इन के साथ रहा जा सकता है—पर जोज़ेफ़ हॉड्रिक के कोलाज 'क्रिसमस' के उभरते-विलीन होते अक्षरों, उभरती-विलीन होती संगीत स्वर-लिपियों, प्रतीक कबूतर और चर्च में बैठी भीड़—आमोद-प्रमोद के साथ-साथ ईसाई दुखवादिता के एक कुतूहलमय जगत में हमारा विस्तार करती है—यहाँ प्रविधि है—शायद बहुत ज्यादा, पर एहसास ज़िंदगी का है.

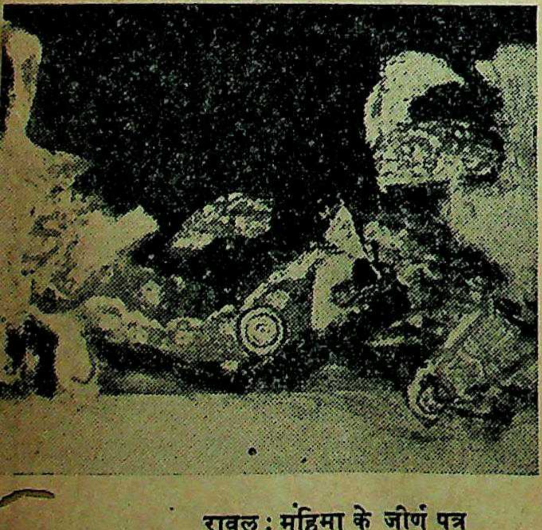

रावल : मंहिमा के जीर्ण पत्र

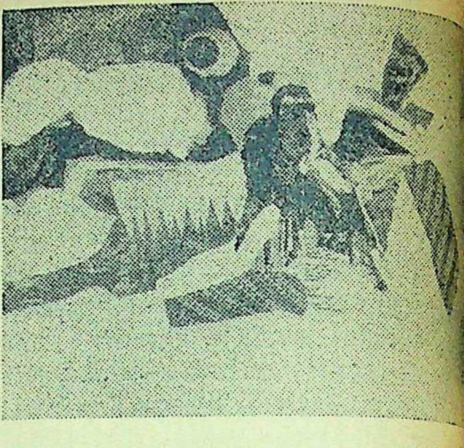

रावल : आदमी और आदमी

एक प्रतिश्रुति

श्रीधराणी वाली इमारत (**त्रिवेणी कला संगम** के भवन) की ही एक और वीथि **त्रिवेणी** में तरुण कलाकार **प्रकाश रावल** की गोंदकारियाँ (कोलाष) हैं. छापे की स्याही (बल्कि स्याहियों) के पहनावे पहने हुए काग़ज़ों के टुकड़े, लीरे, चिंदिया, पट्टियाँ, पुरजे आदि काट या फाड़ कर उन्हें विशेष आकृतियों, प्रभावों या अभिप्रमाणों के रूप में यानी चित्रों के रूप में सजा कर चिपकाना ही **प्रकाश रावल** की गोंदकारी है. **रावल** ने इस तरह अनमिल बेमेलों में मेल, संगम और विलयन साधे हैं. इस मेल से जो चित्र बने हैं वे कहीं प्रभावी हैं तो कहीं नहीं भी हैं, मगर हर कहीं रावल का संघर्ष उन में बड़ी स्पष्टता के साथ लक्षित किया जा सकता है. प्रदर्शनी का उद्घाटन करते समय सच्चिदानंद वात्स्यायन ने ठीक ही कहा कि कहन का आज के मुहावरे (फ़ैशन) में होना इन की खास बात नहीं, खास बात यह है कि इस कहन, इस मुहावरे, इस अंदाज में कुछ कहा भी गया है. सजावट या चितेरापन यहाँ नहीं, मगर सही चिंदी सही जगह पर चिपकाने का आयास यहाँ ज़रूर है. एक ही रुझान कुछ जाखिमदार लगा : आत्मविश्वास का आत्मविश्वास ऐसे मामलों में उतना काम नहीं आता, जितना कि संघर्ष आता है. कला चाहे गोंद की हो चाहे छेनी की, तार छेड़ने की हो या सुर या शब्द जोड़ने की, उस में चोटी की पकड़ का वह महत्त्व नहीं जो टोना और निरंतर टटोल का है. प्रभाव की साधना प्रकाश रावल में असंदिग्ध है और साधना की दिशा बिलकुल सही है, मगर साधना में अडिग होने का मतलब सिद्धि हरगिज़ नहीं होता. 'विराट रूप' में कलाकार की अदा सिद्ध पुरुष की सी होने के कारण चित्र की सिद्धार्थता बहुत कुछ क्षुण्ण हो गयी है. एक मत यह भी हो सकता है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

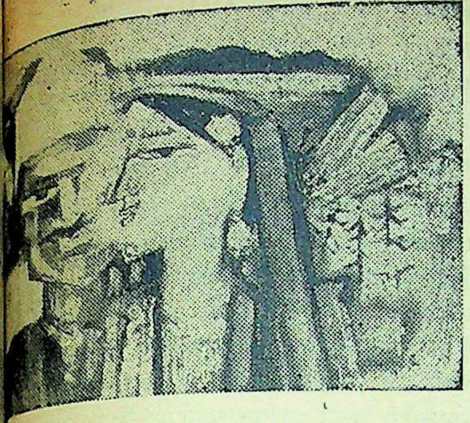

पै : गड्डी दंपति

कि व्यंग्य (जैसे यहाँ 'विराट रूप' का विरूप दर्शन) तो गोंदकारी में एक तरह से स्वभाव-निहित ही होता है, मगर पूरे चित्र की चिनाई में वह भाव ख़ुद कहाँ उभरता है? 'विराट रूप' के साथ 'श्री', 'कायर राजा', 'हुसैन घोड़ा और हाथ', 'मानव और भ्रम', 'महत्ता के पुराश्म' आदि गोंदकारियाँ मुहावरे की बिलकुल मुहताज नहीं और जो जैसी भाषा चाहती हैं वैसी ही बेझिझक बोलकर भी अपनी बात कह लेती हैं. मुहावरे की यह आज़ादी गोंदकारी की कला के लिए अनमोल देन साबित हो सकती है, शर्त सिर्फ़ यह है कि आज़ादी कहन की साधना को अपने बहाव में वहा न ले जाये. प्रकाश रावल ने जैसे अपनी भावी साधकता के प्रतिबंध-पत्र पर हस्ताक्षर किये हैं और यह हस्ताक्षर साहसिकता का नहीं, संकल्प का है.

एक निराशा : एक आशा

दो साल पहले (१८ नवंबर, १९६६ के अंक में) **दिनमान** ने लिखा था कि **लक्ष्मण पै** की हर प्रदर्शनी उन की कला के विकास के किसी नये आयाम की सूचना देती है. काश, यह बात बाद की प्रदर्शनियों पर भी लागू होती. **श्रीधराणी** (नयी दिल्ली) में पै के जो जलरंग और तैलरंग पिछले सप्ताह से दिखाये जा रहे हैं, वे किसी भी नये विकास की दूरागत गंध तक से सर्वथा मुक्त हैं. दिल के बहलाने को यों ही कूची-फेर करने से कलाकार कोई मना नहीं कर सकता, लेकिन पै जैसों को ऐसी कौन सी मजबूरी है जिस के मारे वे कला-अघकता-अनकता सब समेट-बटोर कर हटिया ले दौड़ें ?

अधिकतर चित्र शिवालक, गढ़वाल आदि की दृश्य छापों के खर्रे हों. मानो देखने वाले को लगता है कि ये चित्र आगे के कामों के लिए रंगों-रेखाओं की स्मारिकाएँ भर ही होंगे. **बुद्धचरित, गांधीचरित, रामचरित, गीत-गोविंद, रागमाला, प्रकृति-पुरुष** आदि में जो प्रतीक साधना पै ने की है, वह अब उन की कूची का मुहावरा बन गयी है. यही बात रंगों की शोखी पर भी लागू होती है. ये दोनों बातें पै के पै-पने को बनाये तो रखती हैं, मगर उसे पैना नहीं बनातीं, उलटे पुनरुक्ति से झुंथड़ा कर देती हैं.

दृश्यों की दर्शनीयता पर ज़रूरत से ज़्यादा ज़ोर है. यों भी, सलोनेपन के पीछे जीवन और मन की गूढ़ताओं को कुर्बान कर देना पै का सदा का साहित्य.रहा है. 'गति के नाम पर रंग के धब्बों का धुंध'—पै की यह विशेषता पारसाल (२२ अक्तूबर, १९६७) के **दिनमान** में लक्षित की गयी थी. चालू प्रदर्शनी उस निष्कर्ष को संपुष्ट ही करती है. साहित्य के आग्रही इस चित्रकार ने इन चित्रों में अगर कुछ कहना भी चाहा है तो वह अक्सर सतही भर हो कर रह गया है. हाँ, सफ़ाई की कमी, जो पै में पहले कमी नहीं देखी गयी, इस बार कई चित्रों में देखी जा सकती है.

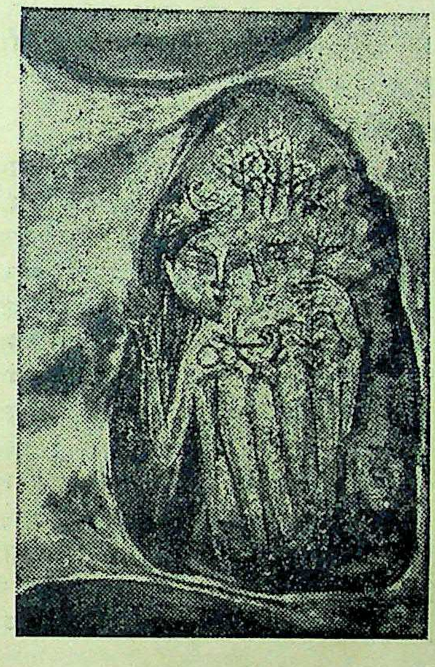

पै : धरती

रेखन में जैसे सोद्देश्यता को जलांजलि दे दी गयी हो. प्रतीकों के, और अब तक अपनी ही लगन के बल पर रूढ़ कर रखे गये मिथकों के, बल पर जो प्रतीकी सैरें यहाँ रखे गये हैं, उनमें अमूर्त, प्रभाववादी और सजावटी, तीनों तरह की चित्र-शैलियों का लाभ उठाने की कोशिश झलकती है, मगर बस, सिर्फ़ कोशिश ही, बल्कि कोशिश करने की नीयत भर ही. जैसे 'कांगड़े के पहाड़', 'नीलाकाश', 'बर्फ़', 'गोवा,' 'पहाड़ियाँ', 'नीला देशदर्श', 'गोंव गाँव', 'गोवा की हरियावल' आदि में. 'गद्दी युगल', 'मंदिर', 'गद्दी नारी', 'कुणबी नारी' आदि कई चित्रों में भीतर-वाले गूदे में खमीर उठने की-सी सुगबुगाहट और अंतर के मथे जाने की कुछ घर्घर सी ज़रूर है, मगर आसपास टंगे चित्रों के परिवेश में लगता है कि यह सब देखने वाले के अपने ही मन का आरोप न हो कहीं.

आकृतियाँ पै के पुराने चित्रों की आकृतियों की ही छायाएँ लगती हैं. 'प्रकृति-पुरुष' की छाया तो कई चित्रों में है. 'कुणबी नारी, में पुरानी नोकदारियाँ हैं और है एक सिधाई जो पै के शुरू के काम की याद दिलाती है. 'नारियल के पेड़', 'उत्सव', 'पहाड़ी', 'रूप' 'मुखौटे', आदि तैलरंगों में और सब से अधिक 'धरती' में यह सिधाई कुछ आकर्षक भी हो आयी है. सैरे की हवा को बाँध लाने और उस के मिजाज़ को उतार लाने में पै को अगर सफलता मिली है तो बस एक चित्र में 'बादलों के दल' में इस चित्र को देख कर मन की यह दुविधा जाती रहती है कि हमारे दर्शनेंद्रिय को गुदगुदा कर हमारे मन से खेलना चाहने वाला यह खिलाड़ी हमें बहकाना नहीं सचमुच खेलना चाहता है. ईमानदारी की इसी बानगी के बल पर पै को यह दावत दी जा सकती है कि आज न सही कल सही, आमो गुंइये, हम तो तैयार बैठे हैं.

पै : गोआ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परचून

विज्ञापन के लिए गुब्बारा

प्रथम जैपेलिन विमान बनने के लगभग ७० वर्ष बाद इन विशाल विमानों में से अंतिम विमान अब यूरोप छोड़ कर जा रहा है. कुछ समय पहले तक १५० फ़ुट का यह गुब्बारा-नुमा विमान ६० मील प्रति घंटे की रफ़्तार से जर्मन नगरों पर मँडराता था. इस का काम था विभिन्न वस्तुओं के विज्ञापन प्रचारित करना. अब इस के ४ टन के पुर्जों को संदूकों में बंद कर के समुद्री जहाज़ द्वारा जापान भजा जा रहा है, जहाँ उसे विज्ञापन-प्रचार के कार्य में ही लगाया जायेगा.

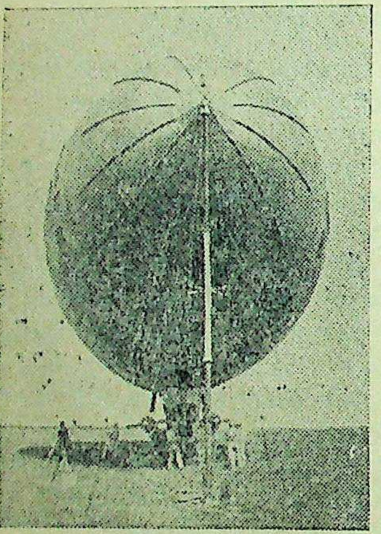

विशाल गुब्बारा : विज्ञापन का साधन

जाल में सौर-कण

अमेरिका के अंतरिक्ष-यात्री अगले वर्ष चाँद की यात्रा करने की योजना बना रहे हैं, जिस के दौरान वे अपने मुख्य अनुसंधानों और प्रयोगों के अलावा कुछ अन्य गौण प्रयोग भी करेंगे. इस तरह के एक छोटे-से नये प्रयोग के अंतर्गत वे सूर्य की संरचना के संबंध में खोज करेंगे. इस प्रयोग की योजना स्विट्ज़रलैंड में बनायी गयी थी.

चंद्रमा पर पहुँच कर अंतरिक्ष-यात्री सौर-आँधी के कणों को पकड़ने का प्रयास करेगा, जिस के लिए वह अल्यूमिनियम की एक बारीक चादर बिछा देगा. अल्यूमिनियम की पट्टियों से बना यह जाल विश्लेषण के लिए पृथ्वी पर वापस लाया जायेगा और उस के अध्ययन के बाद यह निर्धारित किया जायेगा कि कणों की रासायनिक संरचना कैसी है. इसी विश्लेषण से सूर्य की रासायनिक संरचना के बारे में भी पता चल जायेगा.

साधारण और हल्के क़िस्म का यह जाल पहला विदेशी वैज्ञानिक उपकरण होगा जिसे अपोलो-यात्रा के वाहन में स्थान मिलेगा. इस के आविष्कर्ता डॉ॰ जोहांस गीस बर्न विश्वविद्यालय के प्राध्यापक हैं और लघु उल्काओं से संबद्ध विज्ञान के विद्वान हैं. वह सौर-रश्मि-जाल के भौतिक और रासायनिक विश्लेषण में उसी विधि का प्रयोग करेंगे जिस का प्रयोग उन्होंने लघु उल्काओं के उद्‌भव और संरचना के अनुसंधान में बड़ी सफलता से किया है.

स्विट्ज़रलैंड में तैयार किया हुआ यह जाल ४५ सेंटीमीटर लंबा और इतना ही चौड़ा होगा. उसे फैला कर एक स्तम्भ पर चढ़ा दिया जायेगा, जहाँ उस पर सूर्य की किरणें पड़ती रहेंगी. चंद्रमा की सतह पर सौर-कण झरते रहेंगे और अल्यूमिनियम की पतली चादर में चिपकते जायेंगे. चादर को सामने और पीछे से इस तरह शोधित कर लिया जायेगा कि दिन की भयंकर गर्मी को वह सहन कर सकेगा.

वर्ण और जुर्म

हाल ही का एक सर्वेक्षण इस आम धारणा को ग़लत साबित करता है कि ब्रिटेन में हिंसा की वृद्धि के लिए काले आप्रवासी ज़िम्मेदार हैं. ब्रिटेन के नागरिकों में ५ करोड़ गोरे और १० लाख काले व्यक्ति हैं—जिन में अधिकांश वेस्ट इंडीज़, अफ़्रीका, भारत और पाकितान के मूल निवासी हैं. ब्रिटेन के गृहमंत्रालय में आप्रवासियों के मामलों के मंत्री डेविड एन्नाल्स ने इस बात का खंडन किया है कि काले वर्ण के साथ जुर्म का कोई घनिष्ठ संबंध है. इस बात के न तो कोई प्रमाण ही मिलते हैं और न ही इस में कोई तथ्य है. बर्मिंगम में किये गये एक सर्वेक्षण से पता चलता है कि कालों की बस्ती के पास भी जो अपराधी पकड़े जाते हैं उन में कालों की संख्या केवल पाँच प्रतिशत ही होती है.

छात्रों को छूट

स्पेन की सरकार ने घोषणा की है कि अब से विश्वविद्यालय के अशांत छात्रों को बिना किसी रोक-टोक के छात्र संगठन बनाने का अधिकार दिया जायेगा. पिछले दो वर्षों से स्पेन के छात्र इसी अधिकार के लिए लड़ रहे थे और इसी सिलसिले में कई हिंसात्मक प्रदर्शन और छात्र-पुलिस के बीच कई घमासान युद्ध हुए. स्पेन सरकार का छात्रों को संगठित होने की छूट देने का निर्णय विश्वविद्यालयों में सुधार का एक अंश है, जिस की पहल नये शिक्षामंत्री लुई विल्लार पलासी ने की है. इस सुधार का असर अक्तूबर में शुरू होने वाले नये सत्र के दौरान पता चलेगा. पर इस बात की संभावना कम है कि छात्रों को यह अधिकार दे देने से स्पेन विश्वविद्यालयों का अशांत वातावरण अपने-आप ही शांत हो जायेगा. अध्यापक इस बात को स्वीकार करते हैं कि छात्रों के दंगों के पीछे छुपा हुआ मक़सद फ़्रैंको की सरकार के प्रति विरोध की भावना है. विश्वविद्यालयों की समस्याओं का तो केवल बहाना बनाया जाता है.

छोटे हवाई अड्डों के लिए जेट

ल' गार्डिया फ़ील्ड (अमेरिका) में एक ऐसे जेट विमान को अंतिम रूप दिया जा रहा है जिसे उड़ान भरने के लिए केवल ७०० फ़ुट ज़मीन चाहिए. वैसे अब तक जितने जेट तैयार हुए हैं उन को उड़ने से पहले गति पकड़ने के लिए कम से कम आधा मील दौड़ना पड़ता है. नया विमान फ़्रांस में तैयार किया गया था, जिसे अमेरिका में ला कर और सुधारा गया. हाल ही में उड्डयन विभाग के अधिकारियों की उपस्थिति में इसे पंद्रह मिनट के लिए उड़ाया गया. इस में लगे चार विशाल प्रोपेलर, जो पीछे की ओर से हवा को चीरते हैं, इस नये जेट को सीमित स्थान में चढ़ने और उतरने की क्षमता देते हैं. ऐसे विमानों का मुख्य फ़ायदा यही होगा कि वे छोटे हवाई अड्डों का प्रयोग कर सकेंगे और बड़े हवाई अड्डों पर से भीड़ कम होगी.

नये विमान की साधारण रफ़्तार २५० मील प्रति घंटा होगी और इस में ६४ यात्री सफ़र कर सकेंगे.

जलचरनुमा पनडुब्बी

अमेरिकी नेवी को अब एक जलचर मिल गया है, जो देखने में किसी विचित्र समुद्री जीव-सा लगता है, मगर वह जीव नहीं है. वह तो केवल एक पनडुब्बी है जो सागर की गहराइयों तक जा सकती है. 'आर्टिक' नाम की इस पनडुब्बी की सब से बड़ी विशेषता यह है कि यंत्र-गृह से संबंधित 'हाथ और बाजू' इस की उपयोगिता में बहुत वृद्धि करेंगे. यदि इस में बैठे तीन चालकों को किसी प्रकार का खतरा महसूस हो तो वह आसानी से पनडुब्बी का अगला भाग अलग कर के पानी के ऊपर आ सकेंगे. समुद्री जीव की आकृति शायद शत्रु को धोखा देने के लिए दी गयी है.

जलचररूपी पनडुब्बी : शत्रु को धोखा

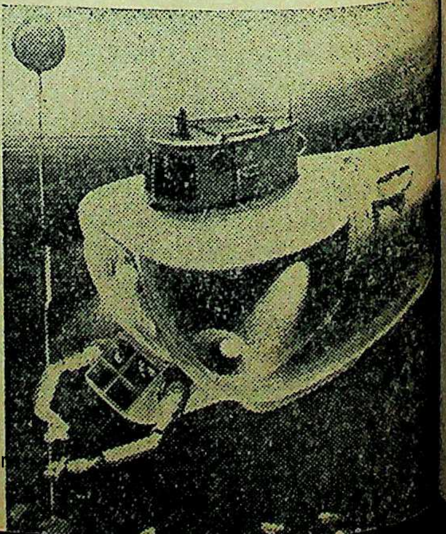

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धर्मयुग दीपावली विशेषांक

२० अक्तूबर, १९६८

० सर्वग्राही अंधेरे से अकेले जूझता एक साहसी दीपक

सोवियत सीमा के पास के छोटे उजाड़ स्टेशन पर अकेला अंधेरे में उदास खड़ा वह आदमी ! कौन था वह ? स्टेशन मास्टर ने हैरत से पहचाना--वे थे दुब्चेक ! . . .

"दुब्चेक, एक नाम--एक जीवित लौ" . . . जिसने बड़े-बड़े मानववादी नारों के नीचे छिपे नृशंस फासिज्म के अंधेरे के खिलाफ समस्त चेक जनता को जीवंत दीपक बना दिया--अकेले, निहत्थे, मगर बेखौफ, समूचे अंधकार के खिलाफ जूझते हुए !

२१ अगस्त को सोवियत टैंकों ने चेकोस्लोवाकिया पर आक्रमण किया ! उस चोट से मर्माहत हिंदी के सूक्ष्मदर्शी कथाकार **निर्मल वर्मा** ने २४ अगस्त को यह रिपोर्ताज धर्मयुग को भेजा . . . आक्रमण के तुरंत पूर्व के प्राग का मर्मस्पर्शी अंतरंग संस्मरण.

साथ में दुब्चेक और स्वोबा तथा रूसी टैंकों और साहसी चेक जनता के अभूतपूर्व साक्षात्कार के दुर्लभ रंगीन चित्र.

० राष्ट्रलक्ष्मी : नये संदर्भ में

दीपावली पर राष्ट्रलक्ष्मी के पूजन के नये जन संदर्भ में प्रस्तुत करने के लिए हमने देश के सूत्रधारों से पूछा कि उन की समाजवाद की परिकल्पना क्या है ? देश के सामान्यजन की आर्थिक समृद्धि और आंतरिक परिपूर्णता तक ले जाने के लिए वे कौन-सा मार्ग उचित समझते हैं ? इस बार इस परिचर्चा में हम ने देश के सत्ताप्राप्त दल के शीर्षस्थ नेताओं के विचार आमंत्रित किये हैं. दीपावली अंक के लिए हिंदी में अपने लेख भेजे हैं **कांग्रेस अध्यक्ष श्री निजलिंगप्पा** तथा **गृहमंत्री श्री यशवंतराव चव्हाण** ने--

अगले अंकों में इसी क्रम में लिख रहे हैं **जहाजरानी तथा परिवहनमंत्री श्री वी. के. आर. वी. राव तथा शिक्षा (राज्य) मंत्री श्री भागवत झा आजाद**

०

दीपावली उस विजयोल्लास का स्मृतिपर्व है, जो विजयी राम के अयोध्या लौटने पर मनाया गया था. राम और रावण का संघर्ष किन मूल्यों के द्वंद्व का प्रतीक था ? क्या रावण 'एंटी' राम था या यह संघर्ष नारायण और प्रतिनारायण का था ?

नये परिप्रेक्ष्य में इस संघर्ष का पुनर्मूल्यांकन और उसकी आज के संदर्भ में अर्थवत्ता की व्याख्या आपके सुपरिचित निबंधकार कुबेरनाथ राय द्वारा

०

हिंदी की साहसी और बेलाग कलम : श्री **भगवतीचरण वर्मा** 'बाबावाज़ी' पर उनका बहुचर्चित लेख आप पढ़ चुके हैं. उसी क्रम में स्वातंत्र्योत्तर भारत का दूसरा राष्ट्रीय शोक 'नेताबाज़ी'--दीपावली अंक में ! जनता के हित में जो बेचारे हमेशा--'बिनु काज दाहिने बायें !'

० कमलेश्वर की नयी लंबी सशक्त कहानी, कीर्ति चौधरी की एक मार्मिक छोटी कहानी और एक अतिथि रचना विजय तेंदुलकर का पुरस्कृत मराठी एकांकी

० कुंवरनारायण, नरेश मेहता, हरिनारायण व्यास, शांति मेहरोत्रा, श्रीकांत वर्मा और बच्चन की कविताएं

० स्वातंत्र्योत्तर भारत के छठे और सातवें दशक में व्याप्त विघटन के सामाजिक, सांस्कृतिक और साहित्यिक पक्ष पर **इलाचंद्र जोशी** से **केशवचंद्र वर्मा** की अत्यंत विचारोत्तेजक रोचक अंतरंग बातचीत.

० सरस्वती नदी के किनारे : खुंखार रेत में पैदल--थार मरुस्थल की यात्रा वृत्तांत की पहली किस्त **द्विजेन गुह बक्षी** द्वारा.

० बनारस का एक दिलचस्प रिपोर्ताज : जिनगी का मजा : वहरी अलंग **शंभुनाथ मिश्र**

० **शरद जोशी** की कलम से एक जोरदार खाका

० **विष्णु प्रभाकर** की (आपको यकीन न होगा) व्यंग्य कविताएं और **काका हाथरसी** कृत नया शब्दकोश

० **शिवानी** के बहुचर्चित धारावाहिक उपन्यास **कृष्णकली** की अत्यंत रोचक किस्त

० नयी कला : भारतीय रहस्यवाद और पश्चिमी आधुनिकतम ज्योतिबोध और रंगसज्जा का विचित्र चमत्कार--'साइकेडेलिक आर्ट' के बंबई में हुए एक रोमांचक प्रयोग की रंगीन छवियां और उन पर धर्मयुग के कलानिर्देशक **रमेश संझगिरी** की जीवंत टिप्पणी, जो स्वयं उस प्रयोग के सक्रिय सहयोगी रहे हैं !

० दीपावली और 'बंदी छोड़' ! सिखों के एक महान् गुरु और सम्राट जहांगीर की एक ऐतिहासिक गाथा **हरजिंदरसिंह सेठी** द्वारा प्रस्तुत

० भारतीय सर्पों पर एक रोमांचक लेख विज्ञान स्तंभ के अंतर्गत प्रख्यात वैज्ञानिक **डा. पुरुषोत्तम देवरस** द्वारा.

० अन्य नियमित स्तंभों के अंतर्गत लिख रहे हैं :

बासु भट्टाचार्य (निदेशक : तीसरी कसम), ज्ञानदेव अग्निहोत्री (नाटककार), प्रयाग शुक्ल, रामनारायण उपाध्याय, ए. सी. सरकार (अंतरराष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त जादूगर), रणवीर सिंह राठौर, प्रभाकर माचवे और वृंदावनलाल वर्मा.

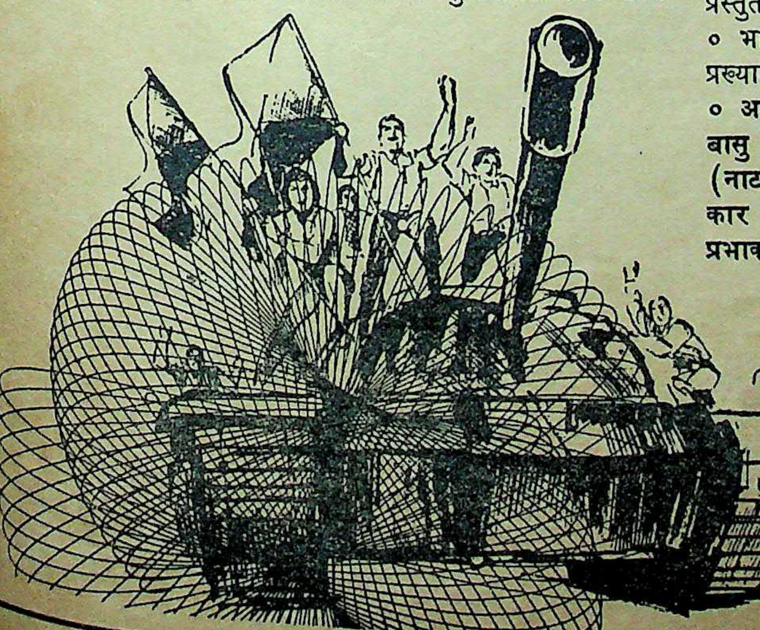

० बीच के दो पृष्ठों पर सत्यकाम-राहुल कृत एक कलात्मक रंगीन चित्र : गणेश लक्ष्मी

पृष्ठ ८० किंतु मूल्य वही

६० पैसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुगंधियुक्त पौष्टिक आहार

मोहन्ज़ न्यू लाइफ कार्न फ्लेक्स

मोहन्ज़ न्यू लाइफ मैंगो सीरयल फ्लेक्स

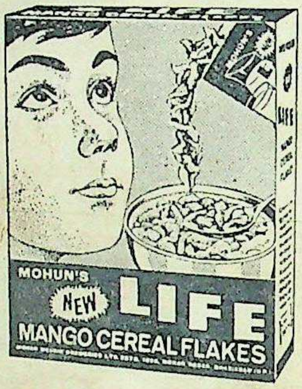

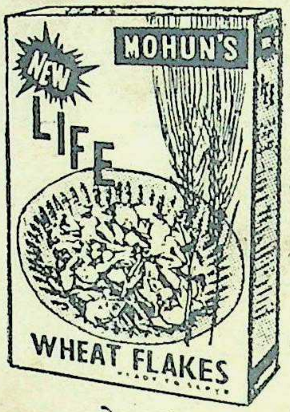

मोहन्ज़ न्यू लाइफ व्हीट फ्लेक्स

अच्छे स्वास्थ्य का प्राकृतिक साधन

मोहन्ज़ व्हाइट ओट्स

११३ वर्ष से अधिक का अनुभव विश्वास की गारण्टी है।

मोहन मीकिन ब्रुअरीज़ लिमिटेड स्थापित १८५५

मोहन नगर (गाजियाबाद) यू० पी०

MMB-NP-433

बैनेट, कोलमैन एंड कम्पनी लिमिटेड, स्वत्वाधिकारी के लिए जे. एम. डिसूजा द्वारा नेशनल प्रिंटिंग वर्क्स, १० दरियागंज, दिल्ली में मुद्रित और प्रकाशित।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साप्ताहिक

दिनमान

टाइम्स ऑफ इण्डिया प्रकाशन

0 पैसे

७ अक्तूबर, १९६८
५ कार्तिक, १८९०

प्रधानमंत्री की क्षमा : कवि का त्यागपत्र : चेक अर्द्धशती-अर्द्धक्रांति

CC-0. In Public

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नियमित उपयोग से फ़ोरहन्स टुथपेस्ट मसूढ़ों के कष्ट और दंत-क्षय को रोकता है

जवानों और बूढ़ों द्वारा अपने आप भेजे गये प्रमाणपत्रों में मसूढ़ों की तकलीफ़ और दांतों की ख़राबी को रोकने के लिए फ़ोरहन्स टुथपेस्ट के गुणों की समान रूप से प्रशंसा की गयी है। ये प्रमाणपत्र जेफ़्री मैनर्स एण्ड कंपनी लि. के किसी भी कार्यालय में देखे जा सकते हैं।

"मै आपका बनाया हुआ फ़ोरहन्स टुथपेस्ट लगभग पिछले १८ साल से इस्तेमाल कर रहा हूँ। पहले... मेरे दाँतों और मसूढ़ों की हालत बहुत बुरी थी। मिसाल के लिए, दंत-क्षय और पायोरिया के कारण मेरे पेट में दर्द और बेचैनी रहती थी।... पिछले १८ साल से मेरे दाँतों और मसूढ़ों की हालत बहुत अच्छी रही है–सिर्फ़ फ़ोरहन्स टुथपेस्ट की बदौलत।"

—शंकर के. कुंभार, बंबई

"पिछले तीन महीनों से मेरे दाँतों में दर्द और मसूढ़ों में पीड़ा रहती थी। जबसे मैने आपका फ़ोरहन्स टुथपेस्ट इस्तेमाल करना शुरू किया है... मेरे दाँत चमकदार सफ़ेद हो गये हैं। अब मेरे दाँतों या मसूढ़ों में दर्द भी नहीं होता।

—एन. शंकर, आर्नी

फ़ोरहन्स

–एक दाँतों के डाक्टर द्वारा निर्मित टुथपेस्ट

दांतों की समुचित देखभाल के लिए फ़ोरहन्स टुथपेस्ट और दोहरे असरवाला फ़ोरहन्स टुथब्रश हर रोज़ रात में और सबेरे इस्तेमाल कीजिए... और अपने दाँत के डाक्टर से नियमित मिलते रहिए।

मुफ्त "दाँतों और मसूढ़ों की रक्षा" संबंधी रंगीन पुस्तिका

यह पुस्तिका हिन्दी और अंग्रेज़ी में मिलती है। इसे मँगवाने के लिये इस कूपन के साथ १० पैसे के टिकट (डाक-खर्च के वास्ते) इस पते पर भेजिए: मैनर्स डेण्टल एडवाइजरी ब्यूरो, पोस्ट बॅग नं. १००३१, बम्बई-१

नाम ______

पता ______

भाषा ______ D-1°

36F-203 HN

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मत और सम्मत

कर्मचारियों की हड़ताल : कर्मचारियों की हड़तालों के प्रति मेरी सहानुभूति अवश्य है, पर सरकार के लिए एक सुझाव है, जिस में शायद समस्या का कुछ हल निकले. भारत में अभी भी ऐसे कई हिस्से हैं जहाँ लोगों को दिन-रात मेहनत करने पर पेट भर भोजन प्राप्त नहीं होता है. सरकार ऐसी एक योजना शुरू करे जिस में वह अपने कर्मचारियों को समय-समय पर सीमा पर, कारखानों, खदानों में भेजे, जिस से वे शहरी वातावरण से हट कर अपने अन्य भाइयों की समस्याएँ देखें कि कितने अल्प साधनों से वे अपना गुज़ारा करते हैं. छात्रों की समय-बे-समय की हुड़दंगों को रोकने के लिए उन्हें उन की छुट्टियों में एक प्रांत से दूसरे प्रांतों में कम श्रम के कार्यों के लिए बाँधों पर, खेतों पर, कारखानों में भेजा जाये व उन्हें समझाया जाये कि वे अपनी शक्ति का उपयोग देश के लिए कैसे कर सकते हैं. इस संबंध में महाराष्ट्र सरकार का प्रयास सराहनीय है.

—अ. वर्मा, जुन्नारदेव

यह तो खून और वह बंदगी : ६ अक्तूबर : पिछली दो हड़तालों का हवाला दे कर आपने बताया है कि पं. जवाहरलाल नेहरू के बीच-बचाव का और समस्या पर सहानुभूतिपूर्ण विचार करने का आश्वासन दे उन्हें टाल दिया था. पर १९ सितंबर की हड़ताल के लिए इंदिरा गांधी ने ऐसा कोई प्रयास नहीं किया कि हड़ताल टल जाये. पर नेहरू जी उन दो टली हुई हड़तालों में कर्मचारियों को क्या कुछ दे पाये या दिला पाये थे, यह कहने की आवश्यकता नहीं. भोली आशाओं में कर्मचारियों को रखना किसी सरकार के लिए शोभनीय हो सकता है, तो इंदिरा गांधी ने ग़लती ही की है. पर दाता से वह सूम अच्छा होता है जो फ़ौरन उत्तर देता है. क्या २५ लाख कर्मचारियों के वेतन में वृद्धि कर, ९८ प्रतिशत जनता पर सरकार अतिरिक्त कर लगा कर, अपनी सरकार वैसा ही क़दम नहीं उठायेगी जैसा कि ९८ प्रतिशत जनसंख्या पर अंग्रेज़ी लादने के फ़ैसले से करती है ? देश की २ प्रतिशत जनता को विशेष सुविधाएँ देने की माँग को यदि न्यायोचित माना जा सकता है तो कहा जा सकता है कि देश में ग़रीबी नहीं है, भुखमरी नहीं है, बेकारी नहीं है—खुशहाली है ! यदि नहीं तो यह जनसाधारण की क्रांति का आवाहन होगा. देश को विशिष्ट वर्गों में बाँट देने का दोष किसे दिया जाये—सरकार की राजनैतिक चालों को, या भोली जनता को ? एक ही शहर में कार्य करने वाले वेतनभोगी केंद्रीय सरकारी कर्मचारियों को वेतन-वृद्धि की माँग करते देख, उस की पूर्ति के लिए हड़ताल करते देख और प्रेस जगत् द्वारा सरकार की तत्संबंधित गत्यारोधकता की बखिया उघड़ते देख प्रांतीय कर्मचारियों की मनोप्रतिक्रिया जानने के लिए अति सूक्ष्म अध्ययन की आवश्यकता होगी. पर इस का यह मतलब कदापि नहीं कि बाबुओं पर बजे डंडों को निर्मूल कर दिया जाये. पुलिस का ज़ुल्म अतिक्रमण की सीमा तक पहुँच गया है और उस का निराकरण यदि शीघ्र न किया गया तो स्थिति हाथ से निकल जा सकती है. प्रत्येक 'ज़ुल्म' पर न्यायिक जाँच के लिए सरकार पर न केवल राजनैतिक दलों का ही दबाव काफ़ी होगा जनचेतना भी उस ओर उन्मुख करनी पड़ेगी. इस का दायित्व प्रेस जगत् पर है.

—सियाराम यादव, फ़र्रुखाबाद

शिक्षा में समाजवाद : बाँझ और जड़ शिक्षा-व्यवस्था के प्रति असंतोष और आक्रोश को अब स्वर मिलने लगा है. अब तक के प्रायः सभी पूर्ण विराम चिह्न अब कसमसा कर प्रश्न-वाचक चिन्हों के रूप लेते जा रहे हैं. ऐसे समय में हमारा सुझाव यह है कि शिक्षा-जगत् से श्रेणी-विभाजन को समाप्त कर के शिक्षा-क्षेत्र में समाजवाद लाया जाये. आज-कल शिक्षाधिकारी अपनी सुविधानुसार कहीं श्रेणी को आधार (नौकरी आदि में) मानते हैं, तो कहीं (प्रवेशादि में) अंकों के प्रतिशत को. विभिन्न विश्वविद्यालयों में श्रेणियों के अलग-अलग प्रतिशत अंकों पर देने के दुष्परिणाम भी निर्दोष छात्रों को भुगतने पड़ते हैं. मानवता की माँग है कि जो अंतर ५४ प्रतिशत और ५५ प्रतिशत में है वही अंतर ५९ प्रतिशत और ६० प्रतिशत में होना चाहिए. (वस्तुस्थिति तो यह है कि व्यवहारतः ४८ प्रतिशत से ५८ प्रतिशत तक कोई अंतर नहीं होता, जब कि ५९ और ६० प्रतिशत में लगभग १०-१२ प्रतिशत का अंतर हो जाता है.) श्रेणी-व्यवस्था की सामंतवादी स्थिति समाप्त कर के केवल अंकों के प्रतिशत को आधार मानने से छात्रों को व्यावहारिक लाभ चाहे कुछ न हो मानसिक तुष्टि और शांति प्रदान की जा सकती है.

—जयदेव तनेजा, नयी दिल्ली

नगा नेता से भेंट : नगा और मिज़ो की समस्या सुलझने के बजाय उलझती ही जा रही है. असम के पुनर्गठन से भी यह संभावना बढ़ रही है कि जो नया पहाड़ी राज्य बन रहा है वह भी कुछ दिन के पश्चात् नगा और मिज़ो के मार्गों का अनुसरण करेगा. सन् ५४ में जब मैं और मेरे साथी श्री मवकुर दीघे और श्री अश्विनीकुमार शुक्ल गोरखपुर जिला जेल में खाद्य-आंदोलन के सिलसिले में बंद थे उसी समय विद्रोही नगा नेता फ़िज़ो का निजी सचिव श्री एफ़. वी. शेरपे भी बंद था. जेल के अस्पताल में मेरी उस की मुलाक़ात हुई थी. वह मेरे क़रीब मार्क्स की कुछ किताबों को को देख कर आया और पूछा, 'क्या तुम कम्युनिस्ट हो ?' 'नहीं'. मैं संसपा. का हूँ और खाद्य-आंदोलन में जेल आया हूँ.' फिर उस ने पूछा 'क्या तुम्हारे नेता डॉ. लोहिया हैं ?' 'हाँ' मैंने उसे जवाब दिया. मैंने भी उस से उत्सुकतावश पूछा कि 'तुम क्यों गिरफ़्तार हो ?' उस ने झल्ला कर कहा 'अपनी पागल सरकार से पूछ लो. तुम्हारी सरकार पाजी है, जो पलटन भेज कर और गोलियाँ चला कर हमें मजबूरन विद्रोह करने को विवश करती है.' उस से मैंने बड़ी जिज्ञासा के साथ अपनी बात पूछते हुए कहा 'तुम्हारे और हमारे बड़े पुराने मधुर संबंध हैं. हमारे पुराणों में तुम्हारे यहाँ के संबंधों को बड़ा महत्त्व मिला है. शंकर की पार्वती, कृष्ण की रुक्मिणी, अर्जुन की चित्रांगदा, भीम की हिडिम्बा और इंद्र की उर्वशी सब तो तुम्हारे यहाँ की रही हैं. पूरब भारत की इन नारियों ने पश्चिम भारत के इन महापुरुषों को अपनी ओर खींच कर पश्चिम और पूर्व के रिश्ते मधुर और अटूट बनाये थे और अब तुम विद्रोह कर रहे हो ?' उस ने हँस कर कहा कि 'इसी रिश्ते का यह नतीजा है कि तुम्हारी पलटन हम पर गोलियाँ मार रही है

आप फ़रमाते हैं

लक्ष्मण का व्यंग्य-चित्र

'हाँ, मैं जानती हूँ ये लोग कौन हैं. तुम्हें याद होगा कि जब तुम विश्व भ्रमण कर के लौटे थे तब तुमने कहा था तुम्हारे बहुत से नये-नये दोस्त बन गये हैं और तुमने उन्हें आने के लिए निमंत्रित किया है.'

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और जेलों में ठुँस रही है. अगर हम तुम्हारे अंग हैं तो तुम बताओ कि अखिल भारतीय सेवाओं में कितने नगा नागरिक हैं ? कितने केंद्रीय कबीना के मंत्री हैं और कितनी नगा लड़कियों को तुम ने अपनाया है और कितने नगाओं से तुम्हारे यहाँ की लड़कियाँ ब्याही गयी हैं ?' उस ने फिर कहा 'महाभारत के कृष्ण और अर्जुन नगा कन्या को अपना सकते थे, पर आज का राजपुरुष जर्मन, ब्रितानी, अमेरिकी और रूसी कन्याओं को अपनायेगा, क्यों कि वे संपन्न हैं और हम अविकसित, असभ्य और दरिद्र हैं ?' नगा नेता ने कहा 'राजनीति में रिश्ते बदलते हैं. तुम्हारी छाप मिट चुकी है. अब हम ईसाई हैं. इस पर सोचो और अपनी पलटन पर सोचो !'

—गुंजेश्वरीप्रसाद, गोरखपुर

विश्व युवक समारोह : संसार के १४० देशों के बीस हज़ार युवक-युवतियों ने बल्गारिया की राजधानी सोफ़िया में विश्व युवक समारोह में भाग लिया. भाग नहीं लेने वाले देशों में पाकिस्तान और चीन का नाम प्रथम रहा. सोवियत रूस के प्रभाव-क्षेत्र में संपन्न युवक-महोत्सव सोवियत शासन-यंत्र की असफलता तथा तानाशाही की कलाई खोलने में समर्थ रहा. चीन नहीं उपस्थित रह कर भी उपस्थित रहा और सोवियत रूस के प्रतिनिधि उपस्थित रह कर भी अनुपस्थित रहने को सोचने लगे होंगे. भारत लोकतंत्र और समाजवाद का पुजारी रहा है. अगर भारतीय प्रतिनिधिमंडल ने अपने प्यारे वतन की सीख ही भुला दी तो फिर वे गये ही क्यों थे ? सोवियत रूस की दलाली करने या अपनी तस्वीर दिखाने ? भारतीय प्रतिनिधिमंडल का अभारतीय रुख जनता एवं युवा-पीढ़ी के सामने आना चाहिए, ताकि युवा पीढ़ी सोफ़िया की सैर करने वालों की अभूमिका से अवगत हो जाये.

—रत्नकुमार रत्नाकर, गया

चेक समस्या : चेकोस्लोवाकिया में रूसी हस्तक्षेप के संबंध में **दिनमान** ने बड़े ही स्पष्ट, निष्पक्ष तथा निर्भीक रूप से लिखा है. 'दिनमान' से ऐसी ही आशा थी. स्तालिन के मरणोपरांत प्रायः सभी प्रजातांत्रिक तथा शांति-प्रिय देशों की धारणा होने लगी थी कि रूस दूसरे साम्यवादी देशों के मामलों में अब हस्तक्षेप नहीं करेगा. परंतु प्रतीत होता है कि कोसीगिन मार्शल स्तालिन की विस्तारवादी तथा आक्रमणकारी नीतियों में विश्वास करते हैं तथा अवसर प्राप्त होने पर अपनी विस्तारवादी आकांक्षाओं की तुष्टि करने में नहीं चूकना चाहते हैं. —परमानंद, मधुबनी (बिहार)

भूल-सुधार

२० अक्तूबर के मत और सम्मत के प्रथम पत्र बायें ख़ुदेड़ सरकार के लेखक हैं मेरठ के गुरुप्रसाद नंवानी. —सं.

दो महीने की हड़ताल के बाद दिनमान पुनः प्रकाशित होने पर हमें कई पाठकों की शुभशंसाएँ और सम्मतियाँ प्राप्त हो रही हैं. उन सब को **दिनमान** का धन्यवाद पहुँचे. इस स्तंभ के माध्यम से हमारा-उन का संलाप तो जारी रहेगा ही. —सं.

सांप्रदायिकता विरोधी अभियान : आज देश में सांप्रदायिकता विरोधी सभाओं और सम्मेलनों की धूम है, परंतु देखने में यह आया है कि इस प्रकार के सम्मेलनों के पश्चात् सांप्रदायिक कटुता और अधिक बढ़ जाती है, क्यों कि इन सम्मेलनों का एकमात्र उद्देश्य जनसंघ और राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ को कोसना रहता है. ब्रिटिश काल में जिस प्रकार मुस्लिम लीग ने कांग्रेस के विरुद्ध फतवे दिये थे उसी प्रकार जमईयतुलउलमाए हिंद ने जनसंघ और राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के विरुद्ध फतवा दे रखा है, जिस से हिंदुओं के एक प्रबल भाग की भावनाओं को ठेस पहुँचती है, क्यों कि हिंदुओं का एक बहुभाग इन संस्थाओं से संबद्ध है. फिर ये सम्मेलन केवल जनसंघ और राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के विरुद्ध ही घृणा का प्रचार कर के चुप नहीं हो जाते, बढ़ते-बढ़ते ये पुलिस और शासन के हिंदु कर्मचारियों, जनसंघ मनोवृत्ति के कांग्रेसियों, यहाँ तक कि जनसंघी मनोवृत्ति के कम्युनिस्टों के विरुद्ध भी घृणा फैलाते हैं और इस प्रकार हिंदु-मुस्लिम वैमनस्य को जन्म देते हैं. अल्जमईयत न केवल ऑर्गेनाइज़र व पांचजन्य को अपितु नवभारत टाइम्स व अमृत बाज़ार पत्रिका को भी सांप्रदायिक ठहराता है. दूसरा बड़ा दोष यह है कि इन सारे सम्मेलनों का कार्यक्रम नकारात्मक है. सांप्रदायिक सौहार्द्र बढ़ाने का कोई भी रचनात्मक कार्यक्रम इन के पास नहीं है.

—राजेंद्रप्रसाद जैन, तिस्सा

ख़ून के बदले पानी : ६ अक्तूबर : यह समाचार पढ़ कर स्तब्ध रह गया. सारी घटना हमें सोचने पर मजबूर कर देती है कि क्या हम अभी अंध आदिम युग में रह रहे हैं ? विरोधी दल के जिन नेताओं के प्रयत्न से रहस्य का पर्दा उठा है वे अवश्य बधाई के पात्र हैं. जब मैंने यह समाचार पढ़ा कलेजा काँप उठा. जिस नर-राक्षस ने यह पैशाचिक दुष्कृत्य किया वह मानवता का कितना बड़ा शत्रु है. हम उस के इस घृणित, नृशंस, राक्षसी कृत्य के लिए सिवा धिक्कारने के और क्या कर सकते हैं ! यह समाचार पढ़ा तो मन घृणा से भर गया और दिन भर किसी काम में मन नहीं लगा. जिस समय खबर पढ़ रहा था उस समय मुझे महसूस हो रहा था कि जैसे मेरे बच्चे की गरदन को कोई चाकू से रेत रहा है.

—शिवमंगल पांडेय, चिरकुंडा, धनबाद

पिछले सप्ताह

(१० अक्तूबर से १६ अक्तूबर, १९६८ तक)

देश

१० अक्तूबर : श्रीनगर में शेख अब्दुल्ला द्वारा आयोजित सम्मेलन में सर्वोदय नेता जयप्रकाश नारायण का कश्मीर का हल भारतीय संविधान में ढूँढने का सुझाव.

११ अक्तूबर : दिल्ली में केंद्रीय कर्मचारियों के चार नेताओं द्वारा भूख-हड़ताल शुरू. उत्तर बंगाल की बाढ़ में १,३३० व्यक्तियों की मृत्यु. संत तुकड़ो जी महाराज का अमरावती के पास देहांत.

१२ अक्तूबर : नवंबर में होने वाला पश्चिम बंगाल का मध्यावधि चुनाव फ़रवरी तक स्थगित.

१३ अक्तूबर : गया के पास एक गाँव में पुलिस और भीड़ में मुठभेड़ के कारण ५ ग्रामीणों की मृत्यु.

१४ अक्तूबर : राजमाता सिंधिया द्वारा मध्यप्रदेश लोक सेवक दल से त्यागपत्र.

१५ अक्तूबर : राजमाता सिंधिया और मध्यप्रदेश के मुख्यमंत्री गोविंदनारायण सिंह द्वारा जनसंघ के नेताओं से मिल मध्यप्रदेश का संकट दूर करने का फ़ैसला.

१६ अक्तूबर : नेपाल की पाँच दिवसीय यात्रा समाप्त कर राष्ट्रपति का भारत आगमन. केंद्रीय कर्मचारियों द्वारा सामूहिक रूप से भूख-हड़ताल.

विदेश

१० अक्तूबर : संयुक्त अरब गणराज्य द्वारा इस्राइल का नौ-सूत्रीय शांति-प्रस्ताव अस्वीकार.

११ अक्तूबर : रूस चेकोस्लोवाकिया से अपने सैनिक हटाने को सहमत.

१२ अक्तूबर : पनामा में रक्तहीन क्रांति में सेना द्वारा सत्ता प्राप्त. नेपाल पहुँचने पर राष्ट्रपति डॉ॰ ज़ाकिर हुसेन का भव्य स्वागत. मेक्सिको में १९वें ओलिंपिक खेल शुरू.

१३ अक्तूबर : रोडेसिया समस्या पर ब्रितानी प्रधानमंत्री विल्सन और रोडेसिया के प्रधानमंत्री स्मिथ की वार्त्ता विफल.

१४ अक्तूबर : संयुक्तराष्ट्र में प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी द्वारा १९७० के वर्ष को शांति का वर्ष मनाये जाने का सुझाव. पर्थ (ऑस्ट्रेलिया) में भूकंप के कारण एक समूचा गाँव नष्ट.

१५ अक्तूबर : मेक्सिको ओलिंपिक में भारत की मेक्सिको पर विजय. चीन के राष्ट्रपति लिउ शाओ ची सभी पदों से मुक्त.

१६ अक्तूबर : भारतीय वैज्ञानिक डॉ. हरगोविंद खुराना को दो अमेरिकी वैज्ञानिकों के साथ नोबेल पुरस्कार.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एशियाई दानव अकेला; अरब-इस्राइल संबंध

क्या कम्युनिस्ट चीन समूचे एशिया के लिए महादानव है ? वह क्या इतना शक्तिशाली हो गया है कि समूचे दक्षिण पूर्व एशिया पर हावी हो कर निकट भविष्य में ही विश्व के इस भाग में ऐसी शक्ति बन जायेगा जिसे कोई चुनौती ही न दे सके ? ये प्रश्न एशिया में कम्युनिस्ट चीन के पड़ोसी देशों के मन में उठते हैं और इसी आधार पर वे अपनी विदेश और रक्षा-नीति निर्धारित करते हैं. अमेरिकी पत्र **क्रिश्चेन सायंस मॉनिटर** के चीन संबंधी मामलों के विशेष संवाददाता ने एशिया के संदर्भ में चीन की वर्त्तमान स्थिति का विश्लेषण करते हुए इन प्रश्नों का विस्तारपूर्वक उत्तर दिया है. इस समीक्षा में कहा गया है—

नक्शे में शायद ही कोई ऐसा देश हो जिसे पीकिङ अपना मित्र कह सकता है. यहाँ तक कि उत्तर वीएतनाम भी, जिसे अमेरिका विरोधी गठबंधन में चीन अपना सहयोगी मानता था, चीन के प्रभाव-क्षेत्र से मुक्त होता जा रहा है. दोनों देशों के बीच संबंध हाल ही के कुछ दिनों से बहुत तनावपूर्ण हो गये हैं. माओ त्से तुंग का कहना है कि सोवियत संघ के पिछलग्गू देश पश्चिमी यूरोप के साम्राज्य-वाद से गठबंधन कर शत्रु देशों के सैनिक अड्डों की स्थापना कर के चीन को चारों ओर से घेर लेना चाहते हैं.

सैनिक दृष्टि से देखा जाये तो पश्चिमी देशों को चीन के चारों ओर सैनिक अड्डे बनाने की ज़रूरत ही नहीं है. चीन की मुख्य भूमि के महत्त्वपूर्ण ठिकाने फ़ॉरमोसा और थाईलैंड के निशानों की पहुँच में हैं और ये दोनों ही देश अमेरिका के मित्र हैं. समझा जाता है राष्ट्रवादी चीन के पायलटों द्वारा चालित यू-२ जासूसी विमान फ़ॉरमोसा से ही चीन की मुख्य भूमि पर देखभाल की उड़ान करते रहते हैं और उधर अमेरिकी वायुसेना के दूर तक मार करने वाले बी-५२ क़िस्म के बमवर्षक थाईदेश के अड्डों से उड़ कर बात की बात में सिक्यांग प्रांत स्थित चीन के आण-विक ठिकानों पर मार कर सकते हैं. युद्ध होने की स्थिति में इन दोनों ही देशों के अड्डे चीन पर मार करने के लिए आसानी से अमेरिका को उपलब्ध हो जायेंगे.

इस के अलावा अमेरिकी प्रक्षेपास्त्र पन-डुब्बियाँ चीनी समुद्र तट के आसपास ऐसी जगहों पर गश्त करती रहती है जिन का चीन को पता भी नहीं है. ये पनडुब्बियाँ आधुनिक-तम प्रक्षेपास्त्रों से लैस हैं और चीन के सैनिक ठिकानों पर तुरंत हमला करने में इन्हें कोई कठिनाई नहीं होगी. इस प्रकार प्रक्षेपास्त्रों के इस युग में चीन के चारों ओर सैनिक अड्डे बनाने की किसी को क्या आवश्यकता है ?

सच तो यह है कि चीन के चारों ओर के देश उसे शक भरी निगाह से देखते हैं, क्यों कि चीन उन की आलोचना करता रहता है. पिछले दो वर्षों में चीन की सांस्कृतिक क्रांति की आग अपने यहाँ फैलते ही उस की लपटें पड़ोसी देशों की सीमाओं तक पहुँच गयीं. मिसाल के तौर पर बर्मा, जो पीकिङ की नाराज़ी के डर से तटस्थता की नीति पर चलने का प्रयत्न कर रहा था, माओ प्रचार का अड्डा बनने लगा और वहाँ रहने वाले चीनी इस का माध्यम बन गये. जब बर्मा के जनरल ने विन ने माओ बिल्ले पहनने पर पाबंदी लगा दी तो चीन के कम्युनिस्ट राजनयज्ञों ने वहाँ दंगों के लिए लोगों को भड़का दिया. चीन के प्रधानमंत्री श्री चाओ एन लाई की बर्मा यात्रा के समय जिस जनरल ने विन के साथ हँस-हँस कर चाय पी गयी थी पीकिङ ने उसे बर्मा का च्यांगकाई शेक कहना शुरू कर दिया. अब चीन की समूची प्रचार-व्यवस्था का निशाना जनरल ने विन ही हैं. इन के अलावा ब्रिटेन और पुर्त्तगाल की बस्तियाँ हाङकाङ और मकाओ पर भी सांस्कृतिक क्रांति से उत्पन्न अव्यवस्था का असर पड़ा, जब कि ये दोनों बस्तियाँ राजनीति से दूर रह कर पीकिङ के प्रति कोई आक्रामक रवैया नहीं रखती थी. इन दोनों बस्तियों में माओ के विचारों का प्रचार करने के उद्देश्य से कम्युनिस्टों ने सामान्य जीवन को अस्तव्यस्त करने की कोशिश की. इस प्रकार पड़ोसी देश चीन को संदेह की दृष्टि से देखें और उस पर विश्वास न करें तो इस में आश्चर्य की क्या बात है ? कंबोदिया को भी चीन से शिकायत करनी पड़ी है कि वह उन के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप कर तोड़-फोड़ की कार्यवाहियाँ कराने में लगा है. सांस्कृतिक क्रांति के परिणामों को देख कर चीन की विदेश-नीति में कोई परिवर्त्तन आयेगा या नहीं यह अभी देखने की बात है.

इधर महीनों की तनातनी के बाद ब्रिटेन के साथ पीकिङ के संबंध कुछ अच्छे हुए हैं. यह ब्रितानी उपनिवेश हाङकाङ के लिए अच्छा शकुन है. अभी ऐसी कोई संभावना नज़र नहीं आती कि दक्षिण-पूर्व एशिया के अन्य देशों के साथ पीकिङ के मित्र-संबंध बढ़ेंगे. इन देशों के प्रति चीन के रवैये में भले ही कुछ तबदीली आये पर मित्र-संबंधों की कोई गुंजाइश नहीं है. मिसाल के तौर पर मलयेसिया और फ़िलिपींस को पीकिङ पश्चिम के ही साथी मानता है, जब कि वास्तविकता यह नहीं है— इंदोनेसिया में जब से चीन समर्थक कम्युनिस्ट पार्टी पर प्रतिबंध लगा है चीन और इंदो-नेसिया के संबंधों में जड़ता आ गयी है और अभी ये ऐसे ही बने रहेंगे.

फ़ारमोसा की राष्ट्रीय सरकार से तो पीकिङ निरंतर युद्ध की स्थिति में है. यद्यपि राष्ट्रवादी चीन फ़ारमोसा द्वीप तक ही सीमित है पर कम्युनिस्ट चीन के लिए वह चिंता का ही कारण है. कम्युनिस्ट सेना का काफ़ी बड़ा हिस्सा ठीक फ़ारमोसा के सामने मुख्य भूमि के क्षेत्र में रक्षा के लिए तैनात है. चीन की यह सतर्कता और चिंता जायज़ भी है, क्यों कि

खेल-कूद में राजनीति
मेक्सिको ओलिंपिक पर गार्डियन में पापास का व्यंग्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फ़ॉरमोसा के एजेंट मुख्य भूमि में लगे ही रहते हैं.

पर चीन के लिए सब से अधिक चिंता उत्पन्न करने वाला उस का एक पड़ोसी उत्तर वीएतनाम है. यद्यपि उत्तर वीएतनाम घन-घोर अमेरिका विरोधी है पर चीन के परामर्श की अवहेलना कर के उस ने अमेरिकियों के साथ पेरिस वार्त्ता में भाग लिया. पीकिङ चाहता है कि अमेरिकियों के साथ सीमित युद्ध बराबर जारी रहे, लेकिन हानोइ का विचार है कि उधर तो युद्ध-क्षेत्र में और इधर बातचीत में कुछ जोड़-तोड़ कर के वह विजय प्राप्त कर ले. लक्ष्य प्राप्ति के इस तरीक़े पर मतभेद हो जाने के कारण पीकिङ और हानोइ के संबंध दिनोंदिन ख़राब होते जा रहे हैं. चेकोस्लोवाकिया में सोवियत हस्तक्षेप का हानोई द्वारा समर्थन करने की वजह से दोनों में वे संबंध और भी ख़राब हो गये हैं. चीन ने तो इस मामले पर सोवियत संघ की जी भर कर निंदा की और उत्तर वीएतनाम ने समर्थन प्रदान किया. यह महत्त्वपूर्ण मतभेद है, जो चीन को उत्तर वीएतनाम जैसे निकटतम मित्र से भी अलगथलग कर रहा है.

पश्चिम एशिया

संयुक्त अरब गणराज्य को बहुत बड़ी मात्रा में सोवियत अस्त्र-शस्त्रों की सप्लाई पिछले सप्ताह की महत्त्वपूर्ण घटना है. इधर तो स्थिति को बिगड़ने से बचाने के लिए बड़े देशों और संयुक्तराष्ट्र के प्रयत्न और उधर अरब देशों और इस्राइल के बीच तनातनी के वातावरण में एक बड़े देश द्वारा अरबों को इतनी बड़ी मात्रा में हथियारों की सप्लाई के समाचार पर ब्रितानी पत्र **ऑब्ज़र्वर** का विचार है कि स्थिति भले ही और बिगड़ जाये दोनों में तत्काल युद्ध छिड़ने का ख़तरा नहीं है. हाल ही के संपादकीय लेख में पत्र ने सोवियत हथियारों की सप्लाई के समाचार से पहले पश्चिम एशिया की स्थिति का यह विश्लेषण किया, जिस में दोनों के बीच तनातनी बने रहने का ही अनुमान लगाया—

हालांकि पश्चिम एशिया की स्थिति दिनों-दिन बिगड़ रही है पर युद्ध की आशंका को बढ़ा-चढ़ा कर नहीं पेश किया जाना चाहिए. युद्ध का वातावरण बनाने की अपेक्षा बातचीत द्वारा समस्या का समाधान ढूंढने के प्रयत्नों पर ही विश्व का ध्यान दिलाया जाना चाहिए. हालांकि मिस्र की सैनिक शक्ति अब इस्राइल के साथ छह दिन के युद्ध से पहले के स्तर पर ही आ गयी है पर अरब नेता यह भली प्रकार जानते हैं कि इस्राइल के साथ युद्ध के चौथे दौर में भी उन के जीतने की संभावना कम है. दरअसल अरबों का सब से बड़ा अस्त्र फ़िलीस्तीन के अरब छापामार ही हैं. वर्त्तमान स्थिति का सब से बड़ा ख़तरा यही है. ये छापामार युद्ध-विराम रेखा का मज़ाक बना सकते हैं और बनाते भी हैं. बदला लेने की किसी सैनिक कार्यवाही के अभाव में और कोई समझौता न होने की स्थिति में कुछ न कुछ करते हुए वे अरबों का हौसला भी बनाये रखते हैं. पर ये छापामार इस्राइल के लिए इतना ख़तरा नहीं हैं जितना कि स्वयं अरब नेतृत्व के लिए. वैसे ये छापामार अपने में कोई स्वतंत्र शक्ति नहीं हैं, पर धीरे-धीरे बनते जा रहे हैं. अगर ये अपने युदांन सहयोगियों की सहायता से अम्मान पर अधिकार कर लेते हैं तो सारा नक़्शा ही बदल जायेगा. ऐसी स्थिति उत्पन्न होगी जिस पर क्या शाह हुसैन, क्या नासिर और क्या उन के रूसी मित्र किसी के लिए भी क़ाबू पाना मुश्किल होगा.

इस्राइल को छापामारों से कोई सैनिक ख़तरा नहीं है. वे तो नागरिकों पर आक्रमण कर के ही इस्राइल को कोई नुकसान पहुँचा सकते हैं, जिस का परिणाम यह होगा कि इस्राइल सरकार युर्दान में उन के अड्डों पर क़ब्ज़ा करने के लिए मजबूर हो जायेगी. अगर इस्राइल ने ऐसा किया तो स्थिति और उलझ जायेगी. शाह हुसैन का ग़ायब हो जाना इस का अनिवार्य परिणाम होगा और समझौते की बात तो बिल्कुल असंभव हो जायेगी. इस प्रकार दोनों के बीच अनियमित युद्ध के चलते रहने का ख़तरा बराबर है.

बातचीत द्वारा अरब-इस्राइल समझौते के रास्ते में ये ख़तरे तो मौजूद हैं. संयुक्तराष्ट्र सुरक्षा परिषद् का प्रस्ताव दोनों पक्षों द्वारा स्वीकार कर लिये जाने पर भी संयुक्तराष्ट्र के प्रधान सचिव के शांति मिशन के नेता श्री यारिंग को अभी तक कोई ख़ास सफलता नहीं मिली है.

यारिंग मिशन का पश्चिम एशियाके शांति-प्रयत्नों में बस इतना ही योगदान है कि उस ने बातचीत द्वारा किसी समझौते पर पहुँचने की आशा धूमिल नहीं होने दी है. उधर अरब देशों की सरकारें विजेता देश इस्राइल से बातचीत करने में बराबर झिझक रही हैं और इस्राइल विजित प्रदेशों को छोड़ देने की अरबों की माँग को मान लेगा, इस की भी कोई संभावना नज़र नहीं आती. अरब इस माँग को मंज़ूर हुए बिना बात नहीं करेंगे.

इस्राइल बातचीत में पहल करने की स्थिति में है. अरब, जो सैनिक दृष्टि से थोड़ा घट कर ही हैं, एक तो परस्पर मतभेद के शिकार हैं और दूसरे पराजित होने की वजह से पहल करना नहीं चाहते. जब तक उन्हें यथोचित समझौते का आश्वासन न दे दिया जाये वे किसी रिआयत के लिए भी तैयार नहीं होंगे. फिर अरब नेता अपने समर्थक सोवियत संघ की सलाह के बिना कोई समझौता करेंगे भी नहीं.

दर्शन

अखिल भारतीय दर्शन परिषद्

दिल्ली विश्वविद्यालय के प्रांगण में इस बार 'शरदावकाश' में भी काफ़ी चहलपहल रही. कारण था अखिल भारतीय दर्शन परिषद का आयोजन. परिषद् के तेरहवें अधिवेशन के अध्यक्ष पटना विश्वविद्यालय के प्रोफ़ेसर हरिमोहन झा थे. चार दिन के इस कार्यक्रम का आरंभ ८ अक्तूबर को विश्वविद्यालय के नवदीक्षांत कक्ष में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के अध्यक्ष डॉ. डी. एस. कोठारी के उद्घाटन-भाषण के साथ हुआ. अपने संक्षिप्त किंतु प्रभावशाली भाषण में उन्होंने विश्वविद्यालयों में दर्शन के वर्त्तमान पाठ्यक्रमों में समयोचित परिवर्त्तन करने की आवश्यकता पर बल दिया. एक ओर उन्होंने उसे समीचीन बनाने का आग्रह किया और ऐसे 'इंटीग्रेटेड कोर्सेस' खोलने का सुझाव दिया जिन में दर्शन के साथ भौतिकी, गणित एवं ऐसे अन्य विषयों का अध्ययन किया जाता हो जिन का कि दर्शन के साथ घनिष्ठ संबंध है. ऐसे 'कोर्सेस' ऑक्सफ़ोर्ड आदि विश्वविद्यालयों में पहले ही खोले जा चुके हैं. दूसरी ओर उन्होंने दर्शन के अध्ययन के उस परंपरागत भारतीय रूप को पुनः स्थापित करने को कहा जिस के अनुसार दर्शन ज्ञानात्मक होने के साथ-साथ व्यावहारिक भी हो.

रागात्मक निष्ठा : अपने अध्यक्षीय भाषण में प्रोफ़ेसर झा ने परिषद् के उद्देश्यों पर प्रकाश डाला तथा विश्व में व्याप्त वर्त्तमान भौतिकवादी प्रवृत्तियों के संदर्भ में भारतीय दर्शन की महत्ता का प्रतिपादन किया. उन्होंने बताया कि आज विश्व में विज्ञान को प्रमुखता मिल रही है और वही जीवन-दर्शन का रूप ले रहा है. संस्कृति भोग-केंद्रित हो गयी है और देहात्मवादी प्रवृत्तियाँ प्रतिष्ठा पा रही हैं. मूल्यों के विघटन के परिणामस्वरूप जीवन के विविध क्षेत्रों में जो एक प्रकार की अव्यवस्था फैल गयी है उस का समाधान भारतीय दर्शन की आधारभूत मान्यताओं द्वारा ही संभव है. निश्चय ही उन की यह धारणा तर्क पर नहीं बल्कि एक प्रकार की रागात्मक निष्ठा से उद्भूत है. विज्ञान के प्रति वह अधिक उदार नहीं प्रतीत होते. क्या विज्ञान से उत्पन्न होने वाले प्रश्नों का पुरानी मान्यतायें समुचित उत्तर हो सकती हैं ? इन समस्याओं का समाधान विज्ञान से समन्वित एवं पुष्ट नयी मान्यताओं एवं रुझान से ही संभव है. इस के अतिरिक्त भारतीय दर्शन को वह विशुद्ध दर्शन के रूप में ही ग्रहण करते रहे, जब कि उस का क्षेत्र उस से कहीं अधिक विस्तृत है. लोकायत, सूफ़ी एवं पाश्चात्य दर्शनों से प्रभावित अनेक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आधुनिक भारतीय विचारधाराएँ भी आज हमारे दर्शन का ही अंग हैं.

अधिवेशन की अगले दिन की बैठक चार विभागों में विभक्त हो गयी और उन विभागों के अध्यक्षों ने अपने-अपने भाषण पढ़े, जिन का विवरण इस प्रकार है : डॉ. धर्मेन्द्र गोयल (पंजाब विश्वविद्यालय) समाजदर्शन एवं आचारशास्त्र; आचार्य शिवजीवन भट्टाचार्य (शांतिनिकेतन) तर्क और वैज्ञानिक पद्धति; डॉ. रमाकांत त्रिपाठी (काशी हिंदू विश्वविद्यालय) तत्त्व एवं ज्ञान-मीमांसा; डॉ. हजारीलाल माहेश्वरी (वृन्दावन) धर्म-विभाग. इस के उपरांत प्रतिनिधियों ने अपना-अपना निबंध पाठ किया और उन पर प्रश्नोत्तर किये गये. चार दिन के इस सत्र में विभिन्न विभागों में कुल मिला कर तीस निबंध पढ़े गये.

दर्शन और संस्कृति: उस दिन का सब से अच्छा कार्यक्रम था शाम को दिया गया 'विशिष्ट भाषण', जिस का आयोजन एक 'पब्लिक लेक्चर' के रूप में किया गया था. भाषणकर्त्ता थे राजस्थान विश्वविद्यालय के डॉ. गोविंदचंद्र पांडे. अपने व्याख्यान 'दर्शन और संस्कृति' में उन्होंने दर्शन के उस रूप की आलोचना की जिस के अनुसार जीवन की गति से दूर वह एक 'आइवरी टावर' में रहने वाली कोई वस्तु है. उन के अनुसार दर्शन संस्कृति सापेक्ष है, निरपेक्ष नहीं. संस्कृति एक प्रकार के मूल्यबोध पर निर्भर करती है और मल्यबोध की मीमांसा का कार्य दर्शन का है. इस प्रकार दर्शन एक ऐसी विधा है जो संस्कृति के साथ-साथ क़दम बढ़ाती है. अपने प्रतिपाद्य की स्थापना के लिए उन्होंने पूर्व एवं पश्चिम दोनों के ही ऐतिहासिक क्रमों का बड़ा ही गवेषणापूर्ण विवेचन किया.

सत्र के अंतिम दो दिनों में जो कार्यक्रम सब से अधिक महत्त्वपूर्ण एवं रोचक रहे वे थीं विचार-गोष्ठियाँ. १० अक्तूबर को आयोजित विचार-गोष्ठी का विषय था—'स्वतंत्रता का स्वरूप' और भाग लेने वाले थे आई. आई. टी. कानपुर के डॉ. राजेंद्र प्रसाद, राजस्थान विश्वविद्यालय के डॉ. नंदकिशोर, जोधपुर विश्वविद्यालय के प्रोफ़ेसर चाँदमल और राजस्थान विश्वविद्यालय के ही यशदेव शल्य. डॉ राजेंद्र प्रसाद ने स्वतंत्रता को एक मूल्य बताते हुए कहा कि स्वतंत्रता सामाजिक संदर्भ में व्यक्ति-संबंधों में निष्पन्न होती है. 'स्वतंत्रता', उन के अनुसार, ''चयन की शक्ति है, जिस के साथ वर्जना भी जुड़ी हुई है, क्यों कि सामाजिक संबंधों में इस की निष्पत्ति होती है इस लिए, उपयुक्तता से उस का परिसीमन आवश्यक है. किंतु इस उपयुक्तता का निर्धारण किस के द्वारा होगा, इस प्रश्न के उत्तर में उन्होंने बताया कि यह कार्य कुछ चुने हुए लोग (उपयुक्त रूप से विचारने वाले लोग) करेंगे. किंतु यहाँ एक अंतर्विरोध निहित है. यदि उपयुक्त का निर्णय अन्य लोग करेंगे तो स्वतंत्रता का अधिष्ठान उन्हीं में होगा. इस स्थिति के परिणाम हम रूस में देख चुके हैं. दूसरी ओर डॉ. नंदकिशोर का कहना यह था कि स्वतंत्रता का अर्थ है 'स्व' के रूप में वस्तु की प्रतिष्ठा. इस प्रकार जो भी वस्तु अन्य निरपेक्ष स्थित है वह स्वतंत्र है. किंतु इस का परिणाम यह हुआ कि या तो सभी वस्तुएँ स्वतंत्र हैं या सभी परतंत्र हैं. इस का समाधान उन्होंने यह प्रस्तुत किया कि केवल चैतन्य ही अन्य से निरपेक्ष हो सकता है. इस संदर्भ में उन्होंने पशुओं की स्वतंत्रता की भी चर्चा की.

स्वातंत्र्य की प्रतिष्ठा : समस्या के मूल पर दृष्टिपात करते हुए शल्य जी ने कहा कि स्वतंत्रता के प्रश्न पर अधिकांशतः कारण-कार्य संदर्भ में ही विचार किया गया है—जो कारण-कार्य निबद्ध है वह परतंत्र है और जो अनिर्धारित है वह स्वतंत्र है. किंतु शल्य जी ने इसे अनुपयुक्त बतलाया. उन का कहना था कि अनिर्धारित स्वतंत्र नहीं है. हाइसनवर्ग के परमाणुओं को वह स्वतंत्र नहीं मानते. उन्होंने स्वतंत्रता का अधिष्ठान संरचनात्मक अर्थ में बताया, जो कि कारण-कार्य निरपेक्ष संदर्भ है. उदाहरण के रूप में उन्होंने गणित, भाषा, कला, धर्म और पुराण की चर्चा की. व्यक्ति के स्वातंत्र्य की प्रतिष्ठा उन्होंने अपनी प्रतिभा की संरचना में बतायी, यद्यपि उपर्युक्त संरचनात्मक अर्थों में विचरण करता हुआ व्यक्ति भी स्वतंत्र होता है.

प्रो. चाँदमल ने मुख्य रूप से डॉ. राजेंद्र प्रसाद तथा शल्य जी की आलोचना की. डॉ. प्रसाद की आलोचना करते हुए उन्होंने बताया कि सामाजिक संदर्भ में स्वतंत्रता को देखना उचित है, किंतु उस में स्वतंत्रता की परिभाषा 'चयन की शक्ति' न हो कर 'चयन का अवसर' होना चाहिए. चयन की शक्ति रहते हुए भी अवसर न होने पर स्वतंत्रता नहीं रहती. दूसरा आक्षेप उन्होंने यह किया कि यदि कुछ चुने हुए लोग उपयुक्तता के अधिकारी माने जायेंगे तब किस प्रकार से व्यक्ति निर्णय में स्वतंत्र होगा ? स्वतंत्रता के लिए तो यह आवश्यक है कि ग़लत निर्णय की भी स्वतंत्रता हो. यह बात और है कि हम सब को ठीक निर्णय ही करना चाहिए. श्री शल्य के ऊपर टिप्पणी करते हुए उन्होंने दो आक्षेप किये. एक तो यह कि स्वतंत्रता का अधिष्ठान कर्त्तव्याभिमान को नहीं मान कर ज्ञातृत्वाभिमान को मानना चाहिए. दूसरी आलोचना उन्होंने यह की कि शल्य जी ने केवल गणित आदि विषयों को ही संरचनात्मक अर्थ में कहा है, किंतु सामान्य ज्ञानात्मक स्थितियों में भी संरचनात्मक अर्थ का प्रवेश रहता है. बाद में शल्य जी ने व्यक्तिगत रूप से मुझे बताया कि वास्तव में मेरी कर्त्तव्याभिमान की परिभाषा है कर्त्ता के रूप में आत्मार्थ बोध. गोष्ठी में विश्वविद्यालय के उप-कुलपति डॉ. बी.एन. गांगुली भी उपस्थित थे और उन्होंने इस में अपनी गहरी दिलचस्पी दिखायी. दूसरी गोष्ठी का आयोजन ११ अक्तूबर को हुआ, जिस का विषय था 'तथ्य और मूल्य'. इस गोष्ठी में डॉ. हरसिद्ध जोशी (राजकोट), डॉ. रमाशंकर मिश्र (कानपुर) तथा श्री रघुनाथ गिरि (काशी विद्यापीठ) ने भाग लिया.

डॉ. जोशी का प्रतिपादन मुख्य रूप से यह था—सब तथात्मक निर्णयों में मूल्य निहित रहता है, इस लिए वास्तव में कोई शुद्ध तथ्य नहीं है. डॉ. मिश्र ने उन की आलोचना करते हुए इस के विपरीत मत का प्रतिपादन किया. उन्होंने कहा कि सब मूल्यात्मक निर्णय तथ्याधारित होते हैं. उदाहरण के लिए 'क' अच्छा है, यह निर्णय 'क' संबंधी कुछ तथ्यों पर निर्भर करता है. श्री गिरि का कथन था कि तथ्य और मूल्य में इतना ही संबंध है कि तथ्य पर प्रतिष्ठित न होने पर मूल्य उपयुक्त नहीं होता. उन्होंने मूल्य की परिभाषा 'अनुकूलता' से करते हुए कहा कि कई बार जिन तथ्यों को हम अनुकूल समझते हैं वे वास्तव में अनुकूल नहीं होते. दोनों अवस्थाओं में मूल्यात्मकता तो रहती है किंतु अनुकूलता तथ्य प्रतिष्ठित नहीं होने से तात्त्विक नहीं होती.

दुरूह दायित्व : अधिवेशन के सारे कार्यक्रम पर दृष्टिपात करने पर हम यह कह सकते हैं कि वह अपने अपेक्षित लक्ष्यों को सिद्ध करने में पूर्णतः समर्थ नहीं रहा. परिषद् का कार्य दुरूह है और दायित्वपूर्ण भी. दुरूह इस लिए कि इस के द्वारा ऐसे मंच की स्थापना होनी चाहिए जहाँ हिंदी या अन्य भाषाओं के माध्यम से मौलिक चिंतन का विकास हो. किंतु इसी से इस का दायित्व बढ़ जाता है, क्यों कि इसे हर प्रकार की संकीर्णता से अपने को अलग रखना होगा. कुछ ऐसे उपाय करने होंगे जिन से परिषद् के धर्म-विभाग में हिंदू धर्म ही नहीं इस्लाम, मसीही आदि धर्मों एवं दर्शनों की चर्चा भी हो सके.

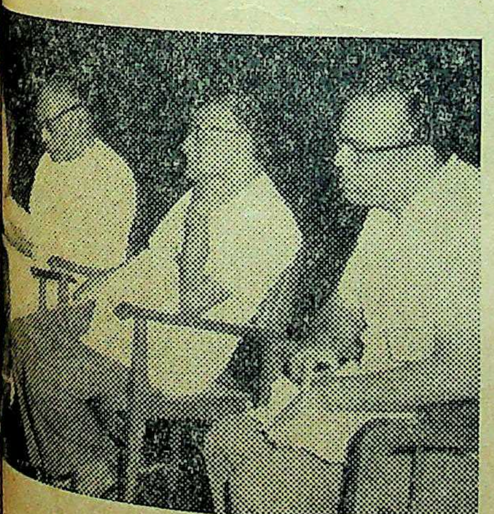

(बायें से) डॉ० दौलतसिंह कोठारी, हरिमोहन झा, रमेशचंद्र मजुमदार, रामचंद्र पांडे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री विशालम चिट फण्ड लि०

पंजीकृत कार्यालय—तिरूनलवेली–६ फोन : २७४

केंद्रीय कार्यालय तथा इन्वेस्टमेंट सेंटर

स्थान :

स्थापित : ६-१-१९४७ ६१ बी, उस्मान रोड, टी. नगर, मद्रास-१७ फोन : ४४५३२

दि० ३१-३-६८ को (लेखा परीक्षा के आधार पर)

अधिकृत पूँजी रु. ५ लाख कुल परिसम्पत्तियां रु. १.५२ करोड़ से अधिक

चिटों में कार्यरत निधि रु. ३ करोड़

प्रत्याभावित ऋण ९ १/२% ब्याज तक लिए जाते हैं

रिजर्व बैंक आफ इंडिया के, गैर-बेंकिंग कम्पनीज के विभाग, कलकत्ता द्वारा जारी की गयी, विज्ञप्ति संख्या डी. एन. बी. सी. १/ई. डी. (एस)-६६ दिनांक २९ अक्तूबर १९६६ की उप-धारा (X) परिच्छेद २ (१) (एफ) के अनुसार।

अवधि	रु० ३०० से ५०००	रु० ५००० से अधिक
एक वर्ष	८ १/२ %	९%
दो वर्ष	९%	९ १/२ %

अर्ध वार्षिक ब्याज के चैक जारी किये जाते हैं तथा जो हमारी किसी भी शाखा से भुनाए जा सकते हैं

व्यवसाय का प्रकार

मासिक, त्रै-मासिक तथा दैनिक समूहों के चिट संचालन करते हैं। १०००० रु. की लागत तक २६ चिटें हमारे समस्त कार्यालयों में संचालित हैं.

गत तीन वर्षों के कार्यकारी परिणाम तथा घोषित लाभांश

वर्ष	लाभ करनिर्धारण से पूर्व	लाभ कर निर्धारण के पश्चात	घोषित लाभांश
१९६४-६५	४१८२५-२०	१४२९५-७०	१२ प्र. श.
१९६५-६६	६१९०८-७२	२५१७०-७२	१३ प्र. श.
१९६६-६७	७९६८६-४१	२७६८६-४१	१६ प्र. श.

समवाय का प्रबन्ध

प्रबन्ध निदेशक श्री ए. आर. रामास्वामी

निदेशक :

श्री एम. ए. एम. गोविंदन चेट्टियार

श्रीमती आर. एम. मैय्यामयी आछी

केन्द्रीय कार्यालय व्यवस्थापक

श्री के. ए. राम बी. ए. बी. एल.

दि. ३१-३—१९६७ को देयताएँ

प्रदत्त पूंजी तथा स्वतंत्र आरक्षित राशि	१,३४,४२४
निश्चित निक्षिप्तयां	७,८०,३६४
अंशदाताओं की ,,	१,००,५००
प्रत्याभावित ऋण	१,६९,२७६
अस्थायी ऋण	७०,१५५
चिट तथा अन्य देयताएँ	१,१०,८३,४२८
योग	१२३,३८,१४७

२५००० रु. की चिट का नया 'एम' ग्रुप। १२ क्लिडर स्ट्रीट, त्रिरुचिरापल्ली : फोन : ४२७६ तथा ४३, विश्वनाथ राव रोड, माधव नगर, बंगलौर-१ फोन : ७५९५५ पर चालू है।

दोनों स्थानों पर चिट निकाली जाती हैं

लेखा परीक्षित संतुलन पत्र आवेदन करने पर प्राप्य है

कि० अ० राम बी. ए. बी. एल.
केन्द्रीय कार्यालय व्यवस्थापक
अनुमति तारीख : २१–५–६८

ए. आर. रामास्वामी, प्रबन्ध निदेशक

Paramount

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ बात है कि हस्ती मिटती नहीं हमारी

सर्वोदय नेता **श्री जयप्रकाश नारायण** की इस बात पर दो मत नहीं हो सकते कि गांधी जी ने इस देश की नब्ज़ को जितना समझा था और किसी ने नहीं समझा. हाँ, इस बात पर मत-भेद हो सकता है कि गांधी जी को कितने लोगों ने समझा ! कम-से-कम उन लोगों ने तो समझा ही होगा जो देश-विदेश में गांधी शताब्दी-समारोह का आयोजन कर रहे हैं ? लेकिन सर्वोदय नेता का दावा है कि इस महापुरुष को किसी ने नहीं समझा. 'उन के अत्यंत निकट के लोग भी उन्हें नहीं समझ सके, हमारी तो बात ही जुदा है. आज भी हम से यह प्रश्न किया जाता है कि हम राजनीति से क्यों अलग हैं ? यह प्रश्न इस बात का सबूत है कि लोग गांधी जी को अब तक नहीं समझ पा रहे.'

श्री जयप्रकाश नारायण ने कलकत्ता स्थित **दिनमान** के प्रतिनिधि को बताया कि गांधी जी देश में जो कुछ चाहते थे उस के विपरीत हुआ और निरंतर हो रहा है. आज पूरा देश दिशा-हीन है और इस दिशाहीनता तथा अनिश्चितता से हर देश-भक्त चिंतित है. लेकिन चिंता की दिशा भी निराशाजनक है. यह चिंता बातों तक या दूसरों के मत्थे दोष मढ़ने तक सीमित है. यह कितनी निराशाजनक स्थिति है कि आज लोगों में यह धारणा घर कर गयी है कि उन का काम केवल कमाना-खाना है और देश का निर्माण नेताओं का काम है. गांधी जी एक दूर-दर्शी महात्मा थे. उन्होंने बहुत पहले ही इस स्थिति को समझ लिया था. आखिर गांधी जी में क्या कमी थी कि जिस से वह या प्रधानमंत्री और कुछ नहीं हो सकते थे ? वह जो भी पद लेना चाहते आसानी से ले सकते थे. लेकिन उन्होंने कोई पद ग्रहण करने की इच्छा नहीं प्रकट की ! क्यों ? क्यों कि उन का विश्वास था कि किसी पद पर रह कर लोक-कल्याण के दायित्व को नहीं निभाया जा सकता. वह क़ानून की असेंबली में झांकने तक नहीं गये. जिस समय दिल्ली में क़ानूनविद् संविधान बना रहे थे गांधी जी नोआखाली में लोकमत तैयार कर रहे थे.

उल्टी प्रक्रिया : सर्वोदय नेता के अनुसार विकास या सुधार की सारी प्रक्रिया ही उल्टी है ! लोकतंत्र में डंडे से सर नहीं तोड़ा जाता, प्रेम और सहानुभूति से सर में घुसा जाता है. इस के लिए क़ानून की नहीं हृदय-परिवर्तन की आवश्यकता है. पहले हृदय-परिवर्तन होना चाहिए, उस के बाद क़ानून बनाना चाहिए—क़ानून को हृदय-परिवर्तन और समाज-सुधार का अनुकरण करना चाहिए ! आज स्थिति ठीक इस के विपरीत है ! पहले क़ानून बनता है और फिर क़ानून से समाज-सुधार का काम शुरू किया जाता है. परिणामतः उपलब्धि शून्य होती है. क़ानून से छुआछूत को समाप्त कर दिया गया, लेकिन वह हर गाँव में पूर्ववत् विद्यमान है. इस लिए समाज को बनाना है तो पहले आदमी को बनाना होगा. हृदय को पहले छुआ जाना चाहिए, फिर मस्तिष्क को. क़ानून में किये जा रहे सुधार के सिलसिले में एक और उदाहरण राष्ट्रीयकरण का लिया जा सकता है. राष्ट्रीकृत और ग़ैर-राष्ट्रीकृत मज़दूरों के काम-काज या रुख में है कोई अंतर ? अगर नहीं तो राष्ट्रीयकरण से क्या फ़ायदा हुआ ? क्या इस से साफ़ ज़ाहिर नहीं होता कि राष्ट्रीयकरण राज्यवाद और अफ़सरवाद के सिवाय और कुछ नहीं है ? जिस समाजवाद की स्थापना की जा रही है वह गांधी जी का समाजवाद नहीं, लालफ़ीताशाही का समाजवाद है.

न तानाशाही न साम्यवाद : श्री जयप्रकाश नारायण ने प्रजातांत्रिक शासन-व्यवस्था में अपनी अखंड आस्था व्यक्त करते हुए इस धारणा को बिल्कुल निराधार बताया कि देश की वर्तमान समस्याओं का समाधान तानाशाह या साम्यवाद है. आपने कहा तानाशाही और साम्यवाद किसी समस्या का समाधान नहीं हैं. यह धारणा भी ग़लत है कि साम्यवादी या तानाशाही वाले देश शीघ्र प्रगति कर लेते हैं. यूरोप में इंग्लैंड सब से पिछड़ा देश है. उस से रूस का मुक़ाबला कर लीजिये, जहाँ पिछले ५१ वर्ष से तानाशाही जारी है. रूस आज तक अपनी कृषि या रोटी की समस्या नहीं हल कर सका. इंदोनेसिया में भारी प्राकृतिक संपदा है. लेकिन उस की कंगाली हमारे सामने कारण सहित स्पष्ट है. अय्यूब ख़ाँ ने कौन-सा तीर मार लिया ? अगर पंजाब (पाकिस्तान) में कुछ हुआ तो इस लिए नहीं कि लोगों पर अय्यूब ख़ाँ का जादू चल गया, इस लिए कि वहाँ के लोग मेहनती हैं. ईराक़ में शाह फ़ैज़ल के बाद एक-पर-एक कई तानाशाह बदल चुके हैं. नासिर के मिस्र की हालत भी किसी से छिपी नहीं है. बर्मा में ने विन ने क्या किया? यही हालत दूसरे तानाशाही के शिकार देशों की है.

साम्यवाद बेनक़ाब हो चुका है. साम्यवा-दियों ने देश की जनता के लिए कुछ नहीं किया. हम सर्वोदय आंदोलन के अंतर्गत लाखों एकड़ ज़मीन भूमिहीनों में बाँट चुके हैं. अकेले बिहार में ३ लाख ४० हज़ार एकड़ भूमि का वितरण किया गया है, जब कि सरकारी हिसाब से अधिकतम जोत निर्धारित करने के बाद राज्य में वितरण योग्य ज़मीन साढ़े सात हज़ार एकड़ से ज़्यादा नहीं होगी. उस का बटवारा कब, कैसे होगा, इस का कुछ ठीक नहीं. लेकिन कम्युनिस्टों ने तेलंगाना से नक्सलबाड़ी तक कितनी ज़मीन बाँटी है ? 'क्रांतिकारियों' ने एक इंच भी ज़मीन किसी को नहीं दी. भारत में हिंसात्मक क्रांति का कोई भविष्य नहीं है. नक्सलबाड़ी वाले भी कुछ नहीं बिगाड़ सकते. बाहरी मदद से कम्युनिस्ट तानाशाही लादने में भी सफल नहीं हो सकते. भारत बहुत टूट चुका है, फिर भी अभी इतना नहीं टूटा है कि किसी बाहरी हस्तक्षेप के सामने घुटने टेक दे ! रूस या चीन ने हस्तक्षेप की कोशिश की, तो युद्ध होगा, क्यों कि भारत रूस या चीन किसी की गुलामी बरदाश्त नहीं कर सकता. वारसाउ संधि के देशों के साथ चेकोस्लोवाकिया पर हमला कर रूस ने अपने मुख पर लगा सह-अस्तित्व और अहस्तक्षेप का मुखौटा उतार फेंका है. ब्रिटेन, इटली, फ्रांस आदि हर देश की कम्युनिस्ट पार्टी ने रूस की इस हरकत की निंदा की है. लेकिन भारतीय कम्युनिस्ट इस तरह ख़ामोश पड़े रहे जैसे कहीं कुछ हुआ ही नहीं. उन्हें चुनाव लड़ना है, रूस से सहायता लेनी है, जनता के सामने रूस का उदाहरण पेश करना है, फिर वह कैसे रूस की निंदा करते ?

राजशक्ति बनाम जनशक्ति : इस प्रश्न के उत्तर में कि आज की समस्याओं का समाधान क्या है, श्री जयप्रकाश नारायण ने **दिनमान** को बताया कि गांधी जी के विचारों के अनुसार जब तक कठिन परिश्रम और त्याग के लिए जनता को तैयार नहीं किया जायेगा हमारी समस्याओं का समाधान मुश्किल है. हमारी योजनाओं की असफलता का रहस्य भी यही है. आज की विकास-योजनाएँ जनता के उपक्रम से कटी हुई हैं. आज सर्वत्र राजशक्ति का बोल-बाला है. हमें जनशक्ति की वापसी के लिए संघर्ष करना है. आज़ादी के बाद एक ऐसे दल की आवश्यकता थी जिस के सामने नया उद्देश्य और नया लक्ष्य रहा होता. ख़ैर, ऐसा कुछ नहीं हुआ और दिशाहीनता को दिशा मिली. उस के नतीजे आज सामने हैं. यह तो कहिए कि हमारी व्यवस्था—आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था की जड़ें इतनी गहरे तक पैठी हुई हैं कि सदियों की ग़ुलामी और अव्य-वस्था के बावजूद किसी न किसी रूप में वह बरक़रार है. इस परिप्रेक्ष्य में हमें इक़बाल का शेर याद आता है : 'कुछ बात है कि हस्ती मिटती नहीं हमारी'.

सर्वोदय क्या है ? अंत में सर्वोदय नेता ने इस ग़लतफ़हमी का निराकरण किया कि सर्वोदय धनी-ग़रीब दोनों को एक साथ ख़ुश रखने का ढकोसला है. सर्वोदय में शोषण को कोई स्थान नहीं है और बिना शोषण के धन-संग्रह संभव नहीं. गांधी जी ने पूँजीपतियों से कहा था : किस ने कहा कि यह संपत्ति तुम्हारी है ? यह धरोहर है, अमानत है, थाती है, तुम इस के मालिक नहीं. तुम न्यासी बनो ! गांधी जी की न्यासित्व की (ट्रस्टीशिप) संकल्पना निराधार नहीं थी. इसी से आर्थिक और सामाजिक अव्यवस्था का निराकरण संभव है.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोबेल पुरस्कार : एक दुखद पहलू

भारत के डॉ० हरगोविंद खुराना को नोबेल पुरस्कार दिये जाने पर देश में उल्लास का अनुभव होना स्वाभाविक है. इतने बड़े पुरस्कार से जब किसी भी एक व्यक्ति को सम्मानित किया जाता है तो उस के अन्य देशवासी भी उस अभिनंदन में स्वतः भागीदार बन जाते हैं. लेकिन डॉ० खुराना को नोबेल पुरस्कार दिये जाने के समाचार के साथ-साथ उन के बारे में जो अन्य विवरण छपा है उस से हमारे राष्ट्रीय जीवन का एक बहुत-ही दुखद पहलू फिर से प्रकाश में आया है.

कहा जाता है कि डॉ० खुराना भारत छोड़ने पर इस लिए मजबूर हुए कि उन्हें यहाँ कोई उपयुक्त नौकरी नहीं मिल सकी. ऐसी परिस्थितियों में कोई भी व्यक्ति निराश हो कर किसी अन्य देश की ओर मुँह मोड़ ले तो आश्चर्य क्या ?

बहुत दिनों से नयी दिल्ली में इस सवाल पर विचार किया जा रहा है कि देश के सीखे हुए और काबिल लोगों को दूसरे देशों में जाने से कैसे रोका जाए. आज भारत का निर्माण करने के लिए तकनीकी ज्ञान में दक्ष लोगों की बेहद ज़रूरत है. ऐसे में जब कोई ज्ञानवान व्यक्ति भारत छोड़ कर किसी दूसरे देश में जा बसता है तो इस में उस के अपने देश का तो घाटा ही है.

समस्या गंभीर है इस से इनकार नहीं किया जा सकता. लेकिन इस को हल करने के लिए जो क़दम ज़रूरी हैं वे नहीं उठाये गये. समस्या के प्रति केवल चिंता व्यक्त कर देने से तो समस्या हल हो नहीं जाती. उस के मूल कारणों का पहले निदान और फिर उपचार होना चाहिए. आखिर सीखे हुए लोग अपना देश छोड़ कर बाहर जाते क्यों हैं ? यह कहना कि इस के पीछे केवल पैसे अथवा भौतिक सुखों का मोह है, सत्य के एक बहुत बड़े हिस्से से आँखें मूँद लेना होगा. यह सही है कि हर व्यक्ति के लिए अपनी योग्यता और ज़रूरत के मुताबिक कुछ न कुछ भौतिक सुविधाएँ भी आवश्यक होती हैं. हाँ किसी ने जीवन से संन्यास ही ले लिया हो तो उस की बात और है. लेकिन भारतीय वैज्ञानिकों के देश छोड़ कर जाने के पीछे भौतिक सुखों के साथ-साथ एक बड़ा कारण यह है कि जिस काम में वे लगे हुए हैं उस के लिए उन्हें यहाँ आवश्यक साधन उपलब्ध नहीं हैं.

यहाँ पर भी केवल मशीनों और खोजने के लिए अन्य आवश्यक सामग्री का ही सवाल नहीं. देश में उस वातावरण का स्पष्ट अभाव है जिस में कोई वैज्ञानिक सत्य की खोज में एकाग्र हो कर लग सकता है. इतना ही नहीं यहाँ बहुत-सी ऐसी बातें भी होती हैं जिस से किसी वैज्ञानिक अथवा इंजीनियर के काम में सहायता मिलने के बजाय उस के रास्ते में तरह-तरह की अड़चनें आती हैं.

इन परिस्थितियों में यदि कोई वैज्ञानिक भारत में रह भी जाए तो हो सकता है कि वह भौतिक सुख से वंचित रहने के साथ-साथ उस उद्देश्य को भी प्राप्त करने में असफल रहे जिसे उस ने अपना जीवन अर्पित कर रखा है.

वैज्ञानिकों को अपना काम और अपनी खोज जारी रखने के लिए हम उचित सुविधाएँ तो उपलब्ध कराते नहीं और न ही ऐसे वातावरण का निर्माण करने का कोई प्रयास करते हैं जिस में विज्ञान पनप सके और जब कोई वैज्ञानिक यहाँ से विदेश चला जाता है तो उसे कोसने लगते हैं. नेता लोग देश प्रेम के नाम पर थोथी अपीलें करते रहते हैं नतीजा कुछ नहीं निकलता.

कुछ साल पहले दिल्ली के पूसा इंस्टीट्यूट में एक नौजवान वैज्ञानिक ने इस लिए आत्महत्या कर ली थी कि उसके आगे बढ़ने में तरह-तरह की रुकावटें डाली जा रही थीं. तब लोकसभा में इस की बड़ी चर्चा हुई थी और लगभग सभी राजनैतिक पार्टियों की ओर से ग्लानि और शर्म का इज़हार किया गया था. लेकिन उस के बाद भी स्थिति में कोई सुधार नहीं दीखता.

दो-टूक बात

इंद्रलाल

इंग्लैंड की कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी में कुछ साल काम करने के बाद डॉ० खुराना भारत आये और उन्होंने नौकरी के लिए जगह-जगह अर्ज़ियाँ देनी शुरू कीं. लेकिन उन का भी वही हश्र हुआ जो यहाँ दूसरी अर्ज़ियों का होता है. तंग आ कर डॉ० खुराना विदेश चले गये और अभी दो साल पहले उन्होंने अमेरिकी नागरिकता स्वीकार कर ली.

कहा जा सकता है कि भारत में अभी किसी भी वैज्ञानिक अथवा तकनीकी विशेषज्ञ को उतनी तनख्वाह और सुविधाएँ नहीं दी जा सकतीं जितनी अमेरिका में उपलब्ध हैं. इस के साथ-साथ यहाँ अभी खोज के काम के लिए उपयुक्त साधनों का भी अभाव है. लेकिन इन कठिनाइयों के बावजूद शायद कई देशभक्त भौतिक कष्ट सह कर भी भारत में काम करने को तैयार होंगे, बशर्ते कि उन की टाँग न खींची जाए.

मुसीबत यह है कि हमारे यहाँ विज्ञान के क्षेत्र में भी हमारे चरित्र की वही विकृतियाँ आड़े आती हैं जो अन्य क्षेत्रों में हमारी प्रगति में बाधा डाल रही हैं. कोई आदमी अच्छा काम करे, बजाय उसे प्रोत्साहन करने के हम लोग उस से डाह करने लगते हैं. उस के रास्ते में तरह-तरह की रुकावटें डाली जाती हैं. आदमी इतना हताश हो जाता है कि या तो वह हथियार डाल देता है और या फिर जहाँ सींग समाये उधर ही भाग निकलता है. इस में न रुपये-पैसे का सवाल है और न वैज्ञानिक खोज के लिए सामग्री के अभाव का.

हो सकता है कि हमारे इस ईर्षालु आचरण के पीछे जो कारण हैं वे भी मूलतः आर्थिक हों. लेकिन इस के साथ-साथ बहुत से अन्य तत्त्वों ने भी मिल कर हमारे उस चरित्र का निर्माण किया है जो एक-दूसरे को आगे बढ़ाने के बजाय एक-दूसरे को पीछे ढकेलने की प्रवृत्ति को जन्म देते हैं. अच्छा काम करने वाले की पीठ केवल वही लोग ठोंकते हैं जो या तो उस के क्षेत्र से बाहर हैं अथवा उन की उस से कोई व्यावहारिक प्रतिद्वंद्विता नहीं. लेकिन साथ-साथ रह कर, एक ही क्षेत्र में काम करने वाले लोग अपने क़ाबिल सहयोगी की सराहना करें और उसे आगे बढ़ायें, ऐसा यहाँ पर ज़रा मुश्किल से ही होता है.

समस्या काफ़ी जटिल है लेकिन यदि जीवन के प्रति अपने दृष्टिकोण में परिवर्तन ला कर उसे अधिक स्वस्थ बनाने के लिए हम ने कोई क़दम नहीं उठाए तो प्रगति की दिशा में होने वाले हमारे सभी प्रयास बहुत धीमे पड़ जायेंगे. इस बीमारी का इलाज आर्थिक स्तर पर तो करना ही होगा इस के साथ-साथ समाजशास्त्रियों, मनोवैज्ञानिकों, शिक्षाविदों और विचारकों को भी इस दिशा में सोचना होगा.

स्थूल रूप से देखा जाए तो हमारे इस तरह के व्यवहार का एक कारण अवसर का अभाव है. जब प्रगति के लिए अधिक मौक़े मिलने लगेंगे और आगे बढ़ने के नये-नये मार्ग प्रशस्त होंगे तो डाह भी कम होने लगेगी. और हम अपने पड़ोसी की खुशी में भी शामिल हो सकेंगे.

लेकिन जब तक हम इन बाहरी परिस्थितियों में सुधार नहीं कर पाते तब तक हमें अपने दृष्टिकोण को बदलने के लिए कुछ चेतन प्रयास तो करना ही चाहिए. नहीं तो होगा यह कि सीखे हुए लोग इस देश में इस लिए नहीं रहेंगे कि उन्हें यहाँ उपयुक्त वातावरण नहीं मिलता और यदि वे अन्य देशों को चले गये तो उस दिन के आने में और भी देर हो जायेगी जिस दिन हम लोगों को प्रगति के अधिक अवसर प्रदान कर सकें. यह एक ऐसा विषम कुचक्र है जिस को किसी न किसी जगह से तोड़ना ही होगा.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कविता लिखने की क़ीमत : राजदूत का त्यागपत्र

भारत में मेक्सिको के कवि-राजदूत ऑक्टेवियो पॉज़ के त्यागपत्र ने मेक्सिको, बल्कि बहुत हद तक स्वयं लोकतंत्र के संकट को बदले हुए संदर्भों में रख दिया है. १९ अक्तूबर को एक अंतरराष्ट्रीय समाचार एजेंसी ने मेक्सिको से यह समाचार दिया कि मेक्सिको की सरकार ने श्री ऑक्टेवियो पॉज़ को विदेश सेवा से 'बर्ख़ास्त' कर दिया है. दिल्ली में यह समाचार उस अंतरराष्ट्रीय समाचार एजेंसी के प्रतिनिधि ने श्री पॉज़ को दिया और उन से पूछा कि क्या आप इस पर कोई टिप्पणी करना पसंद करेंगे. श्री पॉज़ ने कहा कि मेरी 'बर्ख़ास्तगी' का सवाल ही नहीं उठता क्योंकि मैंने ख़ुद इस्तीफ़ा दिया था और मैं ज़रूर इस पर अपना स्पष्टीकरण देना चाहूँगा.

इस के बाद श्री ऑक्टेवियो पॉज़ विदेशमंत्री से मिले और उन्होंने उन से कहा कि मैं अपने त्यागपत्र को ले कर विवाद में नहीं पड़ना चाहता था. मगर मेक्सिको में जारी की गयी सरकारी विज्ञप्ति ने मुझे विवाद में डाल दिया है, क्योंकि मेरे संबंध में भारत में भ्रामक समाचार छप सकते हैं इस लिए मुझे यहाँ अपना स्पष्टीकरण देना होगा. इस के बाद श्री पॉज़ ने संवाददाताओं को अपने निवासस्थान पर बुलाया और उन्हें बताया कि **'मैं ने ४ अक्तूबर को मेक्सिको सरकार को छात्र-नीति के विरोध में अपना त्यागपत्र भेज दिया था और इस उम्मीद में था कि मेरा त्यागपत्र मंज़ूर कर लिया जायेगा. लेकिन मुझे यह देख कर हैरानी हुई कि मेरे विषय में एक भ्रामक विज्ञप्ति जारी की गयी है. जहाँ तक मेरे और मेक्सिको सरकार के राजनैतिक संबंधों का सवाल है मुझ से कभी भी त्यागपत्र देने के लिए नहीं कहा गया; बल्कि इस के विपरीत अपनी सरकार से मेरे संबंध हमेशा अच्छे रहे हैं. लेकिन पिछले दिनों मेक्सिको में छात्रों के दमन के लिए विश्वविद्यालय के अहाते में सैनिकों को जिस तरह भेजा गया मैं उस से क्षुब्ध था और मेरे सामने एकमात्र नैतिक विकल्प इस्तीफ़ा रह गया था.'**

श्री ऑक्टेवियो पॉज़ के इस्तीफ़े की एक अंतंकथा है. अक्तूबर के पहले हफ़्ते में उन्होंने अपने कुछ दोस्तों और इस संवाददाता को बताया कि मैंने मेक्सिको की विदेश सेवा से त्यागपत्र दे दिया है क्योंकि छात्र-आंदोलन का फ़ौजी दमन लोकतंत्र की परंपराओं के विरुद्ध है. लेकिन श्री पॉज़ का आग्रह था कि यह समाचार अभी प्रकाशित न किया जाये क्यों कि इस से विवाद पैदा होगा जब कि मैं चाहता यह हूँ कि मैं जिस चुप्पी के साथ भारत आया था उसी चुप्पी के साथ भारत से विदाई ले सकूँ. श्री पॉज़ के आग्रह पर यह समाचार प्रकाशित नहीं किया गया.

श्री पॉज़ की मेक्सिको में कवि के रूप में तो असाधारण प्रतिष्ठा थी ही, विदेश सेवा में भी वह अनुभवी अधिकारी के रूप में जाने जाते थे. अतः अक्तूबर के दूसरे सप्ताह में मेक्सिको के विदेशमंत्रालय में उन के दोस्तों ने उन्हें लिखा कि वह अपना इस्तीफ़ा वापस ले लें. वह सरकार की छात्र-नीति से असहमत रहते हुए भी अपने पद पर बने रह सकते हैं. लेकिन श्री पॉज़ का कहना था कि यह अपने आप में एक नैतिक असंगति होगी कि मैं जिस सरकार की छात्र-नीति का विरोधी हूँ उसी सरकार का कर्मचारी बना रहूँ. मुझे यह समझौता पसंद नहीं. और उन्होंने अपना इस्तीफ़ा वापस नहीं लिया.

इसी बीच उन्होंने मेक्सिको में 'ओलिंपिक समिति' को एक कविता भेजी जो अपनी स्थूल परिणतियों में छात्र-आंदोलन का समर्थन करती हुई लोकतंत्र पर फ़ौजी प्रहार की निंदा करती थी. 'ओलिंपिक समिति' ने कुछ महीने पहले उन से यह आग्रह किया था कि वह 'ओलिंपिक' के दौरान एक काव्य-समारोह में हिस्सा लें. इस समारोह के लिए ब्रिटेन के रॉबर्ट ग्रेव्स, सोवियत रूस के यूजीन एव्तिशेंको और इटली के मोंताली को आमंत्रित किया गया था. श्री पॉज़ ने दो कारणों से यह आमंत्रण स्वीकार नहीं किया था : एक तो इस लिए कि इस अवसर पर उन का मेक्सिको आना संभव नहीं होगा, दूसरा इस लिए कि 'खेल-कूद' जैसे विषय पर या किसी भी दिये गये विषय पर कविता लिखना मेरे लिए मुमकिन नहीं है. लेकिन अपना त्यागपत्र दे चुकने के बाद उन्होंने इस पर पुनर्विचार किया और एक दूसरी कविता, जो कि छात्र-आकांक्षा को प्रतिबिंबित करती थी, लिख कर समिति को भेजी.

श्री पॉज़ ने अपनी बातचीत के दौरान इस संवाददाता को बताया कि जहाँ तक विदेश-मंत्रालय का प्रश्न है उसे इस कविता पर विशेष आपत्ति थी. लेकिन उन्हें मेक्सिको के प्रेजिडेंट ने इस कविता पर आपत्ति करते हुए मेरे विरुद्ध कार्रवाई करने का आदेश दिया. ओलिंपिक समिति' को यह कविता प्राप्त होने के कुछ ही रोज़ पहले मेक्सिको के छात्र अपने प्रदर्शनों के दौरान श्री ऑक्टेवियो पॉज़ की कुछ प्रख्यात कविताओं के उद्धरणों को अपने नारों की तरह स्वीकार कर चुके थे. उन के प्रख्यात ग्रंथ 'अकेलेपन का गुहालोक' को मुहावरा बनाते हुए छात्रों ने अपने पोस्टरों में बड़े-बड़े हरफ़ों में लिख रखा था 'हम यहां से

दिनमान
समाचार - साप्ताहिक

"राष्ट्र की भाषा में राष्ट्र का आह्वान"

भाग ४ — २७ अक्तूबर, १९६८
अंक ३३ — ५ कार्त्तिक, १८९०

*

इस अंक में

विशेष रिपोर्ट — ११

*

मत और सम्मत — ३
पिछला सप्ताह — ४
पत्रकार-संसद् — ५
दो-टूक बात : नोबेल पुरस्कार — १०
अंतर्धारा — १६
परचून — ४६

*

राष्ट्रीय समाचार — १३
प्रदेशों के समाचार — १९
विश्व के समाचार — ३४
समाचार-भूमि : ब्रिटेन — ३२
खेल और खिलाड़ी : ओलिंपिक — ३०

*

दर्शन : अखिल भारतीय दर्शन परिषद् — ६
भेंट-वार्त्ता : जयप्रकाश नारायण — ९
छात्र-असंतोष — १८
सर्वेक्षण : आयोजना — २४
नोबेल पुरस्कार : विज्ञान और साहित्य — २७
युवा-जगत् : ९वाँ विश्व युवक समारोह — २९
संदर्भ : जनगणना — ३९
विज्ञान : अपोलो-७ — ४०
कला : काठ की खुदाई; मूर्त्ति शिल्प — ४१
छाया-चित्र — ४२
संगीत : नृत्य-संगीत उत्सव — ४३
साहित्य — ४४

*

आवरण चित्र : प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी
फ़ोटो : परमेश्वरी दयाल

*

संपादक
सच्चिदानंद वात्स्यायन

*

दिनमान

टाइम्स ऑफ़ इंडिया प्रकाशन
७, बहादुरशाह ज़फ़र मार्ग, नयी दिल्ली

चन्दे से दर	एजेंट से	डाक से
वार्षिक	२६.००	३१.५०
अर्द्धवार्षिक	१३.००	१५.७५
त्रैमासिक	६.५०	८.००
एक प्रति	००.५०	००.६०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो कर अपने अकेलेपन के गुहालोक में जा रहे हैं.'

इस सारी स्थिति से मेक्सिको का सत्ता-प्रतिष्ठान श्री पॉज़ को ले कर उलझन में था. जब श्री पॉज़ का इस्तीफ़ा मेक्सिको पहुँचा तब सत्ता-प्रतिष्ठान को एक और धक्का पहुँचा. उसे और भी धराशायी किया श्री पॉज़ की उस कविता ने जिस की स्थूल परिणति छात्र-आंदोलन का समर्थन करती थी.

मेक्सिको की सांस्कृतिक परंपराएँ उदार हैं, इस लिए मेक्सिको सरकार उन की कविता पर साफ़-साफ़ आपत्ति नहीं कर सकती थी. **अतः श्री पॉज़ पर यह आरोप लगाया गया कि 'उन्होंने विदेशी समाचारपत्रों में मेक्सिको की स्थिति के बारे में प्रकाशित भ्रामक समाचारों पर आधारित 'वक्तव्य' दिया है जो कि हमारे हितों के विरुद्ध है.'** मेक्सिको सरकार का इशारा उन की ओलिंपिक' के लिए लिखी गयी कविता की ओर था.

श्री पॉज़ ने टिप्पणी करते हुए इस संवाददाता से कहा कि मैंने कोई वक्तव्य नहीं दिया है. मैं ने कविता लिखी है. लेकिन यदि मेरी यह कविता कविता न हो कर वक्तव्य है तो भी यह वक्तव्य मैंने अपने त्यागपत्र के बाद दिया है और दूसरे मेक्सिको सरकार के पास यह कहने का कोई आधार नहीं है कि मैं ने भ्रामक समाचारों की बुनियाद पर वक्तव्य दिया है. मेक्सिको की स्थिति के बारे में मेरी जानकारी का आधार संसार और भारत के समाचारपत्र हैं. मेरे पास यह मानने का कोई आधार नहीं है कि इन समाचारपत्रों में मेक्सिको के विषय में ग़लत या झूठी बातें कही गयी हैं.

श्री पॉज़ के त्यागपत्र की अंतरराष्ट्रीय प्रतिक्रियाएँ शुरू हो गयी हैं. उन के इस्तीफ़े ने संसार के बुद्धिजीवियों और लेखकों के सामने यह प्रश्न उपस्थित कर दिया है कि लेखक के सामने कौन-सा रास्ता है. क्या वह अपने विवेक के विरुद्ध व्यवस्था का समर्थन करे या कि अपने विवेक की रक्षा के लिए व्यवस्था के विरुद्ध आये ? उन के त्यागपत्र ने लोकतंत्र के भीतरी संकट को भी उभार दिया है. अब तक केवल साम्यवादी देशों में विचार-स्वाधीनता का साफ़-साफ़ दमन किया जाता रहा है. मेक्सिको पहला देश है जिसने कि पिछले अनेक वर्षों में पहली बार कविता लिखने पर एक कवि को उस के पद से बर्खास्त किया है. विडंबना यह है कि मेक्सिको की परंपराएँ, जैसा कि इतिहासकार आर्नल्ड टायनबी ने अभी हाल में अपने एक वक्तव्य में कहा है, उदार और लोकतांत्रिक रही हैं. **श्री ऑक्टेवियो पॉज़ ने भी अपने त्यागपत्र के पहले अपने एक पत्र में विदेशमंत्रालय को यह लिखा था कि आज लोकतंत्र के संकट की ऐसी घड़ी में यह और भी जरूरी हो गया है कि मेक्सिको की उदार परंपराओं को क़ायम रखा जाये. यदि अपने शासन को बनाये रखने के लिए फ़ौज का सहारा जरूरी हो गया तो यह मान लेना चाहिए कि लोकतंत्र की अंतिम घड़ी नजदीक है.'**

श्री ऑक्टेवियो पॉज़ अगले हफ़्ते भारत से ६ साल के बाद विदा ले रहे हैं. यह पूछने पर कि 'आगे क्या इरादा है ?' उन्होंने बताया कि 'तत्काल मैं भारत में लिखी गयी अपनी कविताओं की पांडुलिपि व्यवस्थित करूँगा. इसी लिए मैं हवाई जहाज से न जा कर समुद्री जहाज से पेरिस जा रहा हूँ. पेरिस में मुझे सोरबोर्न विश्वविद्यालय से अतिथि प्रोफ़ेसर का आमंत्रण मिला है. लेकिन अभी यह तय नहीं है कि मैं पेरिस में रहूँगा ही. मेरी इच्छा कुछ समय तक इंग्लैंड में रहने की है. इस बीच लगता है अंग्रेज़ औरों से ज़्यादा सभ्य हो गये हैं.'

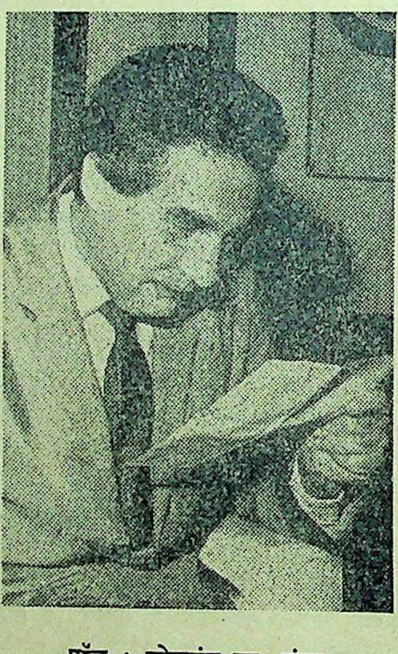

पॉज़ : लोकतंत्र का संकट

५१ वर्षीय श्री ऑक्टेवियो पॉज़ १९६२ में भारत आये थे. उस के पहले वह जापान और पेरिस में मेक्सिको की विदेश सेवा में रह चुके थे. भारत के साथ श्री पॉज़ की अनेक मधुर और आत्मीय स्मृतियाँ और सांस्कृतिक इच्छाएँ जुड़ी हुई हैं. अभी तीन वर्ष पहले श्री पॉज़ ने दिल्ली में **मेरी जो** नामक फ्रेंच महिला से विवाह किया था. पहली पत्नी से श्री पॉज़ की पुत्री मेक्सिको में अध्ययन करती हैं.

१३ पृथ्वीराज रोड पर श्री पॉज़ का निवासस्थान दिल्ली के कलाकारों और कवियों का केंद्र हो गया था. अनेक नवयुवक लेखक श्री पॉज़ के संपर्क में आये और उन से प्रभावित हुए. श्री ऑक्टेवियो पॉज़ ने भारत में रहते हुए देश की दूर-दूर यात्राएँ कीं और यहाँ की कला का अध्ययन किया. उन्होंने भारत की लोककला का एक अनोखा संग्रह किया है, जो अपने आप में एक चलता-फिरता अजायबघर है. उन्होंने भारत की सांस्कृतिक परंपराओं का गहरा अध्ययन किया है और उन का कहना है कि 'मैं भारत से बहुत प्रभावित हो कर जा रहा हूँ. मैं किसी न किसी रूप में भारत दोबारा ज़रूर आऊँगा.'

श्री ऑक्टेवियो पॉज़ दिल्ली के राजदूतों के अगुवा थे. उन के अध्ययन और सुरुचि ने न केवल लेखकों बल्कि यहाँ के राजनयिकों और राजनीतिज्ञों को भी प्रभावित किया था. स्व. जवाहरलाल नेहरू जिन दो-एक राजदूतों से प्रभावित थे उन में एक श्री ऑक्टेवियो पॉज़ थे. राजधानी में जैसे ही श्री ऑक्टेवियो पॉज़ के त्यागपत्र का समाचार मिला, वैसे ही उन के निवासस्थान पर लेखकों, बुद्धिजीवियों और पत्रकारों का ताँता शुरू हो गया. संवाददाताओं से मुक्त होने के बाद श्री पॉज़ ने अपने परिचितों और मित्रों से मुलाक़ात का सिलसिला शुरू किया जो कि अब तक जारी है. देश और विदेश से श्री ऑक्टेवियो पॉज़ को बधाई के बहुत से संदेश प्राप्त हुए हैं. इन संदेशों में यह कहा गया है कि 'लोकतंत्र और कविता के समर्थन में इस्तीफ़ा दे कर आप ने लोकतंत्र और लोकाभिव्यक्ति की शक्तियों को मज़बूत किया है.'

श्री ऑक्टेवियो पॉज़ ने इस सारी घटना पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए इस समाचारपत्र से यह कहा कि 'इस्तीफ़े के अलावा मेरे सामने दूसरा कोई चारा नहीं था. संसार एक जबर्दस्त संकट से गुज़र रहा है और यह संकट केवल साम्यवाद में नहीं बल्कि स्वयं लोकतंत्र में भी है. अगले दस वर्षों में या तो सब कुछ नष्ट हो जायेगा या फिर जो लोग सब कुछ नष्ट करने पर उतारू हैं वे नष्ट हो जायेंगे. हमें पक्षधर होना पड़ेगा. हम केवल मौन द्रष्टा बन कर नहीं रह सकते.'

श्री ऑक्टेवियो पॉज़ पश्चिम के उन बुद्धिजीवियों में से हैं जो कि मनुष्यता के संघर्ष में हिस्सा लेते रहे हैं. द्वितीय विश्व-युद्ध के पहले स्पेन के गृहयुद्ध के दौरान उन्होंने फ़ासिस्टों के विरुद्ध लड़ाई में हिस्सा लिया था. बाद में भी अनेक वर्षों तक वह इस्पहानी संसार की राजनीति में लोकतंत्र के पक्ष में हिस्सा लेते रहे. मेक्सिको और इस्पहानी संसार में हमेशा उन की प्रतिष्ठा लोकतंत्र और कविता के एक योद्धा के रूप में रही है. उन्होंने हमेशा कविता और राजनीति को अलग-अलग रख कर देखा—एक के मूल्यों को दूसरे पर हावी नहीं होने दिया. लेकिन लगता है कि राजनीति ने सब से पहले उन्हीं की कविता पर आक्रमण करना पसंद किया और कविता लिखने के जुर्म में उन्हें बर्खास्त किया गया.

—विशेष संवाददाता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सरकारी कर्मचारी

अधूरे साक्षात्कारों का संकट

प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी की स्वदेश वापसी के बाद केंद्रीय मंत्रिमंडल की जिस बैठक में १९ सितंबर की राष्ट्र-व्यापी सांकेतिक हड़ताल के सिलसिले में प्रशासनिक दमन के शिकार सरकारी कर्मचारियों को कुछ शर्तों पर सीमित राहत देने का फ़ैसला किया गया वह अनेक दृष्टियों से दिलचस्प थी. उप-प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई शुरू से आखीर तक प्रशासनिक दृढ़ता की वकालत करते रहे और इस में उन्हें डा. रामसुभग सिंह और पुनाचा का भरपूर समर्थन भी प्राप्त हुआ. **मोरारजी देसाई का कहना था कि अगर सरकार अपने कर्मचारियों के सामने इस तरह झुकना शुरू कर देगी तो मुल्क में देर-सवेर से यह आवाज़ उठने लगेगी कि केंद्रीय प्रशासन जैसी कोई चीज़ ही नहीं रह गयी है.** उप-प्रधानमंत्री के तर्कों से सिद्धांततः असहमत न होते हुए भी गृह-मंत्री यशवंतराव चव्हाण ने मंत्रिमंडल की इस बैठक में उन से भिन्न रुख अपनाया. गृहमंत्री के नज़दीकी सूत्रों का कहना है कि १९ सितंबर की घटना के लिए जिस तरह राजनैतिक क्षेत्रों में उन्हें पूरी तरह ज़िम्मेदार ठहराया जा रहा था उस से वह कुछ घबराये हुए थे और इस बात के लिए बिलकुल तैयार नहीं थे कि मंत्रिमंडल के "सामूहिक उत्तरदायित्व" के तथ्य को नज़र-अंदाज़ कर के बाद के दमन-चक्र के लिए भी अकेले उन्हीं को ज़िम्मेदार ठहराया जाये. **प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी, प्रतिरक्षा मंत्री सरदार स्वर्ण सिंह और केंद्रीय अन्न तथा कृषि मंत्री जगजीवनराम प्रशासनिक दृढ़ता के महत्त्व को स्वीकार करने के बावजूद सरकारी कर्मचारियों के साथ सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार के पक्ष में थे.** इस तरह, केंद्रीय मंत्रिमंडल का वह निर्णय जिस के अधीन सरकारी कर्मचारियों को कड़ी शर्तों के साथ क्षमा किया गया था केंद्रीय मंत्रिमंडल के अंदर के इसी गहरे मतभेद से उपजा निर्णय था.

शुक्रवार १८ अक्तूबर को जब केंद्रीय मंत्रिमंडल ने अपने इस क्षमा-कार्य के अधीन अस्थायी सरकारी कर्मचारियों की सेवाएँ समाप्त करने का पुराना आदेश वापस लेने की घोषणा की तो राजनैतिक क्षेत्रों में मिश्रित प्रतिक्रियाएँ व्यक्त की गयीं. दमन-अभियान के बाद इस क्षमा-अभियान से स्थायी और अस्थायी दोनों कोटि के सरकारी कर्मचारियों की नौकरियाँ तो बनी रहेंगी लेकिन हड़ताल का दिन इन की सेवाओं में व्यवधान का दिन माना जायेगा. पूर्ण क्षमा-याचना के अधिकारी तो वे तभी हो सकेंगे जब पूरे पाँच साल तक उन का आचरण दुरुस्त रहेगा—मतलब यह कि वे अपने ट्रेड यूनियन अधिकारों का उपयोग नहीं करेंगे,

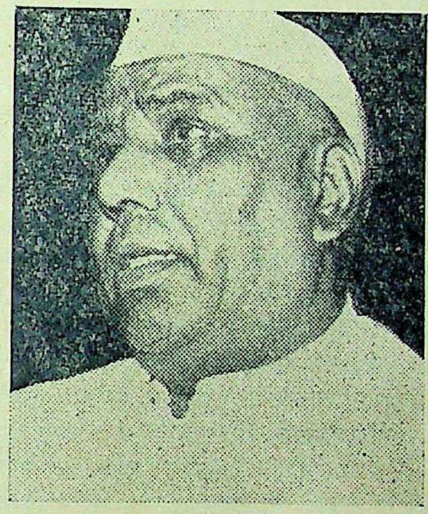

चव्हाण : बदला मिजाज

आवश्यकताओं पर आधारित न्यूनतम वेतन के लिए हड़ताल या प्रदर्शन नहीं करेंगे. **गृहमंत्रालय के नज़दीकी सूत्रों ने 'दिनमान' के प्रतिनिधि को बताया कि पाँच साल की शर्त भी कुछ समय बाद बिल्कुल खत्म कर दी जायेगी.** इन्हीं सूत्रों का यह दावा भी है कि बहरहाल इस शर्त के ज़रिये केंद्रीय सरकार जहाँ एक ओर मंत्रिमंडल में विभिन्न मत रखने वाले मंत्रियों को यह संतोष देना चाहती है कि निर्णय में सब के मतों का आदर किया गया है वहाँ दूसरी ओर वह आम क्षेत्रों में इस धारणा को बढ़ावा देना चाहती है कि प्रशासनिक दृढ़ता और उदारता दोनों की ही क्षमता उस में है. यह आकस्मिक नहीं है कि मंत्रिमंडल के इस निर्णय के बाद ११ अक्तूबर से भूख हड़ताल पर बैठे केंद्रीय सरकारी कर्मचारियों के नेताओं ने भूख हड़ताल खत्म कर दी, संयुक्त संघर्ष समिति के महामंत्री पीटर अलवारिस तथा अन्य नेताओं ने इस निर्णय का स्वागत किया और आशा व्यक्त की कि इस से समस्या के समाधान का ठोस आधार तैयार होगा.

केंद्रीय मंत्रिमंडल के निर्णय के तीसरे दिन सरकारी कर्मचारियों की संयुक्त संघर्ष समिति के नेताओं ने गृहमंत्री यशवंतराव चव्हाण से मुलाक़ात की और उन से आग्रह किया कि जिस तरह ४४ हज़ार अस्थायी कर्मचारियों के खिलाफ़ अनुशासनात्मक कार्रवाई न करने की घोषणा की गयी है उसी तरह शेष २० हज़ार कर्मचारियों के प्रति भी सहानुभूतिपूर्ण रुख अपनाया जाना चाहिए. सरकारी क्षमा-अभियान के अधीन उन ४ हज़ार अस्थायी कर्मचारियों की समस्या हल नहीं हुई है जिन्हें हड़ताल के सिलसिले में तत्काल सेवा-मुक्त कर दिया गया था. इसी तरह, ७ हज़ार निलंबित कर्मचारियों और उन ८ हज़ार कर्मचारियों का मामला भी अटका हुआ है जिन्हें इस सिलसिले में गिरफ़्तार किया गया था और जिन पर मुक़दमा चलाया जा रहा है. इन नेताओं ने गृहमंत्री से इस बात का भी आग्रह किया कि उस सलाहकार समिति को भी फिर से क्रियाशील बनाएँ जिस में सरकार और कर्मचारियों—दोनों के प्रतिनिधि होते हैं. इस से हड़ताल की संभावना कम हो जायेगी तथा सरकार को ५ साल की शर्त वापस ले लेने में किसी धर्म-संकट का भी सामना नहीं करना पड़ेगा. महामंत्री पीटर अलवारिस, संसद् सदस्य एस. एम. बैनर्जी तथा एस. के. व्यास ने मज़दूर संगठनों से छीनी गयी मान्यताओं को उन्हें तत्काल वापस लौटाने की भी सिफ़ारिश की लेकिन इस सिलसिले में गृहमंत्री से उन्हें कोई स्पष्ट आश्वासन नहीं मिला. मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी के नेताओं ज्योति बसु, पी. राममूर्ति और ई. एम. एस. नंबूदिरिपाद ने भी प्रधानमंत्री से अपनी मुलाक़ात के दौरान सरकारी कर्मचारियों का पक्ष प्रस्तुत किया. उन्होंने प्रधानमंत्री को बताया कि स्थायी कर्मचारियों की सेवाओं में व्यवधान की शर्त भी तत्काल वापस ले ली जानी चाहिए तथा पाँच साल की शर्त तो इस लिए भी नहीं लगायी जानी चाहिए क्यों कि इस से सरकार

कर्मचारियों का प्रदर्शन : दमन के दर्शन के विरुद्ध

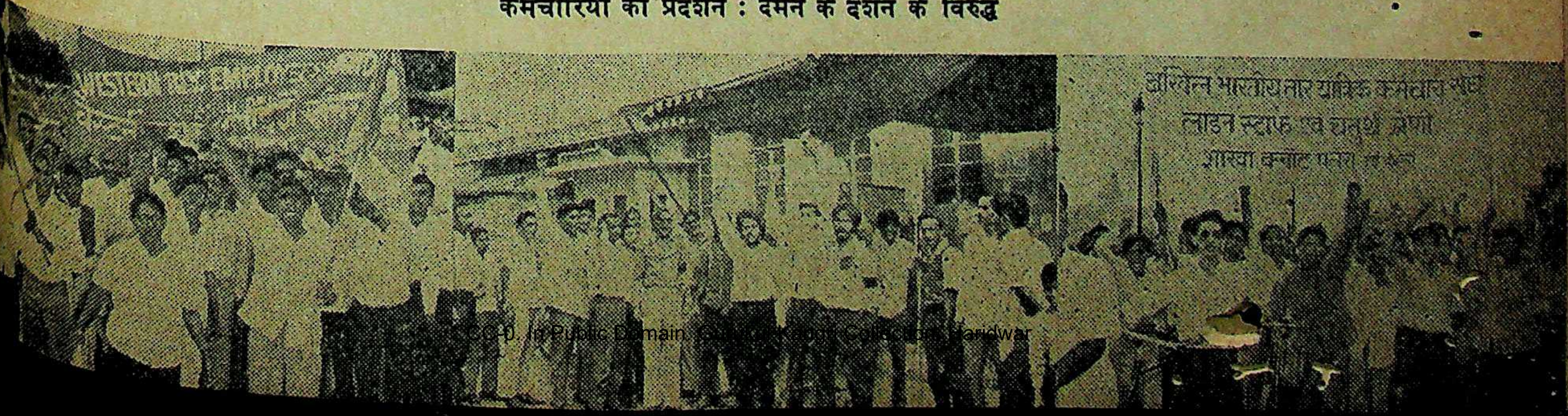

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

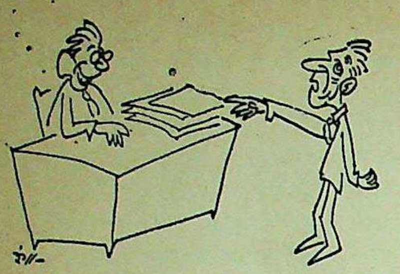

अस्थायी कर्मचारी अस्थायीतर कर्मचारी से : "मेरी जगह से खिसकिए"

और कर्मचारियों के बीच तनाव बना रहेगा.

केंद्रीय मंत्रिमंडल के १८ अक्तूबर के फ़ैसले के एक दिन बाद जब डाक-तार विभाग के कर्मचारियों ने अपने आंदोलन की समाप्ति की घोषणा की तो वे अच्छी तरह जानते थे कि केंद्रीय सरकार के अनेक निर्णयों की तरह यह निर्णय भी समस्या के अधूरे साक्षात्कार से उपजा निर्णय है और इस निर्णय की कुछ शर्तें अगर बनी रहीं तो सरकारी कर्मचारियों की समस्या सुलझने का भ्रम पैदा कर के और उलझ सकती है. महासचिव श्री बी. गुनैया ने जहाँ एक ओर केंद्रीय सरकार को यह आश्वासन दिया कि कर्मचारी संघ सामान्य स्थिति लाने के लिए हर संभव प्रयास करेगी वहाँ दूसरी ओर उन्होंने सरकार से यह आश्वासन भी चाहा कि १८ अक्तूबर के निर्णय के बावजूद जो उलझनें बनी हुई हैं उन्हें सुलझाने की कोशिश शीघ्रातिशीघ्र की जायेगी. संयुक्त संघर्ष समिति के अध्यक्ष श्रीधर महादेव जोशी ने नयी दिल्ली की एक आम सभा में कहा कि अगर सरकार शेष सरकारी कर्मचारियों के खिलाफ़ न्यायालय में चलाया जा रहा मुक़द्दमा वापस नहीं लेती तो संसद् के अगले अधिवेशन में उसे ऐसा करने पर मजबूर कर दिया जायेगा. इस तरह केंद्रीय मंत्रिमंडल के निर्णय के बावजूद तनाव की स्थिति बनी हुई है और ऊपर से सामान्य दीखने वाली स्थिति में असामान्यता के बीज छिपे हुए हैं. यह सच है कि मंत्रिमंडल के निर्णय से लगभग ४८ हज़ार अस्थायी कर्मचारियों को राहत मिली है लेकिन उन की नौकरियाँ तब तक पक्की नहीं होंगी जब तक अगले तीन सालों में उन के कार्य संतोषप्रद नहीं पाये जाते. इसी तरह १९ सितंबर की सांकेतिक हड़ताल के सिलसिले में तत्काल सेवामुक्त किये गये ४ हज़ार अस्थायी सरकारी कर्मचारियों के मामलों पर सहानुभूतिपूर्वक विचार का आश्वासन केंद्रीय मंत्रिमंडल ने ज़रूर दिया है लेकिन इस सहानुभूति की शक्ल क्या होगी यह अभी तक स्पष्ट नहीं हो पाया है. ज़ाहिर है कि प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी के प्रधानमंत्रित्व के एक हज़ार दिन पूरे होने के साथ वे अनेक समस्याएँ जो उन्हें विरासत में मिली थीं और वे अनेक समस्याएँ जो उन की ओर से इस में जोड़ी गयीं थीं सुलझने का भ्रम पैदा कर उलझती ही गयी हैं.

अगर केंद्रीय मंत्रिमंडल के १८ अक्तूबर के निर्णय को उस के मौजूदा रूप में रखा गया तो कुछ और समस्याएँ भी उठ खड़ी होंगी. सरकारी कर्मचारियों की संयुक्त संघर्ष समिति के प्रतिनिधियों ने जहाँ एक ओर 'जान बची लाखों पाये' के भाव से सरकारी क्षमा-अभियान का स्वागत किया है वहाँ दूसरी ओर उन्होंने यह धमकी भी दी है कि अगर १९ सितंबर की राष्ट्रव्यापी सांकेतिक हड़ताल के सिलसिले में सरकार ने अध्यादेश जारी करने से ले कर सेवा में व्यवधान तक जो दमन-चक्र चला रखा है उसे पूरी तरह बंद नहीं करती तो ११ नवंबर एक नये शक्ति-परीक्षण का दिन भी साबित हो सकता है. सरकारी कर्मचारियों की सांकेतिक हड़ताल से जुड़ा लेकिन उस की सीमाओं से आगे निकल गया वह केंद्र बनाम राज्य विवाद भी प्रधानमंत्री के लिए सरदर्द बना हुआ है जिस की आड़ में कांग्रेसी केंद्र और केरल की ग़ैर-कांग्रेसी सरकार अपनी राजनैतिक पैंतरेबाज़ियाँ कर रही हैं.

भारत-नेपाल

एक सफल यात्रा

राष्ट्रपति डॉ. ज़ाकिर हुसैन की नेपाल की चार दिनों की राजकीय यात्रा के बाद दोनों देशों की संयुक्त विज्ञप्ति में जिस सद्भाव और सहयोग की भावना को प्रामाणिकता दी गयी उस से दोनों के संबंध घनिष्ठ से घनिष्ठतर होंगे. काठमांडू-पाटन और भक्तपुर की जनता ने जिस उत्साह से राष्ट्रपति का स्वागत किया और राजभवन में राजा महेंद्र तथा राष्ट्रपति में जिस आत्मीयता और विश्वास के साथ विभिन्न समस्याओं पर बातचीत हुई उस से भी यही साबित होता है. सन् '६० में महेंद्र द्वारा पंचायती शासन को सीधे अपने हाथ में लेने पर नेहरू ने जो प्रतिक्रिया व्यक्त की थी उस से दोनों देशों में कुछ खिचाव पैदा हुआ था. बाद में नेपाल में चीनी प्रभाव के निरंतर बढ़ने की वजह से भी भारत के मन में शंकाएँ होने लगी थीं. लेकिन पिछले कुछ दिनों में यह साबित हो गया कि सन '६० की घटना भुलाई जा चुकी है. चीनी संदेह भी एक तरह से समाप्त हो चुका है. दोनों देशों के बीच दुराव पैदा करने वाले बड़े कारण नहीं हैं.

विज्ञप्ति में एक दूसरे की शंकाओं को निर्मूल सिद्ध करते हुए अधिक-से-अधिक पारस्परिक सहयोग की बात कही गयी है. भारत ने बहुविधि योजनाओं के विकास के लिए नेपाल को आर्थिक और तकनीकी सहायता दी है और

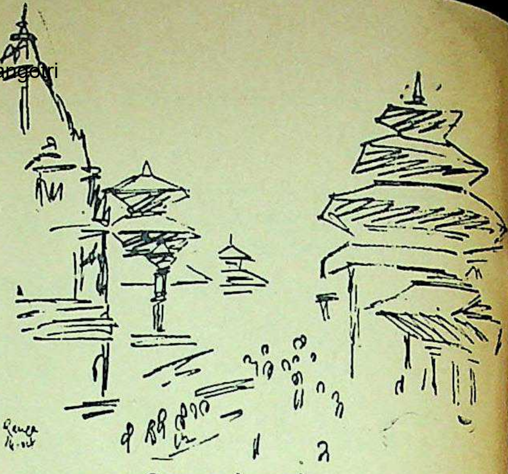

ललितपुर (पाटन)

देता जा रहा है. दूसरे देशों से उस के व्यापार के क्षेत्र में भी उस ने हर तरह का सहयोग देने का आश्वासन दिया है. इरादे अगर ग़लत न हों तो इस तरह के समझौते बहुत कामयाब और संतोषजनक सिद्ध हो सकते हैं. पिछले दिनों एक गड़बड़ी यह हुई थी कि नेपाल के ज़रिये बहुत-सा विदेशी माल भारतीय बाज़ारों में पटता रहा. क्योंकि अपनी अर्थव्यवस्था और उत्पादन को दुरुस्त और संतुलित बनाये रखने के लिए भारत ने कुछ चीज़ों का आयात बंद कर रखा है, इस लिए जब वे विदेशी चीज़ें यहाँ के बाज़ारों में आने लगीं तो उस से अर्थव्यवस्था के लड़खड़ाने का ख़तरा पदा हुआ. प्रसन्नता की बात है कि नेपाल ने इस गड़बड़ी को रोकने में पूरे सहयोग का आश्वासन दिया है. जहाँ तक पाकिस्तान के साथ नेपाल के व्यापार का संबंध है, भारत का रुख बहुत उदार नहीं हो सकता है. भारत को अफ़ग़ानिस्तान के साथ व्यापार करने में पाकिस्तान द्वारा दी जाने वाली सुविधाओं की आवश्यकता पड़ सकती है, ये ही सुविधाएँ पाकिस्तान और नेपाल के व्यापार में भारत से अपेक्षित हैं. यदि पाकिस्तान सुविधाएँ देने को तैयार हो तो कोई वजह नहीं कि भारत उसे सुविधाएँ न दे.

भारत-नेपाल संबंधों की एक विशेषता यह भी है कि दोनों देशों के प्रभुसत्ता संपन्न होने के बावजूद किसी नागरिक के आने-जाने में कोई अड़चन नहीं है. इतना ही नहीं, कुछ अपवादों को छोड़ कर नेपाली नागरिकों को भारतीय संघ में कहीं भी नौकरी करने का अधिकार है. इस पर कोई पाबंदी नहीं है. दोनों जानते हैं कि उन में से किसी का भी इरादा, एक-दूसरे पर प्रभाव डालने या राजनैतिक स्वार्थों की पूर्ति का नहीं है. ऐसी दशा में दोनों एक दूसरे की संपन्नता का लाभ भी उठा सकते हैं और आवश्यक चीज़ों में सहयोग भी दे सकते हैं. दोनों देशों के ऐतिहासिक और

सिंह दरबार

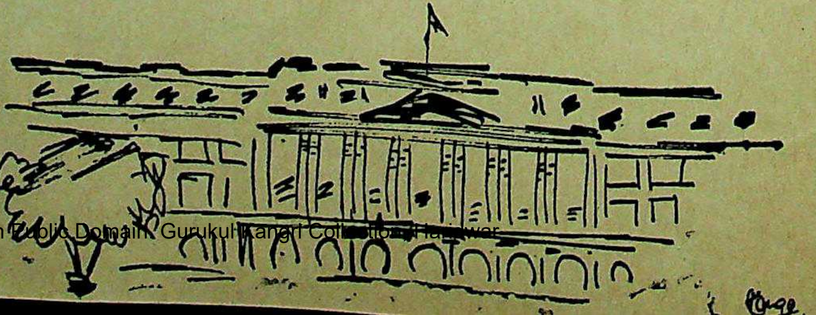

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नेपाली युवक-युवती

सांस्कृतिक संबंध सदियों पुराने हैं. उन्हें अच्छा बनाये रखने की कोशिश दोनों ही तरफ़ से होनी चाहिए.

संसपा

न संयुक्त, न समाजवादी, न पार्टी ?

पिछले सप्ताह संयुक्त समाजवादी पार्टी में व्यक्तित्वों और विचारों के क्रमशः बढ़ रहे अन्तर्विरोधों ने अपने आप को अपेक्षाकृत नये रूप में प्रकट किया । राष्ट्रीय कार्यकारिणी का आखिरी दिन का जमावड़ा खत्म होने को आ रहा था कि किसी ने अध्यक्ष श्रीधर महादेव जोशी से सवाल किया "क्या आप की राय में हमारी पार्टी किसी व्यक्ति को जन्म के आधार पर **अर्जक** मानती है ?" जोशी का संक्षिप्त-सा उत्तर थाः "मेरी राय में हमारी पार्टी जन्म के आधार पर किसी को अर्जक घोषित नहीं कर सकती ।" अध्यक्ष ने फिर अपने इस कथन की सीमाओं की ओर संकेत किया और प्रश्नकर्त्ता की अतिरिक्त उत्सुकता को नियंत्रित करते हुए कहा : **"लेकिन जहाँ तक अर्जक संघ के बारे में पार्टी की नीति का सवाल है, किसी अंतिम निर्णय पर पहुँचने से पहले इस पर किसी शिविर या ऐसे सम्मेलन में बहस की जानी चाहिए जिस में अर्जक संघ के प्रतिनिधियों को भी अनिवार्य रूप से बुलाया जाये."**

अन्तर्विरोध या विरोध (जिस का बारीक अन्तर डा० राममनोहर लोहिया के निधन के तत्काल बाद के कुछेक महीनों में ही संयुक्त समाजवादी पार्टी के लिए खत्म हो चुका था) उस समय खुल कर सामने आया जब अठारह अक्तूबर को एक अंग्रेजी दैनिक में (नयी दिल्ली, १७ अक्तूबर के समाचार-क्रम में) मोटी सुर्खियों में यह समाचार छपा कि संयुक्त समाजवादी पार्टी की राष्ट्रीय कार्यकारिणी ने अर्जक संघ की सदस्यता पर प्रतिबंध लगा दिया है । सनसनीखेज़ वह तब बना जब उस के ठीक दूसरे दिन अध्यक्ष जोशी का यह बयान छपा कि पार्टी की राष्ट्रीय कार्यकारिणी ने अर्जक संघ पर प्रतिबन्ध लगाने का कोई फ़ैसला नहीं किया । १८ अक्तूबर को २९ कैनिंग लेन से संयुक्त समाजवादी पार्टी के संयुक्त सचिव राजहंस ने अध्यक्ष जोशी का जो टंकित स्पष्टीकरण समाचार-पत्रों में प्रकाशनार्थ भेजा उस में कहा गया हैः "कुछ समाचार-पत्रों में यह समाचार पढ़ कर मुझे आश्चर्य हुआ कि संसपा की राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति ने अपने सदस्यों के अर्जक संघ की सदस्यता पर प्रतिबन्ध लगा दिया है ।" स्पष्टीकरण से सम्बद्ध इस वक्तव्य में आगे कहा गया है कि इस मसले पर राष्ट्रीय कार्यकारिणी में कोई विचार-विमर्श नहीं हुआ । हाँ, बैठक के बिलकुल आखिर में पार्टी की उत्तर प्रदेश शाखा के सचिव ने यह मसला उठाया और जानना चाहा कि क्या आप की (अध्यक्ष जोशी की) राय में पार्टी जन्म के आधार पर किसी व्यक्ति या ग्रुप को अर्जक या अनर्जक घोषित कर सकती है । पार्टी के महामंत्री रामसेवक यादव और संसद् सदस्य राजनारायण सिंह का कहना है कि राष्ट्रीय कार्यकारिणी ने इस सम्बन्ध में फ़ैसला किया और इस फ़ैसले के अनुसार संयुक्त समाजवादी पार्टी का कोई सदस्य अर्जक संघ का सदस्य नहीं बन सकता ।

अर्जक संघ और जाति-नीति : संसपा की राष्ट्रीय कार्यकारिणी की इस बैठक में श्री मधु लिमए उपस्थित नहीं थे और श्री राजनारायण सिंह कार्यकारिणी के सदस्य नहीं हैं । पार्टी के कुछ प्रभावशाली क्षेत्रों में अर्जक संघ की सदस्यता के सिलसिले में उभर कर सामने आए इस विवाद को पार्टी के अन्दर लम्बे अरसे से चल रही गुटबंदी से जोड़ कर देखा जा रहा है । इस गुटबंदी का सब से बड़ा अखाड़ा पार्टी की उत्तरप्रदेश शाखा को बताया जाता है । यह आकस्मिक नहीं है कि राष्ट्रीय राजनीति में पिछड़ी जातियों के लिए ६० फ़ीसदी स्थान सुरक्षित करने की माँग करने में सब से मुखर इस पार्टी की उत्तर प्रदेश शाखा पर बड़ी जातियों के नेतृत्व का एकाधिकार है । अर्जुन सिंह भदौरिया, राजनारायण सिंह, प्रभुनारायण सिंह, उग्रसेन और रमाशंकर गुप्त प्रदेश शाखा पर सवर्ण एकाधिकार के प्रतिनिधि समझ जा रहे हैं. जहाँ तक महामंत्री रामसेवक यादव का सवाल है, संसपा के एक महत्त्वपूर्ण वर्ग का कहना है कि पार्टी में राजनारायण सिंह से अलग उनका कोई अस्तित्व ही नहीं है. इसी वर्ग का यह भी कहना है कि अर्जक संघ की सदस्यता पर प्रतिबंध के जिस विवादास्पद निर्णय की बात की जा रही है. उस का सहारा ले कर उत्तरप्रदेश का सवर्ण और अभिजात नेतृत्व पिछड़ी जातियों के पार्टी सहयोगियों का इस्तेमाल अपने सहचर के रूप में करना चाहता है. बताया जाता है कि इस निर्णय के आधार पर राजनारायण सिंह और उन के समर्थक रामस्वरूप वर्मा (उत्तरप्रदेश की संविद सरकार में भूतपूर्व वित्तमंत्री और अर्जक संघ के सूत्रधार) और पिछड़ी जातियों के अन्य नेताओं के विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्रवाई की योजना बना रहे हैं.

अर्जक और अनर्जक का यह विवाद संसपा की जाति-नीति से सीधे जुड़ा हुआ है. संसपा का शुरू से यह आग्रह रहा है कि वर्ग-संघर्ष का नारा देने वाली पार्टियों ने क्रांति को उस के भारतीय संदर्भों में परिभाषित नहीं किया है. संसपा की विचार-पद्धति में क्रांति का भारतीय संदर्भ वर्ण और वर्ग दोनों के यथार्थ से बनता है. इसी विचार-प्रवाह में संसपा ने पिछड़ी जातियों के लिए (वर्गों के लिए नहीं) ६० फ़ीसदी स्थान सुरक्षित करने का नारा दिया और शायद मध्यावधि चुनावों में भी देगी. यहाँ सवाल उठता है कि क्या संसपा अपनी जाति-नीति का परित्याग करने जा रही है और लोहिया के समाजवाद को सवर्ण समाजवाद का रूप देने जा रही है. अर्जक संघ कोई राजनैतिक संगठन नहीं है, पिछड़ी जातियों का एक सांस्कृतिक संगठन है और पार्टी के संविधान में जाति-संगठनों में जाने से किसी को रोकने की कोई व्यवस्था नहीं है. अगर संसपा अपने सदस्यों को यादव महासभा और दलित वर्ग संगठन में जाने से नहीं रोक सकती तो अर्जक संघ में उन के प्रवेश को रोकने का उसके पास क्या आधार है. क्या इस से इस निष्कर्ष पर नहीं पहुँचा जा सकता कि पिछड़ी जातियों का संगठन होने के कारण अर्जक संघ से अस्पृश्यता बरतने के आधार राजनैतिक हैं और पार्टी के अंदर लम्बे अरसे से चल रहे शीत-युद्ध की देन हैं ? यहाँ यह प्रश्न भी महत्त्वपूर्ण हो उठता है कि उत्तरप्रदेश में ही अर्जक और अनर्जक का यह विवाद क्यों उभरा है. क्या इस का एक कारण और निर्णायक कारण यह नहीं है कि संसपा की उत्तरप्रदेश शाखा के सवर्ण नेतृत्व को पिछड़ी जातियों की इस नेतृत्व में साझेदारी की आकांक्षा तक से बुनियादी बैर है.

समाजवाद का सामन्तीकरण : लोहिया के निधन के बाद मधु लिमये और श्रीधर महादेव जोशी ही उनकी नीतियों के प्रमुख व्याख्याकार बच रहे हैं. राजनारायण सिंह और उन के समर्थकों की कोशिश इन दोनों नेताओं को अकेला करने और अपने सामन्तवादी आग्रहों को पार्टी पर लादने की रही है. कुशल राजनारायण जानते हैं कि इन नेताओं से सीधे शक्ति-परीक्षण उनके लिए मँहगा साबित हो सकता है क्योंकि बहुत शीघ्र देह की राजनीति के स्वामी को लोहिया समाजवाद के सामन्तीकरण के आरोप का सामना करना पड़ सकता है. अर्जक संघ की सदस्यता के विरुद्ध अभियान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चलाना अपेक्षाकृत आसान होगा. राजनारायण सिंह इस बात से पूरी तरह अवगत हैं कि अध्यक्ष जोशी और मधु लिमये पिछड़ी जातियों के खिलाफ़ उनका यह धर्म-युद्ध बरदाश्त नहीं करेंगे. **दिनमान** के प्रतिनिधि को विश्वस्त सूत्रों से ज्ञात हुआ है कि अध्यक्ष जोशी ने अर्जक संघ के खिलाफ़ राजनारायण सिंह और उनके समर्थकों के अभियान को अपने खिलाफ़ अभियान के रूप में लेना शुरू कर दिया है. अध्यक्ष जोशी के नजदीकी सूत्रों का कहना है कि राजनारायण और उनके समर्थकों की इस चुनौती ने पार्टी के अंदर जिस गहरे संकट को जन्म दिया है उसे देखते हुए पार्टी का विशेष अधिवेशन भी बुलाना पड़ सकता है. यह विशेष अधिवेशन इस बात का फ़ैसला करेगा कि संयुक्त समाजवादी पार्टी को अपनी जाति-नीति को तिलांजलि देकर राजनारायण का सामन्तवाद स्वीकार करना है या लिमये और जोशी का समाजवाद. इस संभावित अधिवेशन में यह सवाल भी उठेगा कि क्या निजी पत्रों की चोरी के आधार पर किसी पर यह आरोप लगाया जा सकता है कि "मठ के सदस्य और मठाधीश के समान आचरण का गुण विभिन्न निष्कर्ष उत्पन्न करते हैं."

अंतर्धारा

राजनीति या राजमार्ग

अब जब कि मध्यावधि चुनावों के कुछ ही महीने बाक़ी रह गये हैं, चुनाव प्रचार में फँस जाने के पहले ठंडे दिमाग़ से एक बार देख लेना अच्छा होगा कि हमारी राजनीति किधर जा रही है.

क्यों कि इतना तो स्पष्ट है कि उत्तर के बड़े-बड़े राज्यों से कांग्रेस का वर्चस्व हटने और ग़ैर-कांग्रेस सरकारें बनने के बाद से राजनीति की शक्ल अच्छी तरह बदल गयी है: अब सब दल सरकार के ज़रिये एक दूसरे से लड़ रहे हैं और इस लड़ाई में शामिल होना दल के केवल कुछ लोगों को मयस्सर है. राजनीति जन से हट कर राज की ओर मुड़ गयी है. यह कहना यह शिकायत करना नहीं कि सत्ता की इच्छा बुरी बात है : मन टूटता है तो है यह देख कर कि जब सत्ता के इस्तेमाल से इतर राजनैतिक दलों ने समाज में परिवर्त्तन नहीं किया तो सत्ता को उसी तरह पकड़ लिया जैसे कांग्रेस ने पकड़ा था : अब वे जानते हैं कि सरकार में रहना जन-आंदोलन में रहने से ज्यादा शक्ति-दायक है और यदि दोनों घरों में एक साथ रहा नहीं जा सकता तो पहले वाले घर में ही रहना ज्यादा आरामदेह है. मध्यप्रदेश को इस समय के राजनैतिक ज़ीवन का दर्पण माना जा सकता है और उस में देखा जा सकता है कि सत्ता से बाहर जा कर जन-साक्षात्कार से हमारा राजनीतिक कितना घबराने लगा है. उसे भय है कि फिर कांग्रेस को गद्दी सौंप देने से प्रगति और समाज-परिवर्त्तन के तत्त्व नष्ट हो जायेंगे. यह भय इस हद तक है कि वह बिलकुल देख नहीं रहा है कि उस में और कांग्रेस में अंतर कितना कम हो गया है.

पर इस भय ने इस से भी बड़ा नुक़सान पहुँचाया है. जितना यह भय बढ़ता है उतना ही वह राजनीतिक मानता जाता है कि वर्त्तमान संसदीय प्रणाली की सरकार हमारे लिए अंतिम रूप से अच्छी चीज है, जब कि यह प्रकट है कि सरकारें कुछ भी बदल नहीं सकी हैं. जब जन-साधारण संपूर्ण राजनैतिक तंत्र को समाज-परिवर्त्तन में विफल पा रहा है तो मुट्ठी भर नौजवान-अधेड़ मंत्री इस तंत्र के प्रति निस्संशय भाव से समर्पित हुए पड़े हैं.

५ वर्ष पहले राजनीति की हालत यह थी कि विचारों का नक़ली ध्रुवीकरण होने के कारण मानसिक घुटन थी, सत्ता का दुरुपयोग होने के कारण नैतिक पतन था और संसद में सरकारी दल का भीमाकार बहुमत होने के कारण संसदीय दमन था. १९६३ से ६७ तक ४ साल के संक्षिप्त अंतराल में एक व्यक्ति ने, जो संसदीय प्रणाली को अंतिम सत्य नहीं मानता था, इस रेत से भी जितना तेल निकाला जा सकता था निचोड़ा और नक़ली विरोध और भीमाकार बहुमत दोनों के खोखलेपन को बजा कर दिखा दिया, पर भारतीय मतदाता की आंतरिक ग़ुलामी के कारण यानी पूर्णतः स्वतंत्र हो जाने के भय के कारण केवल राज्यों में ही टाट पलटा, केंद्र में नहीं.

केंद्र कितनी भी सफ़ाई दे, इस में कोई शक नहीं कि ग़ैर-कांग्रेसी राज्य सरकारों के साथ—केवल द्रमुक और केरल को छोड़ कर—केंद्र ने शुरू से ही चुनौती की मुद्रा बनायी थी और अंत में उन्हें निष्कासित कर के ही दम लिया. (निश्चय ही अकेले केंद्र को इतने बड़े काम का यश नहीं दिया जा सकता : कांग्रेस से भागे महाशयों ने भी हाथ बँटाया था.) अब संविदों या ग़ैर-कांग्रेसी दलों में कहा जाने लगा है कि जब तक केंद्र में कांग्रेसी सरकार है तब तक राज्यों में ग़ैर-कांग्रेस प्रक्रिया सफल नहीं हो सकती. केंद्र के परिवर्त्तन में इतनी दिलचस्पी बढ़ गयी है कि यदि केंद्रीय कांग्रेसी-नेतृत्व में भी कोई बदल हो तो वे शायद उसे एक बार किसी बड़े बदल का सूत्रपात मानने की नादानी कर बैठें.

केंद्र में कांग्रेसी बदल हो या ग़ैर-कांग्रेसी सरकार बने दोनों दशाओं में केंद्र, उस की संसदीय प्रणाली और केंद्र-राज्य-संबंध अपने आप बदलने वाले नहीं. संसद की वर्त्तमान कार्य-पद्धति जो अंग्रेज़ी संसद की सामंती अनुकृति है, बहस को निरी बहस बना कर छोड़ती रहेगी; भाषा और अन्न, दो मौलिक मामलों में केंद्र और राज्यों के हितों का टकराव वैसे ही जारी रहेगा और विचारों का ध्रुवीकरण कुछ और तरह से नक़ली हो जायेगा क्यों कि सरकार के ज़रिये समाज बदलने की लालच से और भी लोग सरकार में बने रहना चाहेंगे. यह प्रवृत्ति हमें एक और बड़े दल-बदल में ले जा कर फँसा सकती है क्यों कि इस में वर्त्तमान राजनैतिक तंत्र के लिए शुद्ध स्वीकार अभी है और न्यस्त स्वार्थ आगे हो जायेगा. केंद्र की ओर ललचायी निगाह से देखने वाले दलों के साथ कोई बड़े जन-आंदोलन नहीं हैं—त्यागपत्र और मंत्रिमंडल-विस्तार के राजभवनी टोटके ही हैं और मंत्री-प्रतिनिधियों के इर्द-गिर्द अनुदानभोगी राजनैतिक तत्त्वों का फैलता हुआ मंडल है—अपाहिज राजनैतिक व्यवस्था के लिए और भी व्यापक स्वीकार का मंडल !

इस निस्संशयता की घुटन से निकलने की आशा केवल एक बच रही है : राजनैतिक दलों में अंदरूनी विचार-भेद का उभार. कांग्रेस से तो इस की आशा करना मूर्खता होगी : उस के झल्लाते और पिनपिनाते नौजवानों की असलियत उतनी ही खुल चुकी है जितनी उस के कुढ़ते और भुनभुनाते बुड्ढों की खुल चुकी थी. जनसंघ और स्वतंत्र पार्टी में विचारभेद प्रक्रिया का बहुत प्रकट कोई प्रमाण नहीं है. इस से इन्हें छोड़ें. संसपा में राजसत्ता, प्रसपा, और लोहिया-नीति—तीन ओर जाने वाले तत्त्व मुखर हैं और उन का कोई ज़बर्दस्त टकराव आगामी चुनाव के पहले शायद दिखायी नहीं देगा. अंततः कम्युनिस्ट दलादि ही बच रहते हैं जो अपने भीतर विचार के बँटवारे से देश की राजनैतिक व्यवस्था को प्रभावित कर सकते हैं—पर बहुत खतरनाक ढंग से और बहुत खराब नतीजों के साथ.

इस लिए कि उन में आपसी बँटवारे रूस और चीन की भारत-नीतियों की प्रतिकृतियाँ हैं और चूँकि रूस की भारत-नीति इस समय दोस्ती और दबाव की नीति है इस लिए कम्युनिस्ट मंडल का एक अंश केंद्र से किसी न किसी प्रकार संयुक्त रहेगा और उस से इस प्रकार की तनातनी बढ़ायेगा कि दल की राजनैतिक प्रतिष्ठा केंद्र में बढ़े—जन में बढ़े या न बढ़े. इस तरह ऊपर से वैचारिक भेद दीखने वाले बँटवारे कम्युनिस्ट पार्टी के केंद्राभिमुख कार्यक्रम के ही अंश होंगे और जन को मौलिक सामाजिक परिवर्त्तनों की संभावना से और भी दूर, शिखर परिवर्त्तनों की ओर ढकेल ले जाना चाहेंगे जिन से—फ़िलहाल—रूसी हित सधता हो. पर यदि वह बिना परिवर्त्तन के ही सधता रहे तो वर्त्तमान को ही बनाये रखने में कम्युनिस्टों की दिलचस्पी होगी : यानी उस परिवर्त्तन में नहीं जो भारत की देशी-विदेशी नीतियों में भारत के हित के लिए होना चाहिए.

—रघुवीर सहाय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्मेलन

संवाद, हाँ; समाधान, नहीं

विवादास्पद कश्मीरी नेता शेख अब्दुल्ला द्वारा श्रीनगर में आयोजित सम्मेलन जिस में पूरे सात दिन तक विभिन्न विचार-धाराओं के प्रतिनिधियों ने कश्मीर-समस्या पर अपने विचार प्रकट किये, शेख के इस तर्क-संगत आवाहन के साथ समाप्त हुआ कि सम्मेलन की कार्यवाहियों के आधार पर कुछ सामान्य निष्कर्ष निकाले जायेंगे और इसी पैमाने पर एक और सम्मेलन का आयोजन किया जायेगा जिस का उद्देश्य "शांतिपूर्ण, लोकतांत्रिक, न्यायसंगत और स्थायी समाधान" की दिशा में सुनियोजित प्रयास होगा. बारह सदस्यीय संचालन समिति के सदस्य और शेख अब्दुल्ला के पुराने सहयोगी प्रेमनाथ बजाज ने प्रस्ताव पेश करते हुए, वहाँ उपस्थित २७० कश्मीरी प्रतिनिधियों को इंगित कर के यह मत व्यक्त किया कि अगर संवाद-क्रम में सम्मेलन द्वारा क़िस्तों में सुझाए गए समाधानों को भारत सरकार नज़रअंदाज़ करती है तो उस के खिलाफ़ शांतिपूर्ण सत्याग्रह आंदोलन चलाया जाना चाहिए. सम्मेलन के सूत्रधार शेख अब्दुल्ला को अपने सहयोगी की यह दलील पसंद नहीं आयी. अपनी मँजी हुई भावात्मक शैली में शेख अब्दुल्ला ने सम्मेलन को बताया कि सत्याग्रह का आंदोलन विदेशी शासकों के विरुद्ध चलाया जाता है, अपने भाइयों के विरुद्ध नहीं. फिर भारत और पाकिस्तान की जनता को कश्मीरी जनता का भाई घोषित करते हुए शेख अब्दुल्ला ने कश्मीर समस्या के समाधान के लिए नैतिक सर्वमत तैयार करने का आग्रह किया—इस विश्वास के साथ कि अगर विभिन्न धर्मों और राजनैतिक विचारधाराओं में आस्था रखने वाली कश्मीरी जनता एक सामान्य समाधान के लिए अपने आप को तैयार कर लेती है तो देर-सवेर भारत, पाकिस्तान तथा विश्व जनमत को यह समाधान स्वीकार करना पड़ेगा.

कश्मीर राज्य जनता सम्मेलन जिस में कश्मीर समस्या के समाधान की कोशिश में ६० निबंध पढ़े गये, विवादास्पद कश्मीरी नेता शेख अब्दुल्ला के राजनैतिक व्यक्तित्व के कई पहलुओं को सामने लाती है. बताया जाता है कि शुरू में शेख अब्दुल्ला और कश्मीर घा ी के उन के सहयोगियों ने एक ऐसे सम्मेलन का आयोजन करना चाहा था जिस में समान विचारधारा वाले व्यक्तियों का ही मिलन होता. बाद में यह फ़ैसला किया गया कि सम्मेलन में विभिन्न विचार-धारा के व्यक्तियों का प्रतिनिधित्व होना चाहिए. सम्मेलन के सूत्रधार शेख अब्दुल्ला को यह विकल्प पसंद आया और इस मंच से संवाद चलाने के लिए जहाँ एक ओर अवामी संघर्ष समिति के पाकिस्तान-समर्थकों को आमंत्रित किया गया वहाँ दूसरी ओर कश्मीर समस्या पर किसी भी प्रकार के संवाद के प्रति अनास्थावान जनसंघ के प्रतिनिधियों को भी. शेख अब्दुल्ला के आग्रहों से पूरी तरह असहमत व्यक्ति भी तर्कों की अवहेलना किये बग़ैर यह नहीं कह सकता कि अपने-अपने कारणों से अगर स्वतंत्र पार्टी के मीनू मसानी, मार्क्सवादी कम्युनिस्ट पार्टी के ई. एम. एस. नंबूदिरिपाद और जनसंघ के अटल बिहारी बाजपेयी ने भाग नहीं लिया तो इसके लिए शेख की नीतियाँ ज़िम्मेदार हैं. चाहे-अनचाहे उन्होंने शेख अब्दुल्ला को यह कहने का मौक़ा ज़रूर दे दिया कि मैं ने उन्हें इस विचार-मंच से अपने विचार व्यक्त करने का आग्रह किया जिसे उन्होंने स्वीकार नहीं किया और इस तरह अपने पूर्वाग्रहों को संवाद चलाने में आड़े आने दिया. सम्मेलन में विचार-धाराओं का मिलन भले ही नहीं के बराबर रहा हो, किसी भी प्रतिनिधि ने इस बात से इंकार नहीं किया कि कश्मीर-समस्या है जिस के समाधान का एक तरीक़ा विभिन्न विचार-धारा के व्यक्तियों में लोकतांत्रिक संवाद चलाना भी हो सकता है. दूसरी ओर, पाकिस्तान-समर्थक अवामी संघर्ष समिति की नाराज़ी पर भी अंकुश रखने का तरीक़ा शेख ने निकाल लिया. अवामी संघर्ष समिति के अध्यक्ष मौलवी फ़ारूक ने प्रस्ताव में कश्मीर-समस्या के समाधान के लिए व्यावहारिक प्रयासों से अपने आप को जोड़ कर अनजाने उग्रवादी पाकिस्तान-समर्थकों के पाँवों तले से ज़मीन खिसकाने का काम किया है. शेख अब्दुल्ला, इस तरह जहाँ एक ओर कश्मीर-समस्या जैसी कोई समस्या ही न मानने वालों से बाज़ी मार ले गये वहाँ दूसरी ओर अवामी संघर्ष समिति के उग्रवादियों पर भी अंकुश रखने में सफल हो गये. सम्मेलन के आयोजन में शेख अब्दुल्ला का उद्देश्य जो भी हो रहा (वह कश्मीर में अपने नेतृत्व को नया आयाम देने से ले कर भारत सरकार पर वार्त्ता के लिए अप्रत्यक्ष दबाव डालने तक फैल सकता है) इस संवाद के अध्यक्ष के रूप में उन्होंने यह स्पष्ट कर दिया कि उन्होंने अपने दिल और दिमाग की खिड़कियाँ खुली रख छोड़ी हैं या कम-से-कम इस आशय का भ्रम उन्होंने सफलतापूर्वक पैदा कर दिया. बात अब निश्चय ही भारत सरकार के मैदान में है और अब तक कश्मीर-समस्या पर भारत सरकार ने अपने जिस रुख का परिचय किस्तों में दिया है वह यथा-स्थिति और व्यथा-स्थिति और फिर यथा स्थिति की परिधि में असहाय और निरुपाय घूमते रहने या पैंतरेबाज़ी करते रहने का रहा है. यह आकस्मिक नहीं है कि लातीनी अमेरिका के देशों की यात्रा से स्वदेश वापस आने पर पालम हवाई अड्डे पर प्रधानमंत्री का संवाददाताओं से यह कहना कि सम्मेलन के दौरान शेख मुहम्मद अब्दुल्ला ने जो कुछ कहा है वह उन की पूर्व- ीति के अनुरूप है, कश्मीर की राजनीति के कुशल सूत्रधार शेख के असंतोष का कारण बना. प्रधानमंत्री ने इस बात पर प्रकाश नहीं डाला कि शेख अब्दुल्ला की पूर्व-नीति और असली नीति कहाँ तक एक-दूसरे के पर्याय हैं. श्रीनगर सम्मेलन से भी इस का निर्णय नहीं हो सका और शायद अनिर्णय की यह स्थिति मौजूदा हालत में शेख अब्दुल्ला की रण-नीति के लिए उपयुक्त साबित होती है. सम्मेलन में पढ़े गए ६० निबंधों में कश्मीरी जनता को आत्म-निर्णय का अधिकार देने से ले कर भारतीय संविधान की सीमा में अधिकाधिक स्वशासन के इर्द-गिर्द समाधान निकालने जैसी तमाम बातों का समावेश भी है. शेख अब्दुल्ला ने बदली परिस्थितियों की भूमिका स्वीकार कर के किसी सर्वसम्मत समाधान के लिए विभिन्न विचार-धारा के लोगों में संवाद चलाते रहने में आस्था व्यक्त कर के भारत सरकार को अजीबोग़रीब उलझन में डाल दिया है.

पुनर्गठन

मेघालय : अस्थिरता का आलय ?

ऑल पार्टी हिल लीडर्स कांफ्रेंस के नेताओं ने जब १५ अक्तूबर को अपने अध्यक्ष **कैप्टन संगमा** की जन्म भूमि **तूरा** में एक प्रस्ताव पास कर के असम के पुनर्गठन के नए केंद्रीय सूत्र को बतौर प्रयोग के स्वीकृति प्रदान कर दी तो राजधानी के राजनीतिक क्षेत्रों में इस चर्चा ने ज़ोर पकड़ा कि संसद् के अगले अधिवेशन में केंद्रीय सरकार वह विधेयक भी पेश कर देगी जिस में असम संघ और नव निर्मित राज्यों के प्रशासनिक और वित्तीय अधिकार-क्षेत्रों की स्पष्ट व्याख्या कर दी जायेगी. नए उप-राज्यों के गठन के लिए संविधान में जो संशोधन करना पड़ेगा, उस के लिए सरकार को सदन के दो-तिहाई बहुमत की आवश्यकता पड़ेगी. इस बात के स्पष्ट संकेत प्राप्त हो रहे हैं कि गृहमंत्रालय ने अभी से आवश्यक दो-तिहाई बहुमत प्राप्त करने की दिशा में प्रयास करना शुरू कर दिया है. गृहमंत्रालय इस तथ्य से नावाकिफ़ नहीं है कि ११ सितंबर को पुनर्गठन का जो सूत्र उस ने पेश किया और जिस का असम के विभिन्न राजनीतिक क्षेत्रों में स्वागत किया गया, को उसी रूप में स्वीकार करने के पक्ष में कुछ प्रतिपक्षी दल नहीं हैं. इन प्रतिपक्षी दलों को इस प्रस्तावित विधेयक का विरोध करने का एक ठोस आधार ऑल पार्टी हिल लीडर्स कांफ्रेंस के प्रस्ताव में भी मिल रहा है. प्रस्ताव में कहा गया है कि हम केंद्रीय सरकार के ११ सितंबर के पुनर्गठन प्रस्ताव को बतौर प्रयोग के स्वीकार करते हैं लेकिन असम से पृथक् पर्वतीय प्रदेश की माँग को साकार करने की अपनी माँग को बनाए रखने में भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यक़ीन रखते हैं. यह सच है कि ऑल पार्टी हिल्स लीडर्स कांफ़्रेंस के नेताओं ने इस माँग को पूरा कराने के लिए प्रत्यक्ष अहिंसक आंदोलन का रास्ता छोड़ देने का निर्णय किया है लेकिन आंदोलन के उद्देश्य से स्वयंसेवकों की भरती का सिलसिला बनाए रख कर और पृथक् पर्वतीय प्रदेश को माँग के लिए सरकार पर दबाव डालते रहने का फ़ैसला कर के उन्होंने यह भी स्पष्ट कर दिया है कि ११ सितंबर का पुनर्गठन सूत्र अंतिम और पूर्ण नहीं समझा जाना चाहिए.

राज्य के अंदर राज्य : इस तरह, ११ सितंबर के केंद्रीय पुनर्गठन सूत्र के आधार पर जो विधेयक सदन के अगले अधिवेशन में पेश होगा, उस में पर्वतीय क्षेत्रों को दर्जा उपराज्य का होगा. इन उपराज्यों की अपनी स्वतंत्र विधानसभा होगी जिसे राज्य की सूची में आने वाले उन सभी विषयों पर क़ानून बनाने का अधिकार प्राप्त होगा जिन का संबंध असम के पूरे ढाँचे से नहीं होगा. कृषि, शिक्षा और न्याय आदि महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों में क़ानून बनाने के अलावा उपराज्यों की इस प्रस्तावित विधानसभा को कर वसूल करने का भी अधिकार होगा. पर्वतीय क्षेत्रों को छोड़ कर अन्य क्षेत्रों में असम सरकार का नियंत्रण पूर्ववत् रहेगा. लेकिन प्रस्तावित उप-राज्यों में भी आम क़ानून और व्यवस्था उस की देखरेख में आयेगी. प्रस्तावित विधेयक में पूर्वोत्तर क्षेत्र की एकता को बनाये रखने के उद्देश्य से उस उच्चस्तरीय सलाहकार समिति के स्वरूप की भी स्पष्ट व्याख्या होगी जिस का सुझाव ११ सितंबर के प्रस्ताव में दिया गया है.

नामकरण संस्कार : असम संघ के अधीन उपराज्य के रूप में अस्तित्व में आने के लिए इस नई राजनैतिक इकाई का नाम 'मेघालय' होगा. मेघालय राज्य दो पर्वतीय क्षेत्रों, गारो और संयुक्त खासी और जयंतिया के मौसमी मिज़ाज का संदेशवाहक समझा जा रहा है. लेकिन अगर ११ सितंबर का पुनर्गठन सूत्र, जिसे संबद्ध पक्षों ने बतौर प्रयोग के ही स्वीकार किया है, लड़खड़ाता है तो इस शब्द को एक प्रतीकात्मक अर्थ भी मिल जायेगा—मतलब यह कि महत्त्वाकांक्षाएँ उप-राज्य के गठन से ही संतुष्ट न हो कर पृथक् राज्य के गठन का नारा देंगी और मेघालय को अस्थिरता का आलय बना देंगी.

छात्र-असंतोष

काशी विश्वविद्यालय : उपकुलपति का भाग्य-निर्णय

काशी विश्वविद्यालय के उपकुलपति डॉ. अमरचंद्र जोशी यदि इस्तीफ़ा नहीं देते हैं तो उन्हें हटाने के लिए क्या कार्रवाई की जा सकती है, यह सलाह शिक्षामंत्री श्री त्रिगुण सेन ने विधि मंत्रालय से माँगी है. उन्होंने विश्वविद्यालय के छात्र प्रतिनिधियों से भी विश्वविद्यालय के उपकुलपति पद के लिए ३ नाम माँगे हैं—वैसे यह ज़रूरी नहीं कि शिक्षा मंत्रालय इन में से किसी को स्वीकार कर ही ले. इस महीने के अंत तक काशी विश्वविद्यालय के उपकुलपति डॉ. जोशी का भाग्य-निर्णय करने का फ़ैसला शिक्षा मंत्रालय ने ले लिया है.

यह निर्णय राष्ट्रपति से विरोधी दलों के नेताओं और छात्र प्रतिनिधियों की मुलाक़ात के बाद लिया गया. संसद् सदस्य श्री राजनारायण ने पिछले हफ़्ते राष्ट्रपति डॉ. ज़ाकिर हुसैन को काशी विश्वविद्यालय की सारी स्थिति से अवगत कराते हुए शिकायत की कि विश्वविद्यालय आज सांप्रदायिकता का एक बहुत बड़ा गढ़ हो गया है और अगर इस गढ़ को नष्ट नहीं किया गया तो यह समूचे प्रदेश के लिए एक खतरा बन जायेगा. श्री राजनारायण की इस शिकायत के बाद शिक्षामंत्री ने राष्ट्रपति से भेंट की और अब शिक्षा मंत्रालय में सरगर्मी है. श्री राजनारायण ने इस संबंध में शिक्षा मंत्रालय को भी एक पत्र लिखा था जिस में उन्होंने यह माँग की थी कि विश्वविद्यालय के हाल के सांप्रदायिक उपद्रवों में उपकुलपति ने जो भूमिका अदा की है उस की अदालती जाँच करायी जाये. उन्होंने अपने पत्र में लिखा था कि वर्तमान उपकुलपति काशी विश्वविद्यालय के गौरव और सम्मान की रक्षा नहीं कर सकते. उन का विचार संकुचित है तथा उन का उद्देश्य विद्यार्थियों में फूट डाल कर उन में ब्राह्मण-क्षत्री, हिंदू-मुसलमान की भावना पैदा कर के अपने अस्तित्व की रक्षा करना है. श्री राजनारायण ने डॉ. जोशी पर यह आरोप लगाया है कि उन्होंने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ को विश्वविद्यालय के अहाते के भीतर हर रोज़ परेड करने की इजाज़त दी तथा एक हत्यारे को संरक्षण प्रदान किया.

यह पत्र प्राप्त करने के बाद डॉ. त्रिगुण सेन ने उपकुलपति डॉ. जोशी को दिल्ली बुलाया और उन से स्पष्टीकरण माँगा. डॉ. जोशी ने अपना स्पष्टीकरण तो उन्हें दिया है लेकिन शिक्षा मंत्रालय को इस से संतोष नहीं है. शिक्षा मंत्रालय में राज्यमंत्री भगवत झा आज़ाद से भी इस संबंध में सलाह-मशविरा किया गया है क्योंकि वह स्वयं पूर्वी इलाके के हैं. श्री आज़ाद की भी यही राय है कि बनारस विश्वविद्यालय दिन-ब-दिन सांप्रदायिकता का गढ़ बनता जा रहा है और यह उस विश्वविद्यालय की परंपरा और प्रतिष्ठा के प्रतिकूल है.

संसद सदस्यों और नेताओं के अलावा बनारस विश्वविद्यालय के छात्र नेताओं ने भी दिल्ली आ कर केंद्रीय नेताओं को वहाँ की स्थिति से अवगत कराने का प्रयत्न किया. काशी विश्वविद्यालय छात्र संघ के अध्यक्ष श्री नरेंद्र सिन्हा ने उपकुलपति के विरोध में राष्ट्रपति और शिक्षामंत्री को एक ज्ञापन दिया है. इस ज्ञापन में यह आरोप लगाया गया है कि राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के कार्यकर्ताओं ने पिछले साल विश्वविद्यालय के अहाते के भीतर एक मुसलमान नवयुवक की हत्या की तथा बिड़ला छात्रावास में एक छात्रा का शील भंग किया गया. उपकुलपति ने सूचना पाने के बावजूद अपराधी के विरुद्ध कोई कार्रवाई नहीं की बल्कि हत्यारे को विश्वविद्यालय का सहायक प्राक्टर बनाया गया. उन्होंने अपने ज्ञापन में यह आरोप लगाया है कि 'जब पिछली बार उसने तथा विश्वविद्यालय छात्र संघ के भूतपूर्व अध्यक्ष श्री देवव्रत मजूमदार ने उपकुलपति के विरुद्ध राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री को स्मरण-पत्र दिया तब उस से नाराज़ हो कर सभी क़ानूनों और मर्यादाओं को भंग करते हुए उपकुलपति ने उसे और मजूमदार को विश्वविद्यालय से निकाल दिया. उन के ज्ञापन में यह भी बताया गया है कि ५ अक्तूबर को उपकुलपति की मनमानी के विरोध में संसद् सदस्य महादेव प्रसाद सिंह, संत बख्श सिंह, राजनारायण, सत्यनारायण सिंह तथा रामसेवक सिंह यादव ने विश्वविद्यालय कोर्ट की बैठक से बहिर्गमन किया.

विश्वविद्यालय के छात्र एक अर्से से डॉ. जोशी पर यह आरोप भी लगाते रहे हैं कि वह और उन के कुछ प्रिय प्राध्यापक विश्वविद्यालय को अमेरिकी गतिविधियों का केंद्र बना रहे हैं. इस मामले में सभी छात्र-नेता, जिन में कि स्वयं राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के प्रतिनिधि भी शामिल हैं, एक मत थे कि इस का विरोध होना चाहिए और विश्वविद्यालय को विदेशी गतिविधियों के केंद्र में परिणत नहीं किया जाना चाहिए. ग़ैर-जनसंघी छात्र-नेताओं का आरोप है कि जब डॉ. जोशी ने यह देखा कि उन का विरोध सभी छात्र-नेता मिल कर कर रहे हैं तब छात्रों में फूट डालने के लिए उन्होंने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ को बढ़ावा दिया और उसे विश्वविद्यालय के अहाते के भीतर हर शाम परेड की इजाज़त दी.

इस सारी स्थिति से बनारस के राजनैतिक जीवन में भी तनाव पैदा हो गया है. १८ अक्तूबर को बनारस नगर निगम में भी विश्वविद्यालय के भीतर राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की गतिविधियों को ले कर झगड़ा हुआ. नगर निगम में कांग्रेस के प्रतिनिधि विश्वविद्यालय की स्थिति पर बहस चाहते थे. इस का जनसंघ के प्रतिनिधियों ने विरोध किया क्यों कि उन का कहना था कि विश्वविद्यालय के भीतर राष्ट्रीय स्वयंसेवकों की गतिविधियाँ पर यहाँ विचार नहीं हो सकता. इस पर दोनों दलों में चखचख हुई और नारेबाज़ी के बाद निगम की बैठक स्थगित हो गयी.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रदेश

राजस्थान

भूखे-प्यासे कारवाँ

जैसलमेर और राज्य के कुछ अन्य पश्चिमी ज़िले फिर सूखे की ज़बर्दस्त चपेट में आये हैं. यों तो जैसलमेर पिछले ७ वर्षों से ही सूखा और संकट का शिकार होता रहा है लेकिन इस बार का संकट बहुत भयंकर है. मनुष्यों के लिए भोजन की कमी, पशुओं के लिए चारे का अभाव : सिवाय नाउम्मीदी और मुसीबत के और कोई चीज़ नहीं. तकलीफ़ों के बढ़ने के साथ-साथ लोगों ने गाँव छोड़ना शुरू किया. अब तक पश्चिमी ज़िलों से अन्न और चारे की तलाश में आदमियों और मवेशियों के कारवाँ शरण की खोज में संपन्न इलाक़ों की ओर बढ़ते चले आ रहे हैं. भूख से कंकाल बन गये मवेशी और मुसीबतों तथा तकलीफ़ों से तंग आ गये आदमियों के बेबस चेहरे जगह-जगह देखने को मिल रहे हैं. पूरे के पूरे वातावरण में एक भयानक चुप्पी है और इस चुप्पी को सिवाय रेगिस्तान की हवाओं के और कोई तोड़ने का साहस नहीं कर पा रहा है. पशुओं की तो बात ही अलग है. भूख से कुछ आदमियों के मर जाने की ख़बरें भी प्रकाश में आयी थीं और तब राज्य सरकार ने उस का हमेशा की तरह प्रतिवाद कर दिया था. यह बहुत बड़ी विडंबना है कि जब कोई आदमी भूख से मरता है तब सरकार उसे स्वीकार करने में हिचकिचाती है. फिर वह दलीलें देने लगती है कि वास्तविक मौत भूख की वजह से नहीं बल्कि पौष्टिक तत्त्वों की कमी की वजह से हुई है. लेकिन इन दिनों सूखे के शिकार मरते हुए पशुओं और भूख से ही परेशान पिचके पेट वाले आदमियों को देख कर तबीयत दहल उठती है. पश्चिमी प्रदेश के तमाम गाँव पशुओं की श्मशान में बदल गये हैं. झुंड के झुंड मरे हुए मवेशी—कई गाँव ऐसे भी मिले जहाँ पर इन मरे हुए पशुओं की ठठरियाँ इकट्ठी की गयी हैं. इन्हें इकट्ठा करने का काम व्यापारियों द्वारा कराया गया है. गऊ की जय बोलने वालों की हमारे देश में कमी नहीं है. उसे ही विषय बना कर देश के तमाम भागों में आंदोलन होते रहे हैं और उन का राजनैतिक लाभ उठाने की कोशिश की जाती रही है. लेकिन आज कोई भी 'गोपालक' इन इलाक़ों में दिखाई नहीं दे रहा है. मौत और वीभत्सता का तांडव हो रहा है और लोग उसे चुपचाप झेलने की कोशिश कर रहे हैं.

सूखे की आशंकाएँ महीनों पहले ही व्यक्त की गयी थीं. कुछ राजनैतिक दलों ने सरकार का ध्यान आकर्षित करते हुए उन क्षेत्रों को

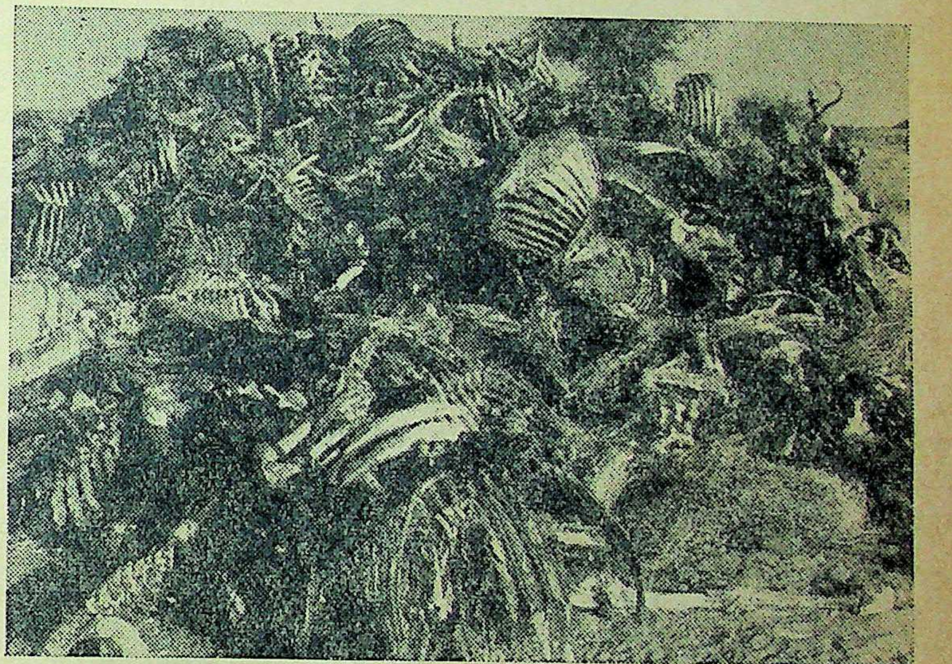

मवेशियों के कंकाल : सूखे का ख़ौफ़नाक चेहरा

अकालग्रस्त क्षेत्र घोषित करने की माँग भी की थी लेकिन तब सरकार चुप रही. जब स्थिति बहुत भयंकर हो गयी और सरकार के लिए चुप रहना असंभव हो गया तब उस ने सहायता की कोशिश शुरू की. अब स्थिति यह है कि केंद्र से ले कर राज्य तक के नेता उन क्षेत्रों का दौरा कर रहे हैं और दौरे के बाद स्थिति की वास्तविकता को स्वीकार करते हुए सहानुभूति की पवित्र वाणी बोल रहे हैं—मदद का आश्वासन दे रहे हैं. कांग्रेस अध्यक्ष निजलिंगप्पा ने सूखाग्रस्त क्षेत्रों का दौरा करने के बाद सिंचाई साधनों को प्राथमिकता देने की नेक सलाह दी. मुख्यमंत्री सुखाड़िया ने भी खुले आम ऐलान किया कि सूखा बहुत भयंकर है और उस से निजात पाने की भरपूर कोशिश की जा रही है. उन्होंने सरकारी अकर्मण्यता पर पर्दा डालते हुए कहा कि राज्य में १९५१ में अन्न का उत्पादन केवल २५ लाख टन था. प्रगति का इस से बड़ा नमूना और क्या हो सकता है कि वही उत्पादन सन् '६७ में ६५ लाख टन हो गया. लेकिन सूखे ने सब कुछ तहस-नहस कर के रख दिया. केंद्र ने एक करोड़ रुपये की सहायता दी

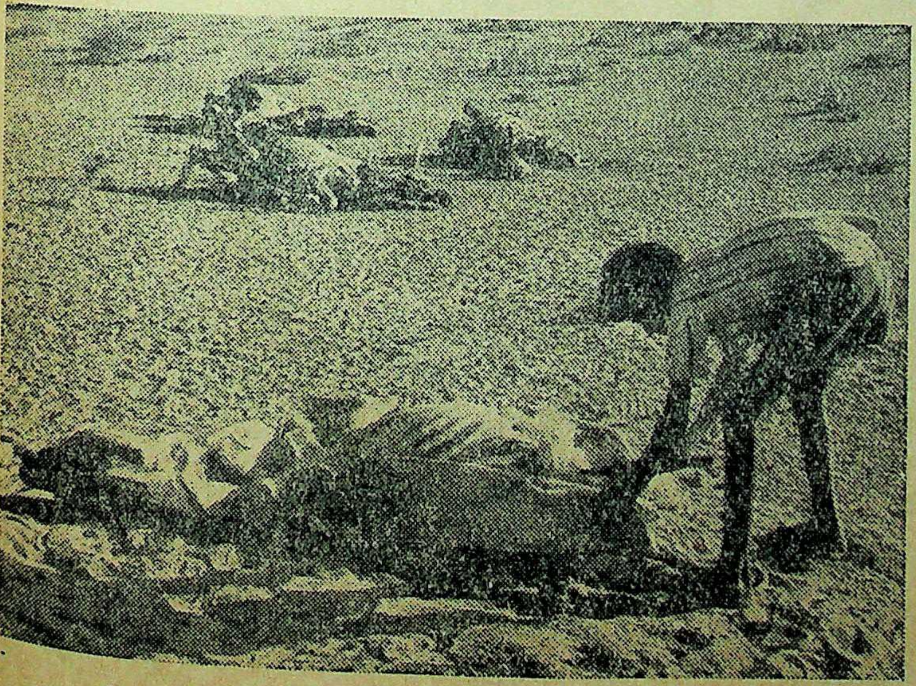

जैसलमेर में पशुओं की श्मशान : काल के बाद कफ़नखसोट की बारी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है. साथ ही उस ने यह भी निश्चय किया है कि विभिन्न विभागों के विशेषज्ञों का एक दल वहाँ भेजा जाये जो स्थिति का अध्ययन करने के बाद अपनी रिपोर्ट दे. केंद्रीय राज्यमंत्री शिंदे ने कहा कि सहायता के कार्य तेज़ी के साथ चल रहे हैं. मध्यप्रदेश ने एक लाख मवेशियों को ले लेने का निश्चय किया है. उस से कहा जायेगा कि वह एक लाख मवेशी और ले ले. सहायता का काम जारी है, आदमियों का तड़पना जारी है और मवेशियों का मरना भी जारी है. सब कुछ एक साथ चल रहा है.

मृत्यु और बीमारी : जैसलमेर पिछले ७ वर्षों से निरंतर सूखे की चपेट में आता रहा है. २५०० मवेशी रोज़ मर रहे हैं. अनुमान है कि अब तक डेढ़ लाख मवेशी मर चुके हैं. ५० गाँव खाली हो चुके हैं. उन गाँवों में जगह-जगह मरे हुए मवेशियों के ढेर पड़े हैं अब उन के आस-पास सिवाय भौंकते-गुर्राते कुत्तों के और कोई नहीं दिखाई देता. जैसलमेर के अधिकांश निवासी शताब्दियों से पशुपालन का ही पेशा करते रहे हैं. १६००० वर्ग मील के इस विस्तृत क्षेत्र में खेती करने वालों की संख्या बहुत कम है. जो लोग यहाँ से दूसरे ज़िलों में शरण के लिए गये हैं उन के साथ मुश्किल से ५०,००० मवेशी जा सके हैं. चारे की कमी है. यदि कहीं पर चारा उपलब्ध भी है तो वह महँगा है और उसे खरीदना उस आदमी के लिए और मुश्किल है जिस के पास अन्न तक के लिए पैसा नहीं है.

सरकारी बयानों में कहा गया है कि जगह-जगह चारे के गोदाम खोल दिये गये हैं लेकिन जोधपुर से जैसलमेर तक के १७४ मील लंबे रास्ते में ऐसा कोई गोदाम हमारे संवाददाता को इस महीने के दूसरे हफ़्ते के अंत तक नहीं दिखाई दिया. सरकार ने अन्न की जो व्यवस्था की है, उस में प्रति व्यक्ति ५ किलो मोटा अनाज और ३ किलो गेहूँ महीने भर के लिए मिलता है. लेकिन ऐसे बदकिस्मत लोगों की संख्या भी कम नहीं है जो इस अनाज को भी खरीद नहीं सकते. २४ मकानों पर पूछताछ की गयी लेकिन उन में से किसी के यहाँ डेढ़ किलो मोटे अनाज के अलावा और कुछ नहीं मिला. पाँच आदमियों के एक परिवार में केवल डेढ़ किलो मोटा अनाज मिला.

इस बीच विरोधी आवाजों के दबाव से परेशान हो कर सरकार ने बाडमेर और बीकानेर को (२६ गाँव छोड़ कर) भी अकालग्रस्त क्षेत्र घोषित कर दिया है. राज्य के अन्न मंत्री परसराम सरकार की उदासीनता को कैसे स्वीकार कर सकते हैं? उन का कहना है कि सड़क निर्माण के ८५ कामों में ५५,००० लोगों को रोज़गार दिया गया है. अपनी बात को विश्वसनीय बनाने के लिए उन्होंने सबूत देते हुए कहा कि जोधपुर, जैसलमेर, बाडमेर, सिरोही, पाली और बीकानेर में निर्माण-कार्य चल रहे हैं. बाडमेर में साढ़े छः लाख आदमियों और २० लाख मवेशियों को सूखे की परेशानी का शिकार होना पड़ा है. यहाँ भी ५०,००० से ज़्यादा मवेशी मर चुके हैं. ज़िंदगी की कशमकश से तंग आये हुए १००० मुसलमान ज़िंदगी को बचाने के लिए अपने पशुओं के साथ सीमा पार कर के पाकिस्तान चले गये हैं. इस ज़िले में सत्ता, मिजराल, सुंदरा, गिराब, झुनझुनवाली आदि गाँवों में सब से ज़्यादा मवेशी मरे हैं. हमारे देश में व्यापारी वर्ग आदमी की हर स्थिति और उस की हर मजबूरी का फ़ायदा उठाने का आदी रहा है. इस क्षेत्र में इस व्यापारी वर्ग ने २५ रुपये से ले कर ५० रुपये प्रति क्विंटल के हिसाब से चारे की बिक्री की.

अन्नदाता सरकार : जब बाडमेर ज़िले के देदुसर गाँव से दो आदमियों के मरने की खबर आयी तो सरकार ने फ़ौरन उस का प्रतिवाद किया. लेकिन असलियत यह है कि जिन ८५२ गाँवों में खरीफ की फ़सल एकदम नष्ट हो गयी है वहाँ के ज़्यादातर आदमियों की जेबें भी खाली हैं. खजूरबापी गाँव के दुबले-पतले १३ वर्षीय एक बालक राजू ने बताया कि पिछले ३ दिनों से उस के घर में अन्न नहीं है और भूख से उस की अंतड़ियाँ कुलबुला रही हैं. सरकार ने कुछ प्रश्नकर्ताओं को बड़े गर्व से यह बताया कि अन्न, चारा तथा सहायता कार्यों के लिए व्यवस्था कर दी गयी है. बीकानेर के लिए २८०० टन मिजो, १४०० टन बाजरा और २८०० टन गेहूँ की व्यवस्था की गयी. इस ज़िले में ३४ तरह के निर्माण के कार्य हो रहे हैं और उन में २० हज़ार आदमियों को रोज़गार दिया गया है. चित्तौड़गढ़ की चरागाह में पशुओं के चरने का इंतजाम कर दिया गया है. ४ हज़ार मवेशी भैंरोगढ़, ५ हज़ार देवगढ़ में और एक हज़ार विजयपुर की चरागाह में चरेंगे. वहाँ चारा उपलब्ध है. वन विभाग ने ४० हज़ार मन चारे की अलग से व्यवस्था की है.

सरकार ने यह सब किया है तो इस से दुखी और परेशानी के शिकार लोगों को थोड़ी तस्कीन ज़रूर होगी. सोचने की बात यह है कि निरंतर शोर और विरोध के बावजूद राज्य सरकार ने बीकानेर, जैसलमेर, बाडमेर और जोधपुर को अकालग्रस्त क्षेत्र घोषित नहीं किया. अगर यह घोषणा पहले ही हो गयी होती और सहायता वगैरह के ये सारे काम कुछ और पहले ही शुरू हो गये होते तो मौत और वीरानगी के रोंगटे खड़े कर देने वाले इस तरह के दृश्य नहीं दिखाई देते. राज्य में २५,००० गाँव ऐसे हैं जिन में पानी और चारे की कमी प्रायः रहती ही है. सरकार अपनी मशीनरी पर ज़्यादा विश्वास करती है. बहुत देर तक वह यह इंतज़ार करती रही कि ज़िला अधिकारियों की रिपोर्ट आ जाए तब उस पर कुछ निश्चय किया जाए. सरकारी लोग पहले टालते रहे, बाद में जब उन्होंने अपना कर्त्तव्य निभाना शुरू किया तो तब तक मौत और तबाही काफ़ी हो चुकी थी.

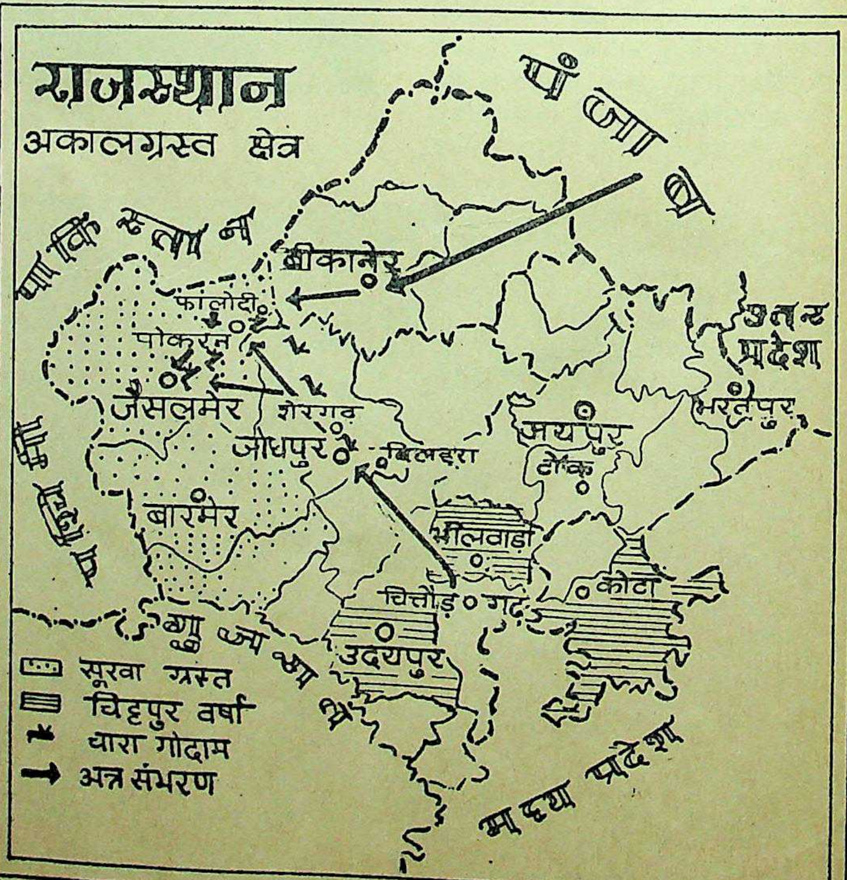

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्तरप्रदेश

अहिंदू मोर्चा :

हिंसा का हथियार

सांप्रदायिकता विरोधी सम्मेलन के संपन्न होने के ठीक १२ दिन बाद १२-१३ अक्तूबर को उसी स्थान—क़ैसरबाग बारादरी—पर जवाबी सम्मेलन का आयोजन कर डाला गया. यह सम्मेलन उत्तरप्रदेश मुस्लिम मजलिस की छाया में हुआ, जिस में एक नये राजनैतिक दल को जन्म देने के साथ-साथ 'अपने हितों की रक्षा के लिए हिंसा का सहारा लीजिए' के नये सिद्धांत को भी जन्म दिया गया. पिछड़े वर्गों और अल्पसंख्यकों का यह सम्मेलन मुख्यतया मुसलमानों का सम्मेलन था. नाम मात्र के लिए पिछड़ी जातियों के संघ के भूतपूर्व अध्यक्ष शिवदयाल सिंह चौरसिया और भारतीय रिपब्लिकन दल के मंत्री छेदीलाल साथी का नाम भी मुस्लिम मजलिस के साथ जुड़ा हुआ था. दो दिन के अधिवेशन में इन के समर्थकों की संख्या कभी भी १०-१२ से ज़्यादा नहीं थी. ग़ैर-मुस्लिम अल्पसंख्यकों के प्रतिनिधियों और श्रोताओं की संख्या भी नगण्य थी. हां, बारादरी का विस्तृत हॉल अवश्य खचाखच भरा हुआ था. वे सभी अल्लाह के बंदे मुसलमान थे. कहना चाहिए कि सम्मेलन मीलाद के अवसर पर एक जमघटा था.

सांप्रदायिकता विरोधी सम्मेलन का विरोध करने वाले मुस्लिम मजलिस के नेता डॉ. अब्दुल जलील फ़रीदी ने मुसलमान अल्पसंख्यकों, पिछड़े वर्ग, अनुसूचित जाति और अन्य अल्पसंख्यकों के हितों की रक्षा का भार अपने ऊपर लेते हुए उन सब का एक महासंघ बनाने में शानदार कामयाबी हासिल कर ली. इस के साथ ही प्रस्तावित महासंघ के संविधान का मसविदा तैयार करने के लिए २१ सदस्यों की एक समिति बना डाली गयी.

हर चीज के विरुद्ध : इस बार डॉ. फ़रीदी मुसलमानों के साथ-साथ अन्य अल्पसंख्यकों के हितों का झंडा ले कर इस सम्मेलन के मंच पर अवतरित हुए और सजातीय हिंदुओं के विरुद्ध, संविधान के विरुद्ध और देश के विरुद्ध जी भर कर ज़हर उगलने के बाद जाते-जाते अपने साथियों को मौजूदा सामाजिक व्यवस्था को आग लगाने की सलाह देते गये. डॉ. फ़रीदी को लोकतांत्रिक पद्धति में रह कर अपनी माँगों को मनवाने के लिए हिंसा के अलावा और कोई चारा नहीं दिखाई दिया. उन्होंने बहुत ही खुले शब्दों में अपनी मजबूरी जाहिर करते हुए कहा, 'हालांकि अहिंसा में मैं पूरा यक़ीन करता हूँ और हिंसात्मक सामाजिक क्रांति के पक्ष में क़तई नहीं हूँ लेकिन जब हमें लोग मटियामेट करने पर ही तुले हों तो हमें आत्मरक्षा के लिए सब कुछ करने का हक़ है. आत्मरक्षा के लिए हिंसा का सहारा लेना ग़लत नहीं है.' इसी संदर्भ में उन का मत था कि अल्पसंख्यक वर्गों के लोग अपने हितों की रक्षा के लिए हिंसा का भी सहारा ले सकते हैं.

डॉ. फ़रीदी की दृष्टि में इस देश में अल्पसंख्यकों द्वारा सामाजिक एवं संवैधानिक हक़ों के लिए जो लड़ाई चलायी जा रही है वह वैसी ही है जैसी कि अमेरिका में निग्रो लड़ रहे हैं. उन का कहना था कि इस देश में किसानों और मज़दूरों द्वारा क्रांति मार्क्सवादी सिद्धांतों के ज़रिये नहीं लायी जा सकती. जितनी अधिक जातीयता भारत में है विश्व के किसी कोने में नहीं है—इस लिए मुसलमानों ने हर ऐसे वर्ग का साथ देने का फ़ैसला कर लिया है जो सब से ज़्यादा उत्पीड़ित और सताया गया हो.

हिंदुओं और मुसलमानों की समस्या को अलग-अलग चश्मे से देखने वाले डॉ. फ़रीदी को सच्ची बात कहने पर ख़ुद को पाकिस्तानी एजेंट कहे जाने का भय दिखा, परंतु उन्होंने कहा कि सच्चाई से मैं मुँह नहीं मोड़ सकूंगा, बल्कि कहना चाहिए मानवीय अधिकारों के वर्ष १९६८ में उत्पीड़ित और सताये गये वर्गों के लोगों को एकता-सूत्र में बाँधने के लिए मैं कटिबद्ध हूँ.

श्याम सुंदर : अजीबोग़रीब सुझाव

कांग्रेस का दोष : अल्पसंख्यक और पिछड़ी जाति के इस सम्मेलन के उद्घाटन की रस्म द्रविड़ मुन्नेत्र कषगम के ९२ वर्षीय नेता श्री ई. वी. रामास्वामी नैकर ने अदा की. उन का कहना था कि सारी समस्याओं की असल जड़ तो संविधान और कांग्रेस है. संविधान और धर्म सामाजिक अन्याय को स्थापित करते हैं और कांग्रेस सिर्फ़ हिंदुओं की जमात है, जो आज भी सदियों पुराने अंग्रेज़ी शासन-काल से चले आ रहे अन्याय को समर्थन दे रही है. उन का मत था कि हिंदुओं के देवी-देवताओं को समाप्त करने के आह्वान की बात भी संविधान में जोड़ दी जाये तो सामाजिक अन्याय काफ़ी दूर तक कम किया जा सकता है.

अखिल भारतीय अनुसूचित जाति महासंघ के भूतपूर्व अध्यक्ष, 'भीम सेना' के संस्थापक हैदराबाद के श्री श्याम सुंदर ने अल्पसंख्यकों की समस्या के हल के लिए अजीबोग़रीब सुझाव पेश किया. उन का कहना था कि पिछड़े वर्गों और ईसाइयों के लिए छह अलग-अलग प्रदेश बनाये जाने चाहिएँ. श्री श्याम सुंदर ने सम्मेलन के गरमागरम भाषण से बने वातावरण का पूरा लाभ उठाते हुए हरिजनों को उकसाने में कोई कसर बाक़ी नहीं छोड़ी. उन्होंने तो यहाँ तक कह डाला कि हरिजन लोग हिंदुओं में कभी शामिल थे ही नहीं—बल्कि जनगणना में उन्हें भी शामिल कर के उन के प्रति घोर अन्याय किया गया है. उन का कहना था कि ग़ैर-हिंदुओं को हिंदुओं में नहीं शामिल किया जाना चाहिए. इस सम्मेलन में छह स्वशासित राज्यों की स्थापना का सुझाव रखा गया. उस पर राय लेने के लिए संयुक्तराष्ट्र अथवा किसी अन्य अंतरराष्ट्रीय संगठन के तत्त्वावधान में जनमत संग्रह कराया जाना चाहिए.

स्वागताध्यक्ष शेख मुस्तनसरुल्लाह ने सलीस उर्दू में लिखित अपना भाषण पढ़ते हुए कहा, 'मुस्लिम मजलिस मुसलमानों, अक़लियतों (अल्पसंख्यकों), अछूतों और पसमांदा यानी बैकवर्ड क्लासेज के हुक़ूक़ (अधिकारों) का तहफ़्फ़ुज़ (रक्षा) करने वाली एक जमात है. मुस्लिम मजलिस ने यह ज़िम्मेदारी इस लिए उठायी है कि मुसलमानों को मज़लूमों (उत्पीड़ितों) और पसमांदा तबक़ों (बैकवर्ड क्लासेज) की हिफ़ाज़त की तालीम दी गयी है.' सम्मेलन की उपयोगिता बताते हुए उन्होंने कहा, 'इस तरह का कन्वेंशन जिस में वह सब तबक़ात (वर्ग) शामिल हैं जिन के हुक़ूक़ ख़तरे में हैं—लोगों को मज़ीद (अधिक) कम्युनलिज़्म फैलाने से रोकेगा.' आगे उन्होंने मजलिस और मजलिस ऐसी संस्थाओं की ओर से सफ़ाई पेश करते हुए कहा, 'अगर कोई जमात या जमातों और तबक़ात का कोई मुशतरक़ा (मिला जुला) प्लेटफ़ार्म मज़लूम (उत्पीड़ित) और कुचले हुए अवाम (जनता) के हुक़ूक़ दिलाना चाहता हो तो उसे कम्युनल नहीं कहा जा सकता. बल्कि वह तो मुल्क के तमाम तबक़ों को मसावी (बराबरी के) हुक़ूक़ को दिला कर उन में बराबरी का एहसास पैदा करने वाली जमात कहलायेगी, जो दस्तूरे हिंद की सही स्प्रिट को ज़िंदा रखना चाहती है और वह काम अंजाम देने का अज़्म (हौसला) रखती है जिसे हुकूमत को अंजाम देना चाहिए था.'

सम्मेलन में भाग लेने वाले प्रतिनिधियों ने अपने घरों को लौटने से पहले उर्दू को उत्तर प्रदेश की दूसरी सरकारी भाषा बनाने से ले कर संविधान के पिछड़ा वर्ग व अनुसूचित आदिम जातियों के उत्थान से संबंधित ४६ वें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुच्छेद में संशोधन कर के अल्पसख्यकों को भी शामिल करने तक के संबंध में १० प्रस्ताव पास कर डाले. अन्याय और शोषण से मुक्ति तथा समाज में सम्मानजनक स्थान प्राप्त करने के लिए परस्पर निकट आ कर एकता क़ायम करने और अपनी बेहतरी के लिए संगठित रूप से क़दम उठाने का आह्वान किया. इस के अतिरिक्त सरकार से पाठ्यपुस्तकों से ऐसे सभी पाठ निकालने और रेडियो से ऐसे कार्यक्रम प्रसारित न करने की माँग की गयी जिन से धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुँचे.

अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के पुराने ढाँचे में परिवर्तन के लिए केंद्रीय सरकार द्वारा संसद में प्रस्तुत किये जाने वाले प्रस्तावित विधेयक पर सम्मेलन के प्रतिनिधियों ने गहरी चिंता व्यक्त की और माँग की कि विश्वविद्यालय को ज्यों का त्यों रहने दिया जाये.

इस सम्मेलन के बाद प्रदेश के आगामी मध्यावधि चुनाव में मुस्लिम मजलिस का एक शक्तिशाली राजनैतिक दल के रूप में सामने आना निश्चित हो गया है. इस नये दल को मिला कर (अब तक उपलब्ध संख्या के अनुसार) १४ राजनैतिक दल इस बार चुनाव-अखाड़े में अपना भाग्य आज़मायेंगे. पिछले आम चुनावों के बाद से अब तक यहाँ पाँच नये राजनैतिक दलों का जन्म हो चुका है.

दिल्ली

चाह, कुछ करने की

एक बहुत पुरानी कहावत है कि भारत में कभी दूध की नदियाँ बहती थीं. लेकिन आज दूध की नदियाँ बहना तो दर किनार पानी की नदियाँ भी या तो सूखी पड़ी हैं या फिर ज़रूरत से ज़्यादा बह रही हैं. आज नदियों में जब ढंग से पीने का पानी मुहैय्या नहीं होता तो दूध की बात सोचना तो खामख्वाह की माथापच्ची होगी. लेकिन इस माथापच्ची से भी तो छुटकारा नहीं पाया जा सकता. आये दिन हम सुनते हैं कि १० साल पहले जो दूध ४०-५० पैसे किलो मिलता था वह आज डेढ़ और पौने दो रुपये किलो भी नहीं मिलता. गवाले क़ीमतें दिनोंदिन बढ़ाते जा रहे हैं, लेकिन दूध की शुद्धता उसी रफ़्तार से घटती जा रही है. जनता सिवाय सरकार को कोसने और भारत के अतीत का बखान करने के और कुछ नहीं कर पाती. लगातार की जाने वाली आलोचना से बचने के लिए सरकार घबड़ा कर कुछ क़दम भी उठाती है, लेकिन घबड़ाहट में उठाये गये क़दम कभी-कभी हानिकारक और ग़लत भी हो सकते हैं. दिल्ली दुग्ध योजना ऐसे ही एक क़दम का परिणाम है.

दूध लोहे की भैंस का : दिल्ली दुग्ध योजना जब शुरू हुई थी तब लोगों ने इस में कोई दिलचस्पी नहीं दिखायी. जनता के दिमाग़ में यही बात बार-बार घूमती रही कि लोहे की भैंस का दूध पीने से बेहतर है कि कुछ अधिक पैसे खर्च कर के असली भैंस का दूध पीना या कम मात्रा में असली दूध लेना. लेकिन अब भैंस का असली दूध पीना तो आम आदमी के बूते के बाहर की बात तो है ही परंतु लोहे की भैंस भी आज-कल लताड़ती नज़र आ रही है. जिस दूध से कभी लोग परहेज़ किया करते थे उसी दूध को पाने के लिए आज लोग दर-दर की ठोकरें खाते हैं.

अपनी-अपनी शिकायत : इस तरह की सभी शिकायतें और वलवलों का घोल अपने दिमाग़ में घोलते हुए जब **दिनमान** का प्रतिनिधि दिल्ली दुग्ध योजना के अध्यक्ष श्री रमेशचंद्र सूद को मिलने के लिए पश्चिम पटेल नगर-स्थित दुग्ध योजना केंद्र पहुँचा तो उसे सूद बड़े ही सहज, स्पष्ट और साफ़ व्यक्ति

सूद : शिकायतें सभी करते हैं, पर सहयोग...

नज़र आये. दूध बाँटने वाली लड़कियों और लड़कों के व्यवहार के बारे में श्री सूद ने कहा कि उन लोगों के व्यवहार के बारे में ज़रूर आम शिकायत है, लेकिन मुझे कुछ जनता से भी शिकायत है. वह शिकायत यह है कि जिस आदमी को पूरा दूध नहीं मिलता या बिना कार्ड के दूध नहीं मिल पाता उसे या किसी का कार्ड ले कर दूध उसे नहीं दिया जाता तो वह सकते में आ कर शिकायत कर देता है. ऐसे लोगों की शिकायत करने की खासी संख्या है. लेकिन फिर एकदम अपनी ज़िम्मेदारी का अहसास करते हुए साथ ही उन्होंने यह भी कहा कि उन के व्यवहार को देखने, जाँचने और पड़ताल करने के लिए कुछ दूध-वितरण अधिकारी नियुक्त किये गये हैं और वे गाहे-बगाहे डिपो जा कर दूध बाँटने वाली लड़कियों और लड़कों के व्यवहार का पता लगाते हैं. शिकायत आने पर उन के खिलाफ़ आवश्यक कार्यवाही की जाती है. इस काम के लिए ३ वरिष्ठ दूध वितरण अधिकारी और १७ सहायक दूध वितरण अधिकारी हैं. उन्होंने बताया कि घरों में दूध पहुँचाने के लिए एक केंद्रीय डिपो की व्यवस्था की जा रही है. कर्मचारियों के व्यवहार की शिकायत के लिए एक शिकायत-डिब्बा लगाया जायेगा, जो कि डिपो के दरवाज़े के भीतर होगा और उस की चाबी एक दूध-वितरण अधिकारी के पास होगी. ६ सितंबर से दूध मैनेजरों को प्रशिक्षण देने के लिए एक प्रशिक्षण केंद्र भी शुरू किया जा चुका है.

सूची : बात प्रतीक्षा-सूची पर भी चली. श्री सूद ने कहा कि इस समय आम लोगों की सूची में ६२,००० आदमी हैं और अति विशिष्ट लोगों की सूची में १२००. उन्हें विश्वास है कि दीवाली तक अति विशिष्ट लोगों की सूची तो खत्म हो ही जायेगी लेकिन सामान्य सूची से भी काफ़ी लोगों का 'कल्याण' होगा. हरयाणा और उत्तरप्रदेश से अधिक दूध आना शुरू हो गया है और अगर सरकार सख्त क़दम उठा कर दिल्ली से गवालों को हटा दे, जो कि आसपास के गाँवों से आते हैं, तो वह दूध दिल्ली दुग्ध योजना को मिल सकता है और प्रतीक्षा सूची जल्दी खत्म हो जायेगी. दरअसल बात यह भी है कि जब हम अधिक टोकन कार्ड जारी करने की बात करते हैं तो प्राकृतिक प्रकोप भी हमारे आड़े आता है और बाढ़ आदि के कारण हमारी योजनाएँ धरी की धरी रह जाती हैं. सूखे दूध की मात्रा भी इधर कम हो चली है. इसे मँगाने के लिए काफ़ी विदेशी पूंजी की ज़रूरत होती है, जो भारत के पास पर्याप्त रूप में नहीं है. प्रतिदिन २ लाख २८ हज़ार लिटर दूध की बिक्री है, जो और भी बढ़ सकती है. पिछली गर्मियों में दिल्ली प्रशासन ने दूध से खोया न बनाने का जो आदेश निकाला था उस से ६ टन रोज़ाना दूध बढ़ गया था, जिस से इन गर्मियों में अधिक दिक़्क़त नहीं हुई. वैसे मई से अगस्त तक के महीनों में दूध की मात्रा कम हो जाती है, क्योंकि गर्मियों में पोखर और चारा आदि न मिलने के कारण गाय और भैंस दूध कम देती हैं. लेकिन स्थिति को सामान्य बनाये रखने के लिए कुछ आप सहें, कुछ हम सहें वाला सिद्धांत अपनाते हैं—अगर किसी को ३ बोतल दूध मिलता है तो उस को २ बोतल स्टैंडर्ड और एक बोतल टोंड दूध देते हैं. हम ने यह भी आदेश जारी किये हैं कि केवल उस आदमी के दूध में कटौती की जाये जिस के पास ३ बोतलों से ऊपर का टोकन हो. ३ बोतलों तक के टोकन में अमूमन कटौती नहीं की जाती.

व्यापार : सरकार ने व्यापार में टाँग ज़रूर अड़ायी है लेकिन उस ने व्यापार करने का सही ढंग नहीं सीखा. बतौर नाम दिल्ली दुग्ध योजना के अध्यक्ष को बहुत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अधिकार हैं, लेकिन कई माने में ये कुछ भी नहीं. इन पर श्री सूद को विश्वास है कि वे सभी तरह की अड़चनों पर पार पाने का भरसक प्रयास करेंगे. पिछले दिनों दूध के भावों में जो १० पैसे की वृद्धि हुई उस से दिल्ली दुग्ध योजना के राजस्व में काफ़ी वृद्धि हुई और कई वर्षों से जो घाटे की स्थिति चल रही थी इस वृद्धि से उस पर रोक लगी है और अब लगभग 'न लाभ न हानि वाली' स्थिति आ गयी है. बातचीत के दौरान यह भी पता चला कि अगर एक बोतल पर एक पैसा बढ़ता है तो उस से योजना को डेढ़ लाख रुपये का फ़ायदा होता है.

कश्मीर

ग़लत नक्शे : ग़लत विवरण

कश्मीर में शुरू से ही छोटे-बड़े अंतराल के बाद कुछ न कुछ ऐसा होता रहा है जो लोगों को चौंकाने के लिए काफ़ी हो. कुछ वर्ष पहले स्कूली पाठ्यपुस्तकों के कुछ अंशों की ओर इशारा करते हुए कहा गया कि वे राष्ट्रीय हित के विरुद्ध हैं. तब इस के परिणाम में उन पुस्तकों में परिवर्त्तन से ले कर संशोधन तक की कार्यवाही की गयी. इस बीच एक अन्य मामला सामने आया है और वह भी चौंकाने के लिए काफ़ी है. जम्मू-कश्मीर विश्वविद्यालय में राजनीति विज्ञान के एम. ए. के छात्रों के लिए अंतरराष्ट्रीय क़ानून पर एक ऐसी पुस्तक की सिफ़ारिश की गयी है जिस में तिब्बत के संबंध में लिखी हुई कुछ बातें राष्ट्रीय नीतियों से मेल नहीं खातीं. वह पुस्तक इलाहाबाद विश्वविद्यालय के एक प्राध्यापक ने लिखी है. उस में कहा गया है कि 'तिब्बत ने अपनी ओर से कभी भी चीन के चंगुल से मुक्त हो जाने की आकांक्षा ज़ाहिर नहीं की, हालाँकि कुछ विदेशी देशों ने, जिन की दिलचस्पी तिब्बत में थी, उसे स्वतंत्र कराने और संयुक्तराष्ट्र की सदस्यता दिलवाने की माँग ज़रूर की. लेखक के अनुसार 'तिब्बत सन १९११ तक चीन के अधीन था, हालाँकि यह कहा जाता है कि चीनी क़ब्ज़े के पहले तक वह स्वतंत्र था. लेखक ने प्रोफ़ेसर एलेक्ज़ेंडर विक एलक्ज़ेंडर के एक वक्तव्य का हवाला देते हुए इस बात की तरफ़ इशारा किया है कि 'चीन का तिब्बत पर क़ानूनी अधिकार नहीं था. तिब्बत को अपने गणतंत्र का एक हिस्सा बना कर उस ने उस की स्वाधीनता का हनन किया है. ३१ अगस्त १९०७ की बैठक का संक्षिप्त हवाला देते हुए पुस्तक में कहा गया है कि 'इस बात के ऐतिहासिक प्रमाण मौजूद हैं कि चीन सदियों से तिब्बत को अपने साम्राज्य का महज़ एक अंग मानता है. १९०७ में ब्रिटेन और ज़ारशाही रूस ने एक समझौते के अंदर उसे एक विशेष क्षेत्र घोषित किया और इस बात पर सहमत हुए कि उस के बारे में वह कोई भी समझौता चीन के ही माध्यम से करेंगे. दोनों ही ने तिब्बत पर चीन के आधिपत्य को स्वीकार किया. चीन ने बहुत कोशिश की कि तिब्बत पर उस का आधिपत्य स्वीकार कर लिया जाए, लेकिन ऐसा इस लिए नहीं हो सका क्यों कि १९१७ तक आते-आते ज़ारशाही का पतन हो चुका था और तिब्बत में ब्रिटेन का प्रभाव बहुत बढ़ गया था. लेकिन इस के बावजूद चीन को तिब्बत पर क़ानूनी अधिकार में कोई फ़र्क नहीं था. भारतीय नेताओं की तिब्बत की स्वतंत्रता की माँग को लेखक ने शायद नज़रअंदाज़ कर दिया है. उस का कहना कि १९११ की चीनी क्रांति के बाद वहाँ के राष्ट्रपति ने जो अध्यादेश जारी किया था उस में तिब्बत को चीन का अभिन्न अंग घोषित किया गया था. तिब्बतियों ने कभी प्रभुसत्ता संपन्न होने की इच्छा ही नहीं ज़ाहिर की थी. उस का अंतरराष्ट्रीय क्षेत्र में कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं था. इस का कारण यह था कि उसे शुरू से ही चीन का ही एक हिस्सा माना जाता है. १९५१ के पीकिङ समझौते के बारे में लेखक का कहना है कि उस के अंतर्गत तिब्बत को महज़ क्षेत्रीय स्वायत्तता प्रदान की गयी थी. नेतृत्व या प्रशासन की ज़िम्मेदारी संयुक्त रूप से तिब्बत की केंद्रीय सरकार और चीनी सरकार की थी. तिब्बत के बारे में लेखक की इस तरह की राय राजनैतिक पर्यवेक्षकों को भारतीय हितों के विरुद्ध लगती है. उन का कहना है कि तिब्बत पर चीनी क़ब्ज़े से पहले तक ल्हासा लद्दाखी बौद्धों के लिए आध्यात्मिक घर की तरह था. एक दिलचस्प बात यह है कि बहुत से लद्दाखी नेता, जिस में संसद्-सदस्य कुशक बकुल और लद्दाखी मामलों के एक भूतपूर्व मंत्री भी शामिल हैं, आज भी यही कहते हैं कि भारत और चीन के संबंध तब तक नहीं सुधर सकते जब तक कि तिब्बत स्वतंत्र नहीं हो जाता. ये नेता तिब्बत को भारतीय लद्दाख का एक अंग मानते हैं.

दूसरी भूल : राज्य सरकार के प्रकाशन विभाग द्वारा आठवीं कक्षा की भूगोल की पुस्तक में कुछ ग़लत नक्शे प्रकाशित किये गये हैं. मुख्यमंत्री श्री सादिक़ भी यह स्वीकार करते हैं. उन्होंने कहा कि राज्य सरकार की पाठ्यपुस्तकें प्रकाशित करने वाला विभाग २१ वर्षों के बाद भी सही पाठ्यपुस्तकें प्रकाशित करने के क़ाबिल नहीं हो सका. उन्होंने यह भी स्वीकार किया कि राज्य सरकार ने जो नक्शे छापे उस पर भारत के नक्शों के सर्वेयर ने यह कह कर आपत्ति की थी कि नक्शों में चौहद्दियाँ बिलकुल ग़लत दी गयी हैं और उन से भारतवर्ष की क्षेत्रीय अखंडता पर प्रहार होता है. श्री सादिक़ ने राज्य प्रकाशन विभाग की अक्षमता पर खेद प्रगट करते हुए कहा कि वह २१ वर्षों के बाद भी छात्रों के लिए संतोषजनक सामग्री प्रस्तुत करने में क़ामयाब नहीं हुआ. इस की वजह से राष्ट्रीयतावाद की भावना विकसित होने की जगह पर संकुचित हुई है. इस विभाग की न कोई नीति है, न कोई योजना है और न कोई चरित्र है. लगता है कि इस में कोई सूझ-बूझ का ही अभाव है. श्री सादिक़ पुस्तकें प्रकाशित करने वाले राज्य के उस विभाग की चाहे जितनी भी निंदा करें लेकिन इतना सच है कि छात्रों को पाठ्य-पुस्तकों के रूप में जो चीज़ें पढ़ने को दी जाती हैं वह बहुत असंतोषजनक हैं. इन पुस्तकों का चलन राष्ट्रीयता की भावना को धक्का दे सकता है, अतः ज़रूरी है कि उन की क़ायदे से जाँच-पड़ताल की जाए.

राम-झरोखा

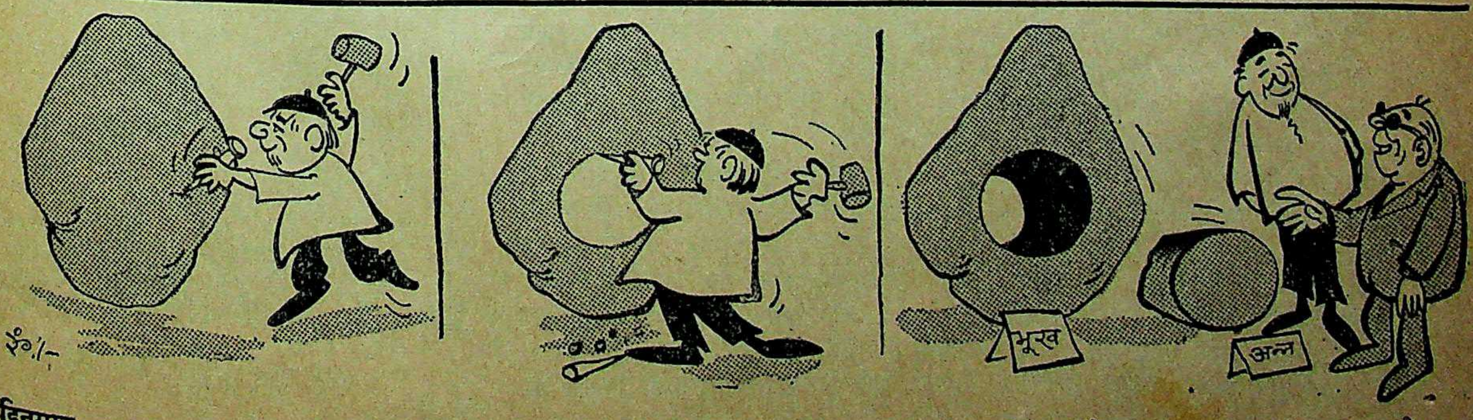

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आयोजना : कितनी पूरी, कितनी अधूरी

मध्यप्रदेश को विभिन्न आयोजनों से बहुत कुछ मिला है, लेकिन कुल मिला कर बहुत कम मिला है. बात कुछ विचित्र-सी है, किंतु वास्तविकता यही है. भिलाई इस्पात कारखाना, भोपाल का हेवी इलेक्ट्रिकल, चंबल जल-विद्युत योजना, नेपानगर का न्यूज़ प्रिंट कारखाना, होशंगाबाद का सिक्यूरिटी पेपर मिल आदि बहुत ही बड़ी-बड़ी चीज़ें मिलीं. हज़ारों ग्रामों में बिजली पहुँची. होशंगाबाद पर बने नर्मदा पुल ने पहली बार उत्तर-दक्षिण को जोड़ा. लघु उद्योग खुले––किसानों में खुशहाली भी आयी, किंतु....

किंतु इस प्रदेश की धरती अभी प्यासी है. नर्मदा नदी अभी भी कुँआरी है; उस का जल, जो प्रदेश की लाखों एकड़ भूमि को हरा-भरा करने की क्षमता रखता है, व्यर्थ समुद्र में जा रहा है और उस के बँटवारे के लिए मध्यप्रदेश और गुजरात लड़ रहे हैं. इंदौर जैसा बड़ा नगर पीने के पानी को तरस रहा है. राजधानी भोपाल गंदगी का नया कीर्तिमान स्थापित कर रही है; सैकड़ों गाँव ऐसे हैं जहाँ पीने के पानी के लिए एक कुआँ तक नहीं है और शिक्षा, अस्पताल और विद्युत-प्रकाश से वंचित ग्रामों की संख्या सैकड़ों में नहीं हज़ारों में है. जहाँ कुछ किसान कृषि के नये तरीक़े अपना कर पैदावार बढ़ा रहे हैं वहाँ छोटे किसान और भूमिहीन ग्रामवासी पेट भर अन्न भी नहीं पाते. आदिवासी-क्षेत्र उतना ही पिछड़ा है जितना २० वर्ष पहले था और हरिजनों की स्थिति में जो सुधार हुआ है वह बहुत कम है.

किसानों, दूकानदारों और व्यवसायियों से हुई बातचीत का एक ही निष्कर्ष निकल पाया कि इन पंद्रह वर्षों में शिक्षा-दीक्षा, रहन-सहन का स्तर तो ऊँचा हुआ किंतु आर्थिक दृष्टि से बहुत बड़ा परिवर्तन नहीं हुआ. लोगों के घरों, बैठकखानों में आवश्यक-अनावश्यक बहुत-सी चीज़ें जुटीं तो किंतु वे सुख की नींद ले पाने में समर्थ नहीं हुए.

आयोजनों का लाभ मिला, लेकिन समाज के उन मुट्ठीभर लोगों को जिन्होंने येन-केन-प्रकारेण सत्ता एवं सत्ताधारियों को किसी तरह प्रभावित करने की चतुराई सीख ली. कर्ज़-तकावी, सुधरे हुए कृषि-औज़ार और रासायनिक खाद का वितरण बड़े पैमाने पर हुआ, लेकिन इस से लाभ उठाने वाले किसानों को बड़े कटु अनुभव हुए. दलालों से ले कर छोटे अधिकारियों एवं बड़े अधिकारियों तक की एक ही भाषा थी और किसान यह सोचने को मजबूर हुआ कि साहूकार सरकार से अधिक सुविधाप्रद है. अपढ़ किसानों के बीच अंग्रेज़ी का शब्द इन दिनों बहुत लोकप्रिय है––'डिफ़ॉल्टर'. आज स्थिति यह है कि अधिकारी किसान सरकारी बही-खाते में 'डिफ़ॉल्टर' घोषित कर दिये गये हैं. वे अब तमाम शासकीय सहायता के लिए अयोग्य हो गये हैं. विभिन्न व्यवसायों में लगे इस क्षेत्र के व्यवसायियों को छोड़ कर शेष की हालत अंदर से खोखली हो गयी है. आकस्मिक लाभ उन पाँच प्रतिशत व्यवसायियों ने कमाया जो सरकार––कांग्रेस एवं संविद दोनों को प्रभावित कर सकने में कामयाब हो सके; चावल से ले कर गुलाबी चना या दाल-बेसन का परमिट हासिल कर सके या फिर शासन की अस्थिर नीतियों का लाभ उठा कर जिन व्यवसायियों ने छोटे-बड़े पैमाने पर तस्कर-व्यापार किया. शेष ९५ प्रतिशत व्यवसायी खामोश बैठे रहे, या उन्होंने अपना व्यवसाय बंद कर दिया.

यों यदि सरकारी आँकड़े लिये जायें तो प्रदेश में चहुँमुखी तरक़्क़ी हुई है. शिक्षा को ही लीजिए. योजना-काल के पूर्व मध्यप्रदेश में केवल एक विश्वविद्यालय था––आज ८ हैं और नौवें की तैयारी है. किंतु न केवल शिक्षा का स्तर भयानक रूप से गिरा है बल्कि ये विश्वविद्यालय दलबंदी, भाई-भतीजावाद और भ्रष्टाचार के अखाड़े हो गये हैं. इंजीनियरिंग कॉलेजों और पॉलिटेक्निकों की भरमार हो गयी––किंतु आज इंजीनियरों को ओवरसियरों का काम तक नहीं मिलता. सैकड़ों की संख्या में कॉलेज, हायर सेकेंडरी स्कूल तथा मिडिल व प्राइमरी स्कूल खुले, किंतु इस से अनुशासनहीन, ग़ैर-ज़िम्मेदार, आरामतलब, सिद्धांतहीन और असंतुष्ट युवाजनों का एक नया वर्ग उत्पन्न हुआ है जो नित नयी समस्याएँ पैदा कर रहा है.

उज्जैन ज़िले के एक ग्राम लिंबोदित के एक संपन्न किसान **मुन्नालाल शर्मा** : योजना-काल में एक माध्यमिक शाला और खोल दी गयी है. १५ कुएं भी इस बीच ही खोदे गये हैं. इस ग्राम को उर्वरा धरती की यह देन है कि यहाँ उन्हालू और स्यालू दोनों ही फ़सलें अच्छी होती हैं. गत वर्ष जब कुछ क्षेत्रों में सूखा की स्थिति थी तब भी यहाँ दोनों ही फ़सलें अच्छी हुई हैं.

इसी प्रकार एक और युवक **मदन लाल** (जो उज्जैन से ६ मील की दूरी पर स्थित ग्राम उडासे के हैं तथा मार्केटिंग सहकारी समिति, उज्जैन, के अध्यक्ष भी हैं) १५० बीघा ज़मीन के बावजूद भी संतुष्ट नहीं हैं, क्योंकि अधिकतर चकों पर ऐसे लोगों का कब्ज़ा है जो व्यापारी और व्यवसायी हैं. यहीं किसान मजदूर हो गया है क्योंकि उत्पादन तो श्रमजीवी किसान और श्रमिक ही करता है. मदनलाल ने बताया कि योजना की सब से उपलब्धि तो यह है कि उडासा के बड़े तालाब में टंकी और एंजन लगाये गये. इस पानी का वितरण उद्योगों के लिए हो रहा है. तालाब से कुछ नहरें भी निकाली गयी हैं. किंतु कृषक की स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं आ सका है. इस का प्रमुख कारण वर्त्तमान ग़रीबी-महँगाई और उन के पास ज़मीन का नहीं होना है. शासन द्वारा दी

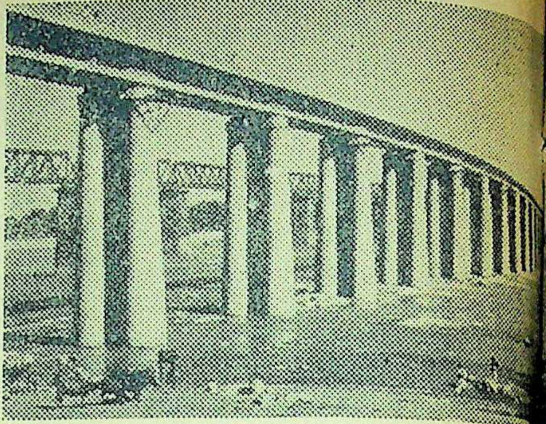

होशंगाबाद के पास नर्मदा नदी पर पुल : उत्तर दक्षिण

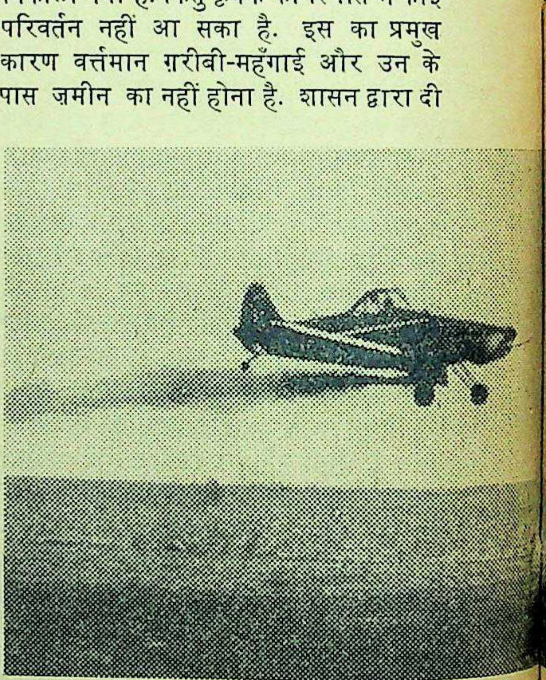

कीटनाशक औषधियों का छिड़काव : सुरक्षा

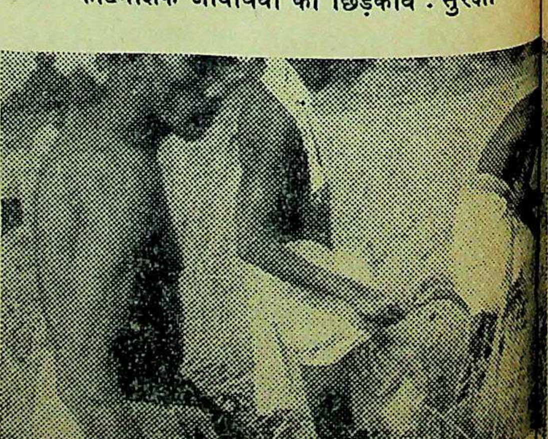

पोड़ी गाँव के पास एक खेत : संघर्ष

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गयी सुविधाओं का सही उपयोग तभी संभव है जब वे ज़मीन किसानों को बाँटी जावें. वैसे योजना-काल में उडासा ग्राम ने अपने लिये कम, किंतु उद्योगों को पानी दे कर महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है.

उज्जैन से ६ मील पर एक ग्राम **नयी खेड़ा** है. योजना काल के प्रारंभिक दौर में वहाँ प्रयत्न करने के बाद रेलवे स्टेशन बन गया. इस ग्राम के एक सामान्य कृषक **भैरवसिंह तोमर** ने बताया कि इस छोटे से ग्राम के लिए योजना-काल में स्टेशन के अलावा कोई प्रमुख उपलब्धि नहीं बतायी जा सकती है. कृषि सेवा सहकारी समिति के माध्यम से बैंक से कुएँ आदि बनवाने के हेतु ऋण दिये जाते हैं, किंतु एक कुएँ के लिए तीन हज़ार रुपया स्वीकृत होता है, जो अपर्याप्त है. इस ऋण में से २० प्रतिशत समिति में जमा कराना होता है. परिणामस्वरूप किसान को कुल चौबीस सौ रुपया ही प्राप्त हो पाते हैं. इन चौबीस सौ रुपयों में न तो कुआँ बन पाता है और न ही किसान उन का कोई अच्छा उपयोग कर पाता है. परिणामस्वरूप किसान बैंक और साहूकार के दोहरे क़र्ज़ के भार से दब जाता है. इस ग्राम की व्यथा-कथा यही है. यही कारण है कि खेती की दशा में कोई उल्लेखनीय प्रगति नहीं हो सकती है. बल्कि जो भी स्थिति किसान की पहले ही से चली आ रही है उसी को बनाये रखना एक समस्या है.

इसी ग्राम के एक समर्थ किसान **जुगलकिशोर** हर दृष्टि से गाँव में आदरणीय हैं. मेरे निमंत्रण पर जब वह **मनराखनलाल** की बैठकखाने में पहुँचे तो वह सभी वर्गों और श्रेणी के सदस्य किसान उठ खड़े हुए और 'पायलागी' कहकर आशीर्वाद लिया. जुगलकिशोर के संयुक्त परिवार में कुल १५ सदस्य हैं. वह ७० एकड़ भूमि के मालिक हैं तथा खेती पर प्रतिवर्ष २० हज़ार पये व्यय कर इतनी ही राशि बचा लेते हैं. सात बच्चों में से अभी दो बच्चों की शादी की है. एक दर्जन से अधिक बार तीर्थ-यात्राएँ की हैं. श्री मनराखनलाल जी में और इन में न केवल गहरी मैत्री है बल्कि दोनों के विचारों में बहुत अधिक साम्य है. दोनों के अनुभव एक-से होने के बावजूद भी श्री मनराखन में लगन और संघर्ष की शक्ति अधिक है. यही कारण है कि समृद्धि की शांति जितनी जुगलकिशोर को मिल पायी है उतनी ही **मनराखनलाल** को नसीब नहीं हुई. सुविधाओं में भी वे संपन्न हैं. इसी ग्राम के सब से अनुभवी सब से छोटे तथा सब से भोले किसान श्री **पुसुरुसिंह** छत्तीसगढ़ के किसानों का सही प्रतिनिधित्व करते हैं. अपनी मेहनत-मसक्कत के बल पर ६० वर्ष की आयु में वह सिर्फ़ ३ एकड़ ज़मीन अर्जित कर सके. ज़मीन तो पूरी सलामत है किंतु तीन भैंस, तीन में से दो बच्चे भगवान को प्यारे हो गये. वह अपनी खेती स्वयं करते हैं. इस के बावजूद बीज और खाद में लगभग साढ़े तीन सौ रुपये ख़र्च कर देते हैं. शासन की सहायता के नाम पर डरते-डरते बीज और खाद ली. आगे हिम्मत नहीं कर सके. कुआँ बनवाने तक के लिए तकावी नहीं ले सके. सुधरे औज़ार देख ज़रूर लिए हैं, किंतु उन्हें ख़रीद सकने की क्षमता नहीं है. लड़के की शादी कर ली है और तीन बार तीर्थ-यात्रा कर आने के लिए पैसे जुटा लिये हैं.

बिलासपुर से १५ किलोमीटर पर एक गाँव है **पोंडी**. इस गाँव के सरपंच एवं संघर्षशील किसान **मनराखनलाल कौशिक** स्वावलंबी बनने का सपना तब से देख रहे थे जब देश गुलाम था. असामयिक वर्षा से त्रस्त श्री कौशिक ने बिजली के पंप द्वारा सिंचाई की व्यवस्था करने की योजना सन् १९५२ में बनायी थी. तब वह नवयुवक थे. समूचे गाँव पर उन का प्रभाव था और गाँव के लोग उन के इशारे पर जीने-मरने को तैयार थे. वे बिलासपुर से ले कर नागपुर तक का चक्कर लगाते रहे, किंतु उन के गाँव तक बिजली न पहुँच सकी. प्रयासों की एक सिलसिलेवार कहानी, कठिनाइयों, संघर्षों, कटु अनुभवों की एक दास्तान. हार न मानने की एक अप्रतिम जिद, जो १९६१ में पूरी हुई. पूरे नौ साल बाद बिजली आयी. गाँव जगमगा उठा. पंप लगने शुरू हुए. गर्मी के दिनों में भी खेत लहलहाने लगे.

बिलासपुर नगर की चावल मिल तथा अन्य कई छोटे-बड़े व्यवसायों के संचालक ने अपनी चावल मिल बंद कर देने की घोषणा के साथ अपना बयान प्रारंभ करते हुए बताया कि व्यवसाय अब ईमानदार एवं प्रतिष्ठित लोगों के लिए नहीं रह गया है. शासन की अस्थिर नीति, पाबंदियाँ, पेचीदगियाँ, क़ानूनी उलझनों एवं नौकरशाही के कारण व्यवसाय भी अब मात्र भ्रष्ट तरीक़े से किया जा सकता है. आज व्यवसाय से सिर्फ़ ५ प्रतिशत लोग लाभ अर्जन कर रहे हैं, जो हर प्रकार के भ्रष्ट तरीक़े अपनाने की सहूलियत हासिल करने में सफल हो सके हैं.

आयोजित प्रगति को ऊपरी और दिखावटी निरूपित करते हुए उन्होंने बताया कि यह सच है कि लोगों के घरों में सोफ़ा सेट, रेफ़्रीजरेटर, रेडियो एवं ट्रांज़िस्टर आ गये हैं, किंतु अंदर से सब की हालत खोखली है. यदि आय बढ़ी है तो चीज़ें महँगी हुई हैं. शौक़ बढ़े हैं तो उस का मूल्य भी चुकाना पड़ा है. कुल मिला कर समाज की आर्थिक स्थिति १५ वर्ष पहले जहाँ थी उस से ऊपर नहीं उठ सकी, बल्कि लोगों में चिंता, भय, असुरक्षा की भावना और बढ़ी है. नये उद्योगों को लोगों को रोज़गार ज़रूर मिला, किंतु बेकारों की संख्या कम नहीं हुई.

बिलासपुर नगर के सब से अधिक लोकप्रिय टेलर मास्टर **एम. ए. रज़्ज़ाक** कुशल मास्टर ही नहीं बल्कि सही अर्थों में मज़दूरों के प्रतिनिधि हैं. **रज़्ज़ाक मास्टर :** अब ऐसी स्थिति नहीं है कि लोग शरीर ढकने के लिए कपड़ा पहनते हैं. आपने बताया कि खादी के कपड़े के प्रति लोगों का मोह नहीं रह गया है. नगर में हज़ारों परिवार टेरिलीन के लघु उद्योग से बँधे हैं. लोगों को रोज़ी-रोटी मिल रही है, किंतु उन कारीगरों की आर्थिक स्थिति में बड़ा सुधार नहीं हुआ है. लगभग वही परेशानियाँ--नोन-तेल-लकड़ी की चिंता उन्हें बनी हुई है.

रामसहाय सक्सेना (संसद-सदस्य, विदिशा) ने बताया कि योजना-काल में विदिशा ज़िले में पॉलीटेकनिक कॉलेज, इंजीनियरिंग कालेज, प्रेस मेटल इंडस्ट्री आदि की स्थापना हुई, किंतु बिजली और आबपाशी की उचित व्यवस्था के अभाव में पैदावार जैसी बढ़नी चाहिए थी नहीं बढ़ी.

योजनाओं का होना आवश्यक है, किंतु शासकीय कर्मचारियों में जब तक राष्ट्रहित का दृष्टिकोण न हो कोई लाभ नहीं हो पाता. भ्रष्टाचार काफ़ी बढ़ गया है.

विदिशा के ही एक व्यापारी **भवानजी भाई :** योजना काल में व्यापार जिस तरह चौपट हुआ है वैसा पहले कभी नहीं था. शासन द्वारा क़दम-क़दम पर हस्तक्षेप तथा शासकीय कर्मचारियों की बढ़ती हुई भ्रष्टाचार-प्रवृत्ति ने व्यापारी-वर्ग में असंतोष बढ़ाया है. शासन के हस्तक्षेप से सर्वसाधारण को कोई लाभ नहीं. व्यापारी-वर्ग की प्रतिष्ठा को बहुत धक्का लगा है. हर बात के लिए व्यापारी-वर्ग की निंदा की गयी है, जब कि भ्रष्ट आचरण शासकीय कर्मचारियों का ही रहा है.

नरसिंहपुर ज़िले के **गोवर्धनसिंह पटेल** साधारण स्थिति के कृषक हैं. आयु ४२ वर्ष है और इन के ६ लड़के व २ लड़कियाँ हैं. वार्षिक आय लगभग एक हज़ार दो सौ रुपये है. इन का कहना है कि योजनाओं से लाभ मुख्यतः संपन्न तथा तिकड़मी लोगों को ही हुआ है. इन लोगों का एक वर्ग बन गया है, जो सभी प्रकार से जायज़-नाजायज़ लाभ उठा कर अपना प्रभाव बढ़ा रहे हैं. उन के जैसे साधारण कृषक को योजना का वास्तविक लाभ नहीं मिल पाया है.

श्री पटेल ने योजनावधि में सुधरे क़िस्म के औज़ार व सिंचाई-साधनों पर लगभग १०० रुपये व्यय किये. परिवार में दो शादियाँ कीं. प्रथम योजना में उन्हें कोई सहायता नहीं मिली. किंतु दूसरे आयोजन की अवधि में ४०० रुपये की तक़ावी और तीसरे आयोजन की अवधि में २०० रुपये की शासकीय सहायता मिली है. अपने मताधिकार का उपयोग करने के अलावा यह राजनीति में किसी प्रकार का भाग नहीं लेते हैं.

४८ वर्षीय श्री **पूनमचंद कोठारी** एक संपन्न दूकानदार हैं. इन के तीन लड़के व तीन लड़कियाँ हैं. वार्षिक आय ६०,००० पये है. योजना के पूर्व उन की वार्षिक आय लगभग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनराखनलाल

भगवानदास राठी

चरणसेवक साहू

पीयूष कांति मुखर्जी

५००० रुपये थी. वह अब बारह गुनी हो गयी है. योजनावधि में इन की प्रतिष्ठा में काफ़ी वृद्धि हुई है. इन का कहना है कि योजनाओं से आम जनता के जीवन-स्तर में वृद्धि होने से उन का व्यापार भी चमका है.

श्री **जीवनलाल राय** मध्यम स्थिति के दूकानदार हैं. आयु ३८ वर्ष है और परिवार में तीन लड़के व एक लड़की है. इन की वर्तमान वार्षिक आय ८००० रुपये है, जब कि आयोजनों के पूर्व २००० रुपये थी. इन्हें इस अवधि में तीन हज़ार रुपये की शासकीय सहायता भी मिली है और ये लगभग ५०० रुपये वार्षिक कर देते हैं. इन का कहना है कि उन की वास्तविक आय में कोई वृद्धि नहीं हुई है, क्यों कि पिछले १५-१६ वर्षों में मूल्य चौगुने हो गये हैं. सरकार ने काफ़ी रुपया खर्च किया है, किंतु उस का वास्तविक लाभ कुछ खास लोगों को ही मिला है. यह बात दूसरी है कि नयी सड़कें बनने, नये स्कूल खुलने और कहीं-कहीं अस्पतालों की सुविधा हो जाने से सामान्य वर्ग को भी कुछ लाभ पहुँचा है.

कमलकुमार त्रिवेदी एक बहुत ही छोटे परचूनों के दूकानदार हैं. त्रिवेदी का कहना है कि पूंजी की कमी के कारण उन का व्यापार प्रगति नहीं कर पा रहा है. उन को शिकायत है कि तीनों योजनाओं में उन्हें किसी प्रकार की शासकीय सहायता नहीं मिली—वास्तव में छोटे दूकानदारों को किसी प्रकार की शासकीय सहायता दी भी नहीं जाती.

छोटेलाल (३५ वर्ष, नरसिंहपुर) अपनी स्थिति से संतुष्ट हैं. शासकीय सहायता के कारण उन के व्यापार में अच्छी प्रगति हुई. उन के प्रति सवर्णों का व्यवहार भी सुधरा है. और छुआछूत की भावना भी कम हुई. किंतु इस के बावजूद उन्हें अधिकतर सवर्ण बराबरी का दर्जा नहीं देते हैं.

६२ वर्षीय **रमेशकुमार** विदिशा में कपड़े धोने का व्यवसाय करते हैं. योजना-काल में इन्हें शासन से ८०० रुपये का क़र्ज़ और २०० रुपये का अनुदान प्राप्त हुआ है. शासन की सहायता से उन्होंने एक छोटा-सा मकान बनाया है. इन का कहना है कि उन के पास कपड़े धोने की आधुनिक मशीन नहीं है और घर के लोग कपड़े धोने के काम में रुचि नहीं ले रहे हैं. इस से व्यवसाय में संतोषजनक प्रगति नहीं हो पायी है.

इन का कहना है कि छुआछूत की भावना कम हो रही है और सवर्णों का व्यवहार भी सुधर रहा है, किंतु इस के मूल में राजनीति है. सवर्ण आज भी हम लोगों से रोटी-बेटी का व्यवहार करने को तैयार नहीं हैं.

नरेंद्रसिंह कृषक ने, जिन्हें हाल ही में कृषि के कारण पद्मश्री प्राप्त हुई है और जो इस समय मध्यप्रदेश में कैबिनेट स्तर के मंत्री हैं, कहा कि योजनाओं से क्या हुआ है, यह देखना हो तो टीकमगढ़ जाइये. यहाँ इस वर्ष इतना गेहूँ हुआ है कि रखने की जगह नहीं है और यह छोटा-सा जिला अब तक लगभग एक लाख क्विंटल गेहूँ लेवी में ख़ुशी-ख़ुशी दे चुका है. लेकिन नरेंद्रसिंह की तरह खुशक़िस्मत और आस्थावान व्यक्ति बहुत कम हैं.

३६ वर्षीय **किशनलाल** भोपाल के निकट एक ग्राम बैरसिया के निवासी हैं. उन के अनुसार योजना-काल में उन्हीं स्थानों पर कार्य हुआ है, जहाँ से मुख्यमंत्री, मंत्रीगण अथवा प्रभावपूर्ण विधायक चुने गये हों. उदाहरणार्थ जावरा और विदिशा, जहाँ से क्रमशः कैलाश नाथ काटजू और तख्तमल जैन चुन कर आये थे, चमन हो गये और सीहोर जैसे स्थानों की रौनक उड़ गयी. स्कूल, कॉलेज, अस्पताल, और बिजली सब ऐसे ही स्थानों को मिले हैं जहाँ किसी कारणवश ऐसे लोगों की रुचि रही हो.

इन का कहना है कि इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि आम जनता का स्तर ऊँचा उठा है, किंतु इस से अनेक समस्याएँ भी खड़ी हो गयी हैं. ग्रामवासियों के लिए भी अब चाय और सिनेमा आवश्यक वस्तुएँ हैं और पहले जहाँ दस-बारह कोस पैदल चलना उन के लिए एक साधारण बात थी वहाँ अब एक मील के लिये भी बस आवश्यक है. इस के कारण वास्तविक समृद्धि नहीं आ पायी है. लोगों में खुद कार्य न कर के दूसरों की आलोचना करने की प्रवृत्ति बढ़ी है.

भगवानदास राठी, विदिशा (टाईपिंग संस्था के संचालक) : आयोजनों के बारे में हम कह सकते हैं कि हम ने जितनी क़ीमत चुकायी है उतना प्रतिफल हमें प्राप्त नहीं हुआ. जो कुछ अपेक्षित था वह प्राप्त नहीं हो सका.

इस का कारण योजनाओं में विदेशों का अंधानुकरण तो है ही हम ने भारत की परिस्थितियों के अनुसार योजनाएँ नहीं बनायीं. फिर बहुत-सी योजनाएँ केवल कागजी रह गयीं. इस का कारण वैयक्तिक स्वार्थ एवं भ्रष्टाचार है. किंतु योजनाओं का उज्ज्वल पक्ष भी देखना आवश्यक है। योजनाओं में शिक्षा का विकास हुआ, जीवनस्तर में सुधार हो कर उद्योग धंधों में सिंचाई के साधनों में वृद्धि हुई. नये निर्माण हुए. अनेक लोगों को रोजगार मिला. लोगों का मनोबल बढ़कर विचार करने का दायरा अधिक विस्तृत हो गया.

चरणसेवक साहू (पत्रकार और व्यवसायी) हम पाते हैं कि देश के योजनाबद्ध विकास में बड़े लोग बड़े होते गये, साधारण श्रेणी का वर्ग गिरता रहा और ग़रीब श्रेणी के लोग ग़रीब होते गये, जब कि शासन ज़ाहिरा तौर पर समानता लाना चाहता था. इस में आशातीत सफलता केवल काग़ज़ों की फ़ाइलों तक ही सीमित रही, वे असलियत से काफ़ी दूर हैं.

सरकार को अब चाहिए कि पुनः वह अपनी नीति में आवश्यक परिवर्तन करे और देश के भ्रष्टाचार को सर्वप्रथम मिटाये, जिस के बाद ही देश की वास्तविक प्रगति हो सकती है. वैसे इस अवधि में देश के रहने के स्तर में और शिक्षा के स्तर में तथा कुछ अंशों में कृषि के क्षेत्र में काफ़ी प्रगति हुई है, किंतु यह संतोषजनक नहीं है.

नरसिंहपुर के ही ४५ वर्षीय दर्जी श्री मोहन लाल की पाँच संतानें हैं. और आमदनी है केवल ८०० रुपये वार्षिक. पिछले योजना काल में इन की आय में कोई उल्लेखनीय वृद्धि नहीं हुई. क्योंकि ये पुराने ढंग के कपड़े सीते हैं और आज ऐसी सिलाई की माँग कम है. ये किसी भी प्रकार की बचत नहीं कर पाये हैं. इन का कहना है कि समाज में ग़रीबी के कारण इन्हें कोई महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त नहीं है, वैसे इन के प्रति कोई दुर्भावना भी नहीं है. योजना का लाभ केवल बड़े लोगों, राजनैतिक नेताओं और 'जी हुजूरों' को मिला है. ग़रीब लोग अधिक ग़रीब हुए हैं और अमीर लोग अधिक अमीर.

इतना सब कुछ हुआ और कहीं-कहीं पर तो और अधिक प्रगति हुई है लेकिन जहाँ प्रगति हुई वहाँ जनता का सहयोग तथा शासकीय कर्मचारियों का सेवाभावी और ईमानदारी होना एक विशेष कारण था. जहाँ ईमानदारी की कमी रही योजनाओं का लाभ न मिल सका और जनता की गाढ़े पसीने की कमाई बेकार हो गयी.

आवश्यकता राष्ट्रीय दृष्टिकोण बना कर चलने की है. 'सादा जीवन उच्च विचार' के माध्यम से हम देश की जनता को योजनाओं का लाभ दे सकते हैं. यदि व्यक्तिगत स्वार्थ और लूट-खसोट का अखाड़ा रहे तो योजनाओं का कोई लाभ नहीं.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उपेक्षित का सम्मान

साहित्य, कला, विज्ञान और अन्य क्षेत्रों में असाधारण प्रतिभा और मानव के लिए उपयोगी कार्यों के लिए प्रति वर्ष नोबेल पुरस्कार समिति की ओर से मूल राशि का वार्षिक लाभांश पुरस्कार के रूप में दिया जाता है. इस वर्ष साहित्य के लिए प्रसिद्ध जापानी उपन्यासकार यासुनारी कावाबाता को 'जापानी मन की सहज अभिव्यक्ति' के लिए यह पुरस्कार दिया जा रहा है. तीन वैज्ञानिकों को भी रासायनिक जीव, रासायनिक शास्त्र और औषधिविज्ञान में उपयोगी अनुसंधान के लिए सामूहिक रूप से पुरस्कार देने की घोषणा की गयी है. इन तीन वैज्ञानिकों में एक भारतीय वैज्ञानिक डॉक्टर हरगोविंद खुराना भी हैं.

खुराना : कॉर्नेल विश्वविद्यालय के रॉबर्ट हाले और नेशनल हार्ट इंस्टीट्यूट मेरीलैंड के मार्शल निरेनबर्ग के साथ विस्कांसिन विश्वविद्यालय में काम करने वाले भारतीय वैज्ञानिक डॉ. खुराना को अलग-अलग से एक ही विषय और उद्देश्य के लिए महत्त्वपूर्ण अनुसंधान के लिए ५ लाख २५ हज़ार रुपये का पुरस्कार दिया जा रहा है. डॉ. खुराना ने जीव-रसायन में शिक्षा प्राप्त करने के बाद नोबेल पुरस्कार विजेता सर अलेग्ज़ेंडर टॉड के निरीक्षण में कैंब्रिज विश्वविद्यालय में एक विशेष प्रकार के कोषों–रसायनों के बारे में अनुसंधान आरंभ किया, जिन का संबंध मनुष्य के पैत्रिक गुणों के साथ है. १९५० के बाद ही वह इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि इस प्रकार के बीज-कोषों को मिलाया जा सकता है. ऐसा करने में उन का उद्देश्य यह था कि वह उन रासायनिक पदार्थों का प्रयोगशाला में निर्माण कर सकें जो पैत्रिक गुणों में महत्त्वपूर्ण कार्य करते हैं. डॉ. खुराना के अनुसंधान से पैत्रिक गुणों का सही-सही अनुवाद करने में काफ़ी सहायता प्राप्त होगी. ५१ वर्षीय निरेनबर्ग ने आरंभ में इसी विषय पर साधारण प्रयोगों द्वारा कुछ महत्त्वपूर्ण तथ्यों का पता लगाया, जिन के आधार पर उन्होंने पैत्रिक गुणों की भाषा समझने के संबंध में कुछ महत्त्वपूर्ण परिणाम प्राप्त किये. निरेनबर्ग इस समय इस प्रकार के एक संस्थान के अध्यक्ष हैं. इन्हें १९६५ में राष्ट्रपति जॉनसन ने राष्ट्रीय पदक प्रदान किया था. डॉ. खुराना, निरेनबर्ग और डॉ. हाले के प्रयोगों से प्राप्त परिणामों के आधार पर उन विशेषताओं के आधारभूत सिद्धांतों का अनुवाद किया जा सकेगा जो व्यक्ति के जन्म के साथ ही उसे प्राप्त होते हैं. प्रसिद्ध नोबेल पुरस्कार विजेता प्रोफ़ेसर थ्योरेल के शब्दों में "इस का मतलब यह है कि हमें अचानक पैत्रिक विशेषताओं से संबंधित जीवन की भाषा समझ में आ गयी है. कुछ बीमारियाँ इन्हीं गुणों के ग़लत अंकन से पैदा होती हैं. इन तीन पुरस्कार-विजेताओं ने ऐसी बीमारियों के लिए कोई उपचार तो नहीं बताया है मगर उन्होंने उन स्थानों को लक्षित किया है जिन पर हमें पैत्रिक बीमारी दूर करने के लिए आक्रमण करना होगा."

उपेक्षित प्रतिभा : केंद्रीय शिक्षामंत्री डॉ. त्रिगुण सेन ने डॉ. खुराना को अपनी हार्दिक बधाई भेजी है. मगर डॉ. खुराना को इस बधाई के साथ वे दिन भी याद आ जायेंगे जब कि उन्हें भारत में उपयुक्त नौकरी तलाश करने के सिलसिले में कटु अनुभव हुए थे. कई प्रसिद्ध राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं में उन्हें उन के उपयुक्त पदों के लिए अयोग्य ठहराया गया था. इसी लिए कुंठा और निराशा के वातावरण में डॉ. हरगोविंद संयुक्त राज्य अमेरिका चले गये. उन के निकट के मित्रों का कहना है कि वह

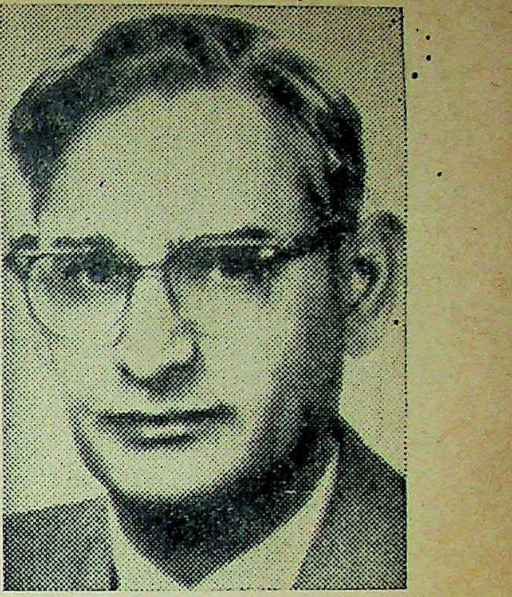

डॉ. खुराना : भारतीय या अमेरिकी ?

स्वभाव से बहुत ही मृदु हैं, मगर भारत के संबंध में बोलते समय उन्हें अकस्मात क्रोध आ जाता है. कुछ वर्ष पूर्व उन्हें अमेरिका की नागरिकता प्रदान की गयी थी, किंतु अब यह देखना है कि पुरस्कार-प्रशस्ति में वह अपने-आप को अमेरिकी नागरिक घोषित किया जाना पसंद करते हैं या भारतीय. डॉ. खुराना की इस अभूतपूर्व सफलता से एक बार फिर भारत की राष्ट्रीय समस्या पर प्रकाश पड़ता है कि प्रतिवर्ष सैकड़ों प्रतिभाशाली वैज्ञानिक, चिकित्सक और अन्य विषयों के विद्वान् अपनी मातृभूमि के वातावरण से असंतुष्ट या निराश हो कर पश्चिमी देशों की शरण में जाते हैं. शिक्षामंत्रालय के अनुमान के अनुसार केवल संयुक्त राज्य अमेरिका में एक हज़ार भारतीय वैज्ञानिक उच्च पदों पर काम करते हैं, जिन में २७ महिलाएँ हैं. इन वैज्ञानिकों में से कुछ कोलंबिया, शिकागो, हारवर्ड, प्रिंस्टन,

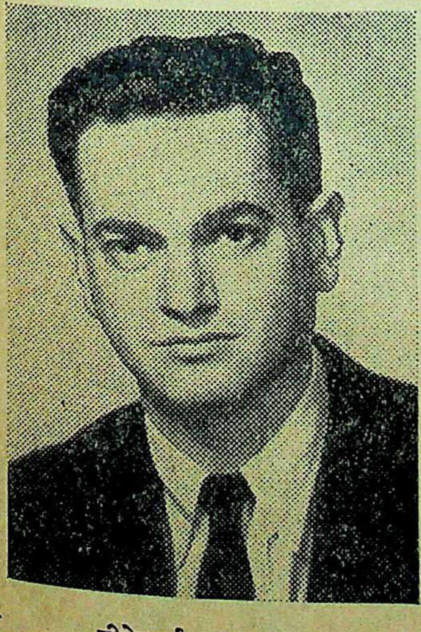

नीरेनबर्ग : सफल प्रयोग

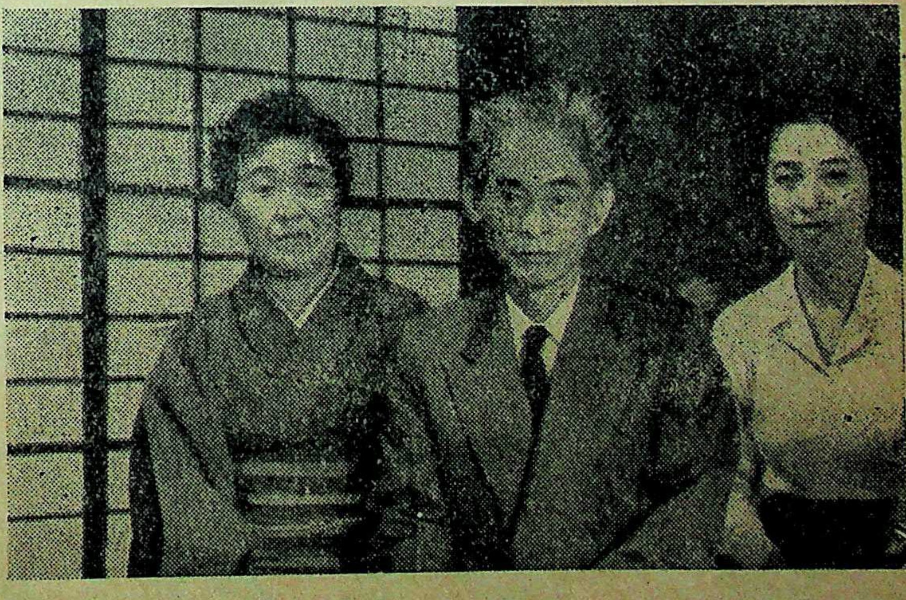

पत्नी और पुत्री के मध्य कावाबाता : अनुवादकों का आभारी हूँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विस्कांसिन आदि प्रसिद्ध अमेरिकी विश्वविद्यालयों में अपने विषय के विभागाध्यक्ष हैं. इसी प्रकार ब्रिटेन और पश्चिम जर्मनी में भी हज़ारों भारतीय काम कर रहे हैं. इन के अतिरिक्त २१ हज़ार के क़रीब भारतीय वैज्ञानिक विभिन्न पश्चिमी देशों में उच्च शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं. इस लिए यह एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण प्रश्न है कि भारतीय प्रतिभा को विश्व के दूसरे देशों की शरण में जाने के लिए जो परिस्थितियाँ बाध्य करती हैं उन को किस प्रकार बदला जाए, क्यों कि हम उस अवस्था में नहीं हैं कि इस प्रकार के निकास को एक सामान्य प्रक्रिया मान सकें. यह ज़रूरी है कि भारत सरकार और भारत की वैज्ञानिक संस्थाएँ इस प्रकार के नियम और परिस्थितियाँ बनायें जिन से भारतीय मूल के वैज्ञानिकों को अपने ही देश में पर्याप्त सुविधाएँ प्राप्त हों. ज़रूरत से अधिक मानसिक और बौद्धिक वातावरण तैयार करने की आवश्यकता है.

यासुनारी कावाबाता : यासुनारी कावाबाता (६९) ने साहित्य में जापान के लिए पहला नोबेल पुरस्कार अर्जित कर के एशियाई पाठकों का ध्यान, जो कि उधर जापानी साहित्य से उचटा हुआ दिखायी देता था, फिर आकृष्ट कर लिया है. यूकीकुनी (हिमप्रदेश) और सेंबाजुरू (हज़ार सारस) उन के ये दो उपन्यास ७-८ भाषाओं में प्रकाशित हो चुके हैं. तोक्यो के बाहर कामाकुरा में, जहाँ बुद्ध की विश्वप्रसिद्ध ९०० टन की मूर्त्ति है, यासुनारी कावाबाता ने ५ लाख ४ हज़ार रुपये के पुरस्कार की सूचना मिलने पर कहा, 'यह मेरे लिए बड़े सम्मान की बात है. न मालूम कैसे मुझे इस सम्मान के लिए चुना गया. हो सकता है कि मेरी पुस्तक का अनुवाद अच्छा हुआ हो. मैं ख़ुश हूँ कि जापानी साहित्य जापान के बाहर भी पढ़ा जा रहा है.'

यूकीकुनी : इस श्रेष्ठ उपन्यास की कथावस्तु है प्रेम. क्या इस धरती पर इंद्रिय सुख की संपूर्णता ही प्रेम है, या कि तृप्ति की अति तृप्ति के सुख को ही नष्ट कर देती है? इच्छा का हतसंज्ञ हो जाना ही क्या प्रत्येक सुख की अनिवार्य परिणति है ?

कावाबाता ने एक समृद्ध, शौकीन मिजाज़, दुनिया की चिंताओं से मुक्त व्यक्ति को नायक बनाया है, जो सुख का विशेषज्ञ है, किंतु प्रेम में सर्वथा असमर्थ है. शिमामुरा नामक इस व्यक्ति का चरित्र-चित्रण कावाबाता ने तीक्ष्ण व्यंग्य के साथ किया है. शिमामुरा पश्चिमी बैले नृत्य के बारे में सब कुछ जानता है, सिवाय इस के कि उस ने उसे कभी देखा नहीं है. बल्कि यह भी संभव है कि उसे बैले दिखाया जाये तो वह आँखें मूँद ले.

नायिका कोमाको एक आरोग्य-विहार में रहने वाली गीशा है. प्रेम से छलकती हुई वह वास्तव में शिमामुरा से गहरा प्रेम करती है. जापान में आरोग्य-विहारों में अकेले पुरुषों के लिए विशेष सत्कार की विशेष व्यवस्था रहती है. शिमामुरा अपने काम से उकता कर कभी-कभी इन रम्य पर्वतीय स्थलों को जाता रहता है और वहाँ कोमाको के प्रति धीरे-धीरे आकृष्ट होता है. कोमाको वेश्या नहीं है यद्यपि विहारों की गीशाएँ नगरों की गीशाओं से अधिक सुलभ हुआ करती हैं. ऐसे विहारों में वैभव, विलास और सौंदर्य का अतिरेक रहता है. शिमामुरा इस सुख में मगन है.

तो भी अंततः यह बात काम नहीं आती. क्यों ? क्योंकि इंद्रियों की प्रतीति ही सब कुछ नहीं है ? क्यों कि शिमामुरा बहुत अधिक आत्मकेंद्रित है ? क्योंकि वह कोमाको से अधूरा प्यार करता है—उस की संस्कारिता और कला-प्रवीणता से प्यार करता है, उस के व्यक्ति से नहीं ? कावाबाता की लेखनी में इंद्रियों की प्रतीतियों का अत्यंत सूक्ष्म चित्रण है. उन्होंने फ़्रांसीसी प्रकृतिवाद में एक अधिक माँसल जापानी बिंबवाद प्रतिष्ठापित किया है. बचपन में वह चित्रकार बनना चाहते थे. यह अधूरी इच्छा उपन्यास में उजागर हुई है.

ओसाका में १८९९ में जन्म, तोक्यो इंपीरियल यूनिवर्सिटी से १९२४ में स्नातक, १९४८ में पी. ई. एन. क्लब के जापानी केंद्र के अध्यक्ष : ये कुछ तारीखें महत्त्वपूर्ण हैं. कावाबाता विख्यात समालोचक भी हैं. पूर्वी देशों के साहित्यों से उन का परिचय और लगाव बना रहता है : नयी दिल्ली से प्रकाशित स. ही. वात्स्यायन द्वारा संपादित वाक त्रैमासिक (अंग्रेज़ी) के संपादकमंडल में उन का अन्यतम स्थान है.

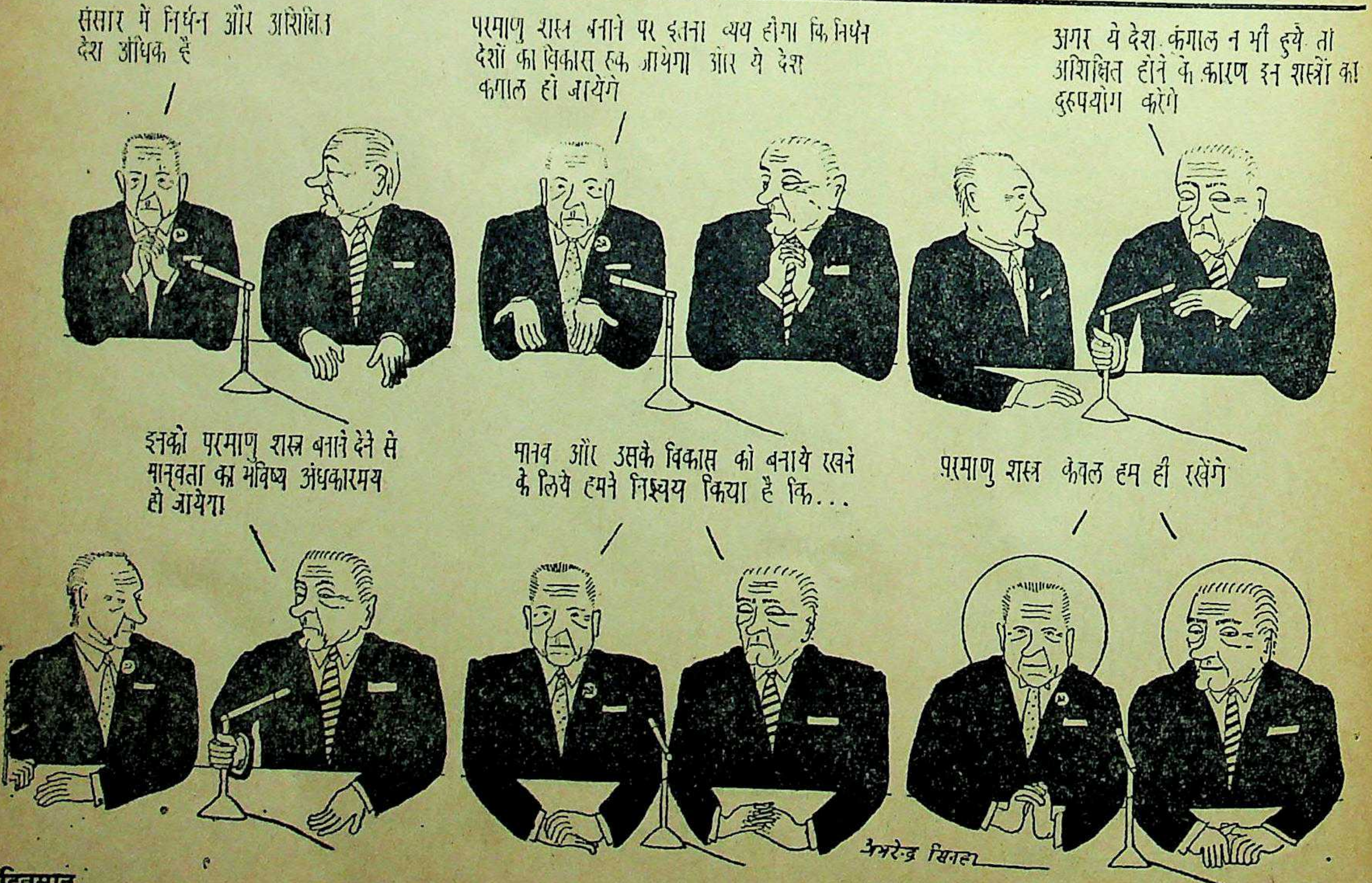

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'लेनिन ने भारत को आज़ादी दिलायी'

नौवें विश्व युवक समारोह की समाप्ति पर सोफ़िया में अपने सुखद प्रवास के बाद भारत लौटते हुए ताशकंद में अपने एक भाषण में भारतीय प्रतिनिधिमंडल के एक नेता ने एक अनोखा रहस्योद्घाटन किया : 'लेनिन ने भारत को आज़ादी दिलायी'. १५ अगस्त को भारत उजबेक मैत्री संघ में भाषण देते हुए स्टुडेंट फ़ेडरेशन के एक नेता ने 'सोवियत आतिथ्य' से कृतकृत्य हो कर कहा कि भारत को लेनिन की प्रेरणा से स्वाधीनता प्राप्त हुई. अपने समूचे भाषण में उन्होंने महात्मा गांधी और अन्य राष्ट्रीय नेताओं का कहीं भी ज़िक्र नहीं किया. इस से धर्म संकट में पड़ कर रूसी मेज़बानों को, जिन में से अनेक भारतीय इतिहास के अध्येता थे, १८५७ से १९४७ तक के भारतीय स्वाधीनता संघर्ष का विश्लेषण करना पड़ा और उन के विश्लेषण में भारत के राष्ट्रीय नेताओं का नाम जितनी बार भी आया हो पर किसी सोवियत नेता का नाम नहीं आया. स्पष्ट है कि वे भारतीय स्वाधीनता की वर्षगाँठ मनाने के लिए इकट्ठा हुए थे, सोवियत क्रांति की सालगिरह नहीं.

धर्म-संकट : ताशकंद में भारत और पाकिस्तान ने दोनों देशों की शांति को ले कर एक समझौते पर हस्ताक्षर किया था. भारतीय प्रतिनिधिमंडल के सदस्यों ने आपसी मारपीट के ज़रिये यह प्रमाणित कर दिया कि भारतीय नेता संधि में जितना भी विश्वास करते हों कम-से-कम वे शांति में विश्वास नहीं करते. १२ अगस्त को ताशकंद पहुँचते ही स्टूडेंट फ़ेडरेशन और यूथ फ़ेडरेशन के प्रतिनिधि ने एक ग़ैर-कम्युनिस्ट नौजवान को अपने सोवियत मेज़बान की उपस्थिति में पीटा. इस का कारण यह था कि वह कांग्रेसी नौजवान फ़ेडरेशन से अपना विरोध बराबर मुखर करता रहा था. १५ अगस्त की रात को फ़ारवर्ड ब्लाक के एक प्रतिनिधि की पिटाई की गयी जिस का नतीजा यह हुआ कि मेज़बानों को शांति स्थापित करने के लिए अपनी पुलिस भेजनी पड़ी. लेकिन भारतीय प्रतिनिधियों ने अपना असली हुनर समरकंद के अपने दो दिनों के प्रवास के दौरान दिखाया. इस प्रवास में समरकंद में किसी भारतीय प्रतिनिधि ने डालर की दूकान में एक क़ीमती घड़ी और रूबल की दूकान में ९६ रूबल पर हाथ की सफ़ाई दिखायी. जब भारतीय प्रतिनिधि समरकंद से ताशकंद लौट रहे थे तब उन्हें चौराहे पर एक युवती रोती हुई मिली. यह युवती उस रूबल की दूकान की संरक्षिका थी जहाँ से भारतीय प्रतिनिधिमंडल के किसी सदस्य ने ९६ रूबल ग़ायब किया था. लड़की के साथ उस का पिता भी था जो प्रतिनिधियों से याचना कर रहा था कि वे उस की बेटी को रूबल वापस कर दें अन्यथा उस की नौकरी खतरे में पड़ जायेगी. थोड़ी ही देर में पुलिस आयी और प्रतिनिधिमंडल के सदस्यों की तलाशी शुरू हुई. ग़ैर-कम्युनिस्टों की जेबें, जिन में कुछ नहीं मिला, देख लेने के बाद तलाशी रोक दी गयी. रूसी मेज़बानों ने कहा कि हम अपने अतिथियों को धर्म-संकट में नहीं डालना चाहते.

नेतृत्व का संकट : शायद इन सब घटनाओं का कारण यह था कि अंत तक यह स्पष्ट नहीं था कि भारतीय प्रतिनिधिमंडल का नेता कौन है. नयी दिल्ली में प्रतिनिधिमंडल के लिए एक अध्यक्षमंडल का चुनाव हुआ था जिस में कुछ संसद सदस्य भी थे. ये संसद सदस्य सोफ़िया देर से पहुँचे और इन में से अधिकतर ग़ैर-कम्युनिस्ट होने के कारण विशेष प्रभावशाली साबित नहीं हुए. काग़ज़ पर दिखाने के लिए वे अध्यक्ष थे लेकिन वास्तव में अध्यक्ष कोई और था. यहाँ तक कि यूथ फ़ेडरेशन के मंत्री श्री चंद्रप्पन भी इस प्रतिनिधिमंडल के कारगर नेता नहीं थे. उद्घाटन के लिए सोफ़िया में उन को नेता बना दिया गया था लेकिन नेतृत्व दरअसल हुल्लड़बाज़ नवयुवकों के हाथ में था. अपनी शिष्टता और शालीनता में श्री चंद्रप्पन ने इस सारी स्थिति से उदासीन ही रहना पसंद किया जिस का पूरा-पूरा फ़ायदा उपद्रवी नौजवानों ने उठाया. भारतीय युवक नेताओं के साथ कोई अधिकारी नहीं था. उन को निष्प्रभ बनाने के लिए मॉस्को की पेट्रिस लुमुंबा युनिवर्सिटी से ५० भारतीय विद्यार्थी और पूर्वी जर्मनी से ११ भारतीय नौजवान बुलाये गये थे. भारतीय प्रतिनिधिमंडल का राजनैतिक नेतृत्व मॉस्को के एक श्री चंद्रन नामक सज्जन के हाथों में था जो कि भारतीय प्रतिनिधिमंडल पर नज़र रखने के लिए मॉस्को से सोफ़िया भेजे गये थे.

राजनैतिक संकट : श्री चंद्रन ने दृश्य के पीछे बने रह कर समूचे प्रतिनिधिमंडल का राजनैतिक नियंत्रण किया. उन्होंने विभिन्न परिसंवादों में ग़ैर-कम्युनिस्टों को हिस्सा लेने का कोई मौक़ा नहीं दिया और अगर दिया भी तो ग़ैर-कम्युनिस्टों के भाषणों की पहले से छान-बीन की गयी. इस तरह सोफ़िया में भारतीय जनता का दृष्टिकोण सामने नहीं आया. सोवियत रूस के भारतीय प्रवक्ताओं की बातें ही सामने आयीं. समारोह में उन्हीं प्रतिनिधियों को आगे आने की इजाजत दी गयी जो कि भारत के विरुद्ध प्रचारतंत्र में शामिल होने के लिए उतावले थे.

देश-निंदा और रूस-भक्ति का जो सिलसिला भारतीय प्रतिनिधियों ने सोफ़िया में शुरू किया था वह उन की ताशकंद की ओर जाने वाली ट्रेन में भी जारी रहा. भारतीय प्रतिनिधियों ने ट्रेन में एक प्रतियोगिता की जिस में सर्वश्रेष्ठ उत्तर देने वाले को शराब की बोतल इनाम में दी गयी. प्रश्न था संसार का सब से बड़ा आदमी कौन है और संसार का सब से कमीना आदमी कौन है ? इस का 'सर्वश्रेष्ठ' उत्तर था : सब से बड़ा आदमी कोसीगिन, सब से कमीना आदमी जॉनसन.

पहले कम्युनिस्ट : केवल राजनीतिक कार्यकलापों में ही नहीं बल्कि सांस्कृतिक प्रतियोगिताओं में भी कम्युनिस्टों को प्राथमिकता दी गयी. बंगाल की श्रीमती सुमित्रा को, जो ग़लती से कम्युनिस्ट नहीं थीं, केवल एक अनुभवी गायिका थीं, संगीत प्रतियोगिता में भाग नहीं लेने दिया गया. उन की जगह कुछ अनर्गल लोगों को आगे बढ़ाया गया जिन के कंठ से ठीक से स्वर भी नहीं फूटे. भारत का मन रखने के लिए इन गायकों को मेज़बानों ने पुरस्कार

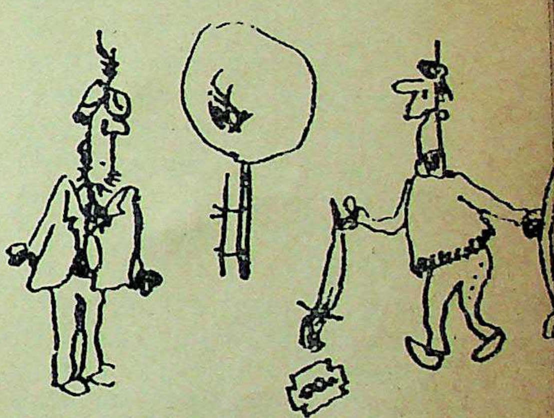

"तुम यह सब भी क्यों नहीं हज़्म कर जाते तुम तो भारतीय प्रतिनिधिमंडल के सदस्य हो'.
विश्व युवा समारोह की अंतरराष्ट्रीय समिति के मुखपत्र 'फ़ेस्टिवल' में प्रकाशित व्यंग्य-चित्र.

भी दिये. भारतीय प्रतिनिधिमंडल में अनुशासन कितना था इस का पता केवल इतने से चलता है कि २८ जुलाई को १४० देशों के प्रतिनिधियों के जुलूस के दौरान केवल भारतीय प्रतिनिधिमंडल का झंडा झुका रहा जैसे कि वह उल्लास का न हो कर शोक का झंडा हो. सोफ़िया निवासियों ने इस दृश्य को व्यंग्य भरी मुस्कान के साथ देखा. भारतीय प्रतिनिधिमंडल के सोफ़िया प्रवास के दौरान ही विश्व युवक समारोह के मुखपत्र ने भारतीय प्रतिनिधिमंडल के भोजन कार्यक्रम को ले कर एक व्यंग्यचित्र प्रदर्शित किया. जिस प्रतिनिधिमंडल का एकमात्र कार्यक्रम अधिक से अधिक भोजन करना और अधिक से अधिक सोना हो उस पर व्यंग्य-चित्र प्रकाशित करने के अलावा और क्या किया जा सकता है.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अमेरिका की विजय : अमेरिका का विरोध

मेक्सिको ओलिंपिक खेलों में अमेरिकी खिलाड़ी न केवल स्वर्ण पदक जीत रहे हैं, बल्कि स्वर्ण अक्षरों से ओलिंपिक का इतिहास भी लिख रहे हैं. अब तक प्राप्त समाचारों के अनुसार 'कौन कहाँ रहा' की सूची में अमेरिका का नाम सब से ऊपर है और यदि इस बीच कुछ अनहोनी न हो जाये तो उस का नाम सब से ऊपर ही रहेगा. लेकिन इस सुखद समाचार के बावजूद अमेरिकी-खेल अधिकारी इतने प्रसन्न नहीं हैं जितने कि परेशान हैं. उन की इस परेशानी का कारण उन के अपने ही खिलाड़ी हैं. अमेरिकी नीग्रो खिलाड़ी एक ओर तो अमेरिका के लिए स्वर्ण पदक बटोर कर देश की प्रतिष्ठा बढ़ा रहे हैं और दूसरी ओर अमेरिकी खेल अधिकारियों के लिए सिर दर्द भी पैदा कर रहे हैं. अमेरिकी नीग्रो खिलाड़ी मेक्सिको ओलिंपिक खेलों में अमेरिका की रंग-भेद की नीति का विरोध करने के लिए शांतिपूर्ण प्रदर्शन करने की योजना बना कर मेक्सिको पहुँचे थे, मगर उन के प्रदर्शन से बात इस हद तक बढ़ जायेगी कि वे विजय मंच (विक्टरी स्टैंड) पर खड़े हो कर राष्ट्रीय ध्वज और राष्ट्रीय धुन का अपमान करने पर उतारू हो जायेंगे इस की किसी ने कल्पना भी नहीं की थी.

पहला विरोध : सोमवार (१४ अक्तूबर) की बात है. दुनिया का सब से तेज़ दौड़ाक जिम हिंस और उन का ही साथी चार्ली ग्रीन अपने-अपने पदक प्राप्त करने के लिए विजय मंच पर खड़े हुए. निश्चित कार्यक्रमानुसार १०० मीटर के फ़ासले के विजेताओं को पुरस्कार देने की रस्म अंतरराष्ट्रीय ओलिंपिक समिति के प्रधान ८१ वर्षीय एवेरी ब्रूंडेज को अदा करनी थी. मगर एन मौक़े पर कार्यक्रम बदल दिया गया. इस के कई कारण थे. एक तो यह कि अमेरिकी नीग्रो खिलाड़ियों ने बहुत पहले इस बात की माँग की थी कि ब्रूंडेज को अध्यक्ष पद से त्यागपत्र दे देना चाहिए. दूसरा यह कि प्रतियोगिताओं के दौरान कुछ नीग्रो खिलाड़ियों ने यह इच्छा ज़ाहिर की थी कि वे एवेरी ब्रूंडेज के हाथों पदक प्राप्त करना नहीं चाहते. ख़ैर, वक्त की नज़ाकत को देखते हुए अमेरिकी खेल अधिकारियों ने पुरस्कार वितरण के लिए इंग्लैंड के एक उच्च अधिकारी को बुला लिया.

समारोह के बाद जब हिंस से इस संबंध में बातचीत की गयी तो उन्होंने कहा—"हम ने ऐसी कोई इच्छा व्यक्त नहीं की थी. हम ने तो केवल इतना ही पूछा था कि हमें पदक कौन प्रदान करेगा. इस प्रश्न के उत्तर में हम से कहा गया ब्रूंडेज. इस के बाद हमने न तो कुछ कहा और न मुस्कराए ही, शायद वे हमारा भाव समझ गये." लेकिन टामी स्मिथ ने, जिन्होंने २०० मीटर के फ़ासले की दौड़ में नया ओलिंपिक रिकार्ड स्थापित किया, कहा—'मैं यह नहीं चाहता कि मुझे ब्रूंडेज पदक प्रदान करें.'

काली शक्ति : उस के बाद अमेरिकी नीग्रो खिलाड़ी टामी स्मिथ और जान कारलस ने तो कमाल ही कर दिया. स्मिथ ने २०० मीटर की दौड़ में स्वर्ण पदक और कारलस ने कांस्य

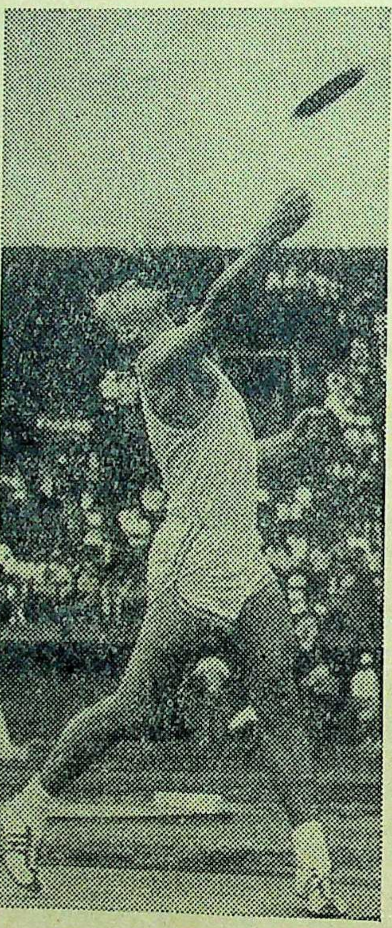

एल्फ्रेड ओएर्टर : स्वर्ण पदक चौथी बार

पदक प्राप्त किया था. ये दोनों खिलाड़ी पुरस्कार प्राप्त करने के लिए विजय मंच पर पहुँचे. स्मिथ की बायीं ओर कारलस और दायीं ओर ऑस्ट्रेलिया के पीटर नार्मन (जिन्हें रजत पदक प्राप्त हुआ था) खड़े थे. इस पुरस्कार वितरण समारोह के समय स्टेडियम में ६०,००० दर्शक बैठे थे. परंपरा के अनुसार विजेता खिलाड़ियों के देशों के राष्ट्र ध्वज लहराये गये और राष्ट्रीय धुन बजायी गयी मगर इन दोनों नीग्रो खिलाड़ियों (स्मिथ और कारलस) ने राष्ट्रीय ध्वज को देखा तक नहीं और राष्ट्रीय धुन की परवाह न कर के अमेरिका की रंग-भेद की नीति के विरोध स्वरूप अपने हाथों को आसमान की ओर उठा दिया. उस समय उन्होंने हाथों पर काले दस्ताने और पैरों में काली जुराबें पहन रखी थीं. बड़े-बड़े बटनों पर यह लिखा हुआ था—'मानव अधिकारों के लिए ओलिंपिक विरोध'. इन खिलाड़ियों द्वारा अमेरिकी विरोध की ख़बर सारी दुनिया में आग की तरह फैल गयी. अमेरिकी खेल अधिकारियों ने तुरंत बैठक बुलाई जो २४ घंटे तक चली. स के बाद अमेरिकी खेल अधिकारियों ने इन दोनों खिलाड़ियों से ४८ घंटे के अंदर ही मेक्सिको से बाहर चले जाने का आदेश दिया और उन्हें ओलिंपिक खेलों से मुअत्तिल कर दिया गया.

अमेरिकी खेल-अधिकारियों द्वारा जारी किया गया यह फ़रमान सही है या गलत इस पर अलग-अलग लोगों के अलग विचार हैं. वैसे अधिकतर लोगों की सहानुभूति अमेरिकी नीग्रो खिलाड़ियों के ही साथ है. रूसी समर्थकों और अमेरिकी समर्थकों की बात छोड़ यदि इस समस्या पर तटस्थ व्यक्तियों से विचार-विमर्श किया जाये तो वे अपनी दो-टूक शैली में यही कहते हैं कि नीग्रो समस्या एक मानवीय समस्या है. क़ानूनी दृष्टि से अमेरिकी खेल-अधिकारी सही हो सकते हैं, मगर इस समस्या पर क़ानूनी दृष्टिकोण की बजाय मानवीय दृष्टिकोण अपनाना ही उचित है. अमेरिकी प्रतिनिधि सभा के नीग्रो सदस्यों ने विदेश मंत्री डीन रस्क से कहा है कि अमेरिकी ओलिंपिक समिति द्वारा की गयी इस कार्रवाई से अफ़्रीकी देशों से हमारे संबंध बिगड़ सकते हैं.

कौन हारा : कौन जीता

मेक्सिको ओलिंपिक खेलों में सब से पहला स्वर्ण पदक जीतने का गौरव केन्या के लंबे फ़ासले के दौड़ाक नफ़तली तेमू को प्राप्त हुआ. २३ वर्षीय केन्या के सैनिक ने १०,००० मी० को २९ मि. २७.४ से. में पूरा किया. वैसे इस फ़ासले का विश्व रिकार्ड २७ मि. ३९.४ सेकिंड है जो कि ऑस्ट्रेलिया के रॉन क्लार्क ने स्थापित किया था. मैक्सिको की ऊँचाई रॉन क्लार्क को रास नहीं आयी और उन्हें इस दौड़ में छठा स्थान प्राप्त हुआ. रॉन क्लार्क की इस हार पर ऑस्ट्रेलियावासियों का निराश होना स्वाभाविक ही था.

अमेरिका के २२ वर्षीय नीग्रो दौड़ाक जिम हिंस को 'दुनिया का सब से तेज़ दौड़ाक' कहलाने का गौरव प्राप्त हुआ. उन्होंने १०० मीटर की दौड़ को ९.९ से. में तय कर के स्वर्ण पदक प्राप्त किया. मुक़ाबले से दो दिन पहले अमेरिका के एक दूसरे नीग्रो खिलाड़ी चार्ली ग्रीन ने यह घोषणा की थी कि मैं इस दौड़ में स्वर्ण पदक प्राप्त करूँगा और उसे दुनिया के नीग्रो खिलाड़ियों को समर्पित कर दूंगा. (देखिए

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिनमान २० अक्तूबर) पर उन्हें केवल कांस्य पदक प्राप्त कर के ही संतोष करना पड़ा.

गोला फेंकने की प्रतियोगिता में अमेरिका के रैंडी मैटसन को स्वर्ण पदक प्राप्त होगा यह बात लगभग सभी को पहले से ही मालूम थी. उन्होंने २० मीटर ५४ (६७ फ़ुट ४।। इंच) गोला फेंक कर स्वर्ण पदक प्राप्त किया. यहाँ यह बता देना उचित होगा कि मैटसन ऐसे पहले खिलाड़ी हैं जिन्हें ७० फ़ुट से भी ज़्यादा दूरी तक गोला फेंकने का गौरव प्राप्त हुआ.

एल्फ़्रेड ओएर्टर : अमेरिका के चक्का फेंकने के चैंपियन ३२ वर्षीय (२५० पौंड वज़नी) एल्फ़्रेड ओएर्टर का नाम अब ओलिंपिक खेलों के इतिहास में स्वर्ण अक्षरों में लिखा जाएगा. वह ऐसे पहले खिलाड़ी हैं जिन्हें लगातार चार बार ओलिंपिक खेलों में स्वर्ण पदक प्राप्त करने का गौरव प्राप्त हुआ है. उन्होंने मेल्बोर्न (१९५६) रोम (१९६०) तोक्यो (१९६४) और मेक्सिको (१९६८) में चक्का फेंकने में स्वर्ण पदक प्राप्त किया. मेक्सिको में उन्होंने ६४.७८ मीटर (२१२ फ़ुट ६$\frac{1}{2}$ इंच) दूर चक्का फेंक कर नया ओलिंपिक रिकार्ड स्थापित किया. इतना ही नहीं, उन्हें पहली बार २०० फ़ुट से ज़्यादा दूर चक्का फेंकने का गौरव भी प्राप्त है. ठीक ऐसे ही जैसे रैंडी मैटसन को पहली बार ७० फ़ुट से ज़्यादा दूर गोला फेंकने का या कि रॉजर बैनिस्टर को पहली बार ४ मिनट से कम समय में एक मील का फ़ासला तय करने का गौरव प्राप्त है. यह गौरव ओएर्टर को मई १९६२ में प्राप्त हुआ जब उन्होंने पहली बार २०० फ़ुट ५।। इंच दूर चक्का फेंका.

मेक्सिको ओलिंपिक में उन्हें सब से ज़्यादा डर या ख़तरा अपने ही देशवासी और विश्व विजेता जै सिल्वेस्टर से था. जीत के बाद उन्होंने कहा—"मैंने उस की ओर देखा तक नहीं क्यों कि मैं जानता था कि वह चक्का फेंकने में बहुत तेज़ है. परंतु मैं उस से हारना भी नहीं चाहता था."

लंबी कूद का नया अध्याय : कुछ खिलाड़ी ऐसे होते हैं जो इंचों के हिसाब से पुराने कीर्तिमानों में सुधार करते हैं पर कुछ ऐसे होते हैं जो फ़ुटों में सुधार करते हैं. अमेरिका के नीग्रो खिलाड़ी २२ वर्षीय बाब बीमन ने ८.९० मीटर (२९ फ़ुट २।। इंच) लंबी सनसनी पूर्ण छलांग लगा कर एक चमत्कार पैदा कर दिया. उधर पाँच मिनट तक ६०,००० दर्शकों की तालियाँ बजती रहीं और इधर निर्णायक बार-बार फ़ीता ले कर दूरी नापते रहे. कोई इस बात की कल्पना भी नहीं कर सकता था कि राल्फ़ बोस्टन के रिकार्ड में कोई खिलाड़ी २ फ़ुट (इंच नहीं) का सुधार कर दिखाएगा. सवा छः फ़ुट लंबे जमैका में जन्मे इस खिलाड़ी को उन की इस महान उपलब्धि पर सब से पहले राल्फ़ बोस्टन ने बधाई दी.

बाँस कूद में भी २१ वर्षीय कैलिफ़ोर्निया विश्वविद्यालय के छात्र बाब सीग्रेन ने स्वर्ण पदक प्राप्त किया. भाला फेंकने में रूस के जैनिस लूसिस ने ९०.१० मीटर (२९५ फ़ुट ७ इंच) भाला फेंक कर स्वर्ण पदक प्राप्त किया. ५,००० मीटर की दौड़ में तूनिसिया के मोहम्मद गंमौदी ने स्वर्ण पदक प्राप्त किया और उन के प्रतिद्वंद्वियों केन्या के किपचोग केइनो और नेफ़तली तेमू को क्रमशः रजत और कांस्य पदक प्राप्त हुआ. उछल, क़दम कूद में रूस के विक्टर सनीव ने नया विश्व कीर्तिमान स्थापित किया.

रूस के लियोनिड झाबोतिनस्की ने, जो कि भारोत्तोलन में हैवी वेट वर्ग के विश्व चैंपियन हैं, ५७२.५ किलो भार उठा कर स्वर्ण पदक

पृथीपाल सिंह : बुलंद हौसला

प्राप्त किया. उन्होंने यह सिद्ध कर दिया कि भार उठाने के क्षेत्र में वह अब भी 'दुनिया के सब से ज़्यादा ताक़तवर इनसान' हैं. केन्या के किपचोग केइनो ने, जिन्होंने ५,००० मीटर की दौड़ में रजत पदक प्राप्त किया था, १५०० मीटर की दौड़ में न केवल स्वर्ण पदक प्राप्त किया बल्कि एक नया ओलिंपिक रिकार्ड स्थापित किया. उन्होंने अपने पुराने प्रतिद्वंद्वी अमेरिका के जिम रिऊन (एक मील के विश्व विजेता) को पीछे छोड़ दिया और ३ मि. ३४.९ से. में. इस फ़ासले को तय किया. मैराथन दौड़ में इथियोपिया के अबेबे बिकिला की 'तिकड़ी' बनाने की मुराद पूरी नहीं हो सकी. यह दौड़ उन के शिष्य और मित्र मामो वोल्दो ने (२ घंटे, २० मि० २६ से) जीती. मेक्सिको ओलिंपिक में एथलेटिक के क्षेत्र में १७ विश्व कीर्तिमान स्थापित हुए.

भारतीय टीम

भारतीय खेल प्रेमियों की सब से ज़्यादा दिलचस्पी अब भारतीय हॉकी टीम में रह गयी है. स्वाभाविक भी है क्यों कि भारतवर्ष के लिए ओलिंपिक का अर्थ ही हॉकी है. पहले मैच में न्यूज़ीलैंड से पिछड़ने के बाद भारतीय हॉकी टीम काफ़ी संभल गयी. 'ए ग्रुप' में अब भारत का नाम सब से ऊपर है.

जहाँ तक दूसरे भारतीय खिलाड़ियों के प्रदर्शन का सवाल है, ६ फ़ुट ७ इंच लंबे तार गोला के उम्मीदवार प्रवीण कुमार केवल ६०.८४ मीटर ही तार गोला फेंक पाये जो कि उन के भारतीय रिकार्ड से भी बहुत कम है. इस प्रकार वह पहले राउंड (क्वालिफ़ाइंग) में भी सफल नहीं हो सके. कुछ समय पहले उन्होंने कहा था कि वह चक्का फेंकने की प्रतियोगिता में भाग नहीं लेंगे और सारा ध्यान तार गोला पर ही केंद्रित करेंगे लेकिन तार गोला में पिछड़ने के बाद उन्होंने कहा कि अब मैं चक्का फेंकने पर ही सारा ध्यान केंद्रित करूँगा. यदि मैं ने चक्का फेंकने की प्रतियोगिता में भाग लिया होता तो मैं ने पहला राउंड अवश्य पार कर लिया होता. अब देखें कि वह किस पर अपना ध्यान केंद्रित करते हैं—चक्का या तार गोला या फ़िल्म पर (ख़बरों में एक ख़बर यह भी है कि प्रवीण कुमार अब शायद फ़िल्मों में काम करने की सोच रहे हैं).

भारतीय भारोत्तोलक एम. एल. घोष को पंद्रहवाँ, निशानेबाजी में बीकानेर के महाराजा कर्णीसिंह को दसवाँ और रणधीर सिंह को १७वाँ स्थान प्राप्त हुआ. भारत में जन्मे और लंदन वासी मुक्केबाज़ मॉरीस स्टीव्स के साथ जो हुआ वह लंबी और दर्दनाक कहानी है. (उन्हें प्रतियोगिताओं में भाग लेने की ही अनुमति नहीं दी गयी)

भारतीय पहलवानों में फ्लाईवेट के सुदेश कुमार का प्रदर्शन काफ़ी संतोषजनक रहा. वह सेमीफ़ाइनल में अमेरिका के रिचर्ड सैंडर्स से हारे. बिशंभर बैंटमवर्ग में पांचवें राउंड में योजिरो यूएटेक (तोक्यो के स्वर्ण पदक विजेता) से हारे. उदय चंद पाँचवें राउंड में लाइटवेट में ईरान के अब्दुल्ला मोवाहीद से हारे. उदय चंद और सुदेश कुमार, इन दोनों पहलवानों को अपने-अपने वर्ग में विश्व में छठा स्थान प्राप्त हुआ. ओलिंपिक खेलों में प्रथम तीन स्थान पाने वालों को पदक और छठा स्थान पाने वाले खिलाड़ियों को प्रमाण-पत्र दिये जाते हैं. पहलवानों द्वारा प्राप्त किये गये प्रमाण-पत्रों का भी स्वागत है. भारत के ऊँची कूद के खिलाड़ी भीमसिंह का प्रदर्शन भी काफ़ी उत्साहवर्द्धक रहा. वह ६ फ़ुट १०$\frac{1}{2}$ इंच ऊँचे कूदे.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्रिटेन : गोरों का सूर्यास्त

एक वक़्त था जब इंग्लैंड की तूती चारों तरफ़ गूँजा करती थी और उस तूती की स्वर-लहरी विश्व की छोटी-बड़ी शक्तियाँ बड़ी ही उत्सुकता और बेचैनी से सुना करती थीं. तब ब्रिटेन के अधीन असंख्य औपनिवेशिक बस्तियाँ थीं और उन बस्तियों पर अधिकार होने के नाते विश्व की शक्तियों पर भी उस का ख़ासा दबदबा था. लेकिन एक के बाद एक सभी बस्तियों के हाथ से निकल जाने से उस के रोब का पारा भी विश्व की शक्तियों पर से धीरे-धीरे उतर गया. अंतिम बस्ती स्वाज़ीलैंड के स्वाधीन हो जाने से ब्रिटेन के अधिकार में औपनिवेशिक बस्ती के नाम पर कुछ नहीं है. जहाँ उस के अब भी नौसैनिक अड्डे हैं, वहाँ वह १९७१ तक हटने का फ़ैसला कर चुका है. इस फ़ैसले का कारण उस की आंतरिक व्यवस्था या अस्त-व्यस्तता है जो उसे बाहर अधिक समय तक जूझे रहने के लिए अनुमति नहीं देती. लगातार खोखली होती जा रही अपनी आर्थिक व्यवस्था के कारण ही उसे पिछले दिनों पाउंड का अवमूल्यन भी करना पड़ा और सरकारी नौकरीयाफ़्ताओं के वेतन-मानों पर भी रोक लगानी पड़ी. रोडेसिया के अधर में लटकते निर्णय और प्रधानमंत्री इयान स्मिथ की हठधर्मिता के कारण ब्रिटेन की स्थिति को अंतरराष्ट्रीय क्षेत्र में काफ़ी धक्का पहुँचा है. एशियाई, अफ़्रीकी और पूर्व यूरोपीय राष्ट्रों के कहने-सुनने पर भी ब्रिटेन की सरकार रोडेसिया के ख़िलाफ़ कोई कड़ी कार्रवाई करने से हमेशा आना-कानी करती रही है. उस की इस नीति से लोग यह कहने पर मजबूर हो गये कि ब्रिटेन की शह पर ही रोडेसिया का मसला दिनों-दिन उलझता जा रहा है. देश में काले-गोरे के सवाल पर भी तरह-तरह की टिप्पणियाँ सुनने को मिली हैं और पिछले दिनों कंज़रवेटिव पार्टी के एनोच पावेल ने कालों के देश में आने पर प्रतिबंध लगाने का जो बयान निकाला उस की न केवल कंज़रवेटिव पार्टी में ही बल्कि लेबर पार्टी में भी तीखी प्रतिक्रिया हुई थी. इस समय देश में काले-मूलक लोगों के आने-जाने पर काफ़ी कड़े प्रति घ लगाये जा रहे हैं. पिछले ६ महीनों की घटनाओं पर नज़र डालने से यह बात अब आम आदमी की ज़ुबान पर है कि कंज़रवेटिव पार्टी लेबर पार्टी पर हावी होती जा रही और अपनी इस स्थिति पर उसे कुछ गुमान भी हो सकता है. ब्रिटेन के सामने एक मुख्य समस्या यूरोपीय साझा मंडी में शामिल होने की भी है. मंडी में शामिल होने के लिए उस ने कई बार कोशिश की लेकिन फ्रांस हमेशा उस के आड़े आया. सरकार में परस्पर तनातनी के कारण आये दिन मंत्रिमंडल में परिवर्त्तन भी हो रहे हैं.

मसला और मसला : रोडेसिया के बारे में निर्णय (फियरलेस) जहाज़ पर ब्रिटेन के प्रधानमंत्री हैरल्ड विल्सन और रोडेसिया के प्रधानमंत्री इयान स्मिथ में जो लंबी-चौड़ी बातचीत हुई उस से किसी तरह की निर्णयता के संकेत नहीं मिले हैं. यह बात जुदा है कि साल्सिबरी में स्मिथ ने ज़रूर कुछ निडर बातें की हैं जो अक्सर लोग घर में किया करते हैं. लेकिन इस निडरता में कोई भी चीज़ नयी नहीं थी. दो साल बाद जब दोनों प्रधानमंत्री जिब्राल्टर के निकट मिले थे (स से पूर्व दिसंबर १९६६ में मिले थे) तो उन में शासक और शासित जैसी कोई बात नहीं थी, जब कि इस से पहले की बातचीत में ब्रितानो प्रधानमंत्री शासक होने का दावा जतलाना नहीं भूलते थे. इस बार जब विल्सन और स्मिथ ने हाथ मिलाये तो उन के ओठों की मुस्कान दो स्वतंत्र देशों के प्रधानमंत्रियों की मुस्कान की तरह बेबाक थी. दोनों के रहने का इंतजाम एक जैसा था. विल्सन ने यह पहली बार कहा कि बात-चीत को सफल बनाने के लिए स्मिथ उन्हें जब तक कहें वह यहाँ रुकने को तैयार हैं. जब कि पहले विल्सन स्मिथ से निर्धारित समय में उत्तर माँगा करते थे. स्मिथ के साथ उन के न्यायमंत्री लार्डनर बर्क भी गये थे, जिन्हें विल्सन कभी विद्रोही कहा करते थे और जिन के फ़ैसले से अफ़्रीकी राष्ट्रवादियों को फाँसी दी गयी थी. विल्सन उन से भी बड़े तपाक से मिले. विल्सन रोडेसियाई नेताओं को यह बतलाना चाहते थे कि वह सचमुच रोडेसिया की समस्या को हल करने के लिए उत्सुक हैं. उन्होंने यह भी कहा कि वह केवल ब्रिटेन सरकार का ही प्रतिनिधित्व नहीं कर रहे हैं बल्कि रोडेसिया में रहने वाले ४० लाख अफ़्रीकियों का भी प्रतिनिधित्व कर रहे हैं. अगर विल्सन के व्यक्तित्व के तौर-तरीक़े में कुछ नरमी का रवैया था तो स्मिथ का रवैया भी उन के प्रति क़दरदानी का था. एक के बाद एक देशों का रोडेसिया से अपने व्यापारिक संबंध तोड़ना और उस का पुर्त्तगाल और दक्षिण अफ़्रीका पर अधिक निर्भर करना और देश में छिट-पुट और कभी-कभी बड़ी-बड़ी घटनाएँ होना इन सभी बातों ने स्मिथ को विल्सन से मिलने के लिए प्रेरित किया. दक्षिण अफ़्रीका के प्रधानमंत्री जॉन वर्स्टर और पुर्त्तगाल के डॉ. सालाज़ार भी स्मिथ पर विल्सन से मिलने का दबाव डाल रहे थे. विल्सन ने स्मिथ के सामने रोडसिया के मसले को हल करने के लिए ६ प्रस्ताव रखे थे—(१) १९६१ के संविधान के अंतर्गत देश में बहुसंख्यक लोगों की सरकार में आवाज़; (२) संविधान में प्रतिगामी संशोधन न करने का ब्रिटेन को आश्वासन; (३) अफ़्रीकी जनसंख्या के राज-नैतिक दर्जे में तुरंत सुधार; (४) जाति भेद खत्म करने के बारे में आवश्यक क़दम; (५) रोडेसिया के सभी लोगों को स्वाधीनता देने के बारे में ब्रिटेन को संतुष्ट करना; (६) बहुसंख्यक या अल्पसंख्यकों पर अल्पसंख्यक या बहुसंख्यक द्वारा दमन न करने का आश्वासन. प्रधानमंत्री विल्सन स बात के कायल हैं कि इन ६ सिद्धांतों द्वारा ही रोडेसिया-समस्या का हल ढूँढा जा सकता है. प्रेक्षकों का कहना है कि विल्सन ने स्मिथ को यह भी सुझाव दिया कि वह अपने पद से त्यागपत्र दे दें और १९६१ के संविधान के अनुसार अपने आप को पुनः निर्वाचित कर अपने प्रधानमंत्री पद की वैधता पर मोहर लगवा लें. लेकिन स्मिथ को विल्सन का यह सुझाव पसंद नहीं आया. इस बात की

एनोच पावेल और एडवर्ड हीथ : परिवर्त्तन की पुकार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी चर्चा है कि बातचीत के दौरान 'कभी नहीं, कभी नहीं' या 'मेरे जीवन काल में तो यह नहीं हो सकता' जैसे वाक्य स्मिथ की ज़बान पर नहीं आये. इस के पीछे क्या राजनैतिक चाल है, इस की गाँठें तो धीरे-धीरे खुलेंगी लेकिन अफ़्रीकी देशों के प्रतिनिधियों की यह मान्यता है कि विल्सन और स्मिथ में कुछ फ़ैसला हो चुका है. दरअसल विल्सन बहुत दिनों से राष्ट्रकुल के प्रधानमंत्रियों का सम्मेलन बुलाना चाह रहे हैं लेकिन उस में उन्हें कामयाबी हासिल नहीं हो पा रही है. स्मिथ से बातचीत कर ेडेसिया के मसले को जीवित रख वह प्रधानमंत्री सम्मेलन बुलाने की ज़मीन तैयार कर रहे हैं.

आव्रजन : आव्रजन पर रोक लगाने के लिए ब्रिटेन की तरह-तरह की मान्यताएँ हैं. काले लोगों के ब्रिटेन आने पर प्रतिबंध लगाये जा रहे हैं और अब ब्रिटेन में घुस पाना आसान बात नहीं है. इस समय ब्रिटेन में चार वर्गों के लोग रह रहे हैं. (१) राष्ट्रमंडल

विल्सन : सूर्यास्त के साक्षी

देशों के लोग; (२) काम पाने के इच्छुक विदेशी; (३) आश्रित और (४) पर्यटक और विद्यार्थी जो स्थायी तौर पर बस जाते हैं. १९६३ तक काम करने के बाउचर ले कर राष्ट्रकुल के देशों के लोग आते थे और बाद में उन के आश्रित भी उन से आ मिलते थे. पिछले ५ वर्षों से इन पर रोक लगा दी गयी है. १९६३ में जहाँ ३०,१६५ लोग ब्रिटेन गये थे, पिछले साल उन की संख्या ४,९७८ थी. दूसरी श्रेणी के लोगों में यूरोप के अन्य विदेशी हैं जो काम पाने की गर्ज़ से ब्रिटेन आते हैं. इस वर्ग के लोगों की संख्या ख़ासी बड़ी है. १९६३ में जहाँ इन की संख्या ३९,९६३ थी, पिछले साल ४५,८६७ हो गयी है. पहली और दूसरी श्रेणी के लोगों में फ़र्क़ इतना ही है कि राष्ट्रकुलीय देशों के लोग बिना शर्त स्थायी निवासी बन जाते हैं जब कि विदेशियों को चार साल तक इंतज़ार करना पड़ता है. फिर भी १०,००० विदेशी हर साल ब्रिटेन के निवासी बनते हैं. आश्रित लोगों के आने पर भी रोक लगा दी गयी है. १६ साल से बड़ा कोई भी आश्रित बच्चा ब्रिटेन में दाखिल नहीं हो सकता और १६ साल से कम वह ही बच्चा ब्रिटेन आ सकता है जिस के माता-पिता दोनों वहाँ रह रहे हों. पिछले ८ महीनों में ३०,७२४ राष्ट्रकुलीय देशों के आश्रित ब्रिटेन आये हैं जब कि पिछले साल उन की संख्या ३०,८५६ थी. इस साल आश्रितों में २,४५२ केन्या के वे एशियाई लोग भी गये जिन के पास ब्रितानी पारपत्र हैं. पर्यटकों और विद्यार्थियों की दो श्रेणियाँ हैं—कम अरसे के लोग और लंबे अरसे के लोग. १९६३ में लंबे अरसे के रहने वालों में जहाँ गोरों की संख्या बढ़ी, वहाँ काले आदमियों की संख्या दिनोंदिन घटती जा रही है. लंबे अरसे के पर्यटकों में आस्ट्रेलियाई लोगों की संख्या में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है. वैसे राष्ट्रकुलीय देशों में अगर ब्रिटेन किसी की फ़िक्र करता है तो उन में ऑस्ट्रेलिया और न्यूज़ीलैंड आते हैं. पिछले साल २,२२,४७७ छोटे अरसे वाले पर्यटक आये और लंबे अरसे वाले २१,५४७. उन में से ३९० 'ग़ायब' हो गये. ग़ायब होने वाले लोगों की संख्या १००० सालाना है जिन्हें कुछ लोग अपने स्वार्थ की सिद्धि के लिए यहाँ रखते हैं. इस तरह की पाबंदी क्या प्रशासनिक और तकनीकी तौर पर जायज़ है, यह सवाल कई बार विरोधी दल के नेता एडवर्ड हीथ उठा चुके हैं, लेकिन उन्हीं की पार्टी के पावेल अक्सर यह कहते पाये गये हैं कि आव्रजकों पर पूरा प्रतिबंध लगाया जाना चाहिए. हीथ का कहना है कि राष्ट्रकुलीय देशों से ब्रिटेन में आने वाले व्यक्ति को वीज़ानुमा एक प्रमाणपत्र लेना होगा जिस से कि उन का ब्रिटेन में पंजीकरण किया जा सके. १९६७ में १,२१,९१४ केनाडा, ८१,९१५ ऑस्ट्रेलिया, ५७,४९६ भारत, ४४,२९१ पाकिस्तान और २४,७८७ न्यूज़ीलैंड के लोगों ने अपने नामों का पंजीकरण कराया. इस तरह के पंजीकरण का रिवाज़ अब चल पड़ा है और हवाई कंपनियाँ भी अब इस तरह के प्रमाणपत्र की पूछताछ करने लगी हैं. यह व्यवस्था इस लिए लागू की गयी है ताकि दो देशों के निवासियों में किसी तरह का तनाव पैदा न हो. कई लोगों के ब्रिटेन आने पर और उन के पास असली पारपत्र न होने पर उन्हें वापस भेजना पड़ा, जिस के फलस्वरूप कई देशों ने ब्रिटेन से विरोध भी प्रकट किया.

यद्यपि सरकार की यह मान्यता है कि विदेशियों के साथ किसी भी तरह का भेदभाव नहीं बरता जायेगा तथापि यह बात संदेह से परे नहीं है कि पिछले ६ महीनों से राष्ट्रकुलीय देशों के, ख़ास कर भारत के लोगों के प्रति उस का रवैया काफ़ी अच्छा नहीं रहा है. इस का तात्कालिक कारण केन्या से आने वाले एशियाई हैं. लगभग ५०० व्यक्ति प्रति मास के हिसाब से जब इंग्लैंड पहुँचने लगे तो सरकार हड़बड़ा गयी और उस के सभी प्रतिबंध बेकार होते नज़र आये. १९६८ के पहले तीन महीनों में ७००० के लगभग केन्या के एशियाई इंग्लैंड पहुँचे. इस बढ़ती हुई संख्या पर रोक लगाने के लिए ही ब्रिटेन ने राष्ट्रकुल प्रव्रजन विधेयक १९६८ पास किया. इस विधेयक का बहुत विरोध हुआ और इस विरोध के कारण ही सिखों का मसला अधिक उभर कर सामने आया. एक परिवहन कंपनी ने सिखों के पगड़ी बाँधने और दाढ़ी रखने पर आपत्ति की. इस को ले कर भी कई प्रदर्शन हुए लेकिन सरकार ने समझदारी से काम लिया. ब्रिटेन में लगभग एक लाख सिख रहते हैं. पिछले दिनों कंज़रवेटिव पार्टी ने एलान किया कि जब उन की सरकार सत्ता में आयेगी, तो वह राष्ट्रकुलीय लोगों पर लगाये गये प्रतिबंधों को ढीला करेंगे.

ब्लैकपूल सम्मेलन : अक्तूबर के शुरू और मध्य में ब्लैकपूल में लेबर और कंज़रवेटिव दोनों पार्टियों का वार्षिक सम्मेलन हुआ. लेबर पार्टी के नेता और देश के प्रधानमंत्री हैरल्ड विल्सन ने कहा कि पहले की अपेक्षा ब्रिटेनवासियों का स्तर निश्चित रूप से ऊँचा उठा है. बेशक यह साल सरकार के लिए कठिनाइयों का साल था, और उन्हें स्थानीय और राष्ट्रीय चुनावों में पराजय का भी मुँह देखना पड़ा, लेकिन औद्योगिक रूप से उन्होंने काफ़ी सफलता मिली है. १९६६ में जहाँ भुगतान का बकाया ८० करोड़ पाउंड देना था वह अब घट कर ८ करोड़ ९० लाख पाउंड रह गया है. विल्सन ने अणु-शक्ति का तथा विज्ञान में औद्योगिक क्रांति का सेहरा भी अपने सिर पर बाँधा. प्रतिरक्षा-नीति में कटौती की बात को जायज़ बताते हुए कहा कि १९७० तक इस के नतीजे सामने आने शुरू हो जायेंगे. मध्य और दूर-पूर्व एशिया से अपनी सेनाएँ वापस बुलाने के अपने निश्चय को अटल बताते हुए कहा कि अगर हम विश्व में सिपाही का रोल अदा नहीं कर सकते तो साहूकार बने रहने का भी हमें कोई हक़ नहीं. पिछले साल ४,२०,००० मकान और ८२१ प्राइमरी और माध्यमिक स्कूल का निर्माण किया गया. इस वर्ष २,०३,००० विद्यार्थी विश्वविद्यालयों में प्रवेश करेंगे. १,०११,००० कालेजों में तथा २,०५,००० कालेज के आगे की शिक्षा प्राप्त करने के लिए पहुँचेंगे. इस समय देश में एक लाख ३० हज़ार नर्सें हैं जो चार साल पहले की अपेक्षा २३ प्रतिशत ज़्यादा हैं. इस समय जहाँ प्रतिरक्षा पर १०० पाउंड के हिसाब से ख़र्च किया जा रहा है वहाँ सामाजिक कार्यों के लिए ३६४ पाउंड. आने वाले सालों में प्रतिरक्षा कार्यों में और कटौती होगी तथा सामाजिक कार्यों का ख़र्च ३७६ पाउंड हो जायेगा. दूसरी तरफ़ कंज़रवेटिव पार्टी के नेता एडवर्ड हीथ जब अपने भाषण का समापन कर के मंच से उतरे तो पार्टी के सदस्यों ने ७ मिनट ४० सेकंड तक करतल-ध्वनि की तो उन का सीना एक बालिश्त और फूल गया.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस अवसर पर सदस्यों को विंस्टन चर्चिल की याद ताजा हो आयी. अपने भाषण के दौरान उन्होंने कहा कि आव्रजन की समस्या के प्रति वह अधिक रचनात्मक और मानवीय दृष्टिकोण तो अपनायेंगे ही और अगर उन की पार्टी सत्ता में आयेगी तो वह अपना छोटा मंत्रिमंडल भी बनायेंगे. वह मंत्रिमंडल कितना छोटा होगा, इस की उन्होंने कहीं भी चर्चा नहीं की या शायद उचित नहीं समझा. वर्त्तमान सरकार ने जिन उद्योगों का राष्ट्रीयकरण कर दिया है, उन्हें मुक्त करने का भी एलान किया. अंतरराष्ट्रीय क्षेत्र में उनकी मान्यता है कि वापस मुड़ने की नीति खत्म हो चुकी है और यदि हमें अपने आप को सुरक्षित रखना है तो हमें शक्तिशाली बनना होगा. एशिया और फ़ारस की खाड़ी से सेना हटाने का वि रोध करते हुए कहा कि प्रधानमंत्री विल्सन ने मित्र-देशों के साथ मित्रों जैसा व्यवहार नहीं किया. उन्होंने विल्सन को वायदाख़िलाफ़ी का मसीहा तक कह दिया. हीथ के भाषण से ऐसा लगता था कि वह विरोधी नेता के रूप में नहीं बल्कि देश के भावी प्रधानमंत्री के रूप में बोल रहे हैं. अपने भाषण का काफ़ी बड़ा भाग उन्होंने सरकार की नीतियों की आलोचना में लगाया और ब्रिटेन संसदीय प्रजातंत्र के, जिसे प्रजातंत्र की जननी कहा जाता है, उत्थान की बात की. दोनों पार्टियों ने अपने-अपने सम्मेलन में एक-दूसरे पर दोषारोपण का सिलसिला जारी रखा. लेकिन यह बात सही है कि ब्रिटेन को चर्चिल और एटली जैसे प्रधानमंत्री बहुत कम मिलेंगे. द्वितीय विश्व-युद्ध में चर्चिल ने जिस कुशलता के साथ देश की बागडोर सँभाली थी, युद्ध के बाद उतनी ही कुशलता से लेबर पार्टी के एटली ने देश को सुदृढ़ प्रशासन दिया. १९५१-५५ का चर्चिल-काल उतना अभूतपूर्व नहीं था. १९५६ के स्वेज़-संकट ने एंटनी ईडन को गद्दीहीन किया तो मैकमिलन की गद्दीपोशी भी डगमगाती ही रही. मैकमिलन की ईमानदारी पर तो किसी को शुबहा नहीं था, लेकिन वह चारों तरफ़ से अवसरवादियों से घिर गये और इसी लिए उन्हें पद-मुक्त होना पड़ा था. कंज़रवेटिव पार्टी का कहना है कि विल्सन अच्छे विरोधी नेता ज़रूर हैं लेकिन अच्छे प्रधानमंत्री नहीं. वह देश में बमतलब के बेरोज़गार, ट्रेड यूनियनों के खिलाफ़ जिहाद, आव्रजन-नीति की खींचतान और वीएतनाम-नीति पर अमेरिका का समर्थन कर अपनी क़ब्र आप खोद रहे हैं. आजकल उन्हें, अविश्वसनीय राजनीतिक का फ़तवा दिया जा रहा है.

पावेल का रवैया : हीथ बेशक अपनी स्थिति मज़बूत न बना पायें लेकिन कंज़रवेटिव पार्टी के पावेल अपनी स्थिति को पुख्ता बनाने के लिए जी-तोड़ कोशिश में हैं. उन्होंने ब्लैकपूल से थोड़ी दूरी पर मोरकोव में अपने बजट को पेश करते हुए कहा कि अगर कभी उन्हें सरकार बनाने का मौक़ा मिला गया तो वह लोगों का स्तर ऊँचा करने के लिए आयकर में बहुत छूट देंगे. ३ लाख सालाना के हिसाब से मकान बनायेंगे और विदेशों को दी जाने वाली सभी तरह की सहायता बंद कर देंगे. पावेल ने विल्सन की प्रतिरक्षा-नीति का समर्थन किया और प्रतिरक्षा-व्यय पर कटौती को समझदारी की बात कहा. लेकिन यह बात भी सही है कि उन का व्यक्तित्व कंज़रवेटिव पार्टी छोड़ने पर ही निखर सकता है.

विल्सन हर छमाही मंत्रिमंडल में हेर-फेर करते हैं और विदेशमंत्री के बार-बार बदले जाने से लेबर पार्टी में मतभेद की गहरी खाई का एहसास होता है. जार्ज ब्राउन बेशक विदेश मंत्री नहीं लेकिन लेबर पार्टी के उपनेता ज़रूर हैं और पार्टी में उन की अहमियत को नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता. कंज़रवेटिव पार्टी का युवा तबका विल्सन की प्रतिरक्षा-नीति का समर्थक है और उन का यह भी ख्याल है कि पहले अपना सामाजिक उत्थान कर के ही विदेशों में हमें अपनी टाँग अड़ानी चाहिए. पावेल का विद्रोही रवैया कंज़रवेटिव पार्टी के लिए हानिकारक साबित हो सकता है. हीथ इस बात के लिए अभी ज़रूर अड़े हुए हैं कि वह उन्हें वापस अपने शैडो कैबिनेट में नहीं लेंगे लेकिन इस बात से भी इनकार नहीं किया जा सकता कि पावेल के समर्थकों की संख्या दिनोंदिन बढ़ती जा रही है. गोरों की अपनी राजनीति से कालों का कितना भला होगा यह कुछ नहीं कहा जा सकता. लेकिन इस बात में कुछ सार ज़रूर है कि अगर हीथ सत्ता में आते हैं तो वह वर्त्तमान क़ानूनों में कुछ ढील देंगे. इस बात का संकेत उन्होंने पार्टी सम्मेलन में दिया था. और अगर पावेल आते हैं, तो वह वर्त्तमान क़ानूनों में कसावट कर सकते हैं. विल्सन अपनी स्थिति ब्रिटेन के अलावा यूरोप में भी शक्तिशाली बनाना चाहते हैं ताकि यूरोपीय साझा मंडी में शामिल होने का उन का स्वप्न साकार हो सके. अपनी इस तरह की जद्दोजहद पार्टियों को कहाँ ले जाती है इस का फ़ैसला वक़्त ही करेगा. गोरों का कालों पर रौब कहाँ तक ग़ालिब रहता है, इस का जवाब भी आने वाला समय ही देगा; वैसे गोरों के सूर्यास्त की ज़मीन तैयार हो रही है—रोडेसिया में भी और दक्षिण अफ़्रीका में भी.

विश्व

चेकोस्लोवाकिया

आत्महत्या और गुलामी के बीच

चेकोस्लोवाकिया के नेताओं को जिस संधि पर हस्ताक्षर करने पड़े हैं उस का वास्तविक रूप क्या है यह अभी पूरे तौर पर ज्ञात नहीं है, मगर जितने भी संकेत प्राप्त हुए हैं उन से यही पता चलता है कि सोवियत सेनाएँ काफ़ी समय के लिए चेकोस्लोवाकिया में तैनात रहेंगी. कहा जाता है कि आत्मसम्मानी चेक नेता घिघियाते नहीं रहे. उन्होंने बहस जम कर की और रूसी मसविदे से दो एक 'भयंकर' अंश निकलवा कर दम लिया. इन के रहने से चेक स्वाधीनता और भी खंडित होती. इन में से एक अंश यह था कि 'वार्साउ सेनाओं को चेकोस्लोवाकिया में प्रवेश करना अनिवार्य हो गया था'. तीन बार तो चेक नेता रूसी हठ के विरोध में सभा-भवन छोड़ कर चले गये.

प्राग में सोवियत और चेक प्रतिनिधियों में हुए समझौते में राष्ट्रपति स्वोबोदा, अलेकसांद्र डुबचेक और प्रधानमंत्री के अतिरिक्त उपप्रधानमंत्री डा. गुस्ताव हुसाक भी शामिल हैं. सोवियत पक्ष का नेतृत्व विदेशमंत्री ग्रोमिको ने किया. इस अवसर पर जिस शिष्टाचार और राजनैतिक व्यवहार का प्रदर्शन किया गया उस से बाहरी विश्व में यह भ्रम पैदा हो सकता है कि अंत में सोवियत नेता चेकोस्लोवाकियाई नेताओं को अपना दृष्टिकोण समझाने में सफल हुए हैं और सोवियत संघ का सैनिक हस्ताक्षर चेक नेताओं के लिए अब कोई असामान्य घटना नहीं रह गया. संधि पर हस्ताक्षर होने के तुरंत बाद चेक प्रधानमंत्री ने अपने भाषण में कहा 'इस समझौते से यह आश्वासन मिलता है कि समाजवादी चेकोस्लोवाकिया मार्क्सवाद-लेनिनवाद के वास्तविक सिद्धांतों और अपनी क्रांतिकारी तथा प्रजातांत्रिक परंपराओं का प्रतिनिधित्व करते हुए शांति के साथ सोवियत संघ और अन्य समाजवादी देशों के मित्रतापूर्ण सहयोग से लगातार प्रगति की

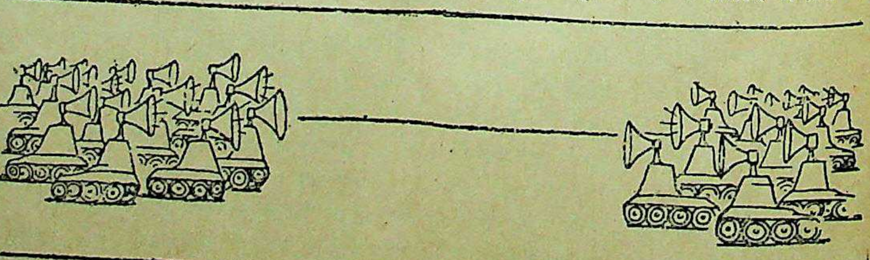

एक चेक पत्र में ब्लादीमीर यिरानेक का व्यंग्य-चित्र : मनोवैज्ञानिक युद्ध

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

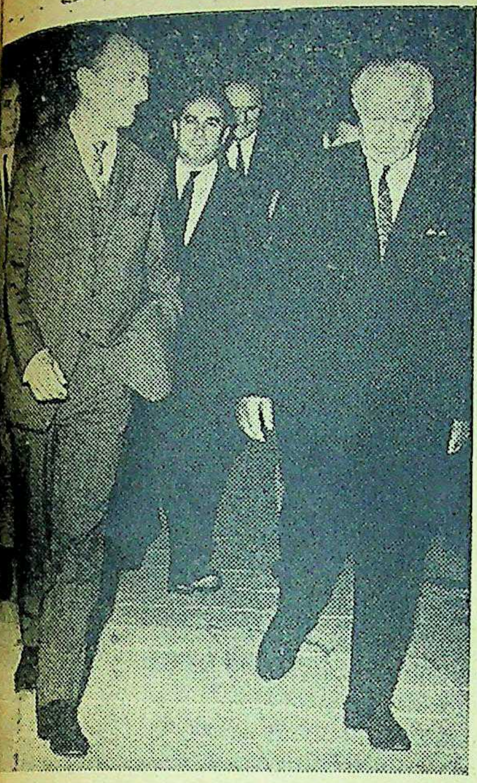

डुबचेक और राष्ट्रपति स्वोबोदा : स्वाभिमानी

ओर अग्रसर होगा. इस समझौते में दोनों पक्षों के हितों पर ध्यान दिया गया है. इस के अतिरिक्त यह सभी समाजवादी देशों की एकता और सुरक्षा को दृढ़ करता है तथा यूरोप तथा विश्व में शांति एवं सुरक्षा के उद्देश्य की पुष्टि करता है.' चेक प्रधानमंत्री ने इस समझौते को नैटो देशों की संधि और उत्तरी अमेरिका तथा 'जर्मन सैनिकवादियों' के बढ़ते हुए प्रभाव का मुक़ाबला करने के लिए आवश्यक घोषित किया है. उन के अनुसार 'हमें इस बात का विश्वास है कि जिस समझौते पर अभी हस्ताक्षर हुए हैं और जिस के आधार पर सोवियत सेनाएँ कुछ क्षेत्रों को छोड़ कर वापस चली जायेंगी, चेकोस्लोवाकिया और अन्य समाजवादी देशों का पश्चिम जर्मनी की सनिकवादी शक्तियों के विरुद्ध प्रतिरक्षा का एक महत्त्वपूर्ण क़दम होगा.' प्रधानमंत्री ने अंतरराष्ट्रीय तनाव और शीतयुद्ध आरंभ करने वालों की निंदा की और समझौते को 'सोवियत संघ तथा चेकोस्लोवाकिया संघ का पारस्परिक सहयोग और विश्वास का काम' घोषित किया. बाद में चेकोस्लोवाकियाई संसद् ने भी इस समझौते का समर्थन किया. समझौते के विरोध में केवल ४ मत पड़े.

सोवियत मोर्चे : ऊपर से शांत दिखने वाले चेकोस्लोवाकिया में इस समय कई प्रवृत्तियाँ काम कर रही हैं. नौजवानों का एक बहुत बड़ा वर्ग है जिस के अनुसार सोवियत संघ के सामने घुटने टेकना चेक सम्मान के विरुद्ध है. मास्को से लौटने के बाद डुबचेक और अन्य नेताओं के व्यवहार पर नौजवानों को संतोष नहीं है, क्यों कि उन के अनुसार सैनिक शक्तियों के सामने झुकना ग़ुलामी से कम नहीं है. सोवियत अधिकारियों की शर्तें स्वीकार करने का मतलब यह होगा कि चेकोस्लोवाकिया में उदारवाद की जो लहर आरंभ की गयी थी उस को सदा के लिए समाप्त समझा जाये और फिर एक बार चेक जनता को किसी बड़ी शक्ति का एक निस्सहाय उपग्रह बन कर रहने पर मजबूर किया जायेगा. उन की बेक़रारी बढ़ती जा रही है क्योंकि उन्हें इस बात का विश्वास नहीं कि सोवियत संघ के चंगुल में फँसने के बाद निकट भविष्य में वह अपनी इच्छा के अनुसार राजनैतिक और आर्थिक कार्यक्रमों को लागू कर सकेंगे. सोवियत संघ के साथ जो समझौता हुआ है उस के अनुसार सोवियत सेनाएँ वापस चली जायेंगी किंतु उन का एक बहुत बड़ा भाग चेकोस्लोवाकिया में ही रहेगा. साधारणतया यही बहाना सामने लाया जाता है कि चेकोस्लोवाकिया और अन्य समाजवादी देशों को पश्चिम जर्मनी और अन्य पश्चिमी ताक़तों से खतरा है. अगर इस तर्क को भी उचित माना जाये तब सोवियत सेनाओं को चेकोस्लोवाकिया और पश्चिम जर्मनी की सीमाओं पर रहना चाहिए. मगर चेकोस्लोवाकिया से प्राप्त सूचनाओं के अनुसार सोवियत सेनाएँ न केवल इन सीमाओं पर रहेंगी अर्थात् उत्तरी प्राग, उत्तरी ब्रातीस्लावा और अन्य प्रमुख केंद्रों पर भी रखी जायेंगी, जिन का सामरिक महत्त्व केवल चेकोस्लोवाकियाई लोगों और विद्रोहियों के विरुद्ध ही है. यह एक विचित्र बात है कि रूसियों ने उन्हीं स्थानों पर अपनी सेनाएँ रखने का फ़ैसला किया है जिन स्थानों पर युद्ध के दिनों नात्सी सेनाएँ रहती थीं. कुछ लोगों के अनुसार सोवियत सैनिकों की संख्या ७०,००० और एक लाख के बीच होगी. यदि वह इस से भी कम रहीं तब किसी भी आवश्यकता के समय सोवियत संघ के लिए चेकोस्लोवाकिया को सनिक रूप से दबाना बिलकुल आसान होगा. साथ ही वारसाउ-संधि के अन्य देश भी किसी तथाकथित खतरे की सूचना मिलते ही चेकोस्लोवाकिया की ओर दौड़ पड़ेंगे. इस लिए यह मानने का कोई कारण नहीं कि इस समझौते के बाद सोवियत सेनाएँ चेकोस्लोवाकिया से चली जायेंगी और चेकोस्लोवाकिया को अपने हाल पर छोड़ दिया जायेगा.

चार सौ चेक रूसी : रूसी नेताओं को भी इस बात का विश्वास नहीं है कि चेक नेताओं को अपने सैनिक बल पर दबाने के बाद चेकोस्लोवाकिया की जनता स्वयं ही उन की आज्ञाकारी बन जायेगी. इस लिए वह सैनिक मोर्चे के अतिरिक्त भी अन्य मोर्चों पर चेकोस्लोवाकिया को ग़ुलाम बनाने की कोशिश कर रहा है. चेकोस्लोवाकिया से जो रूसी सैनिक वापस लाये जा भी रहे हैं उन्हें रूस के सुदूर साइबेरी प्रांतों में रखा जा रहा है : कहीं उन के हाथों चेक स्वाभिमान का संदेश जिस से वे स्वयं प्रभावित हुए होंगे, रूसी जनता में न फैल जाये; इसी डर से चेकोस्लोवाकिया से लौटते पोल सैनिकों को पोलैंड के सुदूर कोने में रूसी सीमा के निकट जाने को कहा जा रहा था. पर पोल सेनापति नहीं माने और सीध अपने रास्ते लौट गये. हंगरी सैनिक कुछ ज्यादा मज़े में हैं. ये दक्षिण स्दोवाक प्रदेश में भेजे गये थे जहाँ वैसे भी हंगेरी लोग बसे हैं. जब वे लौटे तो इन्हें विदा पार्टियाँ दी गयीं. हाल ही में प्राग में एक बैठक का आयोजन किया गया जिस में ४०० पुराने समाजवादियों को आमंत्रित किया गया था. इन परंपरागत साम्यवादियों में अधिसंख्यक वही व्यक्ति थे जिन्हें जनवरी के बाद या तो अपने पदों से हटा दिया गया था या वह स्वयं कार्यकर्त्ताओं का विश्वास न रहने के कारण हट गये थे. इस बैठक के आयोजक जोदास ने आरोप लगाया कि चेकोस्लोवाकिया की वर्त्तमान सरकार ने 'सोवियत संघ के वास्तविक मित्रों के लिए आतंक पैदा कर दिया है.' यह बैठक 'रेडियो और टेलिविज़न के द्वारा क्रांति-विरोधी पागलपन पैदा करने वालों के विरुद्ध और सर्वहारा की अंतरराष्ट्रीय लाल पताका तथा अमर प्रतीक हथौड़ा-हँसिया की सुरक्षा' के लिए बुलायी गयी थी. अन्य अपराधों के अतिरिक्त वर्त्तमान शासकों का सब से बड़ा अपराध सोवियत संघ का विरोध करना है. इस अवसर पर एनरोनिन कापेक ने जो भूतपूर्व राष्ट्रपति के प्रमुख सहायकों में से थे, आरोप लगाया कि क्रांति-विरोधियों ने 'बंदूकों के बदले क़लमों और ध्वनिवर्धकों' का सहारा लिया. एक कलाकार फ़मीश के अनुसार 'मेरे लिए भूतपूर्व नेतृत्व को वापस लेने के अतिरिक्त और कोई सामान्य परिस्थिति नहीं हो सकती.' यद्यपि इस बैठक का आयोजन चेकोस्लोवाकियाई साम्यवादियों ही ने किया था फिर भी सोवियत सैनिक अधिकारियों की उपस्थिति इस बात का स्पष्ट द्योतक थी कि इस की प्रेरणा सोवियत अधिकारियों से ही प्राप्त हुई थी. वास्तव में इस बैठक में प्रवेश पाने के लिए रूसी होना या रूसी भाषा का परिचय होना ही पर्याप्त था. यह एक विचित्र बात है कि विश्व की राजनीति इस मोड़ पर आ गयी है जहाँ छोटे राष्ट्रों को न केवल अपने विरोधियों से ही खतरा है बल्कि उन्हें अपने सहायकों से भी लगातार धोखा खाने का डर बना रहता है. ऐसा लगता है कि विचारधाराओं के बंधन टूट रहे हैं मगर इन बंधनों को सुदृढ़ करने के लिए सैनिक शक्तियाँ अपने पशुबल का सहारा ले रही हैं. यह निश्चित है कि चेकोस्लोवाकिया की जनता को वर्त्तमान समझौते से बिलकुल संतोष नहीं है मगर सोवियत संघ और उस के 'शृंगालों' के विरुद्ध फ़िलहाल कुछ नहीं कर सकती.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वीएतनाम

शांति नहीं तो बम....

टेलीफ़ोन पर बातचीत ग़लत समझने-समझाने का बहाना लेकर वीएतनाम-समस्या पिछले सप्ताह समाधान का प्रलोभन दे कर और भी जटिल हो गयी. समूचे विश्व का ध्यान पेरिस-वार्त्ता से हट कर दक्षिण वीएतनाम की राजधानी सैगोन पर आ लगा था जहाँ अमेरिकी राजदूत श्री बंकर और दक्षिण वीएतनाम के राष्ट्रपति थिउ के बीच दिन में तीन-तीन बार मुलाकातें हो रही थीं और दक्षिण वीएतनाम मंत्रिमंडल की भी आवश्यक बैठकें चल रही थीं. इस असाधारण भाग-दौड़ को देख कर समूचे विश्व में यकायक यह धारणा ज़ोर पकड़ गयी कि उत्तर वीएतनाम पर अमेरिकी बमबारी का बंद होना अब निश्चित-सा ही है और यह वीएतनाम समस्या के समाधान की दिशा में पहला क़दम होगा. इसके साथ ही समूचे दक्षिण वीएतनाम में अचानक ही जब समूची सैनिक कार्रवाइयाँ भी बंद हो गयीं तो सैगोन की सरगर्मियों का कोई निश्चित परिणाम निकलने के आसार नजर आने लगे थे पर सैगोन के वक्तव्य ने सब धारणाओं और अटकलों को बेबुनियाद साबित करके वीएतनाम प्रश्न को फिर जहाँ का तहाँ ला खड़ा किया. राष्ट्रपति थिउ ने अपनी सरकार की ओर से वही पुराना तर्क दोहराया कि हानोई जब तक शांति की दिशा में अपनी ओर से कोई सद्भाव-संकेत नहीं दिखाता तब तक उत्तर वीएतनाम पर पूरी तरह बमबारी बंद करने के वे पक्ष में नहीं हैं.

नाटकीय घटनाएँ : दक्षिण वीएतनामी राष्ट्रपति के इस वक्तव्य से पहले उनके ही हवाले से दिये गये जिस समाचार से विश्व में तरह-तरह की अटकलें लगायी गयीं उन्हें नाटकीय घटनाएँ ही कहा जायेगा. इस समाचार में स्पष्ट कहा गया था कि राष्ट्रपति थिउ के अनुसार उत्तर वीएतनाम पर बमबारी बंद करने का सुझाव अमेरिकी शर्तों पर हानोई ने स्वीकार कर लिया है. पर अपने तटवर्ती विश्रामस्थल वुठटाओ में, जो कुछ ही घंटे पहले वीएतकांग राकेटों का शिकार बना, संवाददाताओं से बातचीत करते हुए राष्ट्रपति थिउ ने स्पष्ट कर दिया कि अमेरिकी राजदूत बंकर और उन में निरंतर दो-तीन मुलाक़ातों की बातचीत का ब्यौरा इस समय वह नहीं बता सकते. बमबारी बिलकुल बंद करने के प्रश्न पर दक्षिण वीएतनाम की स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है. स्थिति की परिभाषा करते हुए राष्ट्रपति थिउ ने कहा हम युद्ध का विस्तार रोकने के लिए ही बमबारी बंद करेंगे और ज़ाहिर है शत्रु से भी हम इसी नीयत की आशा करते हैं. युद्ध

प्रेज़िडेंट थिउ . समझौते की बातें

का विस्तार रुकना तभी उपयोगी है जब इससे बातचीत का रास्ता खुले. जब उनसे पूछा गया कि इस समय सैनिक कार्रवाई के स्थगन को क्या आप युद्ध का वितार रोकने की दिशा में कोई क़दम नहीं मानते ? तो उनका जवाब था: हानोई को यह तो बताना होगा कि युद्ध का विस्तार रोकने के वह क्या तरीक़े अपना रहा है.

उत्तर वीएतनाम से आशाएँ : उत्तर वीएतनाम पर बमबारी रुकने की विश्वव्यापी अफ़वाह के संदर्भ में राष्ट्रपति थिउ ने अपने वक्तव्य में वीएतनाम समस्या के लगभग सभी पक्षों पर अपनी सरकार की नीति एक बार फिर स्पष्ट की है. उनका कहना था कि उत्तर वीएतनाम पर बमबारी में ९० प्रतिशत की कमी कर के हमने युद्ध-विस्तार रोकने की अपनी इच्छा का परिचय दिया है, अब ऐसा ही कोई काम करके अपनी इच्छा का परिचय देना हानोई का काम है. अमेरिका से इस प्रश्न पर किसी भी तरह के मतभेद की बात उन्होंने स्वीकार नहीं की. जहाँ तक हानोई के साथ बातचीत का प्रश्न है राष्ट्रपति थिउ ने यह स्पष्ट कर दिया कि हानोई के साथ सीधी बात-चीत हो सकती है पर नेशनल लिबरेशन फ्रंट को हम मान्यता नहीं देते, इस लिए शांति-वार्त्ता में उस के शामिल किये जाने का कोई सवाल ही नहीं है. अमेरिका की तरह दक्षिण वीएतनाम सरकार नेशनल लिबरेशन फ्रंट को हानोई का ही पिट्ठू मानती है और हम उसके साथ कोई बात करने को तैयार नहीं हैं. उन्होंने अपने वक्तव्य में विश्व को स्पष्ट कर दिया है कि उत्तर वीएतनाम पर बमबारी बिलकुल बंद करने के बारे में अभी कोई फ़ैसला नहीं हुआ है.

अमेरिकी पक्ष : राष्ट्रपति थिउ के इस महत्वपूर्ण वक्तव्य के तुरंत बाद उन्हीं के एक प्रवक्ता ने अमेरिकी पक्ष का स्पष्टीकरण करते हुए कहा : 'अमेरिका एक स्वतंत्र सरकार है और हमें सारी बातें बताते रहने के लिए वह बाध्य नहीं है. इसी प्रकार दक्षिण वीएतनाम सरकार जो भी करती है उस की सूचना देते रहने के लिए अमेरिकी सरकार उसे बाध्य नहीं कर सकती.'

उधर वाशिंगटन में सरकारी तौर पर यह बता दिया गया है कि उत्तर वीएतनाम पर बमबारी बंद करने के बारे में अमेरिकी सुझाव का अभी तक हानोई से कोई जवाब नहीं मिला है. विदेश विभाग के प्रवक्ता का कहना है कि हानोई से इस सुझाव का जवाब भेज दिये जाने के समाचार ज़रूर प्रकाशित हुए हैं पर वास्तव में जवाब हमारे पास नहीं आया है. दक्षिण वीएतनाम में युद्ध-विराम के बारे में भी इस प्रवक्ता ने अमेरिका को किसी तरह की जानकारी होने की बात अस्वीकार की. पेरिस-वार्त्ता के पश्चिमी सूत्रों की ओर से इस बात की पुष्टि की गयी है कि अमेरिका ने बातचीत का रास्ता खोलने के लिए उत्तर वीएतनाम को कुछ नये सुझाव भेजे हैं. इन सूत्रों के अनुसार हानोई इन सुझावों पर विचार कर रहा है और वह शीघ्र ही अपना जवाब भेजने वाला है. पेरिस-वार्त्ता में हानोई प्रतिनिधिमंडल के निकटतम सूत्रों ने भी यह स्वीकार किया है कि कुछ न कुछ हो ज़रूर रहा है. अमेरिकी उपराष्ट्रपति हम्फ़्री ने भी अपनी पार्टी के हाल ही के एक सम्मेलन में कहा था कि उत्तर वीएतनाम पर बमबारी बिलकुल बंद करने के प्रश्न पर इस समय हानोई और अमेरिका की बातचीत का बहुत पेचीदा दौर चल रहा है.

भीतरी राजनीति : दक्षिण वीएतनाम की अंदरूनी राजनीति, दक्षिण वीएतनाम राष्ट्रपति के इस बारे में कोई अंतिम निर्णय लेने की स्थिति का संकेत नहीं देती. प्रधानमंत्री बमबारी बंद करने जैसे महत्त्वपूर्ण प्रश्न पर राष्ट्रपति को ही अंतिम अधिकार देने के पक्ष में नहीं हैं. उन का कहना है कि राष्ट्रीय असेम्बली की स्वीकृति के बिना इस सवाल पर कोई निर्णय नहीं किया जाना चाहिए. ऐसी स्थिति में बमबारी बंद करने के बारे में चर्चा ज़ोर-शोर से भले ही हो जाय व्यवहारिक होने में अनेक कठिनाईयाँ हैं. इस बात की पुष्टि दक्षिण वीएतनाम के एक मंत्री की इस बात से भी होती है कि दक्षिण वीएतनाम अभी शांति के लिए तैयार नहीं है, युद्ध समाप्त होने के बाद हमारे यहाँ जो संघर्ष उठ खड़ा होगा उस की तैयारी के लिए ही हमें महीनों नहीं तो कम से कम एक वर्ष का समय तो चाहिए ही.

दक्षिण वीएतनाम में हाल ही के असफल सैनिक विद्रोह की घटना भी इस बात का संकेत है कि बमबारी बंद करने के प्रश्न पर तो क्या समूची वीएतनाम समस्या के समाधान के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बारे में वर्त्तमान थिउ सरकार कोई अंतिम निर्णय लेने की स्थिति में नहीं है. इस सैनिक विद्रोह में एक दर्जन से अधिक लोग गिरफ़्तार किये गये और इसे कुछ ही लोगों का कमज़ोर-सा प्रयत्न बताया गया है. पर जिन लोगों का यह प्रयत्न है उन्होंने समूचे देश में यह वातावरण बनाने का प्रयत्न किया और अब भी कर रहे हैं कि कम्युनिस्टों से कोई न कोई समझौता कर लेने की फ़िक्र में देश को एक बड़ी शक्ति अर्थात् अमेरिका के हाथों बेचा जा रहा है. देश की इस प्रकार की भीतरी राजनीति और उधर अमेरिका के आगामी चुनावों को देखते हुए वीएतनाम-समस्या के शीघ्र समाधान के कोई आसार नज़र नहीं आते.

पेरिस-वार्त्ता—दक्षिण वीएतनाम की राजधानी सैगॉन में दो-तीन दिन के ही सलाह मशविरे और दौड़-धूप में जो महत्त्वपूर्ण निर्णय हुए वे लंबे समय से चली आ रही पेरिस-वार्त्ता में इस लिए नहीं हो सके कि वार्त्ता में भाग लेने वाले प्रतिनिधिमंडल किसी भी महत्त्वपूर्ण निर्णय पर पहुँचने के लिए समर्थ नहीं थे या उन में किसी समझौते पर पहुँचने की वास्तविक आकांक्षा का अभाव था. विचार-विमर्श का समय समूची वार्त्ता में इतना कम रखा गया था कि कल्पना भी नहीं की जा सकती. प्रतिनिधिमंडल सप्ताह में एक बार मिलते और वह भी सिर्फ़ तीन या चार घंटे के लिए और उस में भी काफ़ी समय चाय और दोपहर के भोजन के अवकाश में निकल जाता था. विचार-विमर्श के बाद पत्रकारों को प्रगति से अवगत कराने के लिए दोनों ओर के प्रतिनिधिमंडलों द्वारा वही पुरानी बातें दोहरायी जाती थीं. उत्तर वीएतनाम प्रतिनिधिमंडल के नेता हानोइ की वही माँग दोहराते सुने जाते थे कि उत्तर वीएतनाम पर तुरंत और बिना शर्त्त बमबारी बंद करने से ही समस्या का समाधान हो सकता है. प्रति सप्ताह बातचीत की मेज़ पर यही वाक्य दोहराते उत्तर वीएतनामी प्रतिनिधि को सुना जा सकता था. बार-बार दोहराये जाने वाले इस वाक्य की अमेरिकी प्रतिनिधिमंडल पर होने वाली प्रतिक्रिया का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है. अमेरिकी प्रतिनिधि श्री हैरीमैन यह कहते सुने गये कि साढ़े तीन महीने की इस बातचीत में उत्तर वीएतनामी प्रतिनिधिमंडल की ओर से कोई और नया सुझाव नहीं आया, इस पर उत्तर वीएतनामी प्रतिनिधि ने उसी समय यह जवाब दिया कि जब तक आप हमारे देश पर आक्रमण जारी रखेंगे. मैं बराबर यही कहता रहूँगा. इसी तरह अमेरिकी प्रतिनिधि बराबर यह कहते सुने जाते थे कि अमेरिका उसी हालत में उत्तर वीएतनाम पर बमबारी बंद कर सकता है. जब हानोइ संघर्ष को फैलने न देने का आश्वासन दे. इसे उत्तर वीएतनामी प्रतिनिधि द्वारा हमेशा अस्वीकार कर दिया जाता था. उस पर श्री हैरीमैन उत्तर वीएतनामी प्रतिनिधि से यही पूछते सुने जाते थे कि अगर हम ने बमबारी बंद भी कर दी तो क्या होगा ? इस पर उत्तर वीएतनामी प्रतिनिधि का यही उत्तर होता था—'तब हम बात करेंगे.'

पेरिस-वार्त्ता में अमेरिकी और उत्तर वीएतनामी प्रतिनिधियों के एक दूसरे से बार-बार एक ही माँग दोहराने से यह बातचीत मृतप्राय: सी हो गयी थी. बातचीत की विफलता से संयुक्तराष्ट्र महा सचिव ऊ थाँ भी अवगत थे पर निराशा को बढ़ा-चढ़ा कर नहीं बहुत मद्धम स्वरों में व्यक्त किया जा रहा था. पेरिस-वार्त्ता बस इसी दृष्टि से जीवित थी कि वह प्रति सप्ताह होती थी और उसे चलते रहने की संज्ञा दी जा रही थी. चल भी इस लिए रही थी कि दोनों में से कोई पक्ष विफलता की ज़िम्मेदारी अपने ऊपर नहीं लेना चाहता.

रोडेसिया

फिर मिलेंगे

दो वर्ष के बाद मिले ब्रिटेन के प्रधानमंत्री हैरल्ड विल्सन और रोडेसिया के प्रधानमंत्री इयान स्मिथ फिर मिलने का वायदा कर बिछुड़ गये. उन का इस बार का विछोह बिना किसी धमकी और आरोप-प्रत्यारोप के हुआ. इयान स्मिथ जितना सिर ऊँचा किये हुए विल्सन से जिब्राल्टर में मिलने आये थे उस से ऊँचा सिर किये हुए वापस लौटे. विल्सन के ६-सूत्री प्रस्तावों को स्वीकार करने में उन्हें कोई विशेष आपत्ति नहीं थी लेकिन एक बात उन्हें ज़रूर नागवार गुज़री. उन्हें यह स्वीकार नहीं था कि उन के सर्वोच्च न्यायालय के न्याय के ख़िलाफ़ ब्रिटेन-स्थित प्रिवी कौंसिल में अपील की जाये. वह यह मानते हैं कि रोडेसिया का न्यायालय सर्वोपरि है. यही वजह है कि जब पिछले दिनों महारानी एलिज़ाबेथ ने काले अफ़्रीकियों को दी जाने वाली फाँसी की सज़ा माफ़ कर दी थी तो रोडेसिया सरकार ने उस की अवहेलना की. ६-सूत्री कार्यक्रम को रोडेसिया के काले लोगों ने भी यह कह कर नामंज़ूर कर दिया क्यों कि उन की नज़रों में इन प्रस्तावों के कार्यान्वियन से कालों की अपेक्षा गोरों का ही अधिक भला होगा. काले अफ़्रीकियों ने यह भी एलान किया है कि वह अपना गेरिला युद्ध जारी रखेंगे.

ज़ांबिया के राष्ट्रपति केनेथ काउंडा ने यह दावा किया है कि स्मिथ ने विल्सन के प्रस्ताव मंज़ूर कर लिये हैं और ब्रिटेन ४० लाख अफ़्रीकियों की ग़ैरत को जातिवाद के ऊपर न्यौछावर कर रहा है. काउंडा ने रोडेसिया में जनमत-संग्रह कराने के अपने निश्चय को दोहराते हुए ब्रिटेन को एकबारगी फिर यह सलाह दी है कि वह रोडेसियाई जनता को गोरों के चंगुल से मुक्त कराएँ. इस के लिए ब्रितानी सेना ज़ांबिया से हो कर रोडेसिया जा सकती है. ब्रिटेन ने ज़ांबिया के इस प्रस्ताव पर चुप्पी साध लेना ही शायद अधिक उचित समझा है. ब्रिटेन इस समस्या के किसी भी हल तक पहुँचने के लिए शायद इस लिए हिचक रहा है क्यों कि उस की रोडेसिया में २० करोड़ पाउंड की पूँजी लगी हुई है. अगर वह कोई सख़्त क़दम उठाता है तो राजनैतिक तौर पर तो सरकार को धक्का पहुँचेगा ही, आर्थिक तौर पर भी उसे इस पूँजी से हाथ धोना पड़ सकता है. ज़ांबिया के अपने संकट का कारण भी है क्यों कि वह तीन तरफ़ से गोरी-समर्थक सरकारों से घिरा हुआ है और उत्तर में उस का छोर अरब-अफ़्रीकी राष्ट्र हैं जिन के सामने इस्राइल की समस्या है. अफ़्रीका में इस समय चार रोडेसियानुमा देश हैं—दक्षिण अफ़्रीका, अल्जीरिया, केन्या और रोडेसिया—जहाँ बहुमत की अवहेलना हो रही है. दक्षिण अफ़्रीका और रोडसिया में तो ख़ालिस गोरों की हुकूमत है, केन्या और अल्जीरिया में कालों को गोरों का समर्थन है. दक्षिण अफ़्रीका में कालों को बिलकुल दबा दिया गया है, लेकिन रोडेसिया के काले अफ़्रीकी गाहे-बगाहे गेरिला युद्ध द्वारा स्मिथ सरकार को अपने अस्तित्व का परिचय देते रहते हैं. इस तरह गोरी सरकार के अत्याचारों ने कालों को भाग्यवादी बना दिया है और वे सोचने लगे हैं कि गोरे उन पर शासन करने के लिए ही पैदा हुए हैं. रोडेसिया के ख़िलाफ़ बेशक कई सरकारों ने व्यापारिक, आर्थिक और सैनिक प्रतिबंध लगा दिये हैं लेकिन दक्षिण अफ़्रीका की वर्स्टर सरकार रोडेसिया सरकार को सैनिक रूप से सहयोग दे रही है और रोडेसिया सीमा पर छापामारों को दबाने में भी वह उस की सहायक है. (देखिए समाचार-भूमि)

इंदोनेसिया

जोश जोश में कितना होश

इंदोनेसिया के विद्यार्थी एक बार फिर सक्रिय हो उठे हैं. उन के पत्थर और पोस्टर जो कुछ समय बंद कमरों में बंद हो गये थे, फिर निकल आये हैं और उस का निशाना इस बार जैकर्त्ता-स्थित सिंगापुर का दूतावास हुआ है. इस जोश और रोष का कारण इंदोनेसिया के दो नौसैनिकों को सिंगापुर सरकार द्वारा फाँसी पर लटकाया जाना है. इंदोनेसिया के ये दो नौसैनिक २३ वर्षीय हारुन बिन और २५ वर्षीय उस्मान बिन हाजी को तब हिरासत में ले लिया गया, जब उन के एक बम का मैकडोनल्ड हाउस के क़रीब विस्फोट हो जाने से तीन आदमियों को अपनी जानें से हाथ धोना पड़ा. सिंगापुर के अधिकारियों ने उन्हें अपने क़ब्ज़े में ले उन पर मुक़द्दमा चलाया और उन्हें फाँसी की सज़ा दी गयी. इंदोनेसिया के राष्ट्रपति सुहर्तो ने इन लोगों की तरफ़ से सिंगापुर से क्षमा-याचना भी की लेकिन वह भी बेकार गयी. सिंगापुर-स्थित इंदोनेसियाई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अधिकारियों को भी न इन लोगों से मिलने और न ही इन लोगों के मृत शरीर लेने की अनुमति दी गयी. सिंगापुर सरकार ने इन नौसैनिकों के शव अपने सैनिक जहाज द्वारा जैकर्त्ता पहुँचाये जहाँ उन का पूर्ण सैनिक तरीके से शवदाह हुआ.

विरोध और प्रदर्शन : सिंगापुर सरकार की इस कार्रवाई से छात्र बौखला उठे. उन्होंने जैकर्त्ता-स्थित सिंगापुर दूतावास घेर लिया, बाग को रौंद डाला, फर्नीचर और खिड़कियों को तोड़-फोड़ दिया गया लेकिन आगजनी और हताहत की कोई खबर नहीं मिली. सिंगापुर के सभी अधिकारियों को छात्रों के क्रोध से बचाने के लिए उन्हें इंडोनेसियाई होटल में पहुँचाया गया जहाँ सभी तरह से उन की रक्षा का प्रबंध किया गया. छात्रों का क्रोध केवल जैकर्त्ता तक ही न रहा बल्कि पूर्व जावा की राजधानी सुरबाया तक पहुँच गया. यहाँ लगभग २०० युवकों ने सिंगापुर-विरोधी नारे लगाये, ८ चीनी दुकानों को लूटा, २० कारें जलायीं और कई चीनियों को मारा-पीटा भी. सिंगापुर के ये उग्र छात्र और युवक सरकार से यह अपील कर रहे हैं कि वे सिंगापुर से सभी तरह के संबंध तोड़ दें. इंदोनेसिया के विदेशमंत्री आदम मलिक ने छात्रों से अपील की है कि अगर हमारे सम्मान को चोट पहुँचायी गयी है तो इस का यह मतलब तो नहीं है कि हम भी बदहवास हो जायें. उन्होंने यह भी आदेश जारी किया है कि पूर्व जावा में अगर मार-धाड़ और संपत्ति को लूटने की घटनाएँ होती हैं तो पुलिस सिंगापुर और चीनी निवासियों को बचाने के लिए प्रदर्शन-कारियों पर गोली चलाने से भी आनाकानी न करे. जाहिर है कि जोश के इस माहौल में सरकार होश को खोना नहीं चाहती.

अमेरिका

ओनासिस क्यों ?

श्रीमती जेक्वेलिन केनेडी की पसंद अमेरिकियों को बहुत नागवार गुज़री है—हर किसी की ज़ुबान पर यही सवाल है कि 'ओनासिस क्यों ?' ओनासिस से विवाह का निर्णय केनेडी परिवार को भी भाया हो, ऐसा नहीं लगता—औपचारिक बधाई के अलावा किसी ने कुछ न कह कर चुप्पी से, अपनी प्रतिक्रिया को अभिव्यक्ति दे डाली. लेकिन अखबार वाले चुप न रह सके—उन्होंने लाखों अमेरिकियों की निराशा को अभिव्यक्त कर दिया : "लगभग पाँच वर्ष तक संसार श्रीमती केनेडी की हिम्मत, शालीनता और दुर्लभ सौंदर्य की प्रशंसा करता रहा, लेकिन अब सुंदर जैकी ने हम सब को निराश कर दिया है—शायद इस लिए कि हम सब रोमान और मध्यवर्गीय मूल्यों की दुनिया में रहते हैं. जैकी ने एक ऐसा व्यक्ति चुना है जिसे 'दुस्साहसी दस्यु' कहा जाता है." (न्यूयॉर्क पोस्ट में स्तंभकार हैरियट वान होर्न)

३९ वर्षीय जैकी को जानने वाले कहते हैं कि पति की मृत्यु के बाद से वह डरी-डरी घबराई-घबराई रहती आयी हैं और विलियम मांचेस्टर की पुस्तक (जॉन केनेडी की हत्या का वर्णन) तथा देवर रॉबर्ट केनेडी की हत्या के बाद वह अंदर से और भी टूट चुकी हैं. ओनासिस से विवाह प्रेम का नहीं बल्कि सुरक्षा का समझौता है. ओनासिस के पास द्वीपों और नौकाओं का अपना निजी संसार तो है ही, मानव मन को सहारा देने की कला भी है. उस ने विंस्टन चर्चिल जैसे कठोर मनुष्य को भी प्रीति के वश कर लिया था.

बेशुमार दौलत, सजे-धजे विशाल जलपोतों और अनेक निजी द्वीपों का स्वामी ६२ वर्षीय ओनासिस, जिस की ज़िंदगी आय कर बचाने की तिकड़मों में विभिन्न देशों की सरकारों से टक्करें लेते गुज़री है उस के कुछ परिचितों के अनुसार अमेरिकी करोड़पतियों के मुक़ाबले अधिक खूँखार और आकर्षक (स्त्रियों को) जलदस्यु जान पड़ता है—दस्यु तो अमेरिकी भी हैं. 'पुरुष की बाँह' से जिस सुरक्षा का अभिप्राय होता है वह ओनासिस जैकी को हमेशा-हमेशा, अमीर बातून घूमे-फिरे दुनियादार लोगों के बीच, उपलब्ध करा सकेगा.

उस का घोर प्रतिद्वंद्वी न्यारकोस भी जहाज़रानी व्यापार का दस्यु है. दोनों अधिकांश रूप से तेल पहुँचाने का धंधा करते हैं. कुछ वर्ष पहले जब जॉन केनेडी संसार में थे श्रीमती केनेडी को ओनासिस ने स्वास्थ्य लाभ करने के लिए अपने यहाँ नौका-विहार का निमंत्रण दिया था. बहन ली रैज़िविल जैकी के साथ गयी थीं और राष्ट्रपति केनेडी कृतज्ञ हुए थे, पर यह अफ़वाह तुरंत फैली थी कि ओनासिस ने श्रीमती राष्ट्रपति को इस लिए निमंत्रण दिया है कि न्यारकोस के यहाँ इसी समय ब्रिटेन की राजकुमारी मारग्रेट का आतिथ्य सत्कार हो रहा है.

भूतपूर्व राष्ट्रपति केनेडी और जैकी, दोनों बहुत लोकप्रिय और लोकाकर्षक व्यक्तित्व रहे हैं. यदि जैकी ने धनकुबेर के बदले किसी

जैकी और ओनासिस : सौंदर्य और संपत्ति का गठबंधन

अन्य व्यक्ति का, अमेरिका या ब्रिटेन के सम्मानित व्यक्ति का, वरण किया होता तो अमेरिकी जनमानस को ठेस न पहुँची होती. लेकिन हत्यारों के हाथ पति और देवर (रॉबर्ट) को खो कर जैकी का दिल एक ऐसी पनाह चाहता होगा जो इस तरह छिन न सके.

बहरहाल, २० अक्तूबर को अरिस्टाटल ओनासिस की विहार स्थली स्कॉरपिओस द्वीप में रोमन कैथलिक चर्च की रीति से जैकी-ओनासिस विवाह संपन्न हुआ. विवाह में दोनों परिवारों के सदस्य और अभिन्न मित्र ही सम्मिलित हुए. इन की संख्या ४० से अधिक नहीं थी. वैटिकान के धर्माधिकारी इस विवाह के विरुद्ध थे—तलाक़शुदा ओनासिस को दूसरे विवाह की अनुमति कैसे दी जाये, फिर जैकी रोमन कैथलिक संप्रदाय की नहीं हैं. यूनान के सनातनी धर्माधिकारियों ने इस विवाह पर आपत्ति नहीं की—एक तो ओनासिस की प्रभुता का प्रताप और दूसरे यूनान की प्रतिष्ठा बढ़ाने वाला यह दुर्लभ संबंध. काफ़ी अर्से के बाद किसी यूनानवासी ने ऐसा कुछ किया है कि यूनान दुनिया वालों की आशंसा का, ईर्ष्या का केंद्र बन सके.

जैकी और उन के दोनों बच्चों–जॉन और कैरोलिन–का न्यूयॉर्क से प्रस्थान : परिणय के लिए

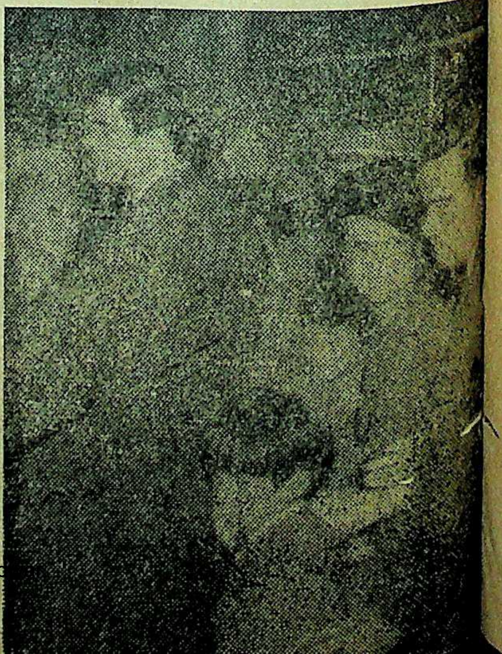

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जनगणना : कुछ नये प्रश्न

भारत जैसे विशाल देश की जनगणना का कार्य अपने-आप में ही एक बहुत बड़ा काम है, क्यों कि आधुनिक जनगणना केवल व्यक्तियों की संख्या लगाना ही नहीं. आधुनिक जीवन की सामाजिक और आर्थिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए यह जरूरी है कि जनसंख्या के साथ-साथ उस पर प्रभाव डालने वाले और उस से प्रभावित होने वाले विषयों पर भी उचित प्रकाश डाला जाये. आज की सामाजिक परिस्थितियाँ और आर्थिक विषमताएँ किसी भी राष्ट्र को अपने-आप विकास करने और आगे बढ़ने की सुविधा प्रदान नहीं करतीं. इन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए प्रत्येक राष्ट्र को योजनाबद्ध रूप से आगे बढ़ना पड़ता है. इस सिलसिले में भारत के जनगणना आयोग ने अपने कार्यक्रम में कई नये विषय जोड़ दिये हैं और यह आशा की जाती है कि १९७१ की जनगणना रिपोर्ट में कुछ नयी महत्त्वपूर्ण बातें सामने आयेंगी. इस संबंध में प्रारंभिक काम शुरू हो गया है. जनगणना-कार्यकर्त्ताओं के चार दिवसीय सम्मेलन के उद्घाटन पर मुख्य रजिस्ट्रार श्री चंद्रशेखर ने संवाददाताओं को बताया कि १९७१ में जो जनगणना होगी उस में विषय और कार्यप्रणाली में कुछ परिवर्त्तन और संशोधन किये जा रहे हैं.

कंप्यूटर युग : पहली बार भारत में आँकड़े तैयार करने और उन को उपयुक्त वर्गों में बाँटने के लिए कंप्यूटरों का प्रयोग किया जायेगा, ताकि उन को अधिक प्रामाणिकता के साथ संबंधित किया जा सके. वास्तव में इस प्रकार का प्रयास भारत सरकार की ओर से १९६७ में अफ़गानिस्तान की जनगणना में किया गया था. इस प्रयोग में भारतीय विशेषज्ञों को उत्साहवर्द्धक और उपयोगी परिणाम प्राप्त हुए हैं. इन्हीं परिणामों के आधार पर यह विश्वास किया जाता है कि भारत में भी कंप्यूटरों का सहयोग लाभदायक सिद्ध होगा. मगर यहाँ यह बात महत्त्वपूर्ण है कि अफ़गानिस्तान और भारत को इस सिलसिले में एक ही स्तर पर नहीं रखा जा सकता. ५० करोड़ से अधिक जनसंख्या विभिन्न वर्गों और विभिन्न प्रवृत्तियों के लोगों की गणना करना कंप्यूटरों के द्वारा भी बहुत कठिन और बड़ा काम है. इस के अतिरिक्त पहली बार १० प्रतिशत नमूने के आधार पर आँकड़े संग्रहीत करने की प्रथा जारी की जायेगी. किंतु आरंभिक स्तर पर शत-प्रतिशत गणना होगी. इस बार अंतिम रिपोर्ट तैयार होने से पहले ही कुछ महत्त्वपूर्ण आँकड़ों को प्रकाशित किया जायेगा, क्यों कि आयोग के अनुसार इस प्रकार के आँकड़े देश की आर्थिक नीतियों और पंचवर्षीय योजनाओं को बनाने वालों के लिए उपयोगी सिद्ध होंगे. इस के अतिरिक्त अलग-अलग वर्गों के आँकड़े पुस्तिकाओं के रूप में भी प्रकाशित किये जायेंगे.

नये विषय : सामान्यतः जनगणना के महत्त्व को नहीं समझा जाता, किंतु यदि देश की आर्थिक नीतियों और बदलते हुए रिवाजों, शहरी और देहाती क्षेत्रों पर पड़ने वाले दबाव, किसानों और मजदूरों की आर्थिक और सामाजिक अवस्था की सही-सही जानकारी प्राप्त करनी हो तो जनगणना से अधिक अच्छा उपाय कोई नहीं है. इसी लिए विशेषज्ञों ने यह महसूस किया है कि १९७१ की जनगणना में आर्थिक पहलुओं को महत्त्व दिया जायेगा. जनगणना आयोग के भूतपूर्व मुख्य रजिस्ट्रार अशोक मित्र ने आयोग की नयी योजनाओं पर प्रकाश डालते हुए कहा कि गणना में इस बात के आँकड़े भी इकट्ठे किये जायेंगे कि देश के विभिन्न भागों में लोग एक स्थान को छोड़ कर दूसरे स्थान पर जाने के लिए क्यों बाध्य होते हैं और पुरानी जनगणना के मुक़ाबले में उस का अनुपात क्या है. भारत के लिए यह एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न है, क्यों कि भारत अब भी मुख्यतः कृषि-प्रधान देश है. इस लिए देहातों से यदि अनियमित रूप से और भारी संख्या में किसान शहरों के लिए आ रहे हैं तो इस के कारणों की जाँच करना या इस का सही चित्र प्रस्तुत करना जरूरी हो जाता है. यह एक तथ्य है कि आज भारत के देहातों से प्रतिवर्ष लाखों व्यक्ति शहरों की ओर जाते हैं, जिस से न केवल कृषि संबंधी कठिनाइयाँ पैदा होती हैं बल्कि शहरों में प्रशासन, स्वास्थ्य और रोज़गार संबंधी समस्याएँ भी उत्पन्न हो जाती हैं. इस का कारण भारत में कृषि की असफलता हो सकता है. औद्योगीकरण भी सहायक कारण माना जा सकता है. इसी सिलसिले में एक महत्त्वपूर्ण उदाहरण देश की राजधानी दिल्ली से प्राप्त किया जा सकता है. १९३१ से १९६१ तक दिल्ली की जनसंख्या में इतनी वृद्धि हुई है जितनी भारत के किसी नगर और विश्व के बहुत थोड़े शहरों में हुई है. राजधानी की चौथी पंचवर्षीय योजना के प्रारूप में बताया गया है कि गत ३० वर्षों में दिल्ली में ४८७.४७ प्रतिशत वृद्धि हुई है, जब कि कलकत्ता में इसी अवधि में १३९.७२ प्रतिशत, बम्बई में २८७.४४ प्रतिशत और मद्रास में १४०.४९ प्रतिशत की वृद्धि हुई. कलकत्ता और मद्रास में जनसंख्या में सामान्य वृद्धि हुई है. क्यों कि संपूर्ण देश में १३५.९४ प्रतिशत की वृद्धि के आँकड़े उपलब्ध हुए हैं. स्पष्ट है कि दिल्ली में केंद्रीय सरकार के प्रमुख कार्यालय होने के कारण और किसी सीमा तक औद्योगीकरण के कारण विभिन्न प्रदेशों और आसपास के देहातों से लोग चले आये हैं. यदि जनसंख्या-वृद्धि का यही अनुपात रहा तो दिल्ली के मास्टर प्लान में भारी परिवर्त्तन करना पड़ेगा, क्यों कि इस प्लान के अनुसार १९८१ तक दिल्ली की जनसंख्या का अनुमान ५० लाख लगाया गया है, मगर वर्तमान संकेतों से स्पष्ट है कि जनसंख्या इस लक्ष्य को पार कर जायेगी, जिस के ६७ या ६८ लाख होने की संभावना है. इस से दिल्ली नगर में कई विकट समस्याएँ पैदा हो गयी हैं. आवासों की कई समस्या के कई पहलू हैं. मध्यवर्गीय परिवारों के लिए मकानों की कमी तो है ही, ऐसे मकानों की समस्या भी सामने है जो बिना किसी मान्य नक्शे के बनाये जाते हैं. दिल्ली में पूरे मुहल्ले ऐसे हैं जो बिना मान्यता के बस गये हैं. इस प्रकार अनियमित वृद्धि और अनियंत्रित विकास की सूचना यदि समय से पहले जनगणना के आँकड़ों से प्राप्त हो तो बड़े नगरों के समुचित विकास और फैलाव के प्रति वैज्ञानिक कार्यक्रम बनाया जा सकेगा.

कुछ सवाल : दूसरी समस्या इस समय विभिन्न प्रकार के कार्यक्षेत्रों में लगे हुए व्यक्तियों के वर्गीकरण की है. औद्योगीकरण और तकनीकी विकास के साथ-साथ इसी प्रकार के अनेक काम और धंधे निकल आये हैं जिन में देश के लाखों लोग लगे हुए हैं. अभी तक भारत में इस प्रकार का कोई मार्गदर्शक नहीं है जिस से देश की जनता और संबंधित अधिकारियों को तकनीकी शिक्षा प्राप्त या तकनीकी व्यवसायों में काम करने वाले व्यक्तियों के संबंध में सही जानकारी मिल सके. इस लिए १९७१ की जनगणना में इस प्रकार के व्यवसायों से संबंधित आँकड़े भी इकट्ठे किये जायेंगे. अभी इस बात का निश्चय नहीं हुआ है कि जनगणना के साथ परिवार-नियोजन की प्रगति और प्रभाव पर भी प्रकाश डाला जाये अथवा नहीं. १९६१ की जनगणना में भारत की भाषाओं के संबंध में एक संदिग्ध मापदंड का प्रयोग किया गया था. भारत जैसे विशाल देश में हर छोटे-छोटे क्षेत्रों पर बोलियों में कोई न कोई अंतर अवश्य मिलता है. इस का कारण स्वतंत्रता पूर्व देश का आर्थिक पिछड़ापन और यातायात की कठिनाइयाँ हैं. मुख्य तथ्यों को न छिपाते हुए भी यह बात स्पष्ट कर देनी जरूरी है कि विभिन्न क्षेत्रों में बोली जाने वाली अनेकों बोलियाँ कुछ ही भाषा-वर्गों में आती हैं. उदाहरण के लिए हिमाचलप्रदेश जैसे छोटे से क्षेत्र में कई बोलियों का प्रयोग होता है. डोगरी, पंजाबी और पहाड़ी भाषाओं के अलग-अलग वर्ग हैं, किंतु संपूर्ण रूप से हिमाचलप्रदेश की भाषाओं को हिंदी के अंतर्गत माना जाता है. जनगणना आयोग के लिए यह जरूरी है कि वह इन तथ्यों पर जोर दे, अन्यथा आँकड़ों की ग़लत परिभाषा से पृथकतावादी तत्त्व यह सिद्ध करने से नहीं चूकेंगे कि भारत में सैकड़ों भाषाएँ हैं और इसी आधार पर प्रत्येक छोटे-बड़े क्षेत्र से 'स्वायत्तता' की माँग खड़ी हो सकती है. जनगणना के आँकड़ों का देश और जनता की प्रवृत्ति पर प्रभाव पड़ता है, इस लिए आयोग को कंप्यूटरों की सहायता लेते हुए भी स्वयं एक कंप्यूटर बनने का लोभ छोड़ देना होगा.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपोलो-७ : चंद्रमा-यात्रा का पूर्वाभ्यास

अंतरिक्ष-यात्रा की प्रतियोगिता में सोवियत संघ आगे निकलता है या संयुक्त राज्य अमेरिका, यह केवल राजनैतिक रूप से महत्वपूर्ण है. वैज्ञानिक दृष्टिकोण से तो यही कहा जा सकता है कि मानव चंद्रमा पर क़दम रखने की स्थिति में बहुत शीघ्रता से आ रहा है. ११ अक्तूबर को अमेरिकी अंतरिक्ष-यान—अपोलो ७ सफलतापूर्वक अपनी परिधि में पहुँच गया. वास्तव में यह यान उसी प्रकार से बना है जिस प्रकार अपोलो-८ चंद्रमा-यान की रचना हुई है. अमेरिकियों की योजना है कि दिसंबर मास में अपोलो-८ को चंद्रमा की ओर भेजा जायेगा और वह चंद्रमा की परिक्रमाएँ करने के बाद पुनः पृथ्वी पर लौट आयेगा. इस प्रकार के महान् कार्य के लिए ज़रूरी है कि हर एक संभावना और आशंका पर विचार किया जाये, ताकि अप्रत्याशित रूप से दुर्घटना का सामना न करना पड़े. इस लिए अपोलो-७ अपोलो-८ का ही एक पूर्वाभ्यास है. इसी की सफलता पर संयुक्त राज्य अमेरिका का चंद्रमा-यान चंद्रमा की सफल परिक्रमा के बाद सकुशल लौट सकता है.

केप केनेडी में विशाल प्रक्षेपण-मंच से सैटर्न-१-बी रॉकेट की सहायता से अपोलो-७ को अंतरिक्ष में फेंका गया. रॉकेट कुछ मिनट के बाद मुख्य यान से अलग हो गया और अपोलो-७ यान १४० और १७३ मील की परिधि में घूमने लगा. वास्तव में यह उन आँकड़ों के बिल्कुल निकट है जिन की पहले से गणना हो चुकी थी. यान में नौसेना के कप्तान वॉल्टर शिरा, वायुसेना के मेजर डन ईसेल और असैनिक अंतरिक्ष-यात्री वॉल्टर कनिंघम बैठे थे. ११ दिन की अपनी प्रस्तावित यात्रा में यह यान ७२ लाख किलोमीटर की यात्रा तय करेगा. अपोलो को अंतरिक्ष में उठाते हुए देखने के लिए केप केनेडी में हज़ारों व्यक्ति इकट्ठे हुए थे और जब सैटर्न बी-१ के आठ इंजिनों ने १६ लाख पाउंड प्रवेश-शक्ति पैदा करनी आरंभ की तो दूर तक सुनाई देने वाली गर्जना हुई. किंतु इस से पूर्व जब इसी मंच से एक रॉकेट और अंतरिक्ष-यान छोड़ा गया था तो 'नैसा' सूचना-केंद्र की खिड़कियों के शीशों में भी कंपन पैदा हो गया था. किंतु अपोलो-७ की उड़ान के समय इतना शोर नहीं हुआ. घटनास्थल पर विभिन्न देशों के प्रायः ६०० पत्रकार मौजूद थे. चंद्रमा-यान ११ दिन की अंतरिक्ष-यात्रा में पृथ्वी की १६२ बार परिक्रमा करेगा और वापसी पर अतलांतक महासागर में कूद पड़ेगा.

टेलीविज़न प्रदर्शन : अमेरिका के तीन सवारी वाले इस चंद्रमा-यान ने अपनी यात्रा के दूसरे दिन उसी रॉकेट के साथ प्रायः संपर्क जोड़ लिया जिस ने उसे केप केनेडी से अंतरिक्ष में उछाला था. तीन अंतरिक्ष-यात्रियों ने उसी प्रकार के दिशा-सूचक और दूरवीक्षणों का प्रयोग किया जो पुराने ज़माने में समुद्री जहाज़ों पर प्रयोग में लाये जाते थे. उन्हीं की सहायता से वे अपने यान को द्विस्तरीय रॉकेट के इतने निकट लाये कि दोनों में केवल ७० फ़ुट का अंतर रह गया. इस से आगे जाने का उन्होंने साहस नहीं किया. वास्तव में अंतरिक्ष-यात्री शिरा ने इस से पहले भी इस प्रकार का संपर्क जोड़ा है. १९६५ में वे दो सवारी वाले जेमिनी-६ को जेमिनी-७ के इतना निकट लाये कि दोनों में केवल एक फ़ुट का अंतर रह गया था. इस प्रकार का संपर्क इस लिए जोड़ा जाता है क्यों कि प्रस्तावित चंद्रमा-यात्रा में प्रमुख यान के अतिरिक्त एक चंद्रमा-थैली का प्रयोग किया जायेगा, जो दो व्यक्तियों को चंद्रमा पर ले जाने और उन्हें वापस लाने में सहायक सिद्ध होगी. कार्यक्रम के अनुसार अपोलो-७ के यात्रियों को दूसरे दिन ही टेलीविज़न कैमरे के सामने प्रदर्शन करना था, किंतु थकान की वजह से नियंत्रक अधिकारियों ने फ़ैसला किया कि अंतरिक्ष-यात्रियों को सो जाना चाहिए. वॉल्टर शिरा को अपने यान के अंदर ठंड के कारण ज़ुकाम हो गया था और अन्य दो व्यक्तियों को भी थोड़ी-बहुत खुश्की-सी महसूस हो रही थी. अधिकारियों का कहना है कि इस का कारण शुद्ध ऑक्सीजन में साँस लेना है. इस के अतिरिक्त कोई ऐसी गंभीर बेचैनी नहीं थी जिस से अंतरिक्ष-यात्रियों को अपने कार्यक्रम में कोई परिवर्त्तन करना पड़ता. वास्तव में चंद्रमा-यान के अंदर ही एक छोटा-सा अस्पताल है, जिस में ७२ एस्परीन और २४ अन्य प्रकार की गोलियाँ रखी गयी हैं. यात्रा के चौथे दिन अंतरिक्ष-यात्रियों ने अपने टेलीविज़न कैमरे संयुक्त राज्य अमेरिका की ओर मोड़ दिये. अंतरिक्ष-यात्रा कार्यालय के अध्यक्ष डोनाल्ड के. स्लेटन ने अंतरिक्ष-यात्रियों की तस्वीरें देख कर बड़े उत्साह में कहा 'यह तो बहुत अच्छा दिखायी दे रहा है. मुझे वास्तव में आश्चर्य हो रहा है.' इन चित्रों में मेजर ईसेल हँसते हुए दिखायी दे रहे थे, जब कि वॉल्टर शिरा ने कुछ लिख कर दिखाया, मगर वह स्पष्ट रूप से पढ़ा न जा सका.

अपोलो-८ : इस परीक्षण-उड़ान में अभी तक जो कुछ दिखायी दे रहा है उस से यही अनुमान लगाया जा सकता है कि अपोलो-८ की यात्रा में अमेरिकियों को कोई विशेष परिवर्त्तन नहीं करना पड़ेगा. अपोलो-७ की यात्रा के दौरान अंतरिक्ष-यात्रियों को कुछ कठिनाइयाँ ज़रूर हुईं मगर उस से यात्रा की असफलता की अभी कोई आशंका नहीं है. बीच में अंतरिक्ष-यान की चेतावनी-बत्तियाँ जगमगा उठीं और इस से अंतरिक्ष-यात्री कुछ घबरा गये. मगर अधिकारियों ने इसे कोई गंभीर दुर्घटना नहीं माना, क्यों कि अंतरिक्ष-यात्री इस ख़राबी को दूर करने में सफल हो गये थे. इस के अतिरिक्त मेक्सिको के ऊपर से उड़ते हुए अंतरिक्ष-यात्रियों को कुछ विचित्र प्रकार का संगीत सुनायी पड़ा और अंतरिक्ष-यान की खिड़कियों पर बाहर से छोटे-छोटे बाल जम गये. अमेरिकी अधिकारियों का कहना है कि अपोलो-७ अपने ५० प्रतिशत उद्देश्यों में सफल हो गया है. वापसी पर १५ प्रतिशत और सफलता मिलने की आशा है. यदि अपोलो-७ की यात्रा सफल रही तो अमेरिकियों को इस बात का दुःख करने के लिए कोई कारण नहीं रहना चाहिए कि पिछले दिनों सोवियत संघ ने ज़ोंद-५ को चंद्रमा की परिक्रमा करने के बाद वापस भूमि पर लाने में सफलता प्राप्त कर ली. अमेरिकी अधिकारियों का विश्वास है कि वे कार्यक्रम के अनुसार अगले वर्ष के अंत तक मनुष्य को चंद्रमा पर उतारने में सफल हो जायेंगे.

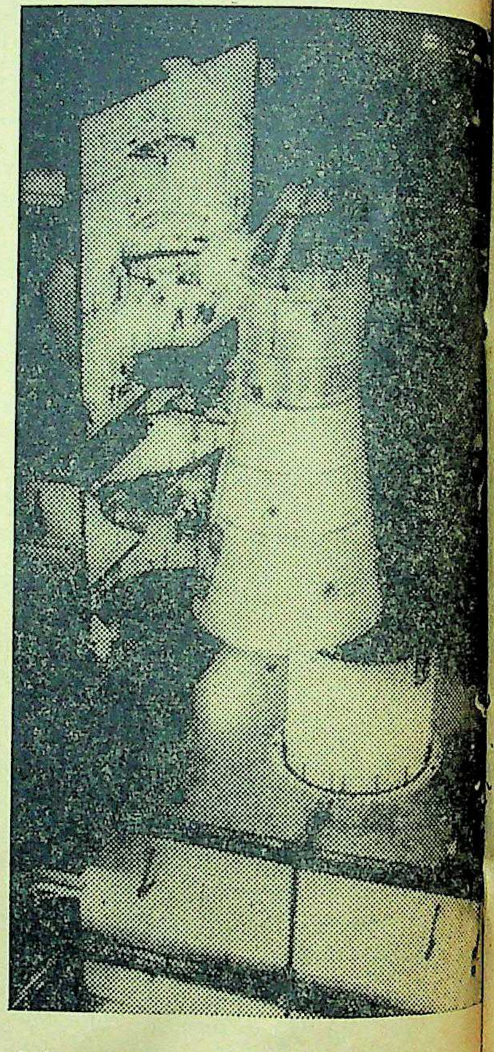

अपोलो-८ अंतरिक्ष यान का चित्र, जो दिसंबर में अंतरिक्ष-उड़ान करेगा.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जटायु और मारीचवध

कला

काठ की खुदाई

नयी दिल्ली के 'आइफ़ैक्स' हाल में काष्ठ खुदाई की एक अनूठी प्रदर्शनी हो रही है. इस प्रदर्शनी में नेफ़ा से केरल तक और बंगाल से गुजरात तक काष्ठ कला के लगभग २०० नमूने शामिल हैं. कलाकृतियों की खुदाई में आम, शीशम, खिरनी, रोज़ (केरल राज्य) और संदल की सुगंधित लकड़ी का प्रयोग किया गया है. कलात्मक एवं श्रृंगारिक कृतियों के साथ-साथ, व्यावहारिक वस्तुओं के नमूने भी दिखाये गये हैं. प्रदर्शनी को देख कर भारत की सुंदर काष्ठ कला की गहरी छाप पड़ती है.

भारत में काठ के काम की बड़ी प्राचीन परंपरा है. महाराजा चंद्रगुप्त मौर्य की राजधानी पाटलीपुत्र की चारदीवारी और उन के महल काठ के बने हुए बताये जाते हैं. इन कारीगरों की सभाएँ और श्रेणियाँ हुआ करती थीं और उन्हें बड़ा सम्मान प्राप्त था. आज उन की कृतियों के अवशेष उपलब्ध नहीं हैं पर परंपरा जारी है. स्वतंत्रता प्राप्त होने के बाद भारत सरकार ने उन्हें पुनः प्रोत्साहन देना आरंभ किया. अब तक लगभग १३५ विभिन्न क्षेत्र के कारीगरों को सम्मानित किया जा चुका है. १९६५ से इन को गणतंत्र दिवस के अवसर पर राष्ट्रीय पुरस्कार भी दिये जाने लगे हैं. गत वर्ष गणतंत्र दिवस पर १५ कारीगरों को राष्ट्रीय पुरस्कार दिया गया था जिन में तीन काठ का काम करने वाले थे.

प्रदर्शनी में भाग लेने वाले कलाकारों के नाम नहीं दिये गये हैं. नाम देने से उन को अवश्य प्रोत्साहन मिलता. अधिकतर कृतियाँ कारीगर-सहकारी-संस्थाओं तथा डिज़ाइन केंद्र से प्राप्त हुई हैं.

प्रदर्शनी के प्रवेश द्वार पर ही गहरे रंग की आदम क़द से भी ऊँची एक दूतनी की प्रतिमा है. यह दक्षिण कनारा, मैसूर राज्य, की बनी हुई है. इसी ढंग के कुछ और भी चेहरे तथा आदिम जातियों से प्राप्त मूर्त्तियाँ हैं. इन से मानव जाति की अंतर्धारा के प्रवाह का आभास मिलता है. नेफ़ा से प्राप्त सात प्रतिमाओं की एक कृति 'बेन शान' तैलचित्र जैसी प्रतीत होती है. वस्तुतः अनेक राज्यों से प्राप्त प्रतिमाएँ देख कर काष्ठ कला की विविधता और उन में निहित सांस्कृतिक एकसूत्रता का गहरा अध्ययन किया जा सकता है.

सामने गुजरात में बनाया हुआ बड़ा सुंदर तोरण द्वार है जो राजस्थान निर्मित दो हाथियों पर टिका हुआ है. पार्श्व की गैलरियों में विभिन्न राज्यों में बनी हुई पौराणिक तथा धार्मिक कृतियों की बड़ी सुंदरता से गढ़ी हुई पट्टिकाएँ हैं. कुछ कृतियाँ तो हाथी दाँत जैसी साफ़-सुथरी बनी हुई हैं. कुछ व्यावहारिक वस्तुएँ भी हैं जैसे कटोरे, कुर्सियाँ इत्यादि. दैनिक जीवन में कला का स्थान और उस का महत्त्व उन्हें देख कर आँका जा सकता है.

ओडिसा, बिहार और बंगाल की कला पर लोकप्रभाव है. पुरी में निर्मित काठ की आकृतियों का जिन पर सुंदर ओप है, परंपरा से रथयात्रा उत्सव में उपयोग होता आया है.

संस्कृति का वाहक

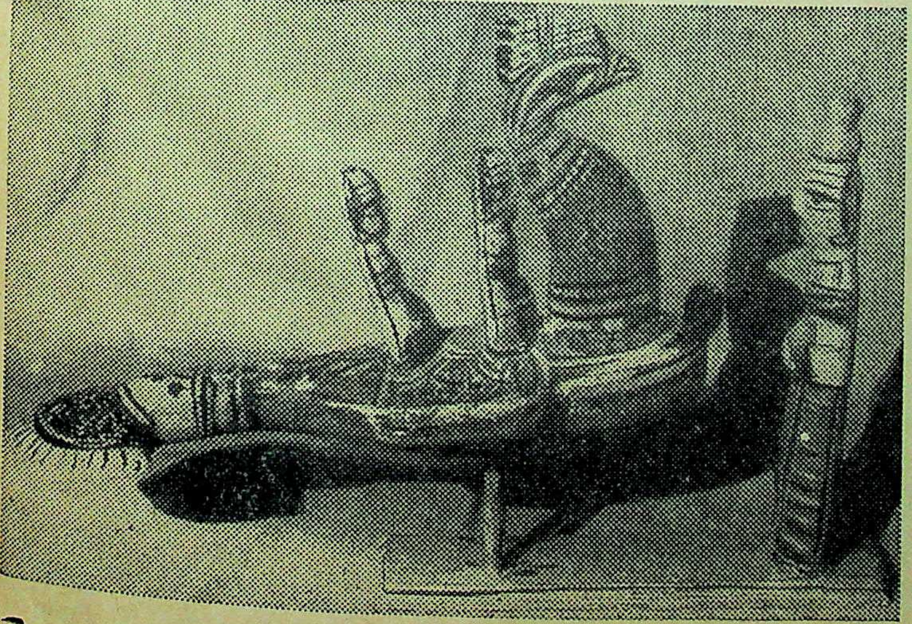

छत्तीसगढ़ की कला : परंपरागत शैली में रँगा हुआ मोर

जगन्नाथ जी के तीर्थ-यात्रियों के लिए ये सजे-धजे काठ के जीव-जंतु सदियों से प्रिय रहे हैं और इस प्रदर्शनी में उन की गरिमा और सौष्ठव का सुंदर साक्षात होता है.

यह प्रदर्शनी अपने आप में सुखद और प्रीतिकर है. लोहे और सीमेंट के इस युग में काठ की कला अपनी मार्मिक व्यथा कहती-सी प्रतीत होती है. इस कला को जो हमारी परंपरा और संस्कृति से अविच्छिन्न रूप से जुड़ी हुई है विकास का पूरा अवसर मिलना चाहिए और उन की क्षेत्रीय विशेषताओं को सुरक्षित रखा जाना चाहिए. काठ की कला को काठ न मार जाये इस की ओर पूरा ध्यान देना कला-प्रेमियों के लिए आवश्यक है.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

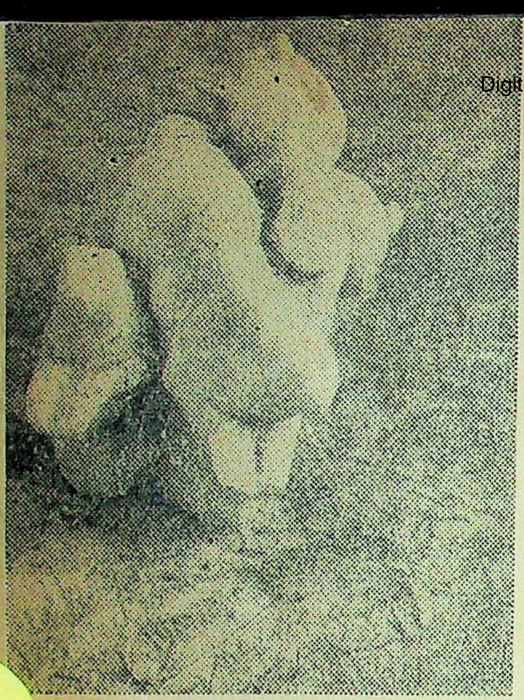

'कलोंचे लेते खरगोश' : रमेश विष्ट

मूर्त्तिशिल्प की प्रदर्शनी

लखनऊ में राज्य ललित कलाअकादेमी की लाल बारादरी में २४ वर्षीय मूर्त्तिशिल्पी **रमेश बिष्ट** के कला-कृतियों की प्रदर्शनी हुई. चार-पाँच वर्षों में जहाँ अकादेमी में चित्रकारों की सौ से ऊपर प्रदर्शनियाँ आयोजित हुई हैं मूर्त्तिशिल्प की यह केवल चौथी प्रदर्शनी है.

कलाकार की ६० कृतियाँ प्रदर्शनी में देखने को मिलीं. मृच्छिल्प, पकी मिट्टी, प्लास्टर, लकड़ी, सीमेंट, पत्थर और धातु––सभी के माध्यम से बिष्ट की कलात्मक-सृजनता मुखरित हुई है. इन में पशु, नर और नारी, अकेले और समूह में प्राणवंत और गतिमान हो कर सहज और सुलभ प्रतीत होने वाली सरलता के साथ अवतरित हुए हैं. उभार और गहराइयों के सामंजस्य द्वारा उपस्थित की गयी रेखाओं से इन मूर्त्तियों की गति में लय और मुद्राओं में भाव जिस सुगमता से प्रस्तुत किये जा सके हैं वह कला-पारखी को यह विश्वास करने पर बाध्य करता है कि कलाकार अपनाये गये माध्यम का प्रयोग अधिकृत रूप से करने में समर्थ है. रचनाओं का संगठन और आयोजन भी ऊँचे दर्जे का बन पड़ा है. सफ़ेद प्लास्टर में किया गया 'खरगोशों का समूह', पकी मिट्टी में उतारी गयी 'दम तोड़ती भैंस', पकी मिट्टी का ही 'घायल घोड़ा'; सीमेंट का 'कलोंचे लेते खरगोश' और मृच्छिल्प में मूर्त्तिमान 'परिवार' महत्त्वपूर्ण कृतियाँ हैं. पकी मिट्टी का 'जनविद्रोह' और 'बेघरबार वालों का कारवाँ' भी अपना विशेष स्थान रखते हैं. मृच्छिल्प में की गयी 'दो सिर' और 'यूनिटी' ऐसी कृतियाँ हैं जिन्हें किसी सीमा तक आधुनिक कला की परिभाषा में लाया जा सकता है. काष्ट में की गयी वेदना और 'शिशिर' काष्ठ में कही गयी कविताएँ हैं. 'पहाड़ी औरत' में बिष्ठ ने लंबे, घुंघराले, लहराते बालों के समूह को प्रभावोत्पादक बनाने के लिए काष्ठ से व्याप्त रेशेदार धारियों का उपयोग बड़ी ख़ूबी से किया है. सामग्री की यह मितव्ययिता बिष्ट की कला का गुण है. सीमेंट के काम में अवश्य बिष्ट को वही सफलता मिली है जो मृच्छिल्प, पकी मिट्टी, प्लास्टर और काष्ठ में वे प्राप्त कर सके हैं. 'ममता'––सीमेंट में की गयी कृति––उस का सबल प्रमाण है.

किंतु पूरी प्रदर्शनी को देखने के पश्चात् इस निष्कर्ष पर पहुँचे बिना नहीं रहा जा सकता कि बिष्ट की कला का उचित और उपयुक्त माध्यम पत्थर के बड़े-बड़े शिला-खंड ही हो सकते हैं. प्रदर्शित कृतियों से उन की कला का तीव्रगामी विकास दृष्टिगोचर होता है.

छायाचित्र-कला

कृति और अनुकृति

पाँचवीं अखिल भारतीय छायाचित्र-कला प्रदर्शनी, जो त्रिवेणी कला संगम की श्रीधरानी आर्ट गैलरी में हो रही है, निर्विवाद रूप से यह प्रगट करती है कि छायाचित्र-कला बजाय दिन-प्रतिदिन और अधिक ऊँचाई की ओर बढ़ने के एक जगह ठहर गयी है. बल्कि यह कहना भी असंगत नहीं होगा कि वह कुछ नीचे ही जा रही है. कला-मर्मज्ञ दर्शकों को इस का कारण समझना कुछ कठिन ही प्रतीत होता है. ऊपरी तौर पर तो पहले यह ख़्याल आता है कि शायद छायाचित्र-कला के विविध रूप देखते-देखते अब उस की आँखें इतनी अभ्यस्त हो गयी हैं कि उन का आकर्षण पहले जैसा नहीं रहा. लेकिन गहराई में जाने पर यह बात पूरी तरह सच नहीं है. वही प्रयोग और अधिक से अधिक तकनीकी दक्षता प्राप्त करने की कोशिश ही

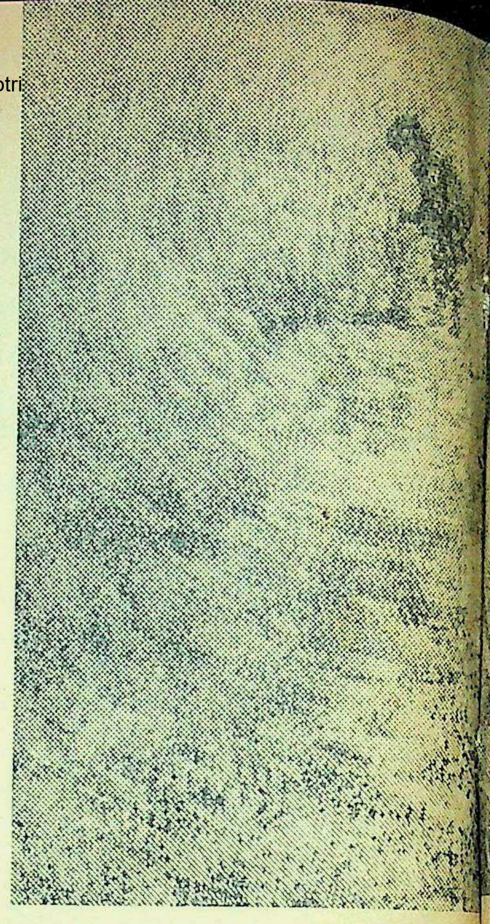

'जादुई उद्यान' : जीवन घोष

इस प्रदर्शनी में दिखाई देती है और वह छायाचित्र-कला की छोटी-मोटी इधर-उधर होने वाली अन्य प्रदर्शनियों का भी स्थायीभाव बनता जा रहा है. तकनीकी दक्षता अपने-आप में बहुत बड़ी चीज़ है, लेकिन कैमरे की आँखों के साथ-साथ कलाकार की आँखें ही नहीं उस का मानस भी दिखाई देना चाहिए. लगता है कि यह छायाचित्र-कलाकार कला की ओर कम तकनीक की ओर ध्यान अधिक दे

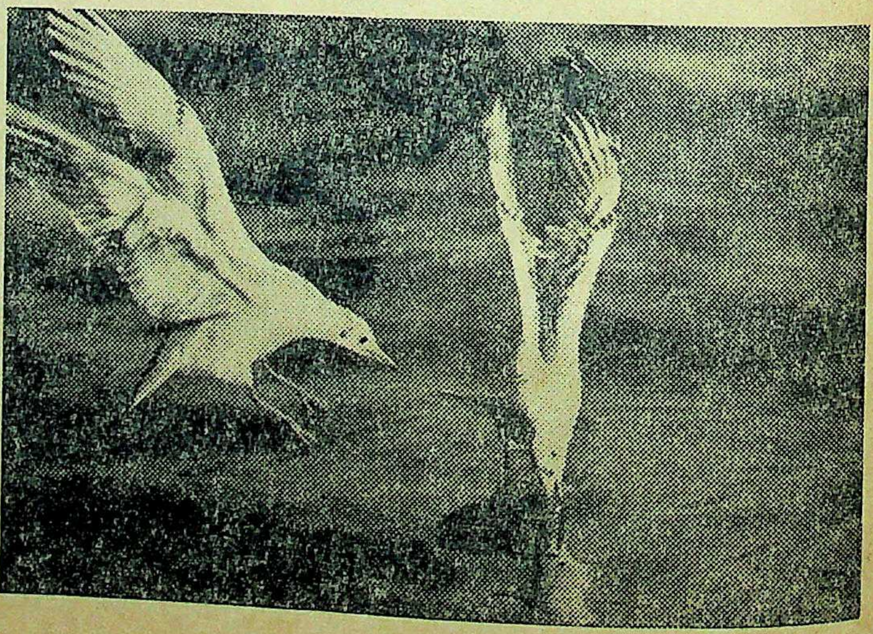

'समुद्री चिड़ियों का शिकार' : के. जी. महेश्वरी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'चितातुर' : एम. नरसिंह राव

रहे हैं. जरूरत इस बात की है कि इस प्रदर्शनी को देख कर यह और भी कहना जरूरी हो जाता है कि छाया-कलाकारों के लिए कैमरे को साधने तथा डार्करूम में किये जाने वाले विविध प्रयोगों के साथ ही साथ निरंतर अपने कलात्मक व्यक्तित्व का विकास करना चाहिए अन्यथा आगे चल कर यह प्रदर्शनियाँ अपनी एकरसता से ऊब ही पैदा करेंगी.

'क्रिस्टलाइन फ़ार्म' : डेविड क्रिस्टॉफ़र

इस प्रदर्शनी में बहुत से चित्र ऐसे हैं जो कि पूर्व प्रदर्शनियों में देखे जा चुके हैं. बहुत से चित्र यदि आकार में बड़े होते तो संभवत: उन की प्रभाव-क्षमता और अधिक बढ़ जाती. विशेषता के प्रमाणपत्र जिन चित्रों को मिले हैं उन में नयी दिल्ली के बी. एम. भनोत का चित्र नं. १२, 'बाबा के साथ .सौदेबाज़ी'; बंबई के के. जी. माहेश्वरी का चित्र नं. ७९, 'समुद्री चिड़ियों का शिकार'; दिल्ली के दीपक खन्ना का चित्र नं. ७२ 'साधुआश्रम'; बंगलौर के वी. एस. सुंदरम का चित्र नं. १३५ 'जंगली हाथी' सराहनीय है. स० ही० वात्स्यायन का चित्र नं. १३५ 'वन में बालक', भोपाल के वामन ठाकरे का चित्र नं. १३६ 'धूल में आकृति' अच्छी रचनाएँ कही जा सकती हैं. गाज़ियाबाद के एस. एच. शर्मा का चित्र नं. ११५, ११६ 'अकेला वृत्त' तथा 'दृश्य चित्र' और लखनऊ के के. पी. गुप्ता का चित्र नं. ५१ 'अभिव्यक्ति' रासायनिक संरचना के कारण सुंदर बन पड़े हैं. कैथाबाद के एम. नरसिंह राव का चित्र नं. १०५ 'चितातुर' पुरानी तकनीक को अपनाया गया चित्र है, जिस में स्क्रीन की संरचना (टेक्सचर) का इस प्रकार उपयोग किया गया है कि वह ग्राफ़िक कला का प्रभाव डालता है. यह कला बहुत पुरानी है और इस के जानकार काफ़ी कम हैं. लेकिन चित्र पर जो प्रभाव उस का पड़ता है वह अत्यंत सुंदर और अनुकरणीय माना जा सकता है. प्रदर्शनी में पुरस्कार प्राप्त चित्रों में अहमदाबाद के दत्ता बी. खादेकर का चित्र 'गहराती शाम' निस्संदेह प्रशंसनीय है. हैदराबाद के बाबू बी. राजन का चित्र नं. ७ 'खुश लड़कियाँ' डोप फ़िनिशिंग का अच्छा उदाहरण है. इसी तरह मदुराई के डेविड क्रिस्टॉफ़र का चित्र नं. १८ 'क्रिस्टालाइन फ़ार्म' संरचना से युक्त स्थिर जीवन का सुंदर नमूना है. हावड़ा के जीवन घोष का चित्र 'जादुई उद्यान', जिसे पुरस्कार प्रदान किया गया है, तकनीकी दक्षता और कला-दृष्टि का सुंदर समन्वय है.

कुल मिला कर यह बात इस प्रदर्शनी में आसानी से देखी जा सकती है कि अधिकतर प्रयोगात्मक चित्रों पर भारत में छायाचित्र-कला आंदोलन के सूत्रधारों में से एक और प्रमुख ओ. पी. शर्मा की कला का प्रत्यक्ष प्रभाव है. उन के अनेक प्रयोग दूसरों के चित्रों में देखे जा सकते हैं और पहचाने भी जा सकते हैं कि उन चित्रों पर ओ. पी. शर्मा की छाप है. प्रभाव अपने-आप में बुरी चीज़ नहीं है, यदि कलाकार अपनी कला-दृष्टि के साथ अपने व्यक्तित्व को ढाल कर उसे ग्रहण करता है. लेकिन जहाँ वह केवल अनुकरण लगते हों वहाँ निश्चय ही उन्हें उचित नहीं ठहराया जा सकता. २०० छायाचित्रों की इस प्रदर्शनी में अच्छा है कि ओ. पी. शर्मा के चित्र नहीं हैं, अन्यथा कृति और अनुकृति का अंतर अनेक रचनाओं में तीखेपन के साथ स्पष्ट हो जाता.

संगीत-नृत्य

उत्सव : साधना की दिशा

इंडियन कल्चरल सोसाइटी द्वारा सप्रू हाउस में आयोजित १९६८ का तीन दिवसीय **नृत्य-संगीत उत्सव** उल्लेखनीय रूप में सफ़ल रहा. शास्त्रीय गायन, वादन एवं भारतीय शास्त्रीय नृत्यों की विभिन्न शैलियाँ, भरत-नाट्यम, ओडिसी, कत्थक, कथकलि और मोहनीअट्टम के आकर्षक एवं मनोहारी कार्य-क्रमों को सफल बनाने में **पंडित हुसन लाल, उस्ताद विलायत ख़ाँ, इंद्राणी रहमान, कनक रेले, संयुक्ता पाणिग्रही, रूपाडे शाह, दुर्गा** तथा **देवीलाल और पंडित शामता प्रसाद** जैसे कलाकारों का सहयोग रहा.

प्रथम सभा में **श्रीमती इंद्राणी रहमान** ने भरतनाट्यम और ओडिसी तथा कत्थक नृत्य दुर्गा तथा देवीलाल ने प्रस्तुत किया. भरत नाट्यम की अनुपम कलाकार इंद्राणी रहमान ने स्वर्गीय गुरु **चोक्कलिंगम् पिल्लै** की तीन नृत्य रचनाएँ क्रमश: वरणम्, पदम् तथा तिल्लाना राग मालिका, खमास और शंकरा-भरणम् में भी प्रस्तुत कीं. भरत नाट्यम की कठिन साधना, पूर्णता और दक्षता इन के तीनों ही नृत्यों में परिलक्षित हुई. रूपक ताल में वरणम् में यद्यपि नृत्यांगना का काफ़ी समय लगा पर भावों की अभिव्यक्ति हाथों और अँगुलियों के माध्यम से इस नृत्य में अनूठे ढंग से व्यक्त हुई. पदम् तथा तिल्लाना (जो अपूर्ण था) भाव प्रवण तथा ताल और लय पर इन के अद्भुत अधिकार का परिचायक रहा. **देवीलाल** के रसहीन गायन के साथ प्रस्तुत इंद्राणी रहमान के ओडिसी नृत्यों में कोई उल्लेखनीय विशिष्टता नहीं थी. थाट, आमद, तत्कार विभिन्न परनें, गतभाव और कालिया-दमन आदि कत्थक शैली की जानी-पहचानी चीज़ें हैं, जिन का बार-बार प्रदर्शन प्राय: सभी कत्थक कलाकार करते हैं. लखनऊ तथा जयपुर घराने का अच्छा निर्वाह करते हुए **दुर्गालाल** ने कुशलता से देवीलाल के गायन और तबला वादन की संगत में पेश की, पर इन में नवीनता का अभाव था. देवीलाल और दुर्गालाल की कत्थक युगलबंदी में लय-कारी का काम आकर्षक एवं उल्लेखनीय रहा.

समारोह की दूसरी सभा शास्त्रीय गायन एवं वादन को समर्पित थी. दिल्ली के पंडित **हुसनलाल** का ख्याल और ठुमरी गायन, **कुमारी कंचन** का सरोद और **उस्ताद विलायत ख़ाँ** का सितार वादन इस सभा में सुनने को मिला. फ़िल्मों के सुविख्यात निर्देशक पं० हुसनलाल उच्चकोटि के गायक होने के साथ-साथ दक्ष एवं अनूठे वायलन वादक भी हैं तथा **दिलीपचंद्र बेदी** के प्रमुख शिष्य. इन्होंने राग एमन में दो रचनाएँ तथा एक ठुमरी प्रस्तुत की. विलंबित एक ताल में राग की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्रमिक एवं चैनदारी की बढ़त तथा ख़याल गायकी के विभिन्न अंगों के समुचित प्रयोग से राग-रूप विविधता लिये रहा तो द्रुत तीन ताल में बोल तान की विशिष्टता, तैयारी और तानों के प्रदर्शन में इन की गायन-क्षमता का बहुत ही सुंदर परिचय मिला. **कुमारी कंचन** द्वारा सरोद पर राग देस में आलाप तथा गतों का वादन लगन का परिचायक तथा प्रशंसनीय रहा. सुविख्यात एवं सुरीले सितार नवाज़ **उस्ताद विलायत ख़ाँ** का वादन दिल्ली के संगीत-श्रोताओं को जल्दी सुनने में नहीं मिलता और जब सुनने को मिलता है तो उत्सुकता से प्रतीक्षा रहती है. पर इस बार उस्ताद का वादन आशानुरूप तथा जिस स्तर का इस से पूर्व सुना है नहीं था. दो घंटे राग मालकौंस, क़रीब सत्तर मिनट पीलू तथा पन्द्रह मिनट की पहाड़ी क़रीब साढ़े तीन घंटे तक वाद्य पर उस्ताद ने अत्यंत लगन, मेहनत और विविधता से बजाया पर मालकौंस जैसा मधुर और पीलू-सा करुण रस-प्रधान राग भी इन के वादन को स्मरणीय नहीं बना सका. इन का वादन आरंभ से अंत तक तकनीकी ही रहा. मालकोस के विस्तृत आलाप में क्रमिकता का अभाव, पर गतकारी में परिष्कार और सौष्ठव निस्संदेह प्रशंसनीय एवं आकर्षित करने वाला था. द्रुत गत के तानयुक्त तोड़े और अलंकरण के साथ-साथ गत का माधुर्यपूर्ण स्वर-नियोजन गायकी अंग के सितार नवाज़ विलायत ख़ाँ के मालकौंस में उल्लेखनीय रहे. पीलू एक बहुत छोटा-सा राग है, जिस का सत्तर मिनट तक वादन किसी भी दृष्टि से न्यायपूर्ण नहीं कहा जा सकता. पीलू में एक के बाद दूसरी कई बंदिशें ख़ाँ साहब ने पेश कीं. अंत में प्रस्तुत ठुमरी पहाड़ी इन के वादन की प्रतिनिधि एवं श्रेष्ठ रचना रही.

तीसरी और अंतिम सभा में नयी पीढ़ी के प्रतिनिधि कलाकार **रूपाडे शाह, कनक रेले** तथा **संयुक्ता पाणिग्रही** ने शास्त्रीय नृत्यों की चार प्रमुख शैलियाँ भरत नाट्यम, मोहनी अट्टम, कथकलि और ओडिसी में अनेकों अत्यंत सुरुचिपूर्ण एवं कलात्मक नृत्यों का प्रदर्शन कर दर्शकों को आरंभ से अंत तक बाँधे रखा. एक ही मंच पर और एक ही समय में इतने अधिक एवं भिन्न-भिन्न शैलियों को एक के बाद एक देखना थका देने वाला रहा, जिस में विभिन्न शैलियों का सही आनंद ले पाना असंभव-सा रहा. बंबई की नृत्यांगना **रूपाडे शाह** ने अल्लरिपु अंनतर वरणम् तथा अंत में पदम भरत नाट्यम के अंतर्गत प्रस्तुत किया. इस नृत्य-शैली की ख़ूबियों को इन्होंने अच्छा आत्मसात किया है. नृत्यों में मुद्राओं की अपेक्षा इन का अभिनय पक्ष अधिक सबल था, प्रस्तुत तीनों नृत्यों में पदम विशेष रहा. एक गोपिका द्वारा श्रीकृष्ण का वृंदावन विहार का वर्णन, मूक अभिनय, विभिन्न मुद्राओं तथा कृष्ण एवं गोपिका दोनों का दो सजीव चित्रण

संयुक्ता पाणिग्रही

मनोहारी था. बंबई की ही **कनक रेले** द्वारा मोहनी अट्टम में चोलकट तथा भावयामी तथा कथकलि में नवसर प्रदर्शन इन नृत्य-शैलियों की विशेषताओं से परिपूर्ण रहा. 'भावयामी', **महाराज स्वाति तिरुनाल** द्वारा रचित, इस कृति में बहुत ही संक्षिप्त रूप में रामायण की सभी मुख्य घटनाओं का वर्णन है. रामायण में वर्णित प्रत्येक मुख्य पात्र को बहुत ही कम समय में मंच पर अत्यंत सजीवता से नृत्य द्वारा प्रस्तुत करने में कलाकार की उत्तम शिक्षा एवं निरंतर साधना एवं अभ्यास का स्पष्ट प्रमाण मिलता था. नेत्रों, अंगुलियों और भावों द्वारा विभिन्न रसों की सफल अनुभूति करा देना तथा पात्रों के सूक्ष्म से सूक्ष्म भाव को व्यक्त करना इन के कथकलि की विशेषता थी.

उत्सव में भाग लेने वाली अंतिम कलाकार ओडिसा की **संयुक्ता पाणिग्रही** तथा गायन द्वारा साथ देने वाले **श्री रघुनाथ पाणिग्रही** का नृत्य एवं गायन का प्रदर्शन असंदिग्ध रूप से सफल एवं उच्चस्तरीय रहा. ओडिसी शैली में मंगलाचरण पल्लवी अभिनय और अंत में मोथा नृत्य प्रायः सभी में शास्त्रीय नृत्य और शास्त्रीय संगीत का बहुत-ही कलात्मक, आनंददायक सफल एवं सुंदर समन्वय आरंभ से अंत तक रहा. राग हंसध्वनि, मोहना, मालवा और भैरवी तथा विभिन्न तालों में निबद्ध ओडिसी नृत्यों में जिस सहजता और उन्मुक्तता से संयुक्ता पाणिग्रही ने भावाभिव्यक्ति की, उच्चकोटि की रही. अविताल भैरवी में कवि जयदेव की अष्टपदी का नृत्याभिनय और गायन कलाकार दंपति की साधना का सफलतम रूप था. राग-रस प्रधान अष्टपदी के नृत्याभिनय में आनंद, प्रेम, विरह, मिलन आदि की विभिन्न मनोदशाओं को जिस सूक्ष्मता एवं ललितपूर्ण ढग से संयुक्ता पाणिग्रही ने सजीवता प्रदान की निस्संदेह स्मरणीय रहा. विचारों एवं भावों को विभिन्न मुद्राओं, अंगों के गीतात्मक संचालन और सशक्त मूक अभिनय द्वारा व्यक्त करना एवं दर्शकों को मंत्र-मुग्ध कर देना निस्संदेह एक कठिन कार्य है और संयुक्ता जैसी कलाकार की उल्लेखनीय सफलता कही जा सकती है.

साहित्य

'खिड़कियाँ निकाले हैं दरियों की खिह्वाएँ'

ग़ैर-कम्युनिस्ट देशों के लिए यह बराबर कौतूहल का विषय रहा है कि कम्युनिस्ट देशों के कवि और लेखक क्या सोचते हैं. दूसरे विश्व-युद्ध के बाद—विशेष कर स्तालिन की मृत्यु के बाद साम्यवादी देशों के कवियों और लेखकों का मुहावरा ग़ैर-साम्यवादी देशों के रचनाकारों के मुहावरे से लगातार जुड़ता गया. पूर्वी यूरोप और पश्चिमी यूरोप का फ़र्क़, जहाँ तक साहित्य का प्रश्न है, बहुत कुछ नष्ट हो चुका है.

छोटे-से देश बल्गारिया में एक अनोखे साहित्य का सृजन हो रहा है, जिस की उपलब्धियाँ अभी बल्गारिया से बाहर बहुत प्रकाश में नहीं आयी हैं. नौजवान कवियों और लेखकों में एक अनोखी हलचल और आत्ममंथन है. सोफ़िया के किसी 'पब', 'बार' या 'रेस्तराँ' में इन कवियों की हलचल देखी जा सकती है. उन में न केवल अपने अतीत और वर्त्तमान के साहित्य को ले कर प्रश्न करने की प्रवृत्ति है बल्कि बल्गारिया से बाहर—विशेष रूप से पश्चिम के समकालीन साहित्य को ले कर जिज्ञासा है. साधारणतया पश्चिमी साहित्य की सभी उत्कृष्ट कृतियाँ बल्गारिया में अनुवाद और मूल रूप में प्राप्त हैं. जो प्राप्त नहीं हैं, उन्हें लेखक यूनियन के कार्यालय से या अन्यत्र से नौजवान कवि या लेखक हासिल कर लेते हैं.

बीसवीं सदी : दिनमान ने सोफ़िया में अनेक नौजवान कवियों और लेखकों से बातचीत की और उन के मिज़ाज को पहचानने की कोशिश की. आज बल्गारिया के जो लेखक सक्रिय हैं, प्रमुख हैं ड्यूबोमीर लेवचेव, बलागा दिमितरोवा, दिमितिर स्तेफ़ानोव, ग्रेगोर लिकोव, बोगोयिल राइनोव, ग्योरगी जागोरोव, ये सभी लेखक और कवि घटिया प्रचारात्मक काव्य की नहीं बल्कि उत्कृष्ट साहित्य की रचना कर रहे हैं, जिन में उन का अकेलापन और अवसाद मुखरित है. वे झूठी सामाजिकता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के क़ायल नहीं हैं, बल्कि वे मनुष्य और उस की नियति से जुड़े हुए प्रश्नों से जूझ रहे हैं. उन की कविताओं में बीसवीं सदी के अभिशाप की छाया है. बल्गारिया के लोकजीवन पर जिप्सी प्रभाव रहा है. बल्गारिया के संगीत की तरह उस के काव्य पर भी जिप्सी छाप है—उस में स्वाधीनता की अकुलाहट और छटपटाहट है.

समग्र साहित्य : ये कवि और लेखक ठीक लंदन पर या पेरिस के कवियों या लेखकों की तरह यूरोप के उस अवसादग्रस्त साहित्य पर अर्थपूर्ण बहसें करते हैं जो आज समूची मनुष्यता की थाती हो गया है. सब से बड़े मार्क्सवादी आलोचक जॉर्ज लूकाच ने टॉमस मान के मुक़ाबले काफ़्का को खारिज कर दिया. उन्होंने विकल्प रखा : काफ़्का और टॉमस मान दोनों में से किसी एक को अपने लिए चुनना होगा. पूर्वी यूरोप के अन्य देशों के नौजवान कवियों की तरह बल्गारिया के युवक कवि भी साहित्य में ऐसा कोई विकल्प नहीं मानते. उन का सवाल है कि टॉमस मान और काफ़्का दोनों ही क्यों नहीं ? दोनों में कहाँ अंतर्विरोध है ? पूस्त, ज्वॉयस, एलियट और रिल्के इन युवक रचनाकारों के प्रिय लेखक हैं. वे ब्रेख़्ट को उतने ही शौक़ से पढ़ते हैं जितने कौतूहल से बैकेट को. सार्त्र के उठाये हुए सवालों से वे उसी तरह जूझते हैं जिस तरह सभ्यता के संकट से.

एकांतप्रियता : बल्गारिया के कवि और लेखक स्वभाव से एकांतप्रिय हैं और उन्हें सतही अभिव्यक्तियाँ, चाहे वे व्यवस्था के विरोध में हों या समर्थन में, पसंद नहीं; बल्कि गहरे अर्थों की खोज करने वाले काव्य प्रिय हैं. यही कारण है कि उन्हें सोवियत रूस के एव्तिशेंको की तुलना में वोज्जेनेसेंस्की की कविता ज़्यादा पसंद है. सोवियत रूस के अधिकतर कवियों में आक्रामकता है, जब कि बल्गारिया के नौजवान कवियों में एक अनोखी शालीनता और शिष्टता है. ग्रेगोर लिकोव को देख कर कोई नहीं कह सकता कि वह बल्गारिया के लेखक संघ की पत्रिका के संपादक हैं और दिमितिर स्तेफ़ानोव से बातचीत करते हुए यह एहसास नहीं होता कि वह एक उच्च सरकारी अधिकारी हैं. सचाई यह है कि बल्गारिया का हर कवि, चाहे वह जहाँ भी हो, अपने पद और काम की सीमाओं को नष्ट कर अंत तक कवि है.

अभिशप्त पेड़ : ग्रेगोर लिकोव की कविताएँ अपने विधान और संगठन में अत्यंत ठोस हैं और उन की अनुभूति जटिल है. उन की कविताओं में अनेक पौराणिक प्रतीक हैं. समकालीन संदर्भ के अर्थ को गहरा करने के लिए वह 'मिथ' का उपयोग करते हैं. उन की एक प्रख्यात कविता 'द्रेपेत्लिका' बाइबल के उस अभिशप्त पेड़ के प्रतीक से बुनी गयी है जो कि बजता रहता है और बिना हवा के बजता है.—

ग्रेगोर लिकोव

द्रेपेत्लिका

ओ जागृत पेड़ !
तुम निद्रा हो अंतहीन
हरे मूंगे सा तुम्हारा मंडप
तुम्हारी रजत छाल
प्रशांत तुम, आच्छादित और तने हुए,
जैसे कोई तीर बेध रहा हो आसमान को
तुम्हारे चेहरे दो नहीं हैं
तुम्हारा हर पत्ता है कांपती हुई एक बाली
तुम ख़तरे की घंटी हो
तुम बँधे हुए हो अनंत एक सिहरन में

तुम हो एक खिंची हुई प्रत्यंचा
तुम चाहते हो भेदना
आकाश गंगा को
तुम हो आकाश में खिंचे हुए एरियल
संसार-काई पर तुम

दिमितिर स्तेफ़ानोव

उगी हुई मेवार हो,
तुम अंतरिक्ष की ध्वनियों को
अपनी भुजाओं में पकड़ते हो.

यह सब संभव है तुम्हारे लिए
क्यों कि तुम बँधे हुए हो.

दिमितिर स्तेफ़ानोव की बेचैनी का मुख्य विषय है बीसवीं सदी का वह गहरा अंतर्विरोध जिस से सभ्यता का विकास और मनुष्यता के संहार की संभावनाएँ जुड़ी हुई हैं. उन की प्रख्यात कविता 'तैंतीसवें साल पर' और 'नगर' इसी विडंबना को उस के गहरे संदर्भों में रखते हैं.

तैंतीसवें साल पर

तैंतीसवें साल पर
(ईसा की शताब्दी में
नरक के आधे रास्ते पर खड़े हो कर
उठा कर दिक्व्यापी आयु को)
मैं टूटता हूँ आधा हो कर ज़िंदगी से
तैंतीसवें साल में

मैं जो कि निपुण था अंकगणित में
यह समझ पाया
कि जिस के साथ चिपका हुआ हूँ
इस पताकाओं वाली
और परमाणुग्रस्त
सदी से
माचिस की गूँज की तरह
प्लास्टिक के नक़ाबों
और आँकड़ों से
सब से न्यारी है :
दो में बँटा होना !
अब सब कुछ बँटा हुआ है
कुदरत—पूर्व और पश्चिम में
पहाड़ी गाँव से ले कर यहाँ तक

२ : नगर

डसे हुए रंग जन्म देते हैं डसे हुए रंगों को
उठती है पेट्रोल की गंध
नहीं है झरना कि घुटनों पर झुकूँ
खड़ा हूँ और भी प्यासा हो
दूकान की खिड़की के सामने

भौंकती हैं बसें
रात को चीखते हैं टेप-रेकार्डर
अंजुलियाँ हैं अपर्याप्त
न्योनसाइंस के जुगनुओं के लिए
मौन चिंघाड़ता है दूर.
सोमवार की सुबह में
सुनता हूँ उदास साँस :
खिड़कियाँ निकाले हैं
दरियों की जिह्वाएँ
भागती हैं
भागती हैं
भागती हैं .

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परचून

रवींद्रनाथ की रचनाओं पर प्रतिबंध

रूसी पत्रों में छपे एक लेख से पता चला है कि चीन की सरकार ने अपने देश में रवींद्रनाथ ठाकुर की रचनाओं का अध्ययन बंद कर दिया है. ऐसे ही जिन अन्य महान् लेखकों की रचनाओं के अध्ययन पर चीन में प्रतिबंध लगा हुआ है उन में जर्मन महाकवि गेटे, शिलर, हाइन, डिकिंस, चार्लोट ब्रोंटे, बायरन, हार्डी, बर्नार्ड शॉ, विक्टर ह्यू गो शामिल हैं. शेक्सपियर, के नाटक 'रोमियो जुलियट', 'मर्चेंट ऑफ़ वेनिस, 'हैमलेट' और 'किंग लीयर' पढ़ने की भी वहाँ मनाही है.

कुष्ठ रोग का निराकरण

हाल ही में लंदन में जो विश्वसम्मेलन हुआ उस में कुष्ठ जैसे भयंकर रोग के निराकरण के उपायों पर विचार-विमर्श किया गया. आँकड़ों से पता चलता है कि इस समय संसार में एक करोड़ पचास लाख व्यक्ति इस बीमारी से आक्रांत हैं. ७० देशों के ५०० प्रतिनिधियों ने इस सम्मेलन में इस रोग की वृद्धि को रोकने के भी उपाय सुझाये.

कुष्ठ रोग के विशेषज्ञों का कहना है कि यदि इस रोग का निदान और उपचार समय पर हो जाए और चिकित्सा पर्याप्त समय तक चलती रहे तो रोगी छुटकारा पा सकता है. इस रोग के निवारण के लिए बी. सी. जी. टीकों का प्रयोग किया गया है, जो काफ़ी सफल रहा है. इन विशेषज्ञों के अनुसार कुष्ठ और क्षय रोगों में अधिक अंतर नहीं है, जैसी कि आम धारणा है. दोनों ही रोग 'माइको बैक्टीरिया' नामक रोगाणुओं से पैदा होते हैं. इस लिए बी. सी. जी. द्वारा यदि क्षय रोग रोका जा सकता है तो ज़ाहिर है कि कुष्ठ रोग के दमन में भी यह टीका काफ़ी हद तक सहायता करेगा.

द गॉल परिवार-नियोजन के विरुद्ध

इस समय अधिकांश देशों के नेता बेतहाशा बढ़ती हुई जनसंख्या से आशंकित हैं और परिवार-नियोजन को प्रोत्साहन दे रहे हैं. फ़्रांस के राष्ट्रपति द गॉल के विचार इस से विपरीत हैं—वह परिवार-नियोजन के विरोधी माने जाते हैं. वैसे वह जिस धर्म के अनुयायी हैं उस में परिवार-नियोजन की अनुमति नहीं है. राजनीतिक विशेषज्ञों का कहना है कि द गॉल परिवार-नियोजन का विरोध इस लिए नहीं करते कि वह रोमन कैथोलिक हैं, बल्कि उन का मत है कि फ़्रांस की जनसंख्या कम से कम पाँच करोड़ होनी चाहिए और जब तक यह लक्ष्य पूरा नहीं हो जाता तब तक संतति-निग्रह को प्रोत्साहन नहीं देना चाहिए. हाल ही में जब उन को बताया गया कि फ़्रांस में पाँचवें करोड़ शिशु का जन्म हुआ है तो उन्होंने स्वयं उस को आशीर्वाद दिया. शिशु एक लड़की थी. पर वास्तव में फ़्रांस की जनसंख्या अभी पाँच करोड़ छू नहीं सकी है. नयी जनगणना के अनुसार यहाँ की जनसंख्या चार करोड़ ९७ लाख से अधिक नहीं है.

क्रांति के दुश्मन प्रेम और विवाह

चीन में उन युवक लेखकों और कलाकारों की भर्त्सना की गयी है जो छोटी उम्र में प्रेम और विवाह के चक्कर में पड़ गये हैं. चीनी नेताओं की धारणा है कि वे क्रांति के मार्ग से विचलित हो गये हैं और भविष्य में जो भी प्रेम के धोखे में आयेंगे वे क्रांति यानी पार्टी से दूर जा पड़ेंगे. इस धारणा के मूल में जो संदेह सक्रिय है वह यह है कि प्रेम और विवाह को प्रोत्साहन देने के लिए पूँजीवादी ज़िम्मेदार हैं और इन जालों में फँसा कर वे युवकों को पथ-भ्रष्ट करना चाहते हैं.

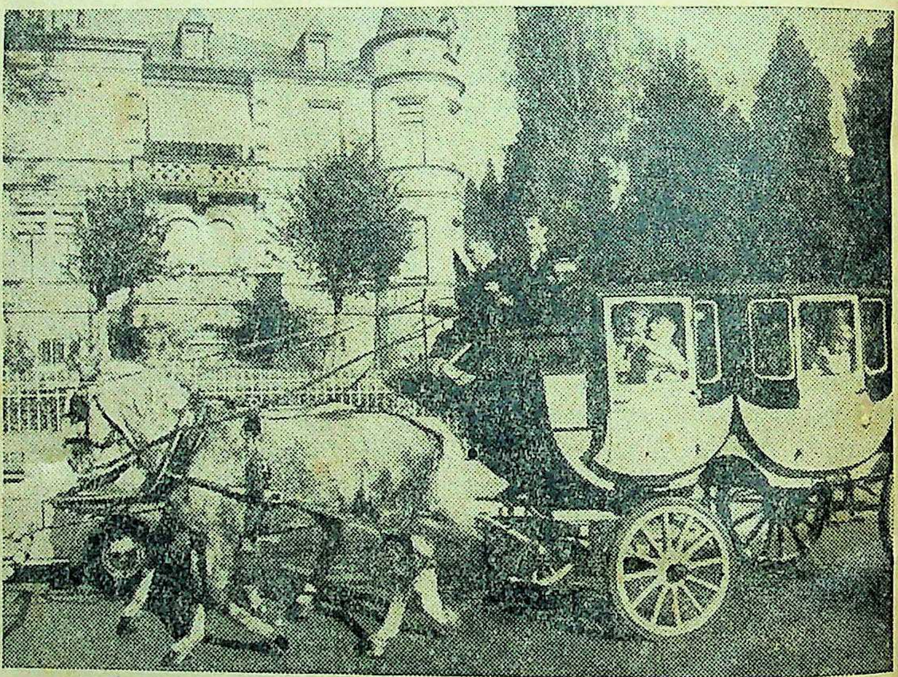

डाक-वाहक घोड़ा-गाड़ी

पुराने समय में घोड़ा-गाड़ी द्वारा एक शहर से दूसरे शहर तक डाक ले जाने की जो प्रथा थी वह प्रायः लुप्त हो चली है. पर पश्चिम जर्मनी में अब भी एक नगर में ऐसी गाड़ी चलती है, जो बाद किसिंगन, बाद बकलेट और श्लास आशाख के बीच डाक ले जाने का काम करती है. यह घोड़ा-गाड़ी बाहर से देखने में पुराने ढंग की लगती है पर इस के अंदर आराम के सब आधुनिक साधन मौजूद हैं.

बंदियों की देखभाल के लिए स्त्री गवर्नर

पश्चिम बर्लिन की एलिज़ाबेथ हारे को किसी जेल की पहली स्त्री गवर्नर बनने का गौरव प्राप्त हुआ है. उन की इस पद पर नियुक्ति जेलों के इतिहास में शायद अपने क़िस्म की पहली घटना है. जिस कारागार की वह गवर्नर हैं उस में केवल कम उम्र के युवक बंदी ही रखे जाते हैं. एलिज़ाबेथ हारे ने पद सँभालते ही जेल व्यवस्था में जो सुधार किये वे काफ़ी आशाजनक हैं. कोई भी क़ैदी उन से बेधड़क मिल सकता है और अब तो इन में से कई उन को इतना चाहने लगे हैं कि अपनी नयी गवर्नर के दर्शन मात्र के लिए वे उन के पास जाते हैं. गवर्नर और बंदियों में वार्त्तालाप भी बहुत ही घरेलू ढंग से होते हैं, जिस में बंदियों को सिगरेट पीने की अनुमति रहती है.

बंदियों की प्रिय एलिज़ाबेथ का बचपन बहुत ही सीधे-सादे ढंग से बीता. उस के पिता चरवाहा थे और वह दो भाइयों के बीच पली. लड़कों के साथ बड़े होने का ही यह असर है कि एलिज़ाबेथ निहायत ही निडर स्त्री है. जब वह बंदियों से मिलती है तो उस समय वहाँ कोई सिपाही हाज़िर नहीं होता. विवाह के बारे में अविवाहिता एलिज़ाबेथ का विचार है कि विवाह कर लेने से क़ैदियों के सुधर जाने की अधिक संभावना रहती है. इस लिए वह हर अविवाहित क़ैदी को विवाह कर लेने की सलाह देती है. वह क़ैदियों को कुछ समय तक आज़ाद कर देने के पक्ष में है, बशर्ते क़ानून इस की आज्ञा दे. आज़ादी के क्षणों में बंदियों पर कोई रोक-टोक नहीं लगायी जाती और न ही उन पर निगरानी रखी जाती है. वैसे अब तक इस नियम का कभी दुरुपयोग नहीं किया गया है.

एलिज़ाबेथ को अपने वर्त्तमान पद तक पहुँचने के लिए कड़ी मेहनत करनी पड़ी. उन्होंने क़ानून और समाजविज्ञान का गहरा अध्ययन किया है. चार वर्ष तक सहायक गवर्नर के पद पर काम करने के बाद उन्हें चोटी पर पहुँचने का मौक़ा मिला है.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्ही. पी. पी. द्वारा माल मंगाइये

हिन्दी में अपने ढंग का नया विश्वकोश

सचित्र विश्वकोश

1. पृथ्वी • आकाश • खनिज
2. जीव-जन्तु • पेड़-पौधे
3. मनुष्य • विकास • स्वास्थ्य • खेलकूद
4. राजनीति • प्रशासन • धर्म
5. कृषि • उद्योग • व्यापार • शिल्प
6. आविष्कार • खोज • हॉबी • पर्यटन
7. विज्ञान • वैज्ञानिक • आविष्कारक
8. साहित्य • कला • दर्शन • पुराणकथा
9. इतिहास : प्रमुख व्यक्ति • घटनाएं
10. देश और निवासी • प्रमुख नगर

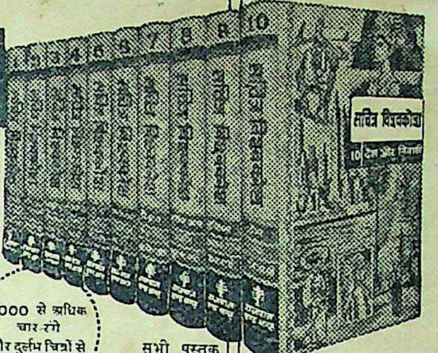

2000 से अधिक चार रंगे और दुर्लभ चित्रों से भरपूर

सभी पुस्तक विक्रेताओं से प्राप्य

प्रत्येक खण्ड का मूल्य सात रुपये मात्र

दस खंडों का पूरा सेट मगाने पर डाक-खर्च माफ़

राजपाल एण्ड सन्ज़, कश्मीरी गेट, दिल्ली

किस्तों पर ट्रांजिस्टर

सर्वत्र विख्यात "एस्कोर्ट" ३ बैंड आलवर्ल्ड पोर्टेबल ट्रांजिस्टर, मूल्य १६५ रुपये मासिक किस्त रुपये १०) भारत के प्रत्येक गांव और शहर में भेजा जा सकता है। लिखें:—

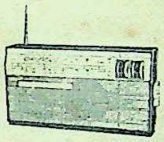

जापान एजेंसीज (D.W.N.D.—10)
पोस्ट बाक्स ११९४ दिल्ली—६

विद्युत एवं रेडियो

अभियन्त्रण पाठ्यक्रम

विद्युत अभियन्त्रण, रेडियो मरम्मत, एसेम्बलिंग, विद्युत सुपरवाइज़री, वायरिंग आदि (८०० चित्र) रु० १२.५० वी. पी. डाक व्यय २/- सुलेखा बुक डिपो (इ) अलीगढ़

मोना की नई गुड़िया

३० से. मी.

बवीता डौल

मोना टायज इण्डस्ट्रीज
डी-३४, राजोरी गार्डन, नई दिल्ली-२७
फोन : ५६६८३६.

सोल डिस्ट्रीब्यूटर्स
गुप्ता मैलम कारपोरेशन,
२७९/१४, पोस्ट आफिस स्ट्रीट, सदर बाजार, दिल्ली
साथ ही
सुपर बाजार, कनाट सर्कस, नई दिल्ली में भी प्राप्त हैं।

नवभारत टाइम्स

हिन्दी दैनिक

बम्बई और दिल्ली से प्रकाशित

"नवभारत टाइम्स" आधुनिक और अपटुडेट हिन्दी दैनिक समाचारपत्र है

और

इसके पाठकों की संख्या बहुत विस्तृत है.

दोनों ही संस्करणों में व्यावसायिक, स्थानीय, प्रादेशिक, राष्ट्रीय तथा अन्तरराष्ट्रीय समाचारों के साथ-साथ साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक, अन्तरराष्ट्रीय, राष्ट्रीय और आर्थिक विषयों पर विशेष सामग्री ही तो इस की विशेषता है.

मुफ्त उपहार

३ महीने तक स्त्रियों का सौन्दर्य काश्मीरी और बंगलोरी आर्ट सिल्क की साड़ियों में खिलता है। आधुनिक डिजाइनों और रंगों में नया माल आ गया है। केवल हमारे यहां ही प्राप्य है। एक डीलक्स साड़ी १२) दो साड़ियां २३) तीन साड़ियां ३३) चार साड़ियां ४०) दो या अधिक साड़ियों के आर्डर पर ब्लाउजपीस मुफ्त। आर्डर पोस्ट पार्सल से भेजे जायेंगे।

ATLAS CO. (D.W.N. D.-25)
P.O. Box 1329, DELHI-6

मा धु री

हिन्दी की सबसे लोकप्रिय फिल्म पत्रिका

नया अंक आज ही लीजिए

077706

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

14 DEC 1968
26 OCT 1968

आपका प्रत्येक क्षण हमारी दृष्टि में मूल्यवान है

हम जानते हैं कि आज के युग में आप का एक एक क्षण अनमोल है। पी एन बी में आपको कभी भी समय नष्ट नहीं करना पड़ता। हमारी टेलर सिस्टम से आपके चैक का भुगतान लगभग उतने ही समय में हो जाता है जितना समय आपको चैक लिखने में लगता है।

पी एन बी टेलर सिस्टम

कतारें नहीं। कोई टोकन नहीं। प्रतीक्षा की उकताहट नहीं।

पंजाब नैशनल बैंक

१८९५ से राष्ट्र की सेवा में निरत
अध्यक्ष: एस. सी. त्रिखा

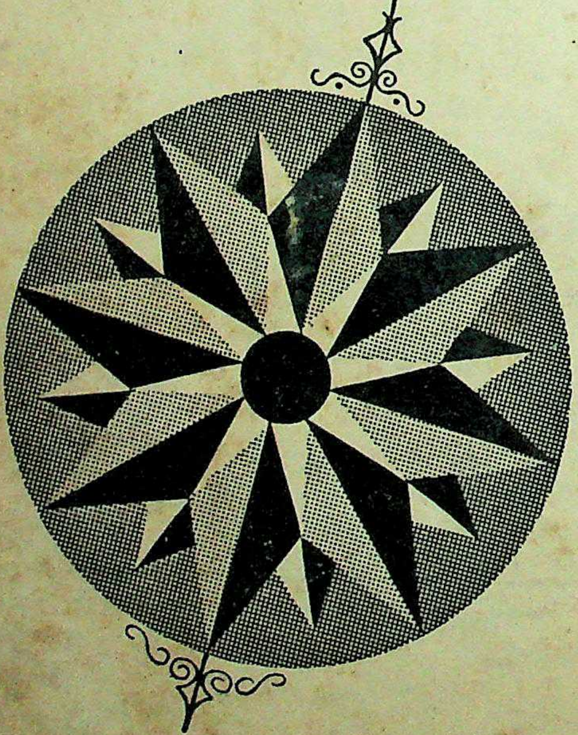

PR-PNB-6811 HIN

बैनेट, कोलमैन एंड कम्पनी लिमिटेड, स्वत्वाधिकारी के लिए जे. एम. डिसूज़ा द्वारा नेशनल प्रिंटिंग वर्क्स, १० दरियागंज, दिल्ली-६ से मुद्रित और प्रकाशित।

CC-0. Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Compiled
1999-2000

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar